महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अन्तर्गत स्थापित केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya
(A Central University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)
नैक द्वारा 'A' ग्रेड प्राप्त / Accredited with 'A' Grade by NAAC

हिन्दी भाषा एवं भाषा-शिक्षण

एम.ए. हिन्दी पाठ्यक्रम
तृतीय सेमेस्टर
पंचम पाठ्यचर्या (वैकल्पिक) विकल्प – I
पाठ्यचर्या कोड : MAHD – 17

दूर शिक्षा निदेशालय
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
पोस्ट – हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा – 442001 (महाराष्ट्र)

हिन्दी भाषा एवं भाषा-शिक्षण

प्रधान सम्पादक

प्रो॰ गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

सम्पादक

प्रो॰ कृष्ण कुमार सिंह
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय एवं विभागाध्यक्ष, हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग
साहित्य विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

पुरन्दरदास
अनुसंधान अधिकारी एवं पाठ्यक्रम संयोजक– एम. ए. हिन्दी पाठ्यक्रम
दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

सम्पादक मण्डल

प्रो॰ आनन्द वर्धन शर्मा
प्रतिकुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

प्रो॰ कृष्ण कुमार सिंह
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय एवं विभागाध्यक्ष, हिंदी एवं तुलनात्मक सहित्य विभाग
साहित्य विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

प्रो॰ अरुण कुमार त्रिपाठी
प्रोफेसर एडजंक्ट, जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

पुरन्दरदास

प्रकाशक

कुलसचिव, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
पोस्ट : हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा, महाराष्ट्र, पिन कोड : 442001

© महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

प्रथम संस्करण : मई 2018

पाठ-रचना

डॉ॰ हिमाद्री शईकिया
पूर्व सहायक प्रोफेसर
अनुवाद प्रौद्योगिकी विभाग (कोलकाता क्षेत्रीय केंद्र)
अनुवाद एवं निर्वचन विद्यापीठ
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

खण्ड – 1 : इकाई – 1
खण्ड – 3 : इकाई – 2 एवं 4
खण्ड – 4 : इकाई – 4

डॉ॰ भाग्यसिंह गुर्जर
असिस्टेंट प्रोफेसर
शिक्षाशास्त्र विभाग
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान(मानित विश्वविद्यालय)
श्रीसदाशिव परिसर, पुरी (ओडिशा)

खण्ड – 1 : इकाई – 2, 3 एवं 4
खण्ड – 3 : इकाई – 3
खण्ड – 4 : इकाई – 1, 2 एवं 3

डॉ॰ धनजी प्रसाद
असिस्टेंट प्रोफेसर
भाषाविज्ञान एवं भाषा प्रौद्योगिकी विभाग, भाषा विद्यापीठ
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

खण्ड – 2 : इकाई – 1, 2, 3 एवं 4

डॉ॰ सय्यद मुज़म्मिलुद्दीन
एसोसिएट प्रोफेसर
ई-कॉमर्स अथवा विपणन, व्यवसाय प्रबंधन विभाग
अन्वारुल उलूम कॉलेज ऑफ़ बिज़नेस मैनेजमेन्ट
उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

खण्ड – 3 : इकाई – 1

पाठ्यक्रम परिकल्पना, संरचना एवं संयोजन
आवरण, रेखांकन, पेज डिज़ाइनिंग, कम्पोज़िंग ले-आउट एवं प्रूफ़रीडिंग

पुरन्दरदास

कार्यालयीय सहयोग

श्री विनोद रमेशचंद्र वैद्य
सहायक कुलसचिव, दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

टंकण कार्य सहयोग

श्री सचिन कृष्णराव नाखले (खण्ड – 1 : इकाई – 2 तथा खण्ड – 4 : इकाई – 1 एवं 2)
दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

सुश्री राधा सुरेश ठाकरे (खण्ड – 1 : इकाई – 3, खण्ड – 3 : इकाई – 3 तथा खण्ड – 4 : इकाई – 3)
दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

आवरण पृष्ठ पर संयुत विश्वविद्यालय के वर्धा परिसर स्थित गांधी हिल स्थल का छायाचित्र इंटरनेट से साभार प्राप्त

http://hindivishwa.org/distance/contentdtl.aspx?category=3&cgid=77&csgid=65

- यह पाठ्यसामग्री दूर शिक्षा निदेशालय, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा संचालित एम.ए. हिन्दी पाठ्यक्रम में प्रवेशित विद्यार्थियों के अध्ययनार्थ उपलब्ध करायी जाती है।
- इस कृति का कोई भी अंश लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
- पाठ में विश्लेषित तथ्य एवं अभिव्यक्त विचार पाठ-लेखक के अध्ययन एवं ज्ञान पर आधारित हैं। पाठ्यक्रम संयोजक, सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।
- इस पुस्तक को यथासम्भव त्रुटिहीन एवं अद्यतन रूप से प्रकाशित करने के सभी प्रयास किये गए हैं तथापि संयोगवश यदि इसमें कोई कमी अथवा त्रुटि रह गयी हो तो उससे कारित क्षति अथवा संताप के लिए पाठ-लेखक, पाठ्यक्रम संयोजक, सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रक का कोई दायित्व नहीं होगा।
- किसी भी परिवाद के लिए न्यायिक क्षेत्र वर्धा, महाराष्ट्र ही होगा।

पाठ्यचर्या विवरण

तृतीय सेमेस्टर
पंचम पाठ्यचर्या (वैकल्पिक)
विकल्प – I
पाठ्यचर्या कोड : MAHD – 17
पाठ्यचर्या का शीर्षक : हिन्दी भाषा एवं भाषा-शिक्षण

क्रेडिट – 04

खण्ड – 1 : भाषा और भाषा-शिक्षण
- इकाई – 1 : भाषा : अवधारणा और स्वरूप
- इकाई – 2 : भाषा-शिक्षण की अवधारणा
- इकाई – 3 : पाठ्यक्रम की प्रकृति, निर्धारण और उसका विकास
- इकाई – 4 : भाषा मूल्यांकन और परीक्षण

खण्ड – 2 : हिन्दी भाषा-संरचना
- इकाई – 1 : ध्वनि संरचना
- इकाई – 2 : शब्द संरचना
- इकाई – 3 : रूप संरचना
- इकाई – 4 : वाक्य संरचना

खण्ड – 3 : भाषा-शिक्षण : प्रविधि और अधिगम
- इकाई – 1 : भाषा-शिक्षण विधियाँ
- इकाई – 2 : उत्तरसंरचना विधियाँ
- इकाई – 3 : भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर और मल्टीमीडिया का अनुप्रयोग
- इकाई – 4 : ऑनलाइन भाषा-शिक्षण

खण्ड – 4 : हिन्दी भाषा-शिक्षण (मातृभाषा और अन्य भाषा के सन्दर्भ में)
- इकाई – 1 : वाचन और लेखन
- इकाई – 2 : हिन्दी श्रवण और भाषण-क्षमता का विकास
- इकाई – 3 : शब्दावली और व्याकरण
- इकाई – 4 : साहित्य-शिक्षण

सहायक पुस्तकें :

01. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
02. अन्य भाषा-शिक्षण के कुछ पक्ष, सं. : अमर बहादुर सिंह

03. अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, सं. : रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, भोलानाथ तिवारी, कृष्ण कुमार गोस्वामी
04. अंग्रेजी-हिन्दी अनुवाद व्याकरण, सूरजभान सिंह, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
05. कंप्यूटर के भाषिक अनुप्रयोग, विजय कुमार मल्होत्रा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
06. देवनागरी लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली
07. भाषा : स्वरूप और संरचना, हेमचन्द्र पांडे
08. भाषा-शिक्षण, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
09. भाषा-शिक्षण, लक्ष्मीनारायण शर्मा
10. भाषा-शिक्षण तथा भाषाविज्ञान, सं. : ब्रजेश्वर वर्मा
11. भाषा-शिक्षण सिद्धान्त और प्रविधि, मनोरमा गुप्ता, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
12. भाषाई अस्मिता और हिन्दी, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
13. मानक हिन्दी व्याकरण और रचना, कैलाशचन्द्र भाटिया, रमानाथ सहाय, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
14. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
15. व्यावहारिक-हिन्दी : संरचना और अभ्यास, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
16. हिन्दी : उद्भव विकास और रूप, हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद
17. हिन्दी: एक मौलिक व्याकरण, रमाकान्त अग्निहोत्री, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
18. हिन्दी और उसकी उपभाषाएँ, विमलेश कान्ति वर्मा, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
19. हिन्दी का समसामयिक व्याकरण, यमुना काचरू, मैकमिलन, नई दिल्ली
20. हिन्दी का वाक्यात्मक व्याकरण, सूरजभान सिंह, साहित्य सहकार, दिल्ली
21. हिन्दी की शब्द-सम्पदा, विद्यानिवास मिश्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
22. हिन्दी, देवनागरी लिपि और यूनीकोड, जगदीपसिंह दांगी, म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा
23. हिन्दी भाषा-शिक्षण, भोलानाथ तिवारी
24. हिन्दी भाषा-शिक्षण, भोलानाथ तिवारी, कैलाशचन्द्र भाटिया, लिपि प्रकाशन, नई दिल्ली
25. हिन्दी भाषा : संरचना के विविध आयाम, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
26. हिन्दी भाषा का इतिहास, धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद
27. हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, उदयनारायण तिवारी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
28. हिन्दी भाषा का समाजशास्त्र, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
29. हिन्दी भाषा की रूप संरचना, भोलानाथ तिवारी
30. हिन्दी भाषा की संरचना, भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
31. हिन्दी व्याकरण, कामताप्रसाद गुरु, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
32. हिन्दी व्याकरण, जाल्मा नदीम शित्स, रादुगा प्रकाशन, मास्को
33. हिन्दी वाक्य विन्यास, सुधा कालरा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
34. हिन्दी वाक्य संरचना, चतुर्भुज सहाय, संजय बुक सेंटर, वाराणसी
35. हिन्दी : शब्द-अर्थ-प्रयोग, हरदेव बाहरी
36. हिन्दी शब्दानुशासन, किशोरीदास वाजपेयी, नागरी प्रचारणी सभा, काशी
37. हिन्दी शिक्षण, जयनारायण कौशिक, हरियाणा साहित्य अकादेमी, पंचकूला
38. हिन्दी शिक्षण : अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, सं. : सतीश कुमार रोहरा, सूरजभान सिंह
39. हिंदी शिक्षण का अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, बीना शर्मा, सं. : गिरीश्वर मिश्र, नयी किताब, दिल्ली

पाठानुक्रमणिका

क्र.सं.	खण्ड	इकाई	पृष्ठ क्रमांक
01.	खण्ड – 1	इकाई – 1	08 – 24
02.	खण्ड – 1	इकाई – 2	25 – 50
03.	खण्ड – 1	इकाई – 3	51 – 68
04.	खण्ड – 1	इकाई – 4	69 – 83
05.	खण्ड – 2	इकाई – 1	84 – 96
06.	खण्ड – 2	इकाई – 2	97 – 110
07.	खण्ड – 2	इकाई – 3	111 – 126
08.	खण्ड – 2	इकाई – 4	127 – 141
09.	खण्ड – 3	इकाई – 1	142 – 153
10.	खण्ड – 3	इकाई – 2	154 – 163
11.	खण्ड – 3	इकाई – 3	164 – 186
12.	खण्ड – 3	इकाई – 4	187 – 198
13.	खण्ड – 4	इकाई – 1	199 – 231
14.	खण्ड – 4	इकाई – 2	232 – 251
15.	खण्ड – 4	इकाई – 3	252 – 276
16.	खण्ड – 4	इकाई – 4	277 – 291

खण्ड – 1 : भाषा और भाषा-शिक्षण

इकाई – 1 : भाषा : अवधारणा और स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

1.1.00. उद्देश्य कथन
1.1.01. प्रस्तावना
1.1.02. भाषा : परिचय
1.1.03. भाषा का आधार
1.1.04. भाषा और सम्प्रेषण
1.1.05. भाषा के अभिलक्षण
    1.1.05.1. यादृच्छिकता
    1.1.05.2. सृजनात्मकता
    1.1.05.3. अधिगम्यता
    1.1.05.4. परिवर्तनशीलता
    1.1.05.5. विविक्तता
    1.1.05.6. अभिरचनाओं की द्वैतता
    1.1.05.7. भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता
    1.1.05.8. अंतरणता
    1.1.05.9. मौखिकता-श्रव्यता
1.1.06. भाषा की विशेषताएँ एवं प्रकृति
1.1.07. भाषा का अध्ययन
    1.1.07.1. अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान और भाषा-शिक्षण
1.1.08. भाषा की संरचना
    1.1.08.1. स्वन
    1.1.08.2. रूप
    1.1.08.3. शब्द
    1.1.08.4. वाक्य
    1.1.08.5. अर्थ
    1.1.08.6. प्रोक्ति
1.1.09. भाषा-शिक्षण और भाषा
    1.1.09.1. मातृभाषा
    1.1.09.2. अन्यभाषा
        1.1.09.2.1. द्वितीय भाषा
        1.1.09.2.2. विदेशी भाषा
1.1.10. भाषा-शिक्षण में कोश
1.1.11. पाठ-सार

1.1.12. बोध प्रश्न
1.1.13. कठिन शब्दावली
1.1.14. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1.1.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. भाषा क्या है, बता पाएँगे।
ii. भाषा के दो प्रमुख आधारों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
iii. भाषा और सम्प्रेषण के बारे में जान पाएँगे।
iv. भाषा के अभिलक्षणों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
v. भाषा की विशेषताएँ एवं प्रकृति के बारे में जान पाएँगे।
vi. भाषा के अध्ययन के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
vii. भाषिक संरचना तथा भाषा-शिक्षण में इसके महत्त्व को समझ सकेंगे।
viii. भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा के प्रकारों को जान पाएँगे।
ix. भाषा-शिक्षण में कोश की महत्ता को समझ सकेंगे।

1.1.01. प्रस्तावना

भाषा मनुष्य की भावों को अभिव्यक्त करने का माध्यम है। भाषा क्या है तथा भाषा की उत्पत्ति किस प्रकार हुई, मनुष्य के अलावा संसार के अन्य प्राणियाँ सम्प्रेषण के लिए किन माध्यमों का उपयोग करते हैं, भाषा के अभिलक्षण क्या हैं इत्यादि विषयों पर भाषाविदों ने पिछले कई दशकों से अध्ययन किया है। इसी के चलते भाषा उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धान्त जैसे – दैवी सिद्धान्त, ध्वन्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त, निर्णय सिद्धान्त आदि विभिन्न भाषा उत्पत्ति सिद्धान्त सामने आए। परन्तु आज तक इस बात पर एकल सहमति से एक निश्चित सिद्धान्त तक पहुँच पाना सम्भव नहीं हुआ है। इस पाठ में भाषा की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए भाषा के अभिलक्षण, भाषा की विशेषताएँ और प्रकृति, भाषा का आधार, भाषा तथा सम्प्रेषण, भाषा का अध्ययन, भाषा की संरचना तथा भाषा-शिक्षण में इन सभी बिन्दुओं की अहमियत तथा भाषा-शिक्षण की दृष्टि से भाषा के प्रकारों के बारे में चर्चा की गई है।

1.1.02. भाषा : परिचय

सामान्य भाषा में कहा जाए तो भाषा मनुष्य की सम्प्रेषण का साधन है। परन्तु भाषा की आन्तरिक संरचना पर विचार करने पर इस बात की प्रतीति होती है कि भाषा एक सामान्य वस्तु नहीं जिसे सरलता से समझा या परिभाषित किया जा सके। भाषा वास्तव में वह व्यवस्था है जो निरन्तर विकास, अर्जन, व्यवस्थापन तथा

जटिल सम्प्रेषण व्यवस्था को अपने अंदर समेटती है जिसे सामान्यतः मनुष्य द्वारा प्रयोग में लाया जाता है। भाषा अपने विशिष्ट रूप में किसी विशेष स्थिति में बोलने, लिखने तथा संकेतन की क्रिया को निर्देशित करता है जिसे प्रमुख भाषाविद् सस्यूर ने भाषा व्यवहार के रूप में परिभाषित किया है। किसी एक विशेष स्थान तथा परिस्थिति में एक व्यक्ति के भाषा-व्यवहार पर आधारित भाषिक व्यवस्था को व्यक्तिबोली कहा जाता है। भाषिक-व्यवस्था एक मानसिक अवधारणा है जो वस्तुतः अमूर्त्त होती है जिसे भाषा-व्यवहार मूर्त्त रूप प्रदान करता है। फ्रांसीसी भाषाविद् सस्यूर ने 'भाषा-व्यवस्था' तथा 'भाषा-व्यवहार' को क्रमशः लाँग तथा परोल कहा है। मनुष्य जीवन में भाषा की प्रमुख भूमिका है भाव तथा विचारों को अभिव्यक्त करना। माइकल डेविट तथा किम स्तेरेलनी के अनुसार भाषा की प्रमुख दो भूमिकाएँ हैं: आचरणों की व्याख्या करना तथा मनुष्य को विश्व के बारे में सूचित करना। स्टीवेन रोजर फिशर के अनुसार सरलतम अर्थ में भाषा सूचनाओं के आदान-प्रदान का माध्यम है। इस परिभाषा को स्वीकार किया जाए तो भाषा के अवधारणा के अन्तर्गत मुखाभिव्यक्ति, इंगित, भंगिमा, सीटी, हस्त संकेत, लेखन, गणितीय भाषा, प्रोग्रामिंग या संगणक भाषा इत्यादि समाहित होती हैं। फिशर का मानना है कि इस परिभाषा को स्वीकार करने पर चींटियों द्वारा प्रयुक्त रासायनिक भाषा तथा मधु मक्खियों की नृत्य भाषा को भी भाषा के रूप में स्वीकार करना पड़ेगा। उनका मानना है कि सार्वत्रिक अर्थ में, भाषा जीवन्त संसार का अन्तर्बन्धन है, इसकी सीमा केवल मानवजाति के तूलिका द्वारा आँकी गई है।

1.1.03. भाषा का आधार

भाषा के मुख्यतः दो आधार हैं – मानसिक तथा भौतिक। मनुष्य भाषा के माध्यम से सोचते-विचारते हैं तथा बोलकर उसे मूर्त्त रूप प्रदान करते हैं। यही सोच-विचारने का कार्य भाषा के मानसिक स्तर पर चलता है जिसे भाषा का मानसिक आधार कहा गया है। दूसरी ओर मनुष्य का मानसिक धरातल पर चलने वाले इन्हीं विचारों को जब मनुष्य सुसंयोजित रूप से ध्वनिबद्ध करते हैं तब वह सम्प्रेषणयोग्य बनते हैं और यही भाषा का भौतिक आधार है।

भाषा के इन्हीं दो आधारों के लिए भाषाविज्ञान में भाषा व्यवस्था तथा भाषा व्यवहार इन दो शब्दावलियों का प्रयोग मिलता है जो प्रसिद्ध भाषाविद् सस्यूर की संकल्पनात्मक शब्दावली लाँग तथा परोल के पर्याय के रूप में हिन्दी में व्यवहृत होते हैं। लाँग की अवधारणा मूलतः भाषा व्यवस्था की अवधारणा है जो प्रत्येक भाषाभाषी के मन में भाषिक क्षमता के रूप में वर्तमान रहते हैं। परन्तु वास्तविक धरातल पर भाषा अध्ययन के क्षेत्र में भाषा व्यवस्था से अधिक भाषा व्यवहार पर अधिक चर्चाएँ मिलती हैं जो तत्त्वतः सही भी हैं। क्योंकि भाषा व्यवस्था का व्यवहृत या यूँ कहें कि भौतिक रूप तो भाषा व्यवहार ही है तथा उसी के आधार पर ही भाषा व्यवस्था के बारे में जाना जा सकता है। भाषा अध्ययन के क्षेत्र में भाषा सिद्धान्तकारों के बीच इन दोनों संकल्पनाओं के महत्त्व को लेकर मतभेद अवश्य है। नोम चॉम्सकी जैसे प्रसिद्ध भाषाविद् भाषा व्यवस्था पर ही अपने अध्ययन क्षेत्र को विस्तार प्रदान करने हेतु प्रयासरत हैं तथा वे भाषा व्यवहार को अध्ययनोपयोगी अवधारणा के रूप में स्वीकार नहीं करते। उनका मानना है कि भाषा का आदर्श रूप मानव शिशु के मस्तिष्क में रहता है तथा वह उसी रूप का अधिगम करता है। परन्तु उनकी समीक्षा करते हुए यह बात उठाई गई कि भाषा का समस्त व्यापार तो समाज के

आधार पर चलते हैं तथा मनुष्य भी समाज में रहकर ही भाषा सिखते हैं। इसलिए भाषा के प्रायोगिक रूप का अध्ययन-विश्लेषण अधिक महत्त्वपूर्ण है।

विद्वानों के इन विचार-विवेचनों को दरकिनार करते हुए अगर हम वास्तविकता की ओर ध्यान दें तो यह महसूस करेंगे कि भाषा प्रयोग पर ही भाषा का कार्यव्यापार चलती है। दूसरी ओर मानवीय भाषा की विशेषता बताते हुए भी हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि भाषा अर्जित सम्पत्ति है और मानव शिशु तथा मनुष्य समाज में रहकर ही भाषा सीखते हैं। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भी भाषा के प्रायोगिक पक्ष को ही आधार माना गया है। व्यक्ति विशेष के अनुसार भाषा प्रयोग की भिन्न-भिन्न शैली होती है जैसे – सहज भाषा, क्लिष्ट भाषा, साहित्यपरक भाषा, अश्लील भाषा इत्यादि। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में बात करें तो यह बहुत आवश्यक है कि भाषा शिक्षक की भाषा सहज तथा बोधगम्य हो तथा उनमें स्पष्टता रहे। बोधगम्यता के अभाव में भाषा-शिक्षण कार्य बाधित होने के साथ-साथ अन्य भाषा के सन्दर्भ में भ्रान्ति भी उत्पन्न हो सकती है। इसलिए भाषा-शिक्षण के पाठदान के समय शिक्षकों को भाषा प्रयोग के सन्दर्भ में सावधानी बरतनी चाहिए तथा यथासम्भव सहज तथा विद्यार्थियों के लिए बोधगम्य भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

1.1.04. भाषा और सम्प्रेषण

भाषा का समस्त कार्यव्यापार सम्प्रेषण को ध्यान में रखकर चलता है। हालाँकि मनुष्य अकेले रहते समय कभी-कभी अपने मन में ही बातचीत करते हैं या कभी-कभी तो वह अपने आपसे ही वार्तालाप भी करने लगते हैं। परन्तु सम्प्रेषण के लिए एक से अधिक व्यक्तियों का होना आवश्यक माना गया है। यूँ भी भाषा-शिक्षण तथा भाषार्जन का उद्देश्य समाज में भाषा व्यवहार द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ती करना है। सीधे-सीधे कहा जाए तो सम्प्रेषण मूलतः बातचीत की प्रक्रिया है। इसमें एक से अधिक व्यक्ति वार्तालाप में भाग लेते हैं। जब एक व्यक्ति बोलता है तब अन्य व्यक्ति तथा व्यक्तियाँ श्रोता के रूप में अपनी भूमिका अदा करते हैं तथा वक्ता की बात को अपने श्रवणेन्द्रिय द्वारा ग्रहण करते हैं और जब श्रोता वक्ता के बात पर प्रतिक्रिया देते हैं तब वह वक्ता बन जाते हैं तथा पहले वक्ता श्रोता की भूमिका अदा करते हैं। भूमिकाओं की यह अदला-बदली मानवीय भाषा का एक प्रमुख अभिलक्षण भी है जिसके बारे में भाषा के अभिलक्षण वाली बिन्दु में चर्चा की गई है। भूमिकाओं की यह अदला-बदली ही सम्प्रेषण को सार्थक बनाती है।

भाषा-शिक्षण में सम्प्रेषण बेहद महत्त्वपूर्ण है। भाषा-शिक्षण की कक्षा में शिक्षक तथा विद्यार्थी सम्प्रेषण की दो मुख्य कड़ियाँ हैं। सम्प्रेषण का मुख्य कार्य है सन्देश प्रेषण तथा सन्देश ग्रहण। सन्देश प्रेषण हेतु भाषा-शिक्षण की कक्षा में शिक्षक शिक्षण सम्बन्धी सहायक उपकरणों जैसे ब्लेकबोर्ड, वीडियो इत्यादि का भी प्रयोग कर सकते हैं।

1.1.05. भाषा के अभिलक्षण

किसी न किसी भाषा का प्रयोग तो संसार के लगभग सभी प्राणी अपने समुदाय में करते हैं। परन्तु मानवीय भाषा के कुछ ऐसे विशिष्ट अभिलक्षण हैं जो उसे अन्य प्राणियों के भाषा से अलग करते हैं। इन अभिलक्षणों में कुछ अभिलक्षण तो अन्य प्राणियों के भाषाओं में भी देखने को मिलते हैं परन्तु ये सभी अभिलक्षण एक साथ केवल मानवीय भाषाओं में ही मिलते हैं। नीचे भाषा के कुछ मुख्य अभिलक्षणों पर प्रकाश डाला गया है –

1.1.05.1. यादृच्छिकता

यादृच्छिकता से तात्पर्य है 'माना हुआ' या 'जैसी इच्छा हो'। मानवीय भाषा में शब्दों का वस्तु या भाव से कोई सहजात सम्बन्ध नहीं होता। वह मात्र समाज द्वारा माना हुआ सम्बन्ध है। शब्दों का भाव या वस्तुओं से अगर कोई तार्किक सम्बन्ध होता तो भाषा भिन्नता की स्थिति मानव समुदाय में उत्पन्न नहीं होती। अर्थात् एक वस्तु या भाव के लिए सभी मनुष्य समान शब्दों का प्रयोग करते न कि अलग-अलग शब्दों का। उदाहरण के लिए एक ही वस्तु के लिए हिन्दी तथा असमिया में 'पानी', कन्नड़ में 'नीरू', स्पेनिश में 'आगुआ' शब्द का प्रयोग मिलता है। विभिन्न भाषाओं के सभी शब्दों में यादृच्छिकता के यह लक्षण विद्यमान है। शब्द के अलावा व्याकरण के क्षेत्र में भी रूपरचना तथा वाक्य-रचना में यही बात परिलक्षित होती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी और हिन्दी भाषा में कर्त्ता कारक में प्रयुक्त कारक चिह्नों को लिया जा सकता है। अंग्रेजी में कर्त्ता कारक के लिए किसी भी कारक-चिह्न का प्रयोग नहीं होता। जैसे – Neha wrote a letter. परन्तु हिन्दी में कर्त्ता कारक के लिए 'ने' कारक-चिह्न का प्रयोग मिलता है। जैसे – नेहा ने एक पत्र लिखा। वाक्य संरचना के आधार पर देखा जाए तो अंग्रेजी में कर्त्ता-क्रिया-कर्म की संरचना है। (Neha ate a piece of bread.) परन्तु हिन्दी में कर्त्ता-कर्म-क्रिया की संरचना है। (नेहा ने एक टुकड़ा रोटी खाया।) इस तरह भाषा में शब्द से अर्थ तक तथा रूपरचना से वाक्य-रचना तक सभी बातें यादृच्छिकता के आधार पर ही होती हैं। अर्थात् इनके पीछे कोई तर्क का आधार नहीं है। सभी केवल मात्र यादृच्छिकता के आधार पर ही बने हैं और प्रचलन में आने लगे तथा एक भाषिक समुदाय द्वारा स्वीकृत किये गए और व्यवहार में आए।

1.1.05.2. सृजनात्मकता

भाषा में सीमित शब्द और रूपों के बावजूद भी मनुष्य अपनी आवश्यकतानुसार भाव अभिव्यक्ति हेतु असीमित वाक्यों के सृजन कर सकते हैं। मनुष्य अपने दैनन्दिन जीवन में ऐसे अनेकों वाक्यों का प्रयोग करते हैं जिसका प्रयोग उसने पहले कभी न किया हो। परन्तु बावजूद इसके श्रोता को भी ऐसे नए वाक्यों को समझने में कोई कठिनाई नहीं होती। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि वक्ता और श्रोता द्वारा ऐसे नए वाक्यों द्वारा सम्प्रेषण आखिर कैसे सम्भव होता है ? इसका कारण है भाषिक क्षमता जो उस विशिष्ट भाषा में सम्प्रेषण कार्य को निष्पादित करने

हेतु वक्ता और श्रोता में निहित रहते हैं। सृजनात्मकता मानवीय भाषा का एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण लक्षण है जो अन्य प्राणियों के भाषा में देखने को नहीं मिलता।

1.1.05.3. अधिगम्यता

मानवीय भाषा आनुवंशिक नहीं होती। मानवीय भाषा समाज में रहकर अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। जन्म से ही कोई भी शिशु भाषा सीखकर नहीं आता। धीरे धीरे समाज में रहकर अनुकरण द्वारा वह भाषा सीखना प्रारम्भ करता है और उसे प्रयोग में लाना शुरू करता है। परन्तु भाषाविद् नोम चॉम्सकी का मानना है कि मनुष्य अनुकरण द्वारा भाषा अवश्य सीखता है परन्तु उसमें भाषा सिखने की क्षमता जन्म से ही विद्यमान रहती है।

1.1.05.4. परिवर्तनशीलता

परिवर्तनशीलता मानवीय भाषा की एक महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण है। यह परिवर्तन भाषा के सभी स्तरों में सम्भव है। उदाहरण के लिए 'तेल' शब्द का प्रयोग प्राचीन काल में केवल तिल के तेल के लिए प्रयोग होता था। परन्तु कालानुक्रम में तेल शब्द का प्रयोग सभी प्रकार के तेल के लिए प्रयुक्त होने लगा। यह भाषा की परिवर्तनशीलता का ही परिणाम है जिसे अर्थविस्तार के नाम से भाषाविज्ञान में अध्ययन किया जाता है। परन्तु अन्य प्राणियों के सन्दर्भ में देखा जाए तो वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक भाषा का प्रयोग करते आते हैं जो आनुवंशिक रूप से उसे प्राप्त होता है। भाषा के परिवर्तनशीलता मूलतः भाषा की अधिगम्यता तथा सृजनात्मकता की ही देन है।

1.1.05.5. विविक्तता

मानवीय भाषा में विविक्तता एक मुख्य अभिलक्षण है। मानवीय भाषा अविच्छिन्न नहीं होती। अर्थात् वह कई घटकों तथा इकाइयों का समिश्रण है जिन्हें सार्थक अर्थपूर्ण इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक वाक्य एक या एक से अधिक शब्दों का समूह है। उसी प्रकार शब्द भी एक या एक से अधिक ध्वनियों का समूह है। इस प्रकार मानवीय भाषा अविच्छिन्न न होकर विभाज्य होता है। परन्तु अन्य प्राणियों के भाषा में यह अभिलक्षण प्राप्त नहीं होता।

1.1.05.6. अभिरचनाओं की द्वैतता

भाषा में वाक्य या उच्चार के दो स्तर होते हैं जिसमें से एक स्तर में सार्थक इकाइयाँ होती हैं तो दूसरे की इकाइयाँ निरर्थक होती हैं। इस द्विस्तरीय स्थिति को ही द्वैतता कहा गया है। इनमें से सार्थक इकाइयों को रूपिम कहा जाता है जिसमें शब्द, धातु, प्रत्यय, उपसर्ग आदि शामिल है। दूसरे स्तर में वे ध्वनियाँ हैं जो अपने आप में तो कोई अर्थ नहीं देतीं परन्तु उनसे सार्थक भाषिक इकाइयाँ बनती हैं। यहाँ यह बात भी उल्लेखनीय है कि ध्वनियाँ अपने आप में निरर्थक अवश्य होती है परन्तु यह अर्थभेदक होती है। उदाहरण के लिए 'क' और 'न' ध्वनियाँ

अपने आप में तो कोई अर्थ नहीं देता परन्तु 'काम' और 'नाम' शब्द में अर्थभेद 'क' और 'न' ध्वनियों के कारण ही उत्पन्न हुई हैं। इस प्रकार 'क' और 'न' ध्वनियाँ अर्थभेदक हैं।

1.1.05.7. भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता

बातचीत की प्रक्रिया में वक्ता और श्रोता की भूमिकाएँ बदलती रहती है। जब वक्ता बोल रहे होते हैं तब श्रोता सुनने के कार्य करते हैं और जब वक्ता के बातों पर श्रोता बोलकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं तब पहले श्रोता की भूमिका बदलती है और वह वक्ता बन जाते है और पहले वक्ता श्रोता की भूमिका अदा करते हैं। भूमिकाओं की यह परस्पर परिवर्तनीयता मानवीय भाषा की प्रमुख अभिलक्षणों में से एक है।

1.1.05.8. अंतरणता

अंग्रेजी 'Displacement' शब्द के पर्याय के रूप में हिन्दी में 'अंतरणता' शब्द लिया गया है। भाषा के सन्दर्भ में यह अंतरणता काल तथा स्थान की अंतरणता है। मानवीय भाषा वर्तमान स्थिति की सूचना देने के साथ-साथ भविष्य के बारे में भी सूचना दे पाने में समर्थ है। साथ ही मानवीय भाषा उसी स्थान से दूसरे तथा दूरवर्ती स्थानों की भी सूचना दे सकते हैं। यह मानवीय भाषा का एक विशिष्ट अभिलक्षण है जो मानवेतर भाषा में प्राप्त नहीं होता।

1.1.05.9. मौखिकता-श्रव्यता

मानवीय भाषा मुख से बोली जाती है तथा कान से सुनी जाती है जो लिखित तथा पठन माध्यम का आधार है। यूँ तो इन अभिलक्षणों में कुछ तो अन्य प्राणियों के भाषाओं में भी मिलता है परन्तु ये सारे अभिलक्षण एक साथ मानवीय भाषा में ही मिलता है। भाषा के यही अभिलक्षण भाषा वैविधता के कारण हैं जिसके कारण भाषा-शिक्षण की आवश्यकता पड़ती है तथा भाषा-शिक्षण सम्भव भी हो पाता है। भाषा के इन अभिलक्षणों के अलावा भी भाषा के अन्य कुछ विशेषताएँ भी हैं जो भाषा के स्वरूप को स्पष्ट करती हैं।

1.1.06. भाषा की विशेषताएँ एवं प्रकृति

मानवीय भाषा की ऐसी कुछ विशेषताएँ हैं जो उसे अन्य प्राणियों के भाषाओं से अलग करते हैं। ये विशेषताएँ भाषा के स्वरूप को भी स्पष्ट करती हैं –

1. भाषा सामाजिक वस्तु है : भाषा सामाजिक वस्तु है। मनुष्य समाज में रहकर भाषा सीखता है। भाषा का विकास तथा परिवर्तन भी समाज की ही देन है।
2. भाषा अर्जित सम्पत्ति है : भाषा आनुवंशिक नहीं होती। मनुष्य समाज तथा परिवेश में रहकर भाषा का अर्जन करते हैं।

3. भाषा को व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न नहीं किया जा सकता : भाषा समाज तथा परम्परा द्वारा निर्मित तथा संचालित होती है। मनुष्य समाज में रहकर भाषा का अर्जन करता है। मनुष्य भाषा में सामान्य परिवर्तन तो कर सकता है परन्तु भाषा उत्पन्न नहीं कर सकता है।
4. भाषा को अनुकरण द्वारा अर्जित किया जाता है : भाषा एक समाज-सापेक्ष वस्तु है जिसे अनुकरण द्वारा अर्जित की जाती है। शिशु की भाषार्जन प्रक्रिया को देखें तो यह बात स्पष्ट होती है कि शिशु अपने आस-पास रहने वाले लोगों से जो शब्द सुनते हैं उसे स्वयं दोहराने का प्रयास करते हैं और धीरे-धीरे इस अनुकरण प्रक्रिया द्वारा ही पाँच-छह वर्ष की आयु तक उस भाषा में अच्छी तरह सम्प्रेषण करने लगता है।
5. परिवर्तनशीलता : भाषा में सदैव विकास की गुंजाइश रहती है क्योंकि परिवर्तनशीलता भाषा की प्रकृति तथा विशेषता है। भाषा कभी भी एक जैसी नहीं रहती। समाज-सांस्कृतिक परिवर्तन के चलते भाषा में भी शब्द-भण्डार से लेकर अर्थ तथा संरचनागत परिवर्तन भी घटित होता है। परिवर्तनशीलता भाषा विकास तथा भाषा को जीवित रखने हेतु सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी है।
6. भाषा का अन्तिम स्वरूप नहीं है : यहाँ भाषा से तात्पर्य है जीवित भाषा से। मृत भाषा का अन्तिम रूप तो अवश्य देखी जा सकती है, परन्तु जीवित भाषा का कोई अन्तिम रूप तय कर पाना सम्भव नहीं है। क्योंकि भाषा परिवर्तनशील है इसलिए भाषा में सदा विकास की गुंजाइश रहती है।
7. भौगोलिक सीमा : प्रत्येक भाषा की एक निश्चित भौगोलिक सीमा होती है जिसमें उस भाषा का एक वास्तविक क्षेत्र होता है तथा उस सीमा से बाहर उस भाषा के स्वरूप में परिवर्तन आ जाता है।
8. ऐतिहासिक सीमा : भौगोलिक सीमा की ही भाँति भाषा की ऐतिहासिक सीमा भी होती है। अर्थात् प्रत्येक भाषा इतिहास के किसी एक काल से शुरू होती है तथा निश्चित काल तक व्यवहृत होती है। धीरे-धीरे वह भाषा परिवर्तित होते-होते अपनी पूर्ववर्ती स्वरूप से भिन्न होकर नयी भाषा का स्वरूप प्राप्त कर लेती है।
9. संरचनात्मक भिन्नता : प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट संरचना होती है। अर्थात् कोई भी दो भाषा सम्पूर्ण रूप से संरचनात्मक दृष्टि से समान नहीं होती। उनमें ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य आदि के स्तर पर भिन्नताएँ रहती हैं।

यूँ तो भाषा की विशिष्टता तथा स्वरूप को चन्द शब्दों में स्पष्ट कर पाना सम्भव नहीं। परन्तु ऊपर जिन विशिष्टताओं का उल्लेख किया गया है वे भाषा की प्रमुख विशेषताएँ हैं जो भाषा के स्वरूप को स्पष्ट करती हैं। मानवीय भाषा समाज द्वारा प्रभावित होती है जिसमें सम्प्रेषण में भाग लेने वाले दो व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध, सन्देश का उद्देश्य तथा प्रकार, समाज-सांस्कृतिक परिवर्तन इत्यादि घटक भाषा प्रयोग को सदैव प्रभावित करते रहते हैं। इसलिए भाषा-शिक्षण के समय विद्यार्थियों के भाषा-शिक्षण की उद्देश्य को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। विशेष रूप से विदेशी भाषा के शिक्षण में इन बातों की ओर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है। यूँ तो भाषा-शिक्षण के क्षेत्र को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के अन्तर्गत रखा जाता है परन्तु भाषा-शिक्षण-प्रक्रिया में सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान का भी प्रभाव रहता है। नीचे भाषाविज्ञान के विभिन्न भागों के बारे में चर्चा की गई है।

1.1.07. भाषा का अध्ययन

भाषा के अध्ययन को दो रूपों में देखा जाता है – पहला, किसी भाषा का प्रयोग और प्रयुक्त सापेक्ष अध्ययन जो भाषा-शिक्षण की विषयवस्तु है और दूसरा सामान्य भाषा का अध्ययन-विश्लेषण या किसी भाषा विशेष का विश्लेषण-विवरण जो भाषाविज्ञान की विषयवस्तु है। यूँ तो भाषा-शिक्षण को भी भाषाविज्ञान के अन्तर्गत एक अध्ययन वस्तु के रूप में रखा गया है परन्तु भाषा-शिक्षण और भाषाविज्ञान के अध्ययन पद्धति में भिन्नताएँ हैं। भाषा-शिक्षण में भाषा शिक्षक किसी भाषा को अध्येताओं के लिए व्यवहारोपयोगी बनाने हेतु सिखाते हैं जैसे – अंग्रेजी भाषा, हिन्दी भाषा, फ्रेंच भाषा इत्यादि का शिक्षण। भाषा-शिक्षण में इन भाषा विशेष पर किया गया विवरणात्मक विश्लेषण तथा अध्ययन सहायक सिद्ध होता है।

अध्ययन की सुविधा के लिए भाषाविज्ञान को कई प्रकारों में बाँटा गया है। जैसे – सामान्य भाषाविज्ञान, वर्णनात्मक भाषाविज्ञान, एककालिक तथा बहुकालिक भाषाविज्ञान, तुलनात्मक तथा व्यतिरेकी भाषाविज्ञान, सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान तथा अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, समाजभाषाविज्ञान, मनोभाषाविज्ञान, नृजाति विज्ञान आदि।

सामान्य भाषाविज्ञान में किसी विशेष भाषा के अध्ययन पर केन्द्रित रहने के बजाय भाषा विषयक सामान्य बातों पर ही अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान में किसी विशेष भाषा का अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है। एककालिक भाषाविज्ञान में एक निश्चित काल के अन्तर्गत किसी भाषा का अध्ययन किया जाता है तथा बहुकालिक भाषाविज्ञान में किसी भाषा का कई समय के दौरान पाए जाने वाले रूपों पर अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है। तुलनात्मक भाषाविज्ञान में दो या उससे अधिक भाषाओं का अध्ययन कर उनके बीच की समानताओं का पता लगाया जाता है जिससे उन भाषाओं की सामान स्रोत से विकसित होने का निर्णय करते हैं। तुलनात्मक अध्ययन करते समय दो भाषाओं के बीच जो असमानताएँ प्राप्त होती थी उनका कोई विशेष महत्त्व नहीं था। परन्तु बाद में इन असमानताओं का उपयोग भाषा-शिक्षण तथा अनुवाद विज्ञानं के लिए सहायक सिद्ध हुआ और भाषाओं के बीच अन्तर का पता लगाने हेतु व्यतिरेकी भाषाविज्ञान नाम के भाषाविज्ञान के एक प्रकार का आरम्भ हुआ। भाषा की संरचना तथा भाषा-प्रयोग आदि विषयक विभिन्न सिद्धान्तों का निर्धारण सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान का विषयक्षेत्र है। सैद्धान्तिक भाषाविज्ञान के अन्तर्गत भाषा विषयक जिन सिद्धान्तों का निर्माण होता है उनका भाषा-शिक्षण, कोश निर्माण, अनुवाद आदि में व्यवहारिक प्रयोग ही अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान है। उसके अलावा समाजविज्ञान, मनोविज्ञान, नृजाति विज्ञान इत्यादि क्षेत्रों के परिप्रेक्ष्य में भाषा का जो अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है वही समाजभाषाविज्ञान, मनोभाषाविज्ञान तथा नृजाति-भाषाविज्ञान का विषयक्षेत्र है। भाषाविज्ञान आज एक बहुत ही व्यापक तथा समृद्ध ज्ञानानुशासन के रूप में उभरकर आया है जिसकी सीमा निर्धारित कर पाना काफी कठिन है।

1.1.07.1. अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान और भाषा-शिक्षण

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान में भाषा-शिक्षण एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। भाषा-शिक्षण के लिए आवश्यक शिक्षण-सामग्री का निर्माण तथा चयन, शैक्षणिक व्याकरण, शिक्षण प्रणाली और तकनीक इत्यादि सभी में भाषाविज्ञान की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। भाषावैज्ञानिक सिद्धान्त भाषा के सुसम्बद्ध विवरण प्रस्तुत करने में सहायक है इसलिए भाषा-शिक्षण में उनका उपयोग किया जाना लाजमी है। परन्तु यहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या भाषा-शिक्षण की प्रणाली में भाषा अध्येता को भाषा विश्लेषण की प्रणाली से भी रूबरू कराने की आवश्यकता है ? क्योंकि भाषाविज्ञान तो भाषा विश्लेषण द्वारा ही भाषा का विवरण प्रस्तुत करता है। वास्तव में भाषा अधिगम की प्रक्रिया भाषा विश्लेषण की प्रक्रिया से सर्वथा भिन्न होती है। प्रमाणस्वरूप देखा जा सकता है कि अशिक्षित लोग चाहे भाषा के अंग क्रिया, सर्वनाम आदि के बारे में कुछ न बता सके परन्तु उन्हें अपनी मातृभाषा बोलने में या समझने में कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि आज भाषावैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग भाषा-शिक्षण में बहुत उपयोगी माना गया है। व्यतिरेकी भाषाविज्ञान, तुलनात्मक भाषाविज्ञान, त्रुटि विश्लेषण आदि अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की शाखाएँ जो दो या उससे अधिक भाषाओं के बीच की समानता-असमानता का पता लगाते हैं उनका प्रयोग भाषा-शिक्षण के लिए सहायक सिद्ध हुआ है। साथ ही त्रुटि विश्लेषण की पद्धति द्वारा अध्येताओं के अध्येय भाषा सम्बन्धी त्रुटियों का पता लगाया जाता है जिससे द्वितीय भाषा-शिक्षण के समय हो रही कठिनाइयों के कारणों का पता लगाकर भाषा-शिक्षण-प्रक्रिया को सफल बनाया जा सकता है।

1.1.08. भाषा की संरचना

भाषा एक व्यवस्था है। यह भाषिक व्यवस्था मूलतः भाषिक संरचना की व्यवस्था है। संरचनागत रूप से ध्वनि भाषा की सबसे छोटी इकाई मानी गई है। भाषाविज्ञान के जिस भाग में ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है उसे ध्वनिविज्ञान कहा जाता है। ध्वनियों के व्यवस्थित संयोजन से मौखिक भाषा में अर्थाभिव्यक्ति होती है। यहाँ व्यवस्थित संयोजन से तात्पर्य है– ध्वनियों को क्रमानुसार संयोजित करना जो उस विशेष भाषा के व्यवस्थानुरूप हो जिससे कि अर्थाभिव्यक्ति सम्भव हो। अर्थात् प्रत्येक भाषा में ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ इत्यादि मूलभूत भाषिक इकाइयाँ अवश्य है परन्तु भाषा विशेष में इसकी संरचनागत भिन्नता वर्तमान है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी और हिन्दी भाषा की वाक्य संरचना को लिया जाए तो देखेंगे कि अंग्रेजी में SVO (Subject+Verb+Object) और हिन्दी भाषा में SOV (Subject + Object +Verb) की संरचना द्वारा सार्थक वाक्य बनता है। परन्तु उपर्युक्त तीनों ही इकाइयाँ दोनों भाषाओं में मौजूद है। यहाँ संक्षेप में भाषिक इकाइयों की चर्चा की जा सकती है।

1.1.08.1. स्वन

स्वन या ध्वनि भाषा की लघुतम इकाई है। परन्तु स्वनविज्ञान में सभी प्रकार की स्वनों का अध्ययन नहीं किया जाता। जैसे हँसना, खाँसना इत्यादि ध्वनि तो अवश्य है परन्तु इनका अध्ययन ध्वनिविज्ञान का विषय नहीं

है। राजमणि शर्मा के अनुसार "स्वन वह तत्त्व है जो भाषा के अंग, स्वन, रूप, शब्द को रचना-भूमि प्रदान करता है। स्वन एवं अर्थ मिलकर रूप-शब्द एवं वाक्य को निर्माण-भूमि प्रदान करते हैं।" भाषाई ध्वनियों को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जाता है – स्वर तथा व्यंजन। स्वर वे ध्वनियाँ हैं जिसके उच्चारण में हवा अबाध गति से मुख-विवर से निस्सृत होती है तथा व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में हवा अबाध गति से निकलने के बजाय पूर्ण अवरुद्ध होकर निकलती है या संकीर्ण मार्ग से घर्षित होकर निकलती है या फिर मध्य रेखा से हटकर एक या दोनों पार्श्वों से निकलती है या किसी भाग में कम्पन उत्पन्न करते हुए निकलती है। इस प्रकार व्यंजनों के उच्चारण में वायुमार्ग में पूर्ण या अर्द्ध अवरोध उत्पन्न होती है। डॉ॰ भोलानाथ तिवारी ने स्वर तथा व्यंजन के अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है –

1. स्वरों का अकेले उच्चारण किया जा सकता है, किन्तु व्यंजनों में स, श, ज आदि केवल संघर्षी व्यंजनों के शेष के पहले या बाद में स्वर होने पर ही उच्चारण सम्भव है।
2. सभी स्वरों का उच्चारण देर तक किया जा सकता है। व्यंजनों में केवल संघर्षी ही ऐसे है, शेष का उच्चारण देर तक नहीं हो सकता।
3. ई, ऊ जैसे एक-दो अपवादों को छोड़कर अधिकांश स्वरों के उच्चारण में मुख-विवर में हवा गूँजती हुई बिना विशेष अवरोध के निकल जाती है। अधिकांश व्यंजन इसके विरोधी है और उनमें पूर्ण या अपूर्ण अवरोध हवा के मार्ग में व्यवधान उपस्थित करता है।
4. सभी स्वर आक्षरिक होते हैं। संध्याक्षरों में अवश्य कुछ स्वरों का अनारक्षिक स्वरूप दिखाई पड़ता है, किन्तु यह अपवाद जैसा है। दूसरी ओर प्रायः सभी व्यंजन सामान्यतः अनाक्षरिक होते हैं। अपवादस्वरूप न्, र्, ल् आदि चार-पाँच व्यंजन ही कभी-कभी कुछ भाषाओं में आक्षरिक रूप में दृष्टिगत होते हैं। इस अन्तर का आधार भाषा में प्रयोग है।
5. मुखरता (sonority) की दृष्टि से भी स्वर-व्यंजन में भेद है। स्वर अपेक्षाकृत अधिक मुखर होते हैं और व्यंजन कम मुखर। कुछ अपवाद भी है, किन्तु वे अपवाद ही हैं।
6. ओसिलोग्राफ़ आदि यंत्रों में स्वर और प्रमुख व्यंजनों की लहरों में भीअन्तर मिलता है। परन्तु यह अवश्य है कि र्, म् आदि कुछ व्यंजनों की लहरें प्रकृति की दृष्टि से स्वर और व्यंजन के बीच में आती है।
7. व्यंजनों का उच्चारण मुँह में स्थान विशेष से होता है, किन्तु स्वरों का उच्चारण किसी एक निश्चित स्थान से नहीं होता। वह पूरे मुख-विवर में होनेवाली एक प्रकार की गूँज होता है।
8. ध्वन्यात्मक दृष्टि से स्वर-व्यंजन में स्पष्ट भेद करना कठिन है, किन्तु भाषा विशेष में स्वनिमिक दृष्टि से उसे अलगाया जा सकता है।

1.1.08.2. रूप

सहज अर्थ में वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्दों को रूप या पद कहते हैं। प्रयोग की दृष्टि से शब्दों को मूलतः दो भागों में बाँटा जा सकता है – कोशीय शब्द तथा वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्द जिसे पद या रूप के

नाम से अभिहित किया जाता है। वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्दों से कोशीय शब्द अपेक्षाकृत मुक्त होते हैं। वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्द (रूप) किसी न किसी प्रकार के सम्बन्धतत्त्व द्वारा युक्त रहते हैं। साथ ही वाक्य में ये रूप योग्यतानुसार एक निश्चित क्रम में संयोजित होती है जिसके कारण अर्थ की प्रतीतिसम्भव हो पाती है। भाषाविज्ञान के जिस शाखा में रूपों का अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है उसे रूपविज्ञान (Morphology) कहते हैं।

1.1.08.3. शब्द

अर्थाभिव्यक्ति हेतु शब्द भाषा की सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई है। शब्द से ही वाक्य बनते हैं और वाक्यों से ही प्रोक्ति की रचना होती है। इसके अलावा भी शब्दों में ही प्रत्यय, उपसर्ग आदि के संयोजन से रूप की सत्ता बनती है। अतः कहा जा सकता है कि भाषिक संरचना से लेकर अर्थाद्योतन हेतु भाषा में शब्द की भूमिका अनवद्य है।

1.1.08.4. वाक्य

संरचना की दृष्टि से वाक्य भाषा की सबसे बड़ी इकाई है। वाक्य के आधार पर ही भाषा के व्याकरण की रचना होती है। मुख्य रूप से वाक्य के दो घटक हैं – उद्देश्य (subject) और विधेय (predicate)। वाक्य में जिसके बारे में कुछ कहा जाए वह उद्देश्य है तथा उद्देश्य के बारे में जो कहा जाए वह विधेय है। उदाहरण के लिए 'महेश अच्छा लड़का है।' इस वाक्य में 'महेश' उद्देश्य है तथा 'अच्छा लड़का है' वाक्यांश विधेय है। भाषाविदों ने भाषा के प्रकारों को कई आधारों के अन्तर्गत विभक्त करने का प्रयास किया है। भाषा के आकृति के आधार पर योगात्मक तथा अयोगात्मक भाषाओं के वाक्य प्रकार, रचना के आधार पर वाक्य के प्रकार जैसे – सरल वाक्य, उपवाक्य, मिश्र वाक्य तथा संयुक्त वाक्य इत्यादि भाव या अर्थ की दृष्टि से विधानसूचक वाक्य, निषेधात्मक वाक्य, आज्ञासूचक वाक्य, प्रश्नसूचक वाक्य, विस्मयबोधक वाक्य, संदेहसूचक वाक्य, इच्छाबोधक वाक्य तथा वाक्य में क्रिया की वर्तमानता तथा अवर्तमानता के आधार पर क्रियायुक्त वाक्य तथा क्रियाविहीन वाक्य इत्यादि भेद किये जाते हैं। भाषाविज्ञान में वाक्यविज्ञान (syntax) शाखा में वाक्यों का अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है।

1.1.08.5. अर्थ

अर्थ का महत्त्व भाषा में सबसे अधिक है। तत्त्वतः भाषा का मुख्य कार्य है अर्थ की प्रतीति करना। भाषाविज्ञान में अर्थ मूलतः अध्ययन का विषय भी है और अन्य विधाओं के अध्ययन का आधार भी। भाषाविज्ञान में अर्थविज्ञान (semantics) नामक शाखा में अर्थ का अध्ययन किया जाता है।

1.1.08.6. प्रोक्ति

अंग्रेजी 'डिस्कोर्स' शब्द के पर्याय के रूप में हिन्दी में 'प्रोक्ति' शब्द का प्रयोग मिलता है। प्रोक्ति मूलतः एक से अधिक वाक्यों की ऐसी व्यवस्थित इकाई है जो तर्कपूर्ण और क्रमबद्ध तथा आन्तरिक रूप से सुसम्बद्ध

होती है और अर्थ प्रतीति हेतु अपने विशेष सन्दर्भ में पूर्ण होती है। भाषाविज्ञान में प्रोक्ति एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है तथा इसकी परिधि अत्यन्त व्यापक है।

भाषिक संरचना की दृष्टि से उपर्युक्त पाँच इकाइयों को भाषा की मूलभूत इकाई माना जाता है क्योंकि इनकी सत्ता सभी भाषाओं में वर्तमान है। शब्द-भण्डार की विविधता तथा वाक्य रचना में भाषिक इकाइयों के स्थानक्रम में भिन्नता के कारण भाषाओं में संरचनागत भिन्नताएँ उत्पन्न होती है जिसका परिणाम है संसार की भाषाई विविधता। इसके अलावा भी सामाजिक, सांस्कृतिक, सन्दर्भ इत्यादि ऐसे कुछ महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं जो भाषा को सदैव प्रभावित करती हैं। भाषाविज्ञान के विभिन्न शाखाओं तथा भागों में भाषा सम्बन्धी इन सभी विषयों पर अलग-अलग रूप से विशद् अध्ययन-विश्लेषण किया गया है। चूँकि भाषा परिवर्तनशीलता सदैव भाषा की विशेषता रही है इसलिए भाषा अध्ययन का क्षेत्र भी दिन-प्रतिदिन व्यापक होता जा रहा है।

भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषिक संरचना सबसे महत्त्वपूर्ण है। चूँकि दो भाषाएँ कभी भी समान नहीं होतीं इसलिए भाषा-शिक्षण में अध्येय भाषा की संरचना का ज्ञान देना भाषा शिक्षक का पहला कार्य होता है। भाषिक संरचना ही भाषा की रीढ़ है जिसे सीखकर ही अध्येता अध्येय भाषा को सीख पाएँगे तथा उसे व्यवहार में ला पाएँगे। इसलिए अक्सर लोगों को यह कहते हुए सुनाई पड़ता है कि "अमुक भाषा मैं समझ तो लेता हूँ पर बोल नहीं पाता।" यह बोल न पाने का मुख्य कारण है उस भाषा के संरचनागत पक्षों से भलिभाँति परिचित न होना। संरचनागत पक्ष के अन्तर्गत न केवल उस भाषा के प्रकार्यात्मक पहलुओं की सूचना रहती है बल्कि काल, पक्ष इत्यादि की भी सूचना रहती है। अतः जब व्यक्ति किसी भाषा को समझते हैं जबकि वह उस भाषा को बोल नहीं सकते तो उस समझने के पीछे दो चीजें सहायक होती हैं – पहला उस भाषा की शब्दावली और दूसरा सन्दर्भ। अर्थात् ऐसे व्यक्ति को उस भाषा के कुछ शब्दावलियों का ज्ञान होता है तथा सन्दर्भ से उसे बहुत कुछ ज्ञात होने लगता है। अतः भाषा-शिक्षण में संरचना एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटक है जिसका अध्ययन-अध्यापन आवश्यक है।

1.1.09. भाषा-शिक्षण और भाषा

भाषा-शिक्षण से तात्पर्य है भाषा सीखने तथा सिखाने की प्रक्रिया। भाषा-शिक्षण में मूल रूप से तीन घटक होते हैं – अध्यापक, अध्येता तथा अध्येय भाषा। भाषा-शिक्षण के समय अध्येता द्वारा उस भाषा को सीखने के उद्देश्य को ध्यान में रखना आवश्यक है। क्योंकि सामाजिक दृष्टि से भाषा के कई रूप होते हैं तथा आजकल व्यवसायिक उद्देश्य से भी भाषा सीखी जाती है। अतः भाषा शिक्षक को अध्येता के भाषा सीखने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर भाषा-शिक्षण कार्य को करना चाहिए।

भाषा-शिक्षण में भाषा के मूल रूप से दो प्रकार माने गए हैं – मातृभाषा तथा अन्य भाषा।

1.1.09.1. मातृभाषा

यहाँ मातृभाषा से तात्पर्य माँ की भाषा से नहीं या ऐसी भाषा से नहीं जो मनुष्य शिशु अवस्था से सीखना प्रारम्भ करता है। वस्तुतः यहाँ बोली और भाषा को अलग-अलग रखा गया है। अर्थात् यहाँ भाषा से तात्पर्य किसी भाषा से है जिसके अन्तर्गत कई बोलियाँ हो सकती है। ऐसी स्थिति में शिशु अवस्था से मनुष्य सबसे पहले तो यहीं स्थानीय बोलियाँ अपनी प्रथम भाषा के रूप में अर्जित करता है तथा बाद में वे बोली या बोलियाँ जिस भाषा के अन्तर्गत आते हैं वह भाषा सीखते हैं जिसे मातृभाषा कहा गया है। उदाहरण के लिए हिन्दीभाषी क्षेत्र की बात की जा सकती है। हिन्दीभाषी क्षेत्र के लोग सामान्य रूप से विभिन्न बोलियों के भाषी हैं जो मातृभाषा के रूप में हिन्दी सीखते हैं।

1.1.09.2. अन्यभाषा

अन्यभाषा से तात्पर्य है मातृभाषा से इतर कोई दूसरी भाषा जिसके सीखने की आवश्यकता तथा सामाजिक सन्दर्भ मातृभाषा सीखने की आवश्यकता तथा सामाजिक सन्दर्भ से भिन्न होती है। अन्य भाषा को भी दो भागों में विभक्त करके देखा गया है – द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा।

1.1.09.2.1. द्वितीय भाषा

द्वितीय भाषा से तात्पर्य है एक ही देश में प्रचलित किसी अन्य भाषा से। अर्थात् किसी व्यक्ति की मातृभाषा अगर असमिया है तो तेलुगू, तमिल, मराठी इत्यादि उनके लिए दूसरी भाषा होगी। एक ही राष्ट्र के अन्तर्गत विकसित होने के कारण ऐसी भाषाओं में प्रायः सामाजिक परिवेश एवं स्थितियों में समानताएँ देखने को मिलती हैं। भारत के सन्दर्भ में अंग्रेजी भाषा को भी द्वितीय भाषा माना गया है। हालाँकि सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से वह भारतीय भाषाओं से भिन्न है परन्तु भारत की भाषाई विविधता के कारण अंग्रेजी कई स्थितियों में सम्पर्क भाषा के रूप में भी कार्य करती है। साथ ही भारत में अंग्रेजी को सह राजभाषा की भी मान्यता प्राप्त है।

1.1.09.2.2. विदेशी भाषा

किसी व्यक्ति के लिए विदेशी भाषा वह है जो उसकी मातृभाषा से भिन्न है तथा उस भाषा के सामाजिक-सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक, भौगोलिक परिवेश भी सर्वथा भिन्न है। भारत के सन्दर्भ में देखा जाए तो स्पेनिश, जर्मन, फ्रेंच इत्यादि विदेशी भाषाएँ है। विदेशी भाषा-शिक्षण में उस भाषा की मानक रूप को ही सिखाया जाता है। विदेशी भाषा को गहराई से जानने के लिए अध्येता को भाषा-शिक्षण कक्षा के अलावा भी अपने स्तर पर गम्भीर अध्ययन की आवश्यकता होती है।

1.1.10. भाषा-शिक्षण में कोश

किसी भाषा को सीखने के लिए कोश की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। कोश भाषा-शिक्षण का प्राथमिक उपकरण है जिसमें दो या उससे अधिक भाषाओं के शब्दार्थ होते हैं। भाषा-शिक्षण की दृष्टि से कोश सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। इसलिए भाषा-शिक्षण के समय उचित तथा उपयोगी कोश का चयन अत्यावश्यक है। इस सन्दर्भ में भाषा शिक्षक अध्येता की सहायता कर सकते हैं। कोश चयन करते समय भाषा-शिक्षण के उद्देश्य को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। एक अच्छे कोश भाषा-शिक्षण में सहायक सिद्ध होते हैं।

1.1.11. पाठ-सार

मनुष्य ने आज तक जिन वस्तुओं का आविष्कार तथा उद्‌भावन किया है उनमें भाषा का महत्त्व सर्वोपरि है। भाषा में ही मनुष्य की विकास की कुंजी छिपी है। प्रस्तुत पाठ में भाषा के विभिन्न पक्षों पर विचार किया गया जिससे भाषा की अवधारणा तथा स्वरूप स्पष्ट हो पाए। भाषा मनुष्य की भाव अभिव्यक्ति का माध्यम है। मानवीय भाषा के कुछ ऐसे अभिलक्षण है जो उसे अन्य प्राणियों के भाषा से अलग करते हैं। भाषा की कुछ विशेषताएँ है जो मानवीय भाषा की सम्पत्ति है। भाषा-शिक्षण की दृष्टि से भाषा के मुख्यतः दो भेद किये गए हैं – मातृभाषा तथा अन्य भाषा। प्रस्तुत पाठ में भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा के इन सभी पक्षों पर विचार किया गया है।

1.1.12. बोध प्रश्न / अभ्यास

रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु उचित विकल्प का चुनाव कीजिए–

1. परिवर्तनशीलता ..... भाषा की विशेषता है। (मानवीय / मानवेतर)
2. मानवीय भाषा ..... सम्पत्ति है। (पैतृक / अर्जित)
3. ..... भाषा की सबसे छोटी इकाई है। (रूप / स्वन)
4. भाषा-शिक्षण की दृष्टि से भाषा के मुख्यतः ..... रूप मिलते हैं। (दो / चार)
5. भाषा व्यवस्था तथा भाषा व्यवहार की अवधारणा ..... की है। (ब्लूमफील्ड / सस्यूर)

सही उत्तर – (1) मानवीय (2) अर्जित (3) स्वन (4) चार (5) सस्यूर

कथन के सही / गलत होने की पहचान कीजिए –

1. मानवीय भाषा आनुवंशिक है। (सही / गलत)
2. जीवित भाषा का अन्तिम रूप निर्धारित नहीं है। (सही / गलत)
3. लाँग तथा परोल की अवधारणा नोम चॉम्सकी की है। (सही / गलत)
4. व्यक्तिगत रूप से भाषा उत्पन्न नहीं की जा सकती। (सही / गलत)
5. भाषा का समस्त कार्य-व्यापार अर्थद्योतन हेतु चलता है। (सही / गलत)

सही उत्तर – (1) गलत (2) सही (3) गलत (4) सही (5) सही

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा के अभिलक्षणों को संक्षेप में लिखिए।
2. सम्प्रेषण से आप क्या समझते हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा का परिचय देते हुए भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा के प्रमुख रूपों के बारे में चर्चा कीजिए।
2. भाषा के आधार को स्पष्ट करते हुए भाषा की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

1.1.13. कठिन शब्दावली

लाँग तथा परोल : लाँग तथा परोल की संकल्पना जर्मन भाषाविद् सस्यूर ने की है। सस्यूर ने भाषा के दो रूप माने थे – लाँग तथा परोल। हिन्दी में इसे क्रमशः भाषा-व्यवस्था तथा भाषा-व्यवहार कहा जाता है। भाषा एक व्यवस्था है जिसकी संकल्पना प्रत्येक भाषाभाषी के मन में भाषिक क्षमता के रूप में वर्तमान है जिसे सस्यूर ने लाँग कहा है। दूसरी ओर परोल किसी भाषाभाषी समाज के व्यक्ति द्वारा उस भाषा का व्यवहृत रूप है।

1.1.14. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. तिवारी, डॉ॰ भोलानाथ (2001), भाषाविज्ञान, 22-ए, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहावाद, किताब महल, ISBN : 81-225-0007-2
2. शर्मा, राजमणि (2007),आधुनिक भाषा-विज्ञानं, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISBN : 81-7055-483-7
3. सिंह, प्रो॰ दिलीप (2007), भाषा, साहित्य और संस्कृति-शिक्षण, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISBN : 978-81-8143-619-1
4. Yule, George (2003), The Study of Language, UK, Cambridge University Press, ISBN : 0521 56053 5
5. Devitt, Michael & SterIny, Kim (1999), Language and Reality : An Introduction to the Philosophy of Language, Massachusetts, Cambridge, MIT Press, ISBN : -0262-54099-1, p. 5

6. Fisher, Steven Roger (2001), History of Language, UK, London, Reaktion Books Ltd., ISBN : 186189080X (Pbk), p. 11-12
7. शर्मा, राजमणि (2007),आधुनिक भाषा-विज्ञान, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISBN : 81-7055-483-7 p। 20
8. तिवारी, डॉ॰ भोलानाथ (2001), भाषाविज्ञान, 22-ए, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहावाद, किताब महल, ISBN : 81-225-0007-2 p. 307-308
9. सिंह, प्रो॰ दिलीप (2007), भाषा, साहित्य और संस्कृति-शिक्षण, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISBN : 978-81-8143-619-1, p 21, 42

❖❖❖

खण्ड – 1 : भाषा और भाषा-शिक्षण

इकाई – 2 : भाषा-शिक्षण की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

1.2.00. उद्देश्य कथन
1.2.01. प्रस्तावना
1.2.02. भाषा का आधार
    1.2.02.01. दार्शनिक आधार
    1.2.02.02. मनोवैज्ञानिक आधार
    1.2.02.03. सामाजिक आधार
1.2.03. भारत का बहुभाषिक परिदृश्य
    1.2.03.01. भारत में भाषाएँ एवं भाषा परिवार
    1.2.03.02. भाषा की बहुभाषिकता के आयाम
1.2.04. भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा के प्रकार
    1.2.04.01. मातृभाषा और अन्यभाषा
    1.2.04.02. द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा
1.2.05. हिन्दी भाषा-शिक्षण के प्रमुख रूप
    1.2.05.01. मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण
    1.2.05.02. अन्य भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण
1.2.06. भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त
1.2.07. उद्देश्य केन्द्रित भाषा-शिक्षण
    1.2.07.01. उद्देश्यों की पूर्ति में भाषा-शिक्षण
    1.2.07.02. भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण
    1.2.07.03. उद्देश्यों की पूर्ति में बाधाओं का विश्लेषण
1.2.08. भाषा-शिक्षण और त्रुटि विश्लेषण
    1.2.08.01. त्रुटि विश्लेषण के सिद्धान्त
    1.2.08.02. व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटिविश्लेषण
1.2.09. परीक्षण और मूल्यांकन
1.2.10. पाठ-सार
1.2.11. बोधप्रश्न
1.2.12. व्यवहार
1.2.13. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1.2.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ में भाषा-शिक्षण से सम्बन्धित विविध संकल्पनाओं पर प्रकाश डाला गया है जिनसे सम्बन्ध होकर ही भाषा-शिक्षण और भाषा-अधिगम की प्रक्रिया सफलतापूर्वक सम्पन्न होती हैं। प्रस्तुत पाठ द्वारा आपको भाषा-शिक्षण के व्यापक क्षेत्र का परिचय मिलेगा। पाठ को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे –

i. भाषा का अर्थ एवं आधार का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
ii. भाषा का बहुभाषिक परिदृश्य का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iii. भारत में भाषाएँ एवं भाषा परिवार का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iv. भाषा के बहुभाषिकता के आयाम का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
v. मातृभाषा, अन्य भाषा, द्वितीयभाषा एवं विदेशी भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा प्रकारों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vi. भाषा-शिक्षण में कौशल विकास का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vii. भाषा-शिक्षण के सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
viii. भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
ix. हिन्दी भाषा-शिक्षण के विविध रूपों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
x. भाषा सीखने में उत्पन्न बाधाओं की चर्चा कर सकेंगे।
xi. भाषा-शिक्षण में त्रुटि विश्लेषण की व्याख्या कर सकेंगे।
xii. भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन और परीक्षण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.2.01. प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है। मानव समाज में रहते हुए तथा उसके मानदण्डों का परिपालन करने के लिए व्यवहार को सीखना आवश्यक होता है। एक अनुकूल व्यवहार ज्ञान पर आधारित होता है। ज्ञान के माध्यम से संस्कार एवं सभ्यता का समुचित विकास होते देखा जाता है। इसी ज्ञान का प्रमुख माध्यम भाषा है। भाषा में हम अपने को व्यक्त करते हैं और दूसरों के साथ जुड़ पाते हैं। अर्थात् भाषा अभिव्यक्ति का साधन है। भाषा की एक विशेषता है कि भाषा परिवर्तनशील प्रकृति के रूप में देखी जाती है। भाषा की इस परिवर्तनशीलता के कुछ आधार होते हैं जैसे दार्शनिक, मनौवैज्ञानिक और सामाजिक आदि। विश्व का एक बहुभाषिक परिदृश्य है। इस विश्व के बहुभाषिक परिदृश्य में भारत के बहुभाषिक परिप्रेक्ष्य में भाषा परिवार के अनुसार उसके विभिन्न आयाम सामने आये हैं। आज भाषा-शिक्षण का क्षेत्र अतिव्यापक हो गया है। भाषा-शिक्षण में मनोभाषाविज्ञान और समाजभाषाशास्त्र की उपादेयता स्वीकार की गई है। इसके अतिरिक्त, वर्तमान राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय यथार्थताओं के तहत परम्परागत शिक्षण की कई अवधारणाएँ आमान्य हुई हैं और नवीन दृष्टि आई है। परीक्षण-मूल्यांकन की परम्परागत धारणा में भी परिवर्तन आया है कि इनका उद्देश्य अध्येता को सफल असफल घोषित करना मात्र है। आज इन्हें भाषा-शिक्षण के साथ सहयोजित क्रिया के रूप में देखा जा रहा है। आज शिक्षण

सिद्धान्तों के आधार पर भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों को निर्धारण एवं साधने की दृष्टि सामने आई है। शिक्षा व्यवस्था में हिन्दी भाषा-शिक्षण के विशेष महत्त्व के तहत ही भाषा-शिक्षण मातृभाषा और अन्य भाषा के रूप में हो रहा है। इन सभी पर विचार करते हुए 'भाषा-शिक्षण' के अधुनातन सन्दर्भ प्रस्तुत पाठ में उभारे गये हैं।

1.2.02. भाषा का आधार

भाषा एक केन्द्रीय व्यवहार है जो हमारी दुनिया में हर कहीं परिव्याप्त है और सभी को प्रभावित करता है। भाषा में हम आपने को व्यक्त करते हैं और दूसरों के साथ जुड़ पाते हैं। इसके अभाव में व्यक्ति की समस्त व्यावहारिक चेष्टाएँ पंगु सदृश हो जाती हैं। भाषा द्वारा ही मानव अपने संवेगों, विचारों एवं इच्छाओं को व्यक्त करता है, फिर चाहे वह अभिव्यक्ति मौखिक रूप से हो अथवा लिखित या सांकेतिक भाषा में। भाषा को मानव व्यवहार की विशिष्टता कहने में भाषा की अपनी ही आन्तरिक एवं बाह्य जटिल संरचना का हाथ है। प्रसिद्ध भाषा शास्त्री ब्लॉक एंड ट्रेंगर ने भाषा को यों परिभाषित किया है – "भाषा यादृच्छिक वाक् प्रतीकों की व्यवस्था है, जिसके द्वारा उस भाषाई समुदाय के लोग परस्पर विचारों का आदान-प्रदान एवं सहयोग करते हैं।" भाषा का यह रूप या वस्तु एक साधन के रूप में समाज के उपयोग के लिए है, निश्चय ही यह साधन मानव विकास और संस्कृति की एक विशिष्ट उपलब्धि है। इसलिए मानव शिशु भाषा सीखता है, मानवेतर प्राणीयों के शिशु शुरू से आखिर तक इस साधन से वंचित ही रहते हैं। शिशु की भाषा सम्प्राप्ति की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के लिए दो शब्द आजकल प्रचलित है – (i) अर्जन और (ii) अधिगम। भाषा अर्जन तथा भाषा अधिगम तत्त्वतः दो नितान्त अलग प्रक्रियाएँ नहीं हैं। भाषा अर्जन और अधिगम का दार्शनिक , सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आधार हैं। भाषा की प्रकृति अनुकरणप्रधान होती है। अपनी अनुकरण जन्य प्रवृत्ति के कारण ही बालक शैशवावस्था से ही अपने चतुर्दिक प्रमुख भाषा को सीखता, सुनता, समझता एवं व्यवहार में लाता है। इससे स्पष्ट है कि भाषा परम्परा से प्राप्त कोई पैतृक सम्पत्ति नहीं होती है। आयुवृद्धि के साथ बच्चा प्रारम्भ में अनुकरण द्वारा वर्णन करता है। विचार-विनिमय की इस प्रक्रिया में आधारों की भूमिका दिखाई देती है जैसे दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक इत्यादि।

1.2.02.01. दार्शनिक आधार

भारतीय चिन्तन में वाणी पवित्र है, शब्द अक्षर हैं और अक्षर ब्रह्म है, जो कभी नष्ट नहीं होता है। भर्तृहरि अपने वाक्यपदीयम् नामक ग्रन्थ में लिखते हैं कि वाणी की उत्पत्ति मूलाधार चक्र से होती है एवं परा, पश्यन्ती, मध्यमा रूपों को अतिक्रान्त कर वैखरी वाक् श्रवणगोचर होता है। ध्वनि एवं शब्द का एक रूप स्वीकार शब्द को ब्रह्मतत्त्व स्वीकार किया जाता है। यह जगत् प्रक्रिया में जीवन व्यवहार के लिए भिन्न-भिन्न अर्थ में परिवर्तित होता है।

1.2.02.02. मनोवैज्ञानिक आधार

भाषा के मनोवैज्ञानिक आधार को मानसिक आधार की भी संज्ञा दी जा सकती है। भावों और विचारों का सम्बन्ध मानसिक योग्यता एवं प्रक्रिया से है। भावों एवं विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम भाषा है जिसका सम्बन्ध मनोदशा से होता है। मन में उत्पन्न क्रिया तथा प्रतिक्रिया ध्वनियों के रूप में प्रकट होती है। कथन का तात्पर्य है कि मस्तिष्क द्वारा विचारों की स्वीकृति प्राप्त करने लेने के पश्चात् ही वे अभिव्यक्ति का माध्यम बनते हैं। भाषा उत्तेजना प्रतिक्रिया ध्वनियों की एक शृंखला है। वाणी के माध्यम से मानसिक ग्रन्थियों को दूसरे व्यक्तियों एवं मानसिक स्तर का बोध होता है। इसे ही भाषा का मनोवैज्ञानिक आधार कहा जा सकता है।

1.2.02.03. सामाजिक आधार

सभी सामाजिक कार्यों तथा गतिविधियों में भाषा का उपयोग होता है। मानसिक सम्बन्धों का आधार भाषा ही होती है। अपनी भाषा बोलने वाले व्यक्तियों से अपनापन का अनुभव करते हैं। सामाजिक रचना एवं समाज में विचार-विनिमय की आवश्यकता ने भाषा को जन्म दिया है। अत एव विभिन्न स्थानों, क्षेत्रों एवं समय में उत्पन्न भाषाओं में भिन्नता एवं विविधता पाई जाती है।

1.2.03. भारत का बहुभाषिक परिदृश्य

विविधता में एकता यह भारत की पहचान है। यहाँ कई तरह की विविधताएँ हैं जैसे – खान-पान, वेशभूषा, धर्म-व्यवहार, रीति-रिवाज, भाषा आदि सम्बन्धी इन सबमें भाषाई विविधता प्रमुख है। अतः कहा भी जाता है कि भारत वस्तुतः प्रकृति की एक अनोखी भाषा प्रयोगशाला है। उसमें अधिकांशतः बहु भाषा-भाषी लोग रहते हैं। भारत की भाषाओं का स्वरूप विशिष्ट प्रकार का है। भाषावैज्ञानिक यह मानते हैं कि पूरा भारत एक भाषिक क्षेत्र है। बहुभाषिक परिदृश्य हमारे लिए एक संसाधन का काम करता है और हमारी सांस्कृतिक सफलता को दर्शाता है।

1.2.03.01. भारत में भाषाएँ एवं भाषा परिवार

भारत में प्रत्येक राज्य में प्रायः भिन्न-भिन्न भाषाएँ प्रचलित हैं, उनमें भी अपने-अपने में कई भेद पाए जाते हैं। अधिकांश भारतीय भाषाओं की मूलभाषा संस्कृत मानी जाती है। संस्कृत यूरो-भारतीय या यूरोपीय भाषा परिवार की भाषा है। संस्कृत का भारतीय भाषाओं के साथ-साथ विश्व की कई भाषाओं के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। भारोपीय भाषा परिवार को सतम एवं कैतुम ऐसे दो वर्गों में बाँटा जाता है। संस्कृत कैतुम वर्ग की भाषा है एवं संस्कृत भारतीय भाषाओं का मूल है।

1.2.03.02. भाषा की बहुभाषिकता के आयाम

बहुभाषिकता भारत के लिए एक सम्पदा है। प्रत्येक भारतीय विद्यार्थी निश्चित तौर पर एक से अधिक भाषाएँ जानते और बोलते हैं। भाषाई विविधता को बनाए रखने में भाषा के प्रति हमारा दृष्टिकोण बहुत मायने रखता है। बहुभाषिकता का भाषाई प्रवीणता, विद्यालयी उपलब्धि, संज्ञानात्मक लचीलापन और सामाजिक सहिष्णुता के साथ नजदीकी सह सम्बन्ध है। शिक्षण की दृष्टि से बहुभाषिकता के निम्नलिखित आयाम हैं, यथा –

i. **बौद्धिक आयाम** : इस आयाम में भाषा को दो भागों में बाँटा जा सकता है – शाब्दिक तथा अशाब्दिक। शाब्दिक भाषा में अक्षर, शब्द, वाक्य एवं वाक्यों का विशिष्ट स्वरूप अन्तर्भुक्त है। वाक्य का ही श्रवण, भाषण, पठन, लेखन आदि कलाएँ होती हैं। अशाब्दिक भाषा में शारीरिक भाषा यानी मुख मुद्राएँ एवं संकेत आदि अन्तर्निहित होते हैं। इन सबके अर्थ बुद्धि से ही लगाए जाते हैं।

ii. **शिक्षणशास्त्रीय आयाम** : भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं। भाषाविज्ञान, व्याकरण तथा भाषाकौशल भाषा का ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक पक्ष है। भाषा का साहित्य कलात्मक पक्ष है। कलात्मक पक्ष में गद्य, पद्य, नाटक, कथा, निबन्ध एवं आत्मकथा आदि आते हैं। भाषा-शिक्षण में ज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा कलात्मक पक्षों को सिखाया जाता है। अतः भाषा का शिक्षणशास्त्रीय आयाम भी महत्त्वपूर्ण है।

1.2.04. भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा के प्रकार

भाषा-शिक्षण का सम्बन्ध एक ओर भाषा से रहता है और दूसरी ओर मानव मन तथा मानवीय व्यवहार से होता है। यहाँ सीखने और सिखाने वाली वस्तु वस्तुतः भाषा ही होती है अर्थात् भाषा-शिक्षण की अध्ययन वस्तु भाषा होती है। भाषा, जो भाषावैज्ञानिक अध्ययन वस्तु भी है। अतः भाषा-शिक्षण में भाषा ही साध्य भी है और साधन भी। आज के समय में भाषा को एक सामाजिक वस्तु के रूप में पहचान मिली है, जिसका मूल कारण भाषा से मनुष्य का अन्तस्सम्बन्ध है। भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में भी भाषा सीखने सिखाने वाले दोनों ही मनुष्य होते हैं। अत एव भाषा-शिक्षण में आज अध्येय भाषा के साथ भाषा-अध्येता, उसके अभिप्रेषण तथा उसकी मनोवृत्ति को केन्द्रीय स्थान दिया गया है। इस दृष्टिकोण से भाषा अर्जन का महत्त्व भी बढ़ा है। भाषा-शिक्षण का लक्ष्य मुख्यतः उद्देश्य से बाधित होता है। भाषा अध्येता भाषा को किसी न किसी विशेष सन्दर्भ में ही सीखता है और इन्हीं सन्दर्भों के परिप्रेक्ष्य में उसे भाषा सिखाई भी जाती है।

भाषा-शिक्षण का क्षेत्र आज अतिव्यापक हो गया है। भाषा सीखने की प्रकृति से सुपरिचित होने के बाद ही भाषा-शिक्षण की प्रणाली निश्चित की जा सकती है। भाषा अध्येता और भाषा प्रयोक्ता की विभिन्न आवश्यकताओं के सन्दर्भ में गहराई से देखा जा रहा है। भाषा-शिक्षण की सफलता के लिए उसके उद्देश्य और प्रयोजन के निर्धारण को अनिवार्य घटक के रूप में आवश्यक माना जा रहा है। यह भी माना जा रहा है कि भाषा-

शिक्षण के उद्देश्य प्रयोजन की सिद्दि प्रयोक्ता है (विद्यार्थी या अध्येता) सापेक्ष होती है। अध्येता सापेक्ष भाषा-शिक्षण की संकल्पना ने अध्येय वस्तु भाषा के एकाधिक भेद किए। इन प्रकारों को हम भाषा-शिक्षण के उद्देश्य सिद्धि के साधक भी कह सकते हैं। ये भेद दो हैं – (i) मातृभाषा तथा (ii) अन्य भाषा। भाषा समूहों और भाषा-समाजों में भाषिक स्थिति के भेद के कारण इन दो भेदों को कुछ उप प्रकारों में भी विभाजित किया गया है –

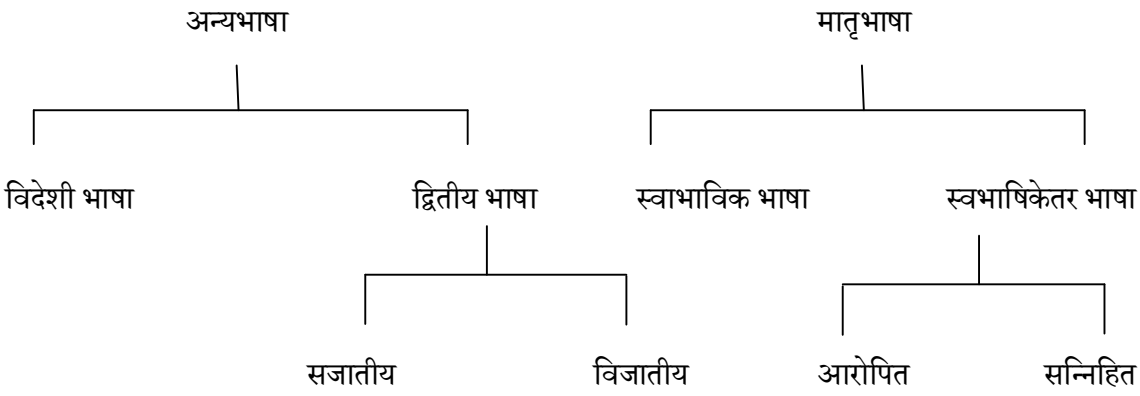

इससे स्पष्ट है कि भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में मुख्य विभाजन मातृभाषा और अन्य भाषा के रूप में सामने आता है। मातृभाषा के रूप में तथा अन्य भाषा के रूप में भाषा-शिक्षण अपनी प्रकृति, प्रणाली तथा अध्येता की अपनी आवश्यकता, उद्देश्य, प्रयोजन एवं अभिप्रेरण के कारण भिन्न हो जाता है।

1.2.04.01. मातृभाषा और अन्यभाषा

मातृभाषा एक सामाजिक संस्थागत यथार्थता है। मातृभाषा ही व्यक्ति को सामाजिक सन्दर्भों से जोड़ती है। मातृभाषा के द्वारा ही व्यक्ति अपनी सामाजिक अस्मिता निर्धारित करता है। प्रायः मातृभाषा का रूप क्षेत्रीय बोली का रूप हुआ करता है। उदाहरण के लिए हिन्दी भाषा को मातृभाषा के रूप में सीखने वालों पर चर्चा कर सकते हैं। हिन्दी भाषा समुदाय मूल रूप में बोली भाषी समूहों से निर्मित है। इन बोलियों को हम हिन्दी की अधीनस्थ बोलियाँ या उपभाषा कहते हैं। जैसे अवधी, ब्रज, मैथिली, मारवाड़ी, मगही, गढ़वाली आदि। इन बोलियों के प्रयोक्ता अपने बोली क्षेत्र के बाहर एक बृहत्तर समाज से जुड़ने एवं सामाजिक अस्मिता स्थापित करने के लिए हिन्दी को मातृभाषा के रूप में स्वीकार करके सीखते हैं। मातृभाषा व्यक्ति के लिए अपने समाज और संस्कृति के भीतर अपना स्थान ढूँढ़ने और पाने का मुख्य साधन है, और साथ ही वह उसके बौद्धिक व्यापार का आधार भी है। मातृभाषा एक सामाजिक यथार्थ है, एवं व्यक्ति के सामाजीकरण का माध्यम भी है। मातृभाषा के माध्यम से सीखे गए विषयों का ज्ञान अधिक परिपक्व तथा स्थायी होता है। मातृभाषा अधिगम द्वारा व्यक्ति अनेक क्षमताएँ अर्जित करता है, यथा –

1. मातृभाषा के माध्यम से व्यक्ति ज्ञान को परिपक्व, स्थायी तथा अनुभवसिद्ध करने की क्षमता अर्जित करता है।
2. मातृभाषा के माध्यम से व्यक्ति का आत्मविश्वास विकसित होता है।

3. मातृभाषा के माध्यम से व्यक्ति की अवबोधन क्षमता विकसित होती है।
4. मातृभाषा के माध्यम से व्यक्ति अपनी अनुभूतियों और संवेदनाओं को अनेक प्रकार से व्यक्त करने में सक्षम होता है।
5. मातृभाषा ही व्यक्ति को उसके बौद्धिक व्यवहारों को साधने, नियन्त्रित करने एवं सम्पन्न करने में सक्षम बनाती है।

शिक्षा के सन्दर्भ में जोड़कर देखा जाए तो मातृभाषा सामान्यतः व्यक्ति की 'साक्षरता' का आधार बनती है। अतः साक्षरता का आधार वही भाषा बनती है जिसे व्यक्ति सहज एवं स्वाभाविक रूप में बोलने-समझने में समर्थ होता है, अर्थात् उनकी अपनी मातृभाषा। शिक्षा के सन्दर्भ में भी मातृभाषा स्वयं एक और साध्य बनाती है और दूसरी ओर अन्य विषयों के लिए माध्यम भाषा के रूप में कार्य करती है। माध्यम रूप में यह शैक्षिक भाषा का रूप ग्रहण करती है। प्रत्येक विषय के साथ उसकी माध्यम भाषा जुड़ी होती है, और मातृभाषा-शिक्षण को सार्थक बनाती है। प्रथम भाषा वह भाषा है जिसे बालक भाषा के रूप से सबसे पहले सहज एवं स्वाभाविक व्यापार के रूप में सीखता है।

हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि सामान्यतः हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ उसके प्रयोक्ता के लिए प्रथम भाषा होती हैं। इन बोलियों का प्रयोग ही बालक के परिवार में तथा उसके परिवेश में होता है और सबसे पहले बालक इन्हें ही प्रथम भाषा के रूप में अर्जित करता है। हिन्दी भाषा समुदाय का बालक बोली को ही अपनी माँ के गोद में पलते हुए प्रथम भाषा के रूप में सीखता है। बोली के सहारे ही बालक अपने परिवार के सदस्यों तथा निकट परिवेश में रहने वाले पड़ोसियों, सगे-सम्बन्धियों आदि से सम्बन्ध जोड़ते हुए सामाजिकता की और बढ़ता है। प्रथम भाषा और मातृभाषा की संकल्पना में कई समानताएँ हैं और कुछ सूक्ष्म अन्तर भी हैं। देखा गया है कि जिन भाषाओं / बोलियों का भौगोलिक क्षेत्र काफी विस्तृत नहीं होता उनमें मातृभाषा और प्रथम भाषा का स्वरूप प्रायः एक ही होता है, तथा विस्तृत क्षेत्रवाली भाषाओं अथवा बोलिओं में मातृभाषा तथा प्रथमभाषा में थोड़ा बहुत भेद पाया ही जाता है। मातृभाषा और प्रथम भाषा की संकल्पना पर विचार करते हुए डॉ॰ लक्ष्मीनारायण शर्मा ने प्रथम भाषा की परिभाषा इन शब्दों में दी है – "दैनिक जीवन में औपचारिक रूप से प्रयुक्त भाषा जिसे व्यक्ति ने शिक्षित लोगों से विशेष प्रयत्न से अर्जित किया है।"

शिक्षा और साक्षरता के लिए बोली भाषी हिन्दी भाषा को मातृभाषा के रूप में अपनाता है। हिन्दी भाषा समुदाय के लिए उसकी बोलियाँ प्रथम भाषा है और हिन्दी मातृभाषा के रूप में सिद्ध भाषा है। हिन्दी भाषा के सहारे ही इस भाषा समाज के लोग अपनी सामाजिक अस्मिता स्थापित करते हैं। मातृभाषा और प्रथम भाषा के सन्दर्भ में हिन्दी भाषा समुदाय का उदाहरण बहुत ही उपयुक्त व सटीक है।

मातृभाषा से इतर जिस किसी भी दूसरी भाषा को अन्य भाषा की संज्ञा दी जाती है। भाषा-शिक्षण में भी मातृभाषा-शिक्षण और अन्य भाषा-शिक्षण को अलग-अलग रखकर देखा गया है। अन्य भाषा की आवश्यकता

जिन वैयक्तिक तथा सामाजिक सन्दर्भों में पड़ती है वह मातृभाषा की आवश्यकता से भिन्न होती है, अन्य भाषा को दो वर्गों में विभाजित किया गया है – (i) द्वितीय भाषा तथा (ii) विदेशी भाषा।

1.2.04.02. द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा

द्वितीय भाषा मातृभाषा के साथ सहयोजित भाषा होती है। ये भाषाएँ एक ही राष्ट्र की होती है और इनका सामाजिक-ऐतिहासिक विकासक्रम भी समान होता है, अर्थात् मातृभाषा और द्वितीय भाषा का परिवेश कई स्थितियों में समान होता है। उदाहरण के लिए यह कहा जाए कि हिन्दी किसी की मातृभाषा है तो अन्य भारतीय भाषाएँ जैसे ओड़िआ, तेलुगू, मराठी, बांग्ला, संस्कृत आदि उसके लिए द्वितीय भाषा होंगी क्योंकि इनका परस्पर सम्बन्ध और सम्पर्क भी है और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से इनमें बहुत दूरी भी नहीं है। इन्हें इसलिए 'सजातीय द्वितीय भाषा' भी कहा गया है।

परस्पर सम्पर्क और लम्बे समय तक भारतीय भाषाओं के बीच रहने के कारण भारतीय भाषाओं के सन्दर्भ में अंग्रेजी भाषा को भी द्वितीय भाषा माना गया है। अंग्रेजी भाषा सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से भारतीय भाषाओं से नितान्त भिन्न है परन्तु द्वितीय भाषा के रूप में परस्पर सम्पर्क के कारण भारतीय अंग्रेजी का ऐसा स्वरूप उभरा है जिससे हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाई समाज के सन्दर्भ में अंग्रेजी भाषा द्वितीय भाषा के रूप में सिद्ध है। अंग्रेजी को द्वितीय भाषा के रूप में स्वीकारने के कई कारण हैं। अंग्रेजी ने भारतीय भाषा समाज में सामाजिक-सांस्कृतिक आचरण के लिए एक विकल्पवत् भाषा के रूप में अपना स्थान बनाया है। अंग्रेजी के इस स्थान को देखते हुए ही भारतीय गणतन्त्र की सहराजभाषा के रूप में भी अंग्रेजी को मान्यता दी गई है। अंग्रेजी प्रविधि ज्ञान, उच्च शिक्षा, उच्च न्यायालय और अन्य औद्योगिक व्यावसायिक क्षेत्रों में प्रचलित भाषा है। अंग्रेजी भाषा को हिन्दीभाषी सर्जनात्मक स्तर पर सिखते हैं, यहाँ तक कि कई व्यक्ति इसे साहित्यिक अभिव्यक्ति के माध्यम रूप में स्वीकारते हैं।

इसलिए भारत में अंग्रेजी सीखने के पीछे निरन्तर एक सामाजिक दबाव काम करता है। भारतीय सन्दर्भ में अंग्रेजी 'विजातीय द्वितीय भाषा' है क्योंकि इसमें विदेशी भाषा के सामाजिक सन्दर्भ और सांस्कृतिक मूल्य समाविष्ट हैं। जिस प्रकार अंग्रेजी भाषा द्वितीय भाषा के रूप में सिद्ध है, उसी प्रकार भारत के अन्य भाषाई समाज के लिए हिन्दी द्वितीय भाषा के रूप में स्थित है। हिन्दी भी भारतीय भाषा भाषियों के सामाजिक आचरण का एक विकल्प है। हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया है। संघ की राजभाषा होने के कारण हिन्दीरत प्रदेशों में द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का प्रचलन बढ़ा है। हिन्दी के माध्यम से आज कामकाज के अवसर भी सामने आए हैं। इसलिए हिन्दी सीखने के पीछे भी अब एक द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी ने सम्पर्क भाषा का अपना स्वरूप विस्तृत किया है। भारत की दो भिन्न भाषाओं को बोलने वाले परस्पर सम्पर्क के लिए हिन्दी का प्रयोग करते हैं। संक्षेप में द्वितीय भाषा के निम्नलिखित लक्षण निर्धारित किये जा सकते हैं –

1. द्वितीय भाषा प्रयोक्ता की अपनी संस्कृति की अभिव्यक्ति का विकल्पवत् दूसरा माध्यम होती है।

2. द्वितीय भाषा मातृभाषा के निकट होती है। परस्पर सम्पर्क और परिवेशगत समानता के कारण द्वितीय भाषा मातृभाषा से प्रभावित होती है और उसे प्रभावित करती है।
3. द्वितीय भाषा मातृभाषा के समान अनिवार्य नहीं होती है, लेकिन सामाजिक दबाब के कारण उसे सीखना पड़ता है।
4. कई सन्दर्भों में प्रयोक्ता के मानसिक विकास में द्वितीय भाषा सहायक होती है। कई बार द्वितीय भाषा का ज्ञान नहीं हो तो प्रयोक्ता को कई व्यावहारिक कठिनाईओं का सामना करना पड़ता है।
5. द्वितीय भाषा प्रयोक्ता की अपनी भाषा की समानान्तर होती है इसलिए व्यक्ति मातृभाषा के समान ही द्वितीय भाषा में भी वैचारिक और सर्जनात्मक लेखन करने में सक्षम बन जाता है।
6. द्वितीय भाषा का ज्ञान अपने देश की सभ्यता और संस्कृति को समझने में बड़ी सहायता पहुँचाता है।
7. द्वितीय भाषा के प्रति प्रयोक्ता में आत्मीयता का भाव होता है। अभिप्रेरणा के स्तर पर वह उसे उतने ही मनोयोग से सीखने का प्रयत्न करता है जितने मनोयोग से वह अपनी मातृभाषा सीखता है।
8. द्वितीय भाषी के रूप में अपनाई जाने वाली भाषा अपने अलग मानक रूप का निर्माण करती है जैसा कि अंग्रेजी भाषा के साथ हुआ है।
9. द्वितीय भाषा मातृभाषा की स्थानापन्न बनने का प्रयत्न नहीं करती। उसे सह अस्तित्व की भावना से मातृभाषा के साथ सहयोजित भाषा के रूप में स्वीकार किया जाता है।

विदेशी भाषा न तो प्रयोक्ता के भाषाई समुदाय की भाषा होती है और न ही सामाजिक सांस्कृतिक दृष्टि से वह मातृभाषा के निकट होती है। विदेशी भाषा किसी अध्येता द्वारा सीखी गई वह भाषा है जो उससे पूर्व न तो उसके सम्पर्क में आती है और न ही उसका उसका मातृभाषा की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थितियों या ऐतिहासिक भौगोलिक परिवेश से कोई सम्बन्ध होता है और न ही वह शिक्षा का माध्यम होती है। इस दृष्टि से यदि देखा जाए तो हमारे भारतीय सन्दर्भ में अन्य भाषा के रूप में रूसी, फ्रेंच, जर्मन इत्यादि विदेशी भाषाएँ हैं। विदेशी भाषा के निम्नलिखित लक्षण हैं, यथा –

1. विदेशी भाषा प्रयोक्ता के अपने भाषाई समाज अथवा राष्ट्र की संस्कृति को समझने का माध्यम होती है।
2. विदेशी भाषा सीखने के पीछे कोई गहरा सामाजिक दबाव नहीं होता।
3. विदेशी भाषा का बहुत गहरा असर प्रयोक्ता के मानसिक विकास पर नहीं पड़ता।
4. विदेशी भाषा का प्रयोक्ता उसे ग्रहणशीलता के स्तर पर ही अपनाता है इसलिए विदेशी भाषा में वैचारिक और सर्जनात्मक लेखन बहुत कम ही सम्भव हो पाता है।
5. विदेशी भाषा को उसके प्रचलित मानक रूप में ही सीखना पड़ता है।
6. विदेशी भाषा सीखने के लिए अध्येता व्यक्तिगत स्तर पर पहल करता है।
7. विदेशी भाषा के प्रति उसमें भावात्मक लगाव प्रायः नहीं होता।

संक्षेप में इन लक्षणों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय सन्दर्भ में अंग्रेजी भाषा को छोड़कर फ्रेंच, जर्मन, रूसी, जापानी आदि भाषाएँ विदेशी भाषाएँ हैं। इन्हें विदेशी भाषा के रूप में वर्गीकृत करने का मूल कारण यह है कि ये भाषाएँ न तो अपने देश की मूल भाषाएँ हैं और न ही हम इनका प्रयोग अपने देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और सर्जनात्मक क्षमता को बढ़ाने के लिए करते हैं।

1.2.05. हिन्दी भाषा-शिक्षण के प्रमुख रूप

शिक्षण का सामान्य सम्प्रत्यय है, शिक्षा देना, ज्ञान प्रदान करना, सिखाना, कौशल विकसित करना। किसी भी प्रकार का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना शिक्षण कहलाता है। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा का मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करना ही अभीष्ट नहीं है। बल्कि लक्ष्य भाषा की दक्षता एवं कुशलता का विकास करना जिससे शिक्षार्थी उस भाषा-भाषी समाज में विचार-विनिमय कर सके। भाषा-शिक्षण में मुख्यतः दो बातें आती हैं – प्रथम तो भाषाई दक्षता का विकास करना, अर्थात् भाषा का ज्ञान (भाषा व्यवस्था तथा भाषा संरचना आदि) प्रदान करना, द्वितीय, भाषाई दक्षता का व्यावहारिक रूप, जिसमें प्राप्त दक्षता के ज्ञान को व्यवहार में बदल कर अपने भावों-विचारों को सुनकर या पढ़कर ग्रहण करना होता है। हिन्दी भाषा को भारत के संविधान में भारतीय संघ की राष्ट्रभाषा मानी है। विद्यालयों में हिन्दी एक विषय ही नहीं अपितु शिक्षा का माध्यम भी है। देश की भावात्मक एकता के लिए भी हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन प्रत्येक राज्य में अनिवार्य होना चाहिए। हमारी भारतीय शिक्षा व्यवस्था में हिन्दी शिक्षण के प्रमुखतः दो रूप हैं – (i) मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण तथा (ii) अन्य भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण।

1.2.05.01. मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

मातृभाषा का शाब्दिक अर्थ है, 'माँ की भाषा' अर्थात् माँ के निकट रहकर बालक जिस भाषा को सर्वप्रथम सीखता है, उसे मातृभाषा कहते हैं। प्रायः मातृभाषा का रूप क्षेत्रीय बोली का रूप हुआ करता है। हिन्दी भाषा समुदाय मूल रूप में बोली भाषी समूहों से निर्मित हैं। इन बोलियों को हम हिन्दी की अधीनस्थ बोलियाँ या उपभाषा कहते हैं। जैसे – अबधी, ब्रज, मगधी, आदि। भाषा की गतिशीलता के कारण प्रत्येक भाषा की अनेक उपभाषाएँ तथा बोलियाँ हुआ करती हैं। इसी प्रकार मातृभाषा में अनेक उपभाषाएँ और बोलियाँ सन्निहित होती हैं। प्रायः कुछ विस्थापित अपवादों को छोड़ दें तो यह देखा जाता है कि बालक अपने परिवार तथा आसपास के समाज से अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए क्षेत्रीय बोली को ही सर्वप्रथम भाषा के रूप में सीखता है, जिसे क्षेत्रीय बोली या प्रादेशिक भाषा कहते हैं। हम घर में अपनी प्रादेशिक बोली बोलते हैं परन्तु बाहरी व्यवहार में हिन्दी ही बोलते या लिखते हैं। अतः हमारी मातृभाषा हिन्दी है।

मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण उन विद्यार्थियों को दिया जाता है जिन की पारिवारिक बोली या भाषा हिन्दी की कोई बोली होती है और विद्यालयी वातावरण तथा इससे मिलती-जुलती स्थितियों में उन्हें मानक हिन्दी

का शिक्षण दिया जाता है । प्रथम भाषा (मातृभाषा) के रूप में देश के हिन्दीभाषी क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर से उच्चस्तर तक हिन्दी का शिक्षण दिया जाता है।

1.2.05.02. अन्य भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

अन्य भाषा के रूप में हिन्दी का शिक्षण द्वितीय भाषा, तृतीय भाषा तथा विदेशी भाषा तीनों प्रकार के प्रयोक्ताओं के लिए किया जाता है । जिन प्रयोक्ताओं की मातृभाषा हिन्दी भाषा से भिन्न कोई भारतीय भाषा अथवा विदेशी भाषा होती है और वे हिन्दी को विद्यालयीय परिवेश तथा मिलती-जुलती स्थितियों में प्रयोग करते हैं उनके लिए हिन्दी अन्य भाषा होती है । अन्य भाषा के अन्तर्गत द्वितीय तथा तृतीय दोनों भाषाएँ आती हैं । भारतीय सन्दर्भ में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन इन दोनों रूपों में देखने को मिलता है।

1.2.06. भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त

भाषा-शिक्षण में विद्यार्थी केन्द्रक होता है। भाषा-शिक्षण की सफलता के लिए विद्यार्थियों की रुचियों एवं योग्यताओं को दृष्टि में रखकर शिक्षण योजना बनाते हैं। इसमें पाठ्य-विषयों की विशिष्टताओं को ध्यान में रखा जाता है । भाषा-शिक्षण के सिद्धान्त विद्यार्थियों की विभिन्न अभिक्षमताओं, योग्यताओं, अभिवृत्तियों तथा भिन्नताओं के आधार पर निर्धारित होते हैं। भाषा-शिक्षण के निम्नलिखित सिद्धान्त हैं, यथा –

01. अभ्यास का सिद्धान्त : वस्तुतः भाषा एक कौशल है और इसका विकास एक अभ्यास पर ही निर्भर है। अभ्यास जितना प्रभावी होगा, वह उतना ही स्थिर होता है। भाषा जैसे कलात्मक पक्ष के लिए अभ्यास अपरिहार्य है। अभ्यास से भाषाएँ सीखी जाती हैं।
02. अभिरुचि का सिद्धान्त : भाषा-शिक्षण में अभिरुचि का महत्त्वपूर्ण स्थान है । जिस भाषा के प्रति विद्यार्थियों की रुचि होती है, उसकी ओर वे आकृष्ट होते हैं। यह अभिरुचि ही भाषा सीखने के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करती है।
03. क्रियाशीलता का सिद्धान्त : क्रियाशीलता का सिद्धान्त भाषा प्रयोग को सुदृढ़ बनाता है। बालक जब सक्रिय हो तभी वह भाषा सीख पाता है। बालक वार्तालाप, संवाद, काव्यपाठ आदि में सक्रिय होते हुए इनके माध्यम में भाषा सीखना सरल है।
04. स्वाभाविकता का सिद्धान्त : मानव में भाषा सीखने की शक्ति प्रकृतिप्रदत्त मानी गई है। बालक वातावरण व परिवेश भाषा को स्वाभाविक तथा सहज रूप में सीख पाता है । अन्य भाषा को भी व्यक्ति सम्पर्क में आकर सीख लेता है।
05. अभिप्रेरणा का सिद्धान्त : भाषा-शिक्षण में अभिप्रेरणा द्वारा विद्यार्थियों में जिज्ञासा उत्पन्न की जाती है। जिज्ञासा की अभिप्रेरणा विद्यार्थी को भाषा सम्बन्धी कार्यों में प्रवृत्त करती है।

06. समन्वय का सिद्धान्त : भाषा और जीवन का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। बोलने और लिखने को नितान्त जीवन से पृथक् क्रियाएँ नहीं समझना चाहिए और न ही इन्हें पृथक् क्रियाओं की भाँति सिखाना चाहिए। अतः कक्षाओं में इनका अभ्यास करना चाहिए।
07. वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त : विद्यार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता भाषा-शिक्षण का आधार बनती है। भाषा एक कौशल है और इस पर अधिकार वैयक्तिक अभिक्षमता के आधार पर सम्भव है । शुद्ध उच्चारण, स्पष्ट लेखन व वाचन आदि क्रियायों में भी भिन्नताएँ पाई जाती हैं। भाषाई त्रुटि का निदान विद्यार्थियों पर वैयक्तिक ध्यान देकर करने का प्रयास करवाया जाए।
08. शिक्षण सूत्रों के प्रयोग का सिद्धान्त : शिक्षाशास्त्री हरबर्ट स्पेनसर महोदय ने शिक्षण विधि पर विचार करते समय शिक्षण-प्रक्रिया के विश्लेषण के आधार पर सामान्य शिक्षण सूत्रों का प्रतिपादन किया। उन शिक्षण सूत्रों में कतिपय सूत्रों का प्रयोग भाषा-शिक्षण में भी किया जा सकता है , यथा – मूर्त से अमूर्त की ओर, ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से कठिन की ओर, पूर्ण से अंश की ओर, विश्लेषण से संश्लेषण की ओर, विशेष से सामान्य की ओर तथा मनोवैज्ञानिक से तार्किक की ओर।
09. बाल केन्द्रिता का सिद्धान्त : शिक्षा प्रक्रिया का केन्द्र विद्यार्थी माना गया है। अतः विद्यार्थी को इस योग्य बनाना है कि वह भाषाई कौशलों पर अधिकार कर सकें। अतः भाषा-शिक्षण में विद्यार्थी के स्वभाव, उसके वातावरण तथा योग्यता का ध्यान रखा जाना चाहिए।
10. अनुकरण का सिद्धान्त : बालक अनुकरण से सर्वदा सीखता है। अनुकरण प्रवृत्ति के आधार पर ही भाषा सीखता है। इसलिए भाषा-शिक्षण में अनुकरण का अपना विशेष महत्त्व है । भाषा में वर्णों का उच्चारण अनुकरण पर ही निर्भर है। शब्दों का प्रयोग एवं वाक्ययोजन अनुकरण का ही परिणाम है।

1.2.07. उद्देश्य केन्द्रित भाषा-शिक्षण

भाषा-शिक्षण उद्देश्य केन्द्रित होता है। भाषा किसी न किसी विशेष उद्देश्य के सन्दर्भ में सीखी और सिखाई जाती है। मातृभाषा सीखने से विद्यार्थी एक बड़े लिखित गद्य साहित्य से परिचित हो सकें। मातृभाषा के माध्यम से विद्यार्थी अपने भावों और विचारों को लिखित रूप में व्यक्त करके अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने में समर्थ बनता है। द्वितीय भाषा सीखने का उद्देश्य है कि व्यक्ति अपनी भाषा के परिवेश की कोई दूसरी भाषा सीखकर अपने को सामाजिक सम्प्रेषण के उन क्षेत्रों से जोड़ सके जिनकी पूर्ति द्वितीय भाषा के माध्यम से ही सम्भव है। विदेशी भाषा सीखने का उद्देश्य किसी अन्य भाषा के माध्यम से उन लोगों को प्राप्त करना है जो विदेशी भाषा के माध्यम से ही प्राप्त हो सकते हैं, जैसे – दुभाषिए का कार्य, अनुवाद कर्म, विदेशी दूतावासों में सेवा आदि। एवं इसके साथ ही किसी अन्य राष्ट्र में पर्यटक के रूप में जाने पर भी विदेशी भाषा का सामान्य ज्ञान काफी सहयोग होता है। विदेशी भाषा के ज्यादातर अध्येता इसी उद्देश्य से कोई विदेशी भाषा सीखते हैं।

1.2.07.01. उद्देश्यों की पूर्ति में भाषा-शिक्षण

भाषा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को चिन्तन एवं मनन शक्ति के प्रति प्रेरित करते हुए मानव समुदाय में रहकर उसके लिए नवीन अवसर प्रदान करना है । भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में मातृभाषा, द्वितीय भाषा (अन्यभाषा) और विदेशी भाषा तीनों ही स्तरों पर भाषा-शिक्षण के उद्देश्य निर्धारित किये गए हैं । इस सन्दर्भ में भाषा-शिक्षण का केन्द्रक शिक्षार्थी है । अतः पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम दोनों के केन्द्र में मूलतः शिक्षार्थी को ही महत्त्व मिलना चाहिए । वर्तमान में भाषा-शिक्षण का केन्द्रक शिक्षार्थी है और पूरी शिक्षण प्रणाली को शिक्षार्थी के दृष्टि से ही निर्मित और नियन्त्रित किया जाता है । भाषा-शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थी के भाषा सिखाने के पीछे निहित उद्देश्य से सम्बद्ध हो गया है । शिक्षा व्यवस्था की पुरातन परम्परा पाठ्यचर्या के रूप में 'विद्यालय' और 'विषयवस्तु' को केन्द्र में रखती थी , और यह परम्परागत शिक्षा पद्धति पाठ्यक्रम के केन्द्रक के रूप में 'अध्यापक' को महत्त्व प्रदान करती थी । परन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह धारणा बिल्कुल ही परिवर्तित हो गई है । अब तो विद्यार्थी के उद्देश्य को प्रमुखता देनी जानी चाहिए क्योंकि भाषा-शिक्षण का तात्पर्य शिक्षार्थी के अनुभव संसार को उसकी रुचि के अनुरूप सक्षम बनाना है । शिक्षार्थी के केन्द्र में रखकर आधुनिक शिक्षण पद्धति यह मानती है कि शिक्षण-सामग्री के रूप में विषयवस्तु चाहे कितनी ही मूल्यवान् न हो और पाठ्यसामग्री का स्तर कितना ही उँचा क्यों न हो, जब तक अध्ययन-अध्यापन के समय शिक्षार्थी का अनुभव जगत् उसे ग्रहण नहीं करता और उससे प्रभावित नहीं होता तथा उसकी अभिक्षमता, अभिरुचि और अभिवृद्धि के अनुरूप उपयोगी नहीं बनता तब तक शिक्षा का पूरा कार्यक्रम अधूरा ही माना जाएगा । उस प्रकार भाषा-शिक्षण के उद्देश्य पूरे नहीं हो पाएँगे । अतः शिक्षार्थी को ध्यान में रखकर भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण किया गया ।

1.2.07.02. भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण

भाषा-शिक्षण का क्षेत्र अनुप्रयोगात्मक होता है । अनुप्रयोगात्मक होने के कारण यह अनिवार्यतः उद्देश्य बाधित होता है । भाषा किसी न किसी विशेष उद्देश्य के सन्दर्भ में सीखी और सिखाई जाती है । यह माना जा रहा है कि जब तक भाषा-शिक्षण के उद्देश्य निर्धारित नहीं कर लिए जाते, उसकी सार्थकता और सम्प्राप्ति का मूल्यांकन भी सम्भव नहीं हो पाएगा । भाषा-शिक्षण की अपनी सिद्धि निर्धारित उद्देश्य की सिद्धि है जो प्रयोक्ता सापेक्ष होती है ।

प्रयोक्ता के जीवन में भाषा अनेक कार्य करती है । प्रयोक्ता भाषा के द्वारा ही अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति करता है । वर्तमान में यह भी माना जाता है कि मनुष्य को व्यापक सम्प्रेषण के लिए दो प्रकार की भाषाओं की आवश्यकता होती है । उसे आत्मीय वस्तु के बारे में बात करने हेतु सामान्य भाषा अर्थात् घर की भाषा की आवश्यकता पड़ती है परन्तु इसके साथ ही उसे तथ्यपरक भाषा भी चाहिए । ज्ञान, तर्क और वैज्ञानिक सत्य की भाषा भी चाहिए । इस भाषा के बिना उसका कार्य नहीं चल सकता । ज्ञान, तर्क, और वैज्ञानिक सत्य की भाषा के शब्द आधुनिकीकृत व अर्थ स्थिर होते हैं । जैसै कि हम सभी जानते हैं कि हिन्दी की बोलियाँ घर-जीवन की भाषा के रूप में हमारी आवश्यकताओं को पूरी करती हैं लेकिन ज्ञान, तर्क आदि के लिए हमें हिन्दी या अंग्रेजी

की भाषा-शिक्षण की औपचारिक प्रणाली से किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही जुड़ते हैं । विश्व की अनेक छोटी-छोटी भाषाएँ भी उन भाषा समुदाओं की सम्प्रेषण सम्बन्धी सामान्य ज़रूरत को तो पूरा कर देती है, लेकिन व्यापक उद्देश्यों के लिए ये समाज विश्व की विकसित भाषाओं का अधिगम करते हैं और अपने को आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण व्यापार के लिए तैयार करते हैं । सामान्य और विशिष्ट दोनों ही प्रकार के भाषा प्रयोगों को देखते हुए भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में कुछ उद्देश्य निर्धारित किए गये हैं जो अधोलिखित हैं –

(1) मन की सर्जनात्मकता : भाषा हमारे विचार, अभिवृत्ति और दृष्टिकोण को बहुत दूर तक प्रभावित करती है । सामान्यतः भाषा मनुष्यों को अपने नियन्त्रण में रखती है । भाषा-शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य यह है कि वह अध्येता को भाषा से नियन्त्रित होने की स्थिति से निकाल कर उसमें भाषा को नियन्त्रित करने की क्षमता व दक्षता उत्पन्न करे अर्थात् कौशल प्रयोग सामर्थ्य सम्पादन करे । भाषा का अध्येता आवश्यकतानुसार अपने अनुभवों और अनुभूतियों को सर्जनात्मक स्तर पर व्यक्त कर सके । वह व्यक्ति अनेक प्रकार से मनोभावों को व्यक्त करने के लिए भिन्न अभिव्यक्तियों का सटीक उपयोग कर सके आदि । वस्तुतः यह भाषा की लचीली सम्भावना के साधने की स्थिति है। मुख्यतया मातृभाषा अधिगम का यह उद्देश्य होता है कि अध्येता विभिन्न परिस्थितियों और सन्दर्भों में मौखिक तथा लिखित अभिव्यक्ति कर सकें।

(2) दृष्टि की मुक्तता : भाषा मानव जीवन और जगत् को दिखने की एक दृष्टि है । हम अपने वातावरण में परिव्याप्त चीजों को भाषा के माध्यम से देखते व पहचानते हैं और अपने अनुभवों को उसी रूप में डालते हैं। अर्थात् भाषा का सम्बन्ध हमारे परिवेश और समाज से घनिष्ठ होता है। अन्य भाषा-शिक्षण का उद्देश्य हमें दूसरी भाषा के माध्यम से जीवन और जगत् को देखने की शक्ति देता हैं, तथा अपनी मातृभाषा में हमें यह शक्ति स्वतः सहज प्राप्त होती है । अन्य भाषा-शिक्षण का यह उद्देश्य है कि मातृभाषा बँधी हुई संसार का देखने की दृष्टि से एक भिन्न दृष्टि भाषा अध्येता को प्राप्त हो सके, उसका आयाम विस्तृत हो सके तथा शिक्षार्थी एक अतिरिक्त भाषा की संस्कृति से शामिल हो सके। दृष्टि की मुक्तता का उद्देश्य यही है कि अध्येता एक से अधिक दृष्टिकोण से देख पाने में समर्थ होता है।

(3) बुद्धि की समृद्धता : संसार में भाषा ज्ञानार्जन का एक अतीव महत्त्वपूर्ण साधन है । ज्ञान, विज्ञान, और तर्क के कई क्षेत्रों में हमें अन्य भाषा की आवश्यकता महसूस होती है। अपनी हमारी ही भाषा में सर्वविध ज्ञान से सम्बन्धित रोज नए शब्द आते रहते हैं । इनके माध्यम से हम एक ओर बाह्य जीवन वस्तुओं की जानकारी प्राप्त करते हैं और विश्लेषणात्मक और संश्लेषणात्मक प्रक्रिया के सहारे अपने विचार को स्वयं समझते हैं । इस प्रकार मातृभाषा और अन्यभाषा-शिक्षण के उद्देश्य के सहारे हम ज्ञान और बुद्धि के धरातल पर समृद्ध से समृद्धतर होते जाते हैं।

(4) व्यक्तित्व की सामाजिकता : भाषा का व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है . एक ओर अब व्यक्तित्व के विकास और अभिव्यक्ति का माध्यम है तो दूसरी ओर उसके सामाजीकरण का साधन भी भाषा है । भाषा के सहारे व्यक्ति, समाज से जुड़ता है और इस जुड़ने की प्रक्रिया में सामाजिक बनता चलता है । भाषा-अधिगम तथा भाषा-शिक्षण भी इसीलिए एक अनवरत प्रक्रिया माने गए हैं,

जिसमें व्यक्ति, समाज और संस्कृति को तथा समाज और संस्कृति से सामाजिक व्यक्तित्व को प्राप्त करता है।

1.2.07.03. उद्देश्यों की पूर्ति में बाधाओं का विश्लेषण

सामान्यतः भाषा-शिक्षण में पूर्वोक्त उद्देश्यों की पूर्ति बहुत आसान नहीं होता है । भाषा सीखने के समय अनेक बाधाएँ आती हैं जो इन उद्देश्यों की पूर्ति में अवरोध समुत्पन्न करती हैं । इन बाधाओं को दूर करने का प्रयास भाषा-शिक्षण की उपयुक्त विधि अपना कर अनेक प्रकार के अभ्यासों के द्वारा किया जाता है। भाषा सीखते समय अध्येता अनेक प्रकार की भूलें करता है जिससे भाषा-शिक्षण की स्वाभाविक गति में रुकावट आती है और निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इन भूलों का निदान करके ही शिक्षण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना चाहिए । क्योंकि जो भूलें अध्येता के मन में दृढ़ हो जाती हैं वे केवल उसे ही गलत भाषा प्रयोग की ओर नहीं ले जाती है, अपितु भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों को ही निरर्थक बना देती हैं। किसी भी भाषा के संरचनात्मक स्तर पर शब्दरूप, विशेषण, संज्ञा, अन्विति, संज्ञाक्रिया अन्विति महत्त्वपूर्ण होते हैं । संरचनात्मक अभिरचना निर्माण में अनेक भूलों को बच्चों की भाषा के अधिगम स्तर पर भी देखा जाता है। अपनी मातृभाषा के अधिगम के समय भी बच्चा इस प्रकार की भूलें करता है । वह संरचनात्मक अभिरचना के सामान्यीकृत नियम बना लेता है और उनका प्रयोग भी करता है । अधिगम प्रक्रिया में यह प्रवृत्ति स्वतः अनुकरण के कारण भूलों में सुधार करती चलती है , लेकिन भाषा-शिक्षण में यह प्रवृत्ति एक बाधा बनती है जिसे दूर करने के लिए प्रयास करना पड़ता है।

मातृभाषा की अभिरचना व्यक्ति की भाषाई चेतना में आदत के रूप में सिद्ध हो जाती है। जब वह व्यक्ति अन्य भाषा सीखना चाहता है तब मातृभाषा की अभिरचना का अन्तरण वह सीखी जाने वाली भाषा पर करने लगता है ऐसा करते समय बाधा उत्पन्न होती है। यदि सीखी जाने वाली भाषा की संरचना मातृभाषा के अनुरूप हुई तब तो उसे संरचना को सीखने की आवश्यकता नहीं होती है, ऐसी परिस्थिति में वह व्यक्ति केवल अन्य भाषा के शब्दों को सीख कर ही वाक्य को सही रूप में बोल लेता है, परन्तु यदि मातृभाषा और अन्य भाषा में अन्तर होता है तब 'भाषा व्याघात' की स्थिति पैदा हो जाती है । भाषा अध्येता इस परिस्थिति में मातृभाषा की अभिरचना का अन्तरण दूसरी भाषा पर करने लगता है । दो भाषाओं के संरचनात्मक विभेद से उत्पन्न व्याघात की स्थिति में भाषा सीखना कठिन होता है। भाषा-शिक्षण में इन बाधाओं को दूर करने के लिए विशेष प्रकार की शिक्षण पद्धतियों को अपनाने पर बल दिया गया है । और यह स्वीकार कर लिया गया है कि इन बाधाओं को दूर करते हुए भाषा अधिगम में दृढ़ता लाने के लिए जो प्रक्रिया आवश्यक है वह अभ्यास है। अतः भाषा-शिक्षण को अभ्यासपरक होना चाहिए। तथा शंका हुई कि अभ्यास भाषा के किस तत्त्व का कराया जाए और समाधान में यह निश्चित किया गया कि भाषा-शिक्षण अभिरचना अभ्यास है।

1.2.08. भाषा-शिक्षण और त्रुटि विश्लेषण

भाषा-शिक्षण की प्रक्रिया में भूलें और त्रुटियाँ होना आम बात है। वस्तुतः कोई भी अध्येता विना गलतियाँ किए और उनका सुधार किए भाषा नहीं सीखता है। भाषा अनुकरण प्रधान है। मनुष्य अनुकरण से भाषा सीखता है। ज्ञान के विकास तथा प्रयोग से भाषा प्रयोग सहज होता है। भाषा-शिक्षण के समय विद्यार्थी द्वारा की जाने वाली त्रुटियों व अनुभूतियों के विश्लेषण और सुधार का विकल्प उपस्थित हो रहा है। इसी प्रक्रिया को त्रुटि विश्लेषण कहा जाता है। भाषा-शिक्षण की प्रक्रिया में त्रुटि के कारण बाधा उत्पन्न होती है। उन बाधाओं को दूर करने के लिए त्रुटियों और उनके विश्लेषण पर गम्भीरता से विचार किया गया है तथा त्रुटियों की पहचान उनके कारणों तथा उनके निदान और उपचार के मार्ग सुझाए गए है ताकि भाषा-शिक्षण अपने महत् उद्देश्यों की ओर अपेक्षित लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकें। त्रुटियों पर विचार करते समय यह खोजने का प्रयास किया गया कि त्रुटियों के मूल स्रोत क्या हैं? स्रोतों की पहचान के बाद इनके विश्लेषण और मूल्यांकन की पद्धति निर्धारित की गई। डॉ॰ दिलीप सिंह ने भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में त्रुटियों के निम्नलिखित स्रोत रेखांकित किए हैं –

1. भाषा 1 का व्याघात।
2. भाषा 2 के विशिष्ट तत्त्व।
3. नियमों का सामान्यीकरण।
4. त्रुटिपूर्ण शिक्षण।
5. किसी अन्य भाषा का व्याघात जो अध्येता ने मातृभाषा के अतिरिक्त सीखी हो।
6. मनोवैज्ञानिक कारण।

इन सभी स्तरों पर भाषा-शिक्षण की प्रक्रिया में व्यतिरेकी विश्लेषण का महत्त्व है।

त्रुटियों के विभिन्न स्तरों के कारण त्रुटि विश्लेषण महत्त्वपूर्ण बनता चला गया है। आधुनिक भाषाओं के शिक्षण की विस्तृत सम्भावनाओं ने भाषा को अनुप्रयोगात्मक बनाया, इसलिए भी त्रुटि विश्लेषण का केन्द्रीय महत्त्व उभर कर आया है। आधुनिक भाषा-शिक्षण त्रुटियों को हेय नहीं मानता। वह इन्हें मात्र परीक्षण मूल्यांकन के परम्परागत आधारों तक ही सीमित नहीं करता। पारम्परिक शिक्षापद्धति त्रुटिविश्लेषण को परीक्षा और उत्तीर्णता से ही जोड़कर देखती थी जबकि आधुनिक भाषा-शिक्षण इसे अधिगम कर्त्ता या भाषा अध्येता के भाषा विकास की एक स्वाभाविक प्रक्रिया मानती है, वह इसे अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण भी मानता है। वर्तमान में इस पर बल दिया जाता है कि त्रुटि विश्लेषण के द्वारा भाषा अधिगम के वातावरण को, शिक्षण-सामग्री को और शिक्षण विधि को पुनर्गठित किया जा सकता है जिससे कि भाषा-शिक्षक के मूल लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।

1.2.08.01. त्रुटि विश्लेषण के सिद्धान्त

अन्य भाषा-शिक्षण में द्विभाषीयों के भाषा व्यवहार में व्याघात की संकल्पना को महत्त्वपूर्ण माना गया है। व्याघात की संकल्पना इस मान्यता पर आधारित है कि कोई भी दो भाषाएँ पूर्णतया समान नहीं होती। उनमें भाषा

के हर स्तर पर कुछ न कुछ भिन्नता रहती है। व्याघात की प्रक्रिया के कारण भाषा सीखने में जो कठिनाइयाँ आती है उन्हें जानने और समझने के लिए ही भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में व्यतिरेकी विश्लेषण को महत्त्व मिला है। व्यतिरेकी विश्लेषण एक और उस भाषा के व्याकरण नियमों को सामने रखता है जो शिक्षार्थी की आदत में ढल गए होते हैं। भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में इस भाषा को स्रोत भाषा कहा गया है। और दूसरी ओर व्यतिरेकी विश्लेषण उस भाषा के व्याकरणिक नियमों का भी पता रखता है जिसे सीखा जाता है। सीखी जाने वाली भाषा को लक्ष्य भाषा कहते हैं। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा भी तुलना के आधार पर व्यतिरेकी पद्धति इनके बीच पाई जाने बाली समानता और असमानता के क्षेत्रों का निर्धारण करती है। यह पद्धति इस बात को स्वीकार करती है कि दो भाषाओं के बीच पाई जाने वाली असमानता ही व्याघात का मूल कारण है, इसलिए लक्ष्य भाषा सीखते समय जो कठिनाइयाँ आती हैं उन्हें दूर करने के लिए स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के व्यवस्था वैषम्य का पता लगाना अनिवार्य है।

व्यतिरेकी विश्लेषण की पद्धति भाषिक इकाइयों के विविध स्तरों पर (ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य) उपस्थित वैषम्य को आधार कर लक्ष्य भाषा के व्याकरण और अध्ययन सामग्री के निर्माण को प्रोत्साहन करनी है। वह मुख्यतः 'शिक्षक का व्याकरण' निर्मित करने पर बल देती है जिससे शिक्षक को यह पता चले कि शिक्षार्थियों को इकाई के किन स्तरों पर भाषा सीखने में कठिनाई की सम्भावना अधिक है और किन क्षेत्रों में कम, और तदनुसार शिक्षण-सामग्री तैयार करने और कक्षा में उसे अनुस्तरित रूप में प्रस्तुत करने का एक ठोस आधार भी देता है। वास्तव में कठिनाई के क्षेत्र ही त्रुटि का कारण बनते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि जब कोई व्यक्ति किसी दूसरी भाषा को सीखने की ओर प्रवृत्त होता है तब वह लक्ष्य भाषा के 'अव्यक्त व्याकरण' को उसी प्रकार सीखता है जिस प्रकार वह अपनी मातृभाषा का 'अव्यक्त व्याकरण' सीखता है, जैसे बालक अपनी मातृभाषा सीखते समय भैंस, बेल, बकरी सभी के लिए गाय शब्द का प्रयोग करता है। इसी प्रकार वह लड़का 'आया' है के आधार पर पापा आया है, माँ आया है – का प्रयोग करता है। मातृभाषा और अन्यभाषा अव्यक्त व्याकरण को सीखने की प्रक्रिया एक होने पर भी उनमें एक बहुत बड़ा अन्तर है। लक्ष्य भाषा को व्यक्ति हमेशा नहीं सीख पाता। क्योंकि जिन विविध क्षेत्रों में जितनी सार्थकता के साथ वह अपनी मातृभाषा का प्रयोग अपने दैनिक जीवन में करता है, उसी प्रकार लक्ष्य भाषा का नहीं करता। व्यवहार का यह अवसर न मिलने से भी त्रुटियाँ होती रहती हैं। त्रुटि विश्लेषण सिद्धान्त ने त्रुटियों के अनेक प्रकारों की चर्चा की है जिनकी प्रकृति एक दूसरे से भिन्न है। वास्तविक त्रुटि से भिन्नता देखने के लिए अशुद्ध प्रयोग के तीन सन्दर्भ वर्गीकृत किये जा सकते हैं, यथा –

(1) व्यवहार सन्दर्भित त्रुटियाँ : व्यवहार सन्दर्भित त्रुटियों को दोष (Lapses) के रूप में देखा जाता है। इस प्रकार की त्रुटियों का सम्बन्ध अव्यक्त व्याकरण से न हो कर उस व्याकरण को व्यवहार में लाते समय की गई असावधानी से होता है। ऐसी त्रुटियाँ प्रयोक्ता अनजाने में करता है और बोलने के साथ ही वह ऐसे दोषों को समझ जाता है। इनके प्रति सजग भी हो जाता है या अपनी गलती स्वीकार लेता है।

(2) अज्ञान सन्दर्भित त्रुटियाँ : अज्ञान सन्दर्भित त्रुटियों को गलती (Mistakes) माना गया है। गलती का सम्बन्ध लक्ष्य भाषा के नियमों की सही जानकारी के अभाव से होता है। जैसे हिन्दी सीखने बाले अन्य

भाषा-भाषी शिक्षार्थी आदर सूचक प्रयोग में गलतियाँ करते हैं – आप बैठो, आप कब आओगे जैसे प्रयोग वह प्रयोग के नियम की सही जानकारी न होने के कारण ही करता है।

(3) अन्तर भाषा सन्दर्भित त्रुटियाँ : भाषा-शिक्षण में इन्हें ही वास्तविक त्रुटियाँ (Errors) माना गया है और त्रुटि विश्लेषण की प्रमुख सामग्री के रूप में इन्हीं त्रुटियों पर सर्वाधिक जोर दिया जाता है। त्रुटियों की इस श्रेणी में वे अशुद्ध प्रयोग आते हैं जिनका मूल कारण 'अन्तर भाषा' की अपने व्यवस्था के साथ होता है। ये अशुद्ध प्रयोग एक निश्चित 'व्यवस्था' को व्यक्त करते हैं, अतः इन्हें 'व्यवस्था सम्बन्ध त्रुटियाँ' भी कहा जाता है। ये ही शिक्षार्थी की वास्तविक त्रुटियाँ हैं इन त्रुटियों की प्रवृत्ति गत्यात्मक होती है क्योंकि इनका सम्बन्ध संक्रान्तिपरक भाषा के साथ होता है। इन्हें भाषा अधिगम प्रक्रिया में स्वाभाविक माना जाता है। अतः शिक्षक इन्हीं को ध्यान में रखकर शिक्षासामग्री और सुधारात्मक पाठ का निर्माण करता है।

अन्तरभाषा सन्दर्भित त्रुटियों के विश्लेषण का एक सन्दर्भ उनके स्रोतों का विवरण और वर्गीकरण से सम्बन्धित भी होता है। वर्गीकरणों के आधार पर ऐसी त्रुटियों के अनेक स्रोत हैं जिनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है –

(1) अति सामान्यीकरण : इस प्रक्रिया का सम्बन्ध लक्ष्य भाषा की तथ्यसामग्री और भाषा व्यवस्था के आधारभूत नियमों के सादृश्य विधान के आधार पर प्रयोग प्रसार है। जैसे –

वह खाता है	–	उसने खाया
वह बोलता है	–	उसने बोला

(2) उपनियमों की अज्ञानता : प्रत्येक भाषा में कुछ सामान्य नियम होते हैं और कुछ उन नियमों के विशेषीकृत प्रयोग, जिनका सम्बन्ध उपव्यवस्था या उपनियमों से रहता है। इन उपनियमों के ज्ञान के अभाव में शिक्षार्थी त्रुटियाँ करता है, जैसे –

आप पीएं / 'पीइए'	–	(पीजिए)
आप करें / 'करिए'	–	(कीजिए)

(3) नियमों का अपूर्ण प्रयोग : भाषा में नियम गुच्छरूप में आते हैं, अतः जब एक नियम को लागू किया जाता है तो स्वभावतः उस पर आधारित दूसरे नियम को भी अधिनियमित करना पड़ता है। परन्तु भाषा अधिगम की प्रक्रिया अभिक्रमिक होती है जिसके कारण त्रुटियाँ होती हैं जैसे –

मैंने रोटी खाया है।
सोहन जी बैठा है।

(4) भ्रान्तिपूर्ण धारणा : भाषा सीखने के समय कभी-कभी कुछ धारणाएँ भ्रान्ति रूप से मन में बैठ जाती है। जिसके कारण त्रुटियाँ होती है जैसे वाच्य सम्बन्धी त्रुटियाँ –

लड़के ने रोटी खा ली – लड़के ने रोटी को खा ली।
तुमने किताब पढ़ी – तुमने किताब को पढ़ी।

त्रुटियों के वर्गीकरण के और भी आधार एवं सन्दर्भ सम्भव है। उदाहरण के तौर पर भाषा प्रयोग अथवा भाषा व्यवहार के तीन निश्चित सन्दर्भ देखे जा सकते हैं। यथा – भाषा का संरचनात्मक सन्दर्भ, भाषा का बोधात्मक सन्दर्भ और भाषा का सामाजिक सन्दर्भ। इन तीनों सन्दर्भों से सम्बन्ध त्रुटियाँ भी तीन निश्चित प्रकार की होती हैं –

(क) भाषा का संरचनात्मक सन्दर्भ और त्रुटियाँ–

(i) रूपमात्मक – 'लड़का' ने कहा।
'लड़के' बोला।

(ii) प्रकार्यात्मक – मोहन को किताब 'बेची'।
सोहन से मोहन 'को' किताब खरीद ली।

(ख) भाषा का बोधात्मक सन्दर्भ और त्रुटियाँ–

(i) शब्दार्थपरक – हिमालय भारत के 'दक्षिण' / उत्तर में है।
वह लेटकर / 'सोकर' सोचता है।

(ii) वाक्यपरक – मैंने अनजान में गोली चलाई।
गिलास उससे जान-बूझकर टूट गया।

(ग) भाषा सामाजिक सन्दर्भ और त्रुटियाँ –

(i) रूपात्मक – शीला 'जी', 'तू' / आप कहाँ गई थी।
मास्टर 'साहब' आज 'आया' था।

(ii) सामाजिक बोधपरक – नाना सब फल 'खा गया'।
धोबी (एक वचन) आज नहीं आये।

(iii) प्रयुक्ति / शैलीपरक – चर्चा के अनुसार तुम कार्रवाई करो /
चर्चा के अनुसार कार्रवाई की जाए।
पत्र मिलने की पावती मैंने भेज दी है /
पत्र मिलने की पावती भेज दी गई है।
(कार्यालयीन हिन्दी / लिखित हिन्दी)

त्रुटियों के इन कारणों पर ध्यान देने से स्पष्ट है कि भाषा-शिक्षण को प्रभावी और उपादेय बनाने के लिए शिक्षार्थी की इन त्रुटियों पर ध्यान देते हुए भाषा-शिक्षण पद्धति को स्वाभाविक और यथार्थपरक बनाया जा सकता है। त्रुटि विश्लेषण सिद्धान्त त्रुटियों के इन विभिन्न वर्गों को भाषा सीखने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण मानता है। भाषा सीखने की प्रक्रिया में त्रुटियों को स्वाभाविक परिणति मान कर उसके निराकरण के लिए सुधारात्मक पाठ बनाये जाएँ।

1.2.08.02. व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटिविश्लेषण

संरचनात्मक भाषाविज्ञान पर व्यतिरेकी विश्लेषण आधारित है। व्यतिरेकी विश्लेषण पर चर्चा करते हुए भाषा-शिक्षण के सिद्धान्तों पर चिन्तन करने वाले विद्वान् डॉ॰ रॉबर्ट लाडो (1957) ने कहा था कि "जो तत्त्व अधिगम कर्त्ता की देशीय भाषा के समान हैं वे उसके लिए सरल होंगे और जो भिन्न हैं वे कठिन होंगे।" इन कठिनाइयों की पहचान और निदान में व्यतिरेकी विश्लेषण के महत्त्व को विवेचित करते हुए इस क्षेत्र के प्रमुख चिन्तक पोलितजर (1967) ने कहा था कि "भाषाओं के शिक्षण में व्यतिरेकी विश्लेषण अध्येता की कठिनाइयों को अर्थवत्ता प्रदान कर सकता है और उनके बारे में अनुमान लगा सकता है।"

व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटि विश्लेषण के बीच गहरा सम्बन्ध है। इन सम्बन्धों को देखते हुए व्यतिरेकी विश्लेषण के तीन उद्देश्य निर्धारित किये गए हैं – पूर्वानुमान, निरूपण और परीक्षण सामग्री निर्माण। पूर्वानुमान समान स्रोत भाषा-भाषियों की लक्ष्य भाषा अधिगम में होने वाली त्रुटियों का आकलन करता है और इन्हें देखते हुए सामग्री निर्माण में सहायक बनता है । पूर्वानुमान को चार दृष्टियों से देखा जा सकता है – वे स्थल जो समस्या को जन्म दे सकते हैं, कठिनाइयों का पूर्वानुमान, त्रुटियों का पूर्वानुमान और दृढ़ हो चुकी त्रुटियाँ। निरूपण के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि वास्तव में ये त्रुटियाँ क्यों होती हैं, त्रुटि के कारणों के पहचान से विद्यार्थी और शिक्षक दोनों को लाभ होता है। शिक्षक इसके माध्यम से ही त्रुटियों को दूर करने के लिए सुधारात्मक शिक्षण-सामग्री तैयार करता है और उन्हें प्रयोग में ले आता है, परीक्षण सामग्री निर्माण में व्यतिरेकी विश्लेषण की दो भूमिका होती हैं। पहली भूमिका के अनुसार पूर्वानुमान के आधार पर यह वह बतलाता है कि क्या-क्या परीक्षणीय है ! उसकी दूसरी भूमिका यह बताना होता है कि परीक्षण की आवश्यकता किन सीमाओं पर कितनी मात्रा में अपेक्षित है !

भाषा-शिक्षण के समय भाषा अधिगम प्रक्रिया में जो त्रुटियाँ होती हैं, उनकी व्याख्या और उनका निरूपण व्यतिरेकी विश्लेषण द्वारा ही सम्भव हो पाता है। शिक्षण-प्रक्रिया के अन्तर्गत आने वाली इन कठिनाइयों को साँचा अभ्यास द्वारा अधिक वैज्ञानिक तरीके से दूर किया जा सकता है। व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटि विश्लेषण के अन्तःसम्बन्धों को निम्नलिखित बिन्दुओं पर देखना चाहिए –

1. भाषा की सम्यक् जानकारी न होने के कारण त्रुटियाँ होती हैं जिन्हें व्यतिरेक द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। व्यतिरेकी विश्लेषण द्वारा भाषा से भाषा के नियमों की जो भिन्नता है वह भी विवेचित होती है।
2. व्यतिरेकी विश्लेषण भाषा और भाषा की कठिन-सरल इकाइयों को स्पष्ट करता है। भाषा अधिगम प्रक्रिया में भाषा की कठिन इकाइयाँ ही त्रुटि का कारण बनती है।
3. कठिनता और सरलता की संकल्पना शिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया की दृष्टि से ही की गई है। इस स्तर पर सामग्री का चयन और उसके अनुसरण का महत्त्व जिससे यह भी सम्भव है कि त्रुटियाँ हो ही नहीं।

4. त्रुटियों का विश्लेषण भाषा के अभिव्यक्ति पक्ष से सम्बन्धित होता है, अवबोधन पक्ष से नहीं। अतः व्यतिरेकी विश्लेषण द्वारा कठिनाइयों के स्तरों का आसानी से पता लगाया जा सकता है।
5. व्यतिरेकी विश्लेषण त्रुटि की सम्भावना से भी बचा सकता है क्योंकि इसके माध्यम से कठिन संरचनाओं को पहचान कर उनके विकल्प दिए जा सकते हैं।
6. त्रुटियों का विश्लेषण व्यतिरेक विश्लेषण का ही विकल्प है।
7. त्रुटि विश्लेषण के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं – अधिगम की समस्याओं को दूर करना, भाषा में निहित विशिष्ट भाषिक तत्त्वों की पहचान तथा शिक्षक और शिक्षण-सामग्री का सहयोगी बनना।
8. इन तीनों उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए त्रुटियों के स्रोतों की पहचान आवश्यक है।

1.2.09. परीक्षण और मूल्यांकन

विद्यालय में विद्यार्थी का भावात्मक, शारीरिक, मानसिक एवं ज्ञानात्मक विकास होता है। शिक्षण के समय विभिन्न अधिगम कौशलों का प्रयोग किये जाने पर भी विशिष्ट ज्ञानात्मक उद्देश्य का सम्प्रेषण नहीं हो पाता है। इसका कारण है निरीक्षण के मानदण्डों में कमियों का होना। इस क्रम में परीक्षण और मूल्यांकन के मानदण्ड द्वारा अध्येता में एक नियतकाल के समय अर्जित ज्ञान का निरीक्षण किया जाता है। परीक्षण और मूल्यांकन की प्रणाली प्राचीन भारतीय शिक्षा में कई रूपों में प्रयुक्त होती थी। वर्तमान शिक्षा में ये दोनों भाषा-शिक्षण के एक उपांग के रूप में प्रयुक्त होते हैं। भाषा-शिक्षण के सैद्धान्तिक और प्राविधिक ज्ञान के साथ भाषा परीक्षण और मूल्यांकन को भी एक निश्चित दिशा और तकनीक मिल गई है। इनका स्वरूप भी विकसित हुआ है।

(1) भाषा परीक्षण के सन्दर्भ

वस्तुतः शिक्षा प्रक्रिया में परीक्षण को किसी एक पाठ्यक्रम या कक्षा से दूसरे पाठ्यक्रम या कक्षा में प्रवेश के लिए एक निश्चित विधि के रूप में माना गया है। किसी भी शिक्षा संगठन में परीक्षा प्रदान किये जाने वाले प्रमाणपत्र के लिए आयोजित की जाती है। आजकल यह परीक्षण विधि रूढ़िवादी या दोषपूर्ण मानी जाती है। इसमें परीक्षा को जोड़कर विद्यार्थियों को उत्तीर्ण, अनुत्तीर्ण अथवा श्रेणियों के तहत विभाजित करते हैं तथा इसके आधार पर किन विद्यार्थियों को आगे की कक्षा में प्रवेश दिया जाए और किन्हें नहीं यह निर्णय किया जाता है।

शिक्षा की आधुनिक अवधारणा परीक्षण की शिक्षा प्रक्रिया का ही एक ही अभिन्न अंग मानती है। शिक्षण-प्रक्रिया के अन्दर ही परीक्षण की प्रक्रिया साथ-साथ चलनी चाहिए। परीक्षण की यह पद्धति शिक्षण-प्रक्रिया के लक्ष्य के मद्देनजर सामर्थ्य और क्षमता से जोड़ती है।

वर्तमान में परीक्षण के तहत मूल्यांकन शब्द का प्रयोग उचित माना जा रहा है। मूल्यांकन शब्द अधिक व्यापक और बालक की समस्त प्रगति का परीक्षण करने के प्रयोग में आता है। साथ ही साथ यह शिक्षण पर भी अपना प्रभाव डालता है। मूल्यांकन उद्देश्य बाधित होता है।

(2) भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन

शिक्षा का कार्य व्यापक रूप में बालकों में कुछ परिवर्तन लाना है। ये परिवर्तन उनके व्यवहार तथा आचरण में होंगे। शिक्षा द्वारा बालकों को अनुभव प्राप्त होते हैं और उन अनुभवों के आधार पर वह अपने व्यवहार को बदलता, सुधारता, परिवर्तित और संशोधित करता जाता है। यही नहीं वह अपने ज्ञान में वृद्धि करता जाता है। सीखने में अनुभव उद्देश्य आधारित होते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली एक पूरी शिक्षण प्रणाली का केन्द्र-बिन्दु भी बन जाता हैं।

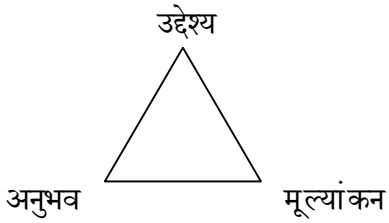

भाषा-शिक्षण में भी मूल्यांकन का उपयोग अन्य विषयों की भाँति ही है। भाषा-शिक्षण में पाठ्यक्रम के साथ-साथ ही शैक्षणिक उद्देश्यों को निर्धारित करना आवश्यक हो जाता है। भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाँच की जाती है। अर्थात् विद्यार्थी में भाषा सम्बन्धी सामर्थ्य और क्षमता का मूल्यांकन किया जाता है। शिक्षा व्यवस्था के तीनों चरणों (पाठपूर्व, पाठप्रक्रिया, पाठपश्चात्) के अनुरूप भाषा-शिक्षण विभिन्न मूल्यांकन को वर्गीकृत करता है। यथा – प्रवेश मूल्यांकन, अभिक्षमता, वर्ग निर्धारण मूल्यांकन, निदानात्मक मूल्यांकन, उपलब्धि मूल्यांकन तथा दक्षता मूल्यांकन। भाषाई क्षमता, योग्यता, कौशल-उपलब्धि, भाषाधिगम आदि का परीक्षण किया जाता है।

(1) हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन के क्षेत्र

मूल्यांकन के क्षेत्र निम्नलिखित हैं –

1. मूल्यांकन व्यापक होना चाहिए।
2. भाषा के सभी पक्षों एवं योग्यताओं का परीक्षण किया जाए।
3. सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक कार्यों का मूल्यांकन किया जाए।
4. मूल्यांकन में विषयों मौखिक परीक्षा का अनिवार्य स्थान दिया जाए।
5. सभी कार्यों का मूल्यांकन समान रूप में होना चाहिए।
6. निदानात्मक परीक्षण तथा उपचारात्मक अभ्यास करवाया जाए।

(2) मूल्यांकन की विशेषताएँ

एक अच्छे मूल्यांकन के अन्तर्गत प्रायः निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए –

1. विश्वसनीयता : विश्वसनीयता एकाग्रता, सामंजस्य एवं साधनता प्रदान करती है । विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों में विचलन नहीं होता। पुनर्मूल्यांकन पर भी अंक प्रायः एक से रहते हैं, अंकों में परिवर्तन नहीं होता।
2. वस्तुनिष्ठता : वस्तुनिष्ठ परीक्षा में विद्यार्थियों के उत्तरों का निष्पन्न पक्षभाव से मूल्यांकन किया जाता है।
3. वैधता : परीक्षा के सन्दर्भ में ही उसका उपयुक्त मूल्यांकन भी होना चाहिए। परीक्षा की सफलता उसकी वैधता पर निर्भर है।
4. व्यापकता : परीक्षा का क्षेत्र संकुचित नहीं होता। पाठ्यक्रम के सभी विस्तृत तथ्यों की परीक्षा की जाती है।
5. उपयोगिता : एक उन्नत मूल्यांकन सदैव व्यावहारिक होता है। विषयवस्तु को उपयोगिता की दृष्टि से प्रस्तुत करने का प्रयास करना चाहिए।
6. विभेदीकरण : मूल्यांकन को सक्षम और अक्षम विद्यार्थियों में भेद कर सकने का सामर्थ्य होनी चाहिए।

1.2.10. पाठ-सार

आज के आधुनिक युग में भाषा-शिक्षण एक महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है। हम एक बहुभाषी विश्व समाज में जी रहे हैं। वैश्वीकरण के इस युग में विश्व स्तर पर भी लोगों में सम्पर्क व सम्प्रेषण बढ़ गया है। अतः मातृभाषा से भिन्न एक या अधिक भाषाएँ सिखाने की अनिवार्यता सी बन जाती है। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में प्रमुख तीन प्रकार देखते हैं – मातृभाषा, अन्य भाषा तथा विदेशी भाषा। मातृभाषा-शिक्षण व्यक्तित्त्व का विकास का सोपान है। व्यक्ति मातृभाषा से ज्ञान के संसार में प्रवेश करता है और मातृभाषा में अभिव्यक्ति के स्तर पर कौशल प्राप्त करता है। द्वितीय भाषा आम तौर पर अपने परिवेश की भाषा, उसकी शब्दावली संरचना एवं शैलियाँ मातृभाषा से मिलती-जुलती है। व्यक्ति अन्य भाषा को जीवन में व्यवहार के लिए सीखते हैं। विदेशी भाषा इस दृष्टि से दूर की भाषा होती है और विदेशी भाषा को व्यक्ति ज्ञान पिपासा के कारण ही सीखता है। हम जीवन में विदेशी भाषा का उतना प्रयोग नहीं कर सकते। विदेशी भाषा के सन्दर्भ में चर्चा का विषय यह है कि भारत में अंग्रेजी शिक्षण का स्वरूप क्या हो ?

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में हिन्दी भाषा-शिक्षण के प्रमुखतः दो स्वरूप हैं – मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण तथा अन्य भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण। समाज में व्यक्ति मातृभाषा को सामान्य सदस्य बनने के लिए सीखता है, इसीलिए वह मातृभाषा में समता और गति पा जाता है। इसकी तुलना में अन्य भाषा और विदेशी भाषा सीखने वाले इन्हें सीमित परियोजना को अर्जित करते हैं। एवं साथ ही अन्य भाषा पर मातृभाषा की संरचना का बराबर प्रभाव पड़ता है। और साथ ही अन्य भाषा या विदेशी भाषा सीखने वाला विद्यार्थी उस भाषा में पूरी दक्षता प्राप्त नहीं कर पाते और उनमें कुछ दोष रह ही जाते हैं। इन्हीं दोषों के सन्दर्भ में और अन्य भाषा या विदेशी भाषा को पूरी क्षमता के साथ सीखने की आवश्यकता के सन्दर्भ में विधि के द्वारा बहुत अच्छे ढंग से भाषा के अर्जन का

मार्ग दिखाई देता है। भाषा-शिक्षण में शिक्षण सिद्धान्तों की ओर उन्मुख होना चाहिए। भाषा-शिक्षण की सफलता के लिए विद्यार्थियों की रुचियों, योग्यताओं को दृष्टि में रखकर शिक्षण किया जाए।

हम भाषा-शिक्षण के लिए लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं, जिससे विविध उद्देश्यों से भाषा सीखने वाले अपनी आवश्यकताओं के अनुसार भाषा दक्षता अर्जित करें। लेकिन शिक्षार्थी के सामने अर्जन में अनेक बाधाएँ उपस्थित हो जाती है। इन्हें पहचानने और दूर करने के उद्देश्य से विशिष्ट अध्ययन क्षेत्रों का जन्म हुआ है।

भाषा का व्यतिरेकी विश्लेषण संरचनात्मक भाषाविज्ञान पर आधारित है। यह दो भाषाओं में अन्तर के स्थानों का आकलन करता है जिससे हम इन स्थानों पर होने वाली सम्भावित त्रुटियाँ का पूर्वानुमान कर सकें।

भाषा त्रुटि विश्लेषण रूपान्तरण भाषाविज्ञान पर आधारित एक अध्ययन क्षेत्र है। इसके अनुसार त्रुटियाँ भाषा अर्जन की प्रक्रिया के सहज अंग है। यह अध्ययन मानता है कि संरचना की विभिन्नता हमेशा त्रुटि का कारण नहीं बनती। वास्तविकता में त्रुटियों से हमें यह पता लगता है कि भाषा के नियमों को आत्मसात् करने की प्रक्रिया कैसे काम कर रही है। भाषा के उद्देश्यों के सन्दर्भ में हम भाषा का परीक्षण सीखने करते हैं। भाषा परीक्षण में विभिन्न भाषिक कौशलों में क्षमता का परीक्षण करना चाहिए। मूल्यांकन विविध स्तरों पर भाषा-शिक्षण के आयोजन के विभिन्न आयामों की जानकारी उपलब्ध करता है। इस प्रकार प्रस्तुत पाठ में भाषा-शिक्षण की अवधारणा पर व्यापक चर्चा की गई है।

1.2.11. बोधप्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. ज्ञान का प्रमुख माध्यम है –

(क) भाषा
(ख) यन्त्र
(ग) विद्यार्थी
(घ) कोई नहीं

2. भारतीय भाषाओं की मूल भाषा कौनसी है ?

(क) अंग्रेजी
(ख) संस्कृत
(ग) हिन्दी
(घ) तमिल

3. भाषा-शिक्षण में साध्य एवं साधन क्या है?

(क) विद्यार्थी
(ख) भाषा
(ग) शिक्षक
(घ) पाठ्यक्रम

लघूत्तरीय प्रश्न

1. मातृभाषा-शिक्षण का स्वरूप बताइए।
2. भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मातृभाषा एवं द्वितीयभाषा तथा विदेशी भाषा की संकल्पना को स्पष्ट कीजिए।
2. भाषा-शिक्षण के सिद्धान्तों को समझाइए।

1.2.12. व्यवहार

1. भाषा का अर्थ समझाकर उसके आधारों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. भाषा-शिक्षण में त्रुटि विश्लेषण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. भाषा की बहुभाषिकता से आयामों का वर्णन कीजिए।
4. मातृभाषा के रूप में हिन्दी भाषा को समझाइए।

1.2.13. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (1979) भाषा-शिक्षण, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन
2. शर्मा, लक्ष्मीनारायण (1993) भाषा 1.2 की शिक्षण विधियाँ और पाठ नियोजन, आगरा, विनोद-पुस्तक मन्दिर
3. शर्मा, मार्त्तण्ड (2011), हिन्दी शिक्षण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन
4. गोस्वामी, डॉ॰ कृष्णकुमार (2007), आधुनिक हिन्दी के विविध आयाम, दिल्ली, आलेख प्रकाशन, ISBN : 81-8187-123-5
5. सिंह, दिलीप (1999), अन्य भाषा-शिक्षण के बृहत् सन्दर्भ, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISSN : 978-93-5000-171-4
6. शुक्ल, रजनीकान्त (2012) , हिन्दी शिक्षण के विविध आयाम, तिरुपति, श्रीपति प्रकाशन, ISBN : 978-93-5126-320-3

7. पाण्डेय, रामशकल (2012), हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-47-1
8. पाण्डेय, श्रुतिकान्त (2014), हिन्दी भाषा और इसकी शिक्षण विधियाँ, दिल्ली, पी एच एल लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, ISBN : 978-81-203-5003-8

❖❖❖

खण्ड – 1 : भाषा और भाषा-शिक्षण

इकाई – 3 : पाठ्यक्रम की प्रकृति, निर्धारण और उसका विकास

इकाई की रूपरेखा

1.3.00. उद्देश्य कथन
1.3.01. प्रस्तावना
1.3.02. पाठ्यक्रम की अवधारणा और प्रकृति
1.3.03. पाठ्यक्रम और भाषा
    1.3.03.1. हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान
    1.3.03.2. पाठ्यक्रम में मातृभाषा के रूप में हिन्दी
    1.3.03.3. पाठ्यक्रम में अन्य भाषा के रूप में हिन्दी
1.3.04. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का निर्धारण व उसके सिद्धान्त
1.3.05. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का विभिन्न स्तरों पर विकास
1.3.06. हिन्दी पाठ्यपुस्तक और पाठ्यक्रम
    1.3.06.1. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का पाठ्यक्रम में स्थान
    1.3.06.2. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का महत्त्व
    1.3.06.3. हिन्दी पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ
    1.3.06.4. हिन्दी पाठ्यपुस्तक के प्रकार
1.3.07. हिन्दी में पाठ्यसहगामी क्रियाएँ
    1.3.07.01. पाठ्यसहगामी क्रिया का अर्थ
    1.3.07.02. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्त्व
    1.3.07.03. भाषा से सम्बन्धित पाठ्यसहगामी क्रियाएँ
1.3.08. पाठ-सार
1.3.09. बोध प्रश्न
1.3.10. व्यवहार
1.3.11. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1.3.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएँगे कि –

i. पाठ्यक्रम का अर्थ, परिभाषा तथा उसकी प्रकृति को लिख सकेंगे।
ii. पाठ्यक्रम एवं भाषा के समवाय सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iii. हिन्दी भाषा-शिक्षण का परिचय सम्बन्ध ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iv. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम के निर्धारण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

v. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का विभिन्न स्तरों पर विकास का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
vi. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का पाठ्यक्रम में स्थान निश्चित कर सकेंगे।
vii. हिन्दी पाठ्यपुस्तक की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
viii. हिन्दी पाठ्यपुस्तक की समीक्षा और विवेचना कर सकेंगे।
ix. हिन्दी में पाठ्यसहगामी क्रियाओं का अर्थ एवं महत्त्व का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

1.3.01. प्रस्तावना

शिक्षा एक गतिशील मानवीय प्रक्रिया है । इस प्रक्रिया में बालक के सर्वांगीण विकास का प्रयास पाठ्यक्रम के आधार पर किया जाता है। यह पाठ्यक्रम शिक्षा में एक ऐसी धुरी के रूप में है जिसके चारों ओर कक्षा के विविध कार्य तथा विद्यालय के समस्त कार्यकलाप विकसित किये जाते हैं। ये कार्यकलाप विद्यालयी पाठ्यक्रम के परिणामस्वरूप ही नियोजित किये जाते हैं। पाठ्यक्रम का एक आवश्यक पक्ष विभिन्न विषयों का अध्ययन-अध्यापन भी है। इन ज्ञान-विज्ञान के सभी विषयों का अपना महत्त्व है। इस सन्दर्भ में यह अवश्य है कि आवश्यकता के अनुसार कुछ पक्ष अनिवार्य रूप से और कुछ को वैकल्पिक रूप से पढ़ाया जाता है। अतः पाठ्यक्रम में भाषा का क्या स्थान दिया जाए ? क्योंकि भाषा का व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषा व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास और अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ ही सामाजीकरण का साधन भी है। भाषा समाज में सम्प्रेषण के माध्यम से व्यक्तियों को सामाजिक वर्गों में बाँधने और राष्ट्रीय भावना का संवाहक का हेतु बनती है। अतः भाषा-शिक्षण सम्बन्धी निर्णय का राष्ट्र, समाज और व्यक्ति के जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है । अत एव अनादिकाल से शिक्षा प्रक्रिया का भाषा-शिक्षण अभिन्न अंग रहा है । सामान्यतः शिक्षा में भाषा हर 'विषय' के माध्यम रूप में स्थिर रहती है । चाहे हम इतिहास, भूगोल, दर्शन, चिकित्सा, गणित, विज्ञान आदि 'विषय' को पढ़ाएँ, भाषा से असम्बद्ध रहकर हम न तो इसकी शिक्षा दे सकते हैं और न ही विद्यार्थी इसे अपने भीतर आत्मसात् कर सकता है । शिक्षक, विषयवस्तु को भाषा प्रयोग में बाँधकर विद्यार्थी को अधिगम करा कर अपने कार्य में सफल होता है । इसलिए भाषा, शिक्षा-प्रक्रिया का आधारभूत अंग है।

पाठ्यक्रम के केन्द्र में विद्यार्थी के वास्तविक अनुभव होते हैं जो विद्यालय द्वारा प्रभावित और संवर्द्धित होते हैं। संक्षेप में कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम का अन्तिम लक्ष्य विद्यार्थी के अनुभवजगत् को सम्वृद्ध कर उसके व्यक्तित्व का विकास करना ही है। यह व्यक्तित्व सांस्कृतिक मूल्यों का संवाहक ही नहीं अपितु वर्तमान वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय निर्वाह तथा आवश्यकताओं के प्रति अवबोध पैदा करता है और उसे अपने अनुरूप मोड़ने या नियन्त्रित करने की क्षमता भी पैदा करता है।

आज के समय में शिक्षा के क्षेत्र में प्रत्येक विषय के पाठ्यक्रम का निर्धारण और विकास करना अत्यावश्यक है। पाठ्यक्रम के द्वारा ही किसी निश्चित स्तर की विषयवस्तु का चयन एवं संगठन सुविधापूर्वक किया

जा सकता है तथा उस विशिष्ट स्तर पर निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति भी हो सकती है। किसी भी विषय के पाठ्यक्रम का निर्माण, उसकी प्रकृति, पाठ्यक्रम निर्माण सिद्धान्तों व विकास-प्रक्रिया के अनुरूप होना चाहिए।

हिन्दी भाषा को भारतीय संविधान ने राष्ट्रभाषा घोषित किया है। हिन्दीभाषी प्रदेशों में हिन्दी का मातृभाषा और अहिन्दी प्रदेशों में द्वितीय भाषा या अन्य भाषा के रूप में शिक्षण होता है। पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों एवं विकास-प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक स्तर पर हिन्दी भाषा के पाठ्यक्रम को निर्धारित किया जाना चाहिए। विभिन्न स्तरों पर निर्दिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कक्षा में जो कुछ क्रियाएँ की जाती हैं, उनके आधार हमें पाठ्यक्रम के रूप में मिलते हैं। अतः शिक्षक प्रत्येक स्तर के पाठ्यक्रम की परिधि से परिचित नहीं होगा तो हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने में बालक की सहायता नहीं कर पाएगा। किसी भी कक्षा का पाठ्यक्रम निर्धारित करने से पूर्व अर्जित जानकारी एवं अनुभवों को जानना आवश्यक है। पाठ्यक्रम पूर्व जानकारी पर आधारित होना चाहिए। शिक्षा पाठ्यक्रम पर अवलम्बित होती है। अतः प्रस्तुत पाठ में विद्यार्थियों की रुचि एवं योग्यता के अनुसार हिन्दी पाठ्यक्रम की एक संक्षिप्त रूपरेखा निर्मित की है। शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यक्रम के तहत पाठ्यपुस्तक का महत्त्व सर्वविदित है, अतः हिन्दी पाठ्यपुस्तक के साथ-साथ पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्त्व हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में स्पष्ट किया गया है। पाठ्यक्रम बालक की उन्नति की सीढ़ी है। अतः पाठ्यक्रम में क्रमबद्धता होनी चाहिए। इस मानदण्ड से हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम श्रेष्ठ एवं स्तरानुकूल उच्च बनेगा।

1.3.02. पाठ्यक्रम की अवधारणा और प्रकृति

शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन पाठ्यक्रम है। शिक्षा की प्रक्रिया का आधार पाठ्यक्रम का प्रारूप होता है। समाज के साथ-साथ शिक्षा के उद्देश्यों तथा पाठ्यक्रम के प्रारूप में भी परिवर्तन आवश्यक होता है। पाठ्यक्रम विद्यालय की शिक्षा व्यवस्था के धुरी के रूप में माना गया है। विद्यालय में उपलब्ध सभी संसाधन जैसे विद्यालय भवन, उपकरण, पाठ्य विषय, पुस्तकें, पाठ्यसहगामी क्रियाएँ तथा अन्य शिक्षण-सामग्री का प्रमुख उद्देश्य पाठ्यक्रम के प्रभावी क्रियान्वयन में सहयोग देना है। कक्षा की समस्त क्रियाएँ, पाठ्यसहगामी कार्यकलाप, तथा मूल्यांकन की समस्त प्रक्रिया विद्यालयी पाठ्यक्रम के परिणामस्वरूप ही नियोजित किये जाते हैं।

शिक्षा इतिहास से ज्ञात होता है कि प्रत्येक सभ्य समाज अपनी युवा भावी पीढ़ी के सामाजीकरण हेतु एक निश्चित शैक्षिक कार्यक्रम का नियोजन करता है जिसका क्रियान्वयन विद्यालय के माध्यम से किया जाता है। इस प्रक्रिया में किन बातों का समावेश हो तथा इन्हें शैक्षिक व्यवहार और क्रियाओं के रूप में कैसे परिवर्तित किया जाए, इस विषय में प्राचीनकाल से ही अनेक मतान्तर हैं। वर्तमान समय में भी यह मतभेद विद्यमान है कि पाठ्यक्रम में क्या समाहित किया जाए, इसे कैसे संगठित तथा क्रमबद्ध करके पढ़ाया जाए। इस मत-विभेद के कारण ही पाठ्यक्रम की संकल्पना तथा इसके विकास के प्रति विद्वानों के दृष्टिकोण में समरूपता नहीं आ सकी है। पाठ्यक्रम का शाब्दिक, संकुचित तथा व्यापक अर्थ में प्रयोग होता है।

(1) पाठ्यक्रम का अर्थ

1. पाठ्यक्रम का शाब्दिक अर्थ : 'पाठ्यक्रम' शब्द आंग्लभाषा के 'करीक्यूलम' शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। 'करीक्यूलम' शब्द लैटिन भाषा से अंग्रेजी में लिया गया है तथा यह लैटिन शब्द 'क्यूरे' से बना है। 'क्यूरे' शब्द का अर्थ है – दौड़ का मैदान (Race Course)। दूसरे शब्दों में पाठ्यक्रम वह क्रम है जिसे किसी व्यक्ति को अपने गंतव्य स्थान पर पहुँचने के लिए पार करना होता है। शाब्दिक अर्थ के अनुसार "पाठ्यक्रम वह मार्ग है जिसके अनुसार चलकर विद्यार्थी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करता है।"
2. पाठ्यक्रम का संकुचित अर्थ : संकुचित अर्थ में पाठ्यक्रम को केवल 'पुस्तकीय ज्ञान' (Bookish Knowledge) तक सीमित कर दिया जाता है। उसमें बालकों की आवश्यकताओं, रुचियों, प्रवृत्तियों, अभिवृत्तियों, क्षमताओं तथा व्यावहारिक जीवन में काम आने वाली क्रियाओं का कोई स्थान नहीं होता है। संक्षेप में संकुचित अर्थ के अनुसार "पाठ्यक्रम का तात्पर्य अध्ययन के उस विवरण से है, जिसमें बालकों को पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करने की व्याख्या मात्र होती है।"
3. पाठ्यक्रम का व्यापक अर्थ : व्यापक अर्थ में पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वे सभी अनुभव आ जाते हैं जिन्हें एक नई पीढ़ी अपनी पुरानी पीढ़ियों से प्राप्त करती है। साथ ही विद्यालय में रहते हुए शिक्षक के संरक्षण में विद्यार्थी जो भी क्रियाएँ करता है, वह सभी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आता है तथा इसके अतिरिक्त विभिन्न पाठ्यसहगामी क्रियाएँ भी पाठ्यक्रम का अंग होती है। अतः वर्तमान काल में पाठ्यक्रम से तात्पर्य उसके विस्तृत स्वरूप से ही है।

(2) पाठ्यक्रम की परिभाषा

पाठ्यक्रम की व्यापकता की दृष्टि से अनेक विद्वानों ने इसको अपने-अपने ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है। उदाहरणस्वरूप पाठ्यक्रम की कुछ प्रमुख प्रचलित परिभाषाओं का विवरण दिया जा रहा है। यथा –

1. लारेन्स स्टेनहाउस महोदय के अनुसार "पाठ्यक्रम एक ऐसा प्रयास है जिसके द्वारा किसी शैक्षिक संकल्पना के आवश्यक सिद्धान्तों तथा लक्षणों को इस प्रकार सम्प्रेषित किया जाता है कि उनकी उपयुक्त समालोचना करते हुए उन्हें प्रभावशाली ढंग से कार्यरूप में परिणत किया जा सके।"
2. जेनकिन तथा शिपमैन के अनुसार "पाठयक्रम किसी शैक्षिक प्रस्ताव का रूपांकन तथा क्रियान्वयन है जिसका शिक्षण तथा अधिगम किसी विद्यालय तथा संस्था में किया जा सके तथा जिसके लिए वह संस्था तीन स्तरों तार्किकता, क्रियान्वयन एवं प्रभाव की दृष्टि से उत्तरदायी भी हो।"
3. कनिंघम महोदय के अनुसार "पाठयक्रम शिक्षक रूपी कलाकार के हाथ में वह साधन है जिसके माध्यम से वह अपने पदार्थ रूपी विद्यार्थी को अपने कलागृह रूपी विद्यालय में अपने उद्देश्यों के अनुसार रूप प्रदान करता है।"

4. जॉनसन महोदय के मत में "पाठ्यक्रम निर्दिष्ट अधिगम अनुभवों के परिणामों की क्रमिक व्यवस्था है।"
5. ग्लेन हस महाशय के अनुसार "पाठ्यक्रम उन सभी अनुभवों का संकलन है जो किसी एक अध्येता की शिक्षा के कार्यक्रम में निहित होते हैं और उसका प्रयोजन व्यापक लक्ष्यों तथा उनसे सबन्धित उन विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है जिनका नियोजन भूत और वर्तमान व्यावसायिक व्यवहारों के सिद्धान्तों और शोध सम्बन्ध ढाँचे के रूप में किया जाता है।"
6. अरविन्द चन्द्र महोदय के अनुसार "पाठ्यक्रम सीखे गये अनुभवों का सुसंगत समग्र रूप है जो किसी विद्यालय द्वारा वांछित परिवर्तन लाने हेतु शिक्षार्थियों को प्रदान किये जाते हैं।"

इस प्रकार कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम नियोजित अनुभवों की सूची होता है जिन्हें विद्यालय के निर्देशन के अन्तर्गत दिया जाता है। दूसरे शब्दों में पाठ्यक्रम उन अनुभवों की रूपरेखा होती है जो विद्यार्थियों के लिए नियोजित की जाती है। इस प्रकार पाठ्यक्रम विद्यालय के निर्देशन में विद्यार्थियों के लिए नियोजित अनुभवों का रूपरेखा स्वरूप है।

(3) पाठ्यक्रम की प्रकृति

पाठ्यक्रम की प्रकृति में अनेक व्याख्याएँ समाहित है। पाठ्यक्रम की प्रकृति निम्नलिखित पक्षों के विवेचन से स्पष्ट होगी –

1. पाठ्यक्रम सदैव पूर्ण नियोजित होता है। इसमें निहित क्रियाओं को आवश्यकता के अनुसार एका-एक विकसित नहीं किया जा सकता।
2. पाठ्यक्रम के चार आधार होते हैं – सामाजिक शक्तियाँ, मानव विकास का स्वीकृत सिद्धान्तों द्वारा प्रदत्त ज्ञान, अधिगमस्वरूप तथा ज्ञान और संज्ञान स्वरूप।
3. पाठ्यक्रम के लक्ष्य उससे सम्बन्धित शैक्षिक उद्देश्यों से निर्दिष्ट होते हैं। ये उद्देश्य ही साध्य हैं तथा स्वीकृत पाठ्यक्रम इन्हें प्राप्ति का साधन है।
4. पाठ्यक्रम शिक्षक के अनुदेशन को नियोजित करने में सहायक होता है। इसके माध्यम से समाज में सक्रिय सामाजिक शक्तियों, मानव विकास की अवस्थाओं तथा उनमें से प्रत्येक की विशिष्टताओं को समझाने का प्रयास किया जाना अभीष्ट है। अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक क्या हैं ! ज्ञान-संज्ञान की प्रकृति क्या है ! बाल विकास की गहरी समझ तथा बच्चों द्वारा विभिन्न शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने की क्षमता आदि की जानकारी से शिक्षक पाठ्यक्रम में निर्दिष्ट अधिगम अनुभवों का नियोजन कर सकता है। अधिगम अनुभवों की गुणवत्ता तथा सार्थकता ही पाठ्यक्रम के क्रियान्वयन के प्रभाव का निर्धारण करती है।
5. शिक्षक अपनी कक्षा के सभी विद्यार्थियों के लिए एक ही प्रकार अधिगम अनुभवों का नियोजन करता है। फिर भी अपने अधिगम अनुभवों तथा अपनी सहभागिता के स्तर एवं गुणवत्ता के कारण

उनमें भिन्नता दिखाई देती है। उनमें वैयक्तिक भेद तथा सामाजिक पृष्ठभूमि की विभिन्नता इस प्रकार के परिणाम के लिए उत्तरदायी है। अत एव एक ही कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी का वास्तविक पाठ्यक्रम उसी कक्षा के अन्य विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम की अपेक्षा भिन्न होता है।

6. प्रत्येक अध्येता का अपने वास्तविक पाठ्यक्रम के अस्तित्व के परिणामस्वरूप निर्दिष्ट पाठ्यक्रम तथा क्रियान्वित पाठ्यक्रम के मध्य पाए जाने वाले भेद के कारण शिक्षक की भूमिका अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। उसे कक्षा में न केवल लचीली व्यवस्था प्रदान करनी होती है, वरन् अधिगम के सार्थक विकल्प भी खोजने पड़ते हैं। प्रदत्त पाठ्यक्रम के उद्देश्य, आधार तथा मानदण्ड की दृष्टि से शिक्षक में उपयुक्त व्यावसायिक निर्णय लेने की क्षमता निहित होनी चाहिए।

1.3.03. पाठ्यक्रम और भाषा

पाठ्यक्रम और भाषा के मध्य समवाय सम्बन्ध है। भाषा शिक्षा के पाठ्यक्रम में हर विषय के माध्यम रूप में रहती है। भाषा प्रत्येक विषय को पढ़ाने का माध्यम है। अर्थात् शिक्षण में भाषा का अन्य विषयों के साथ सीधा सम्बन्ध है, क्योंकि भाषा के माध्यम से ही कोई भी अन्य विषय समझाया व सिखाया जाता है और सभी विषयों में सहसम्बन्ध रहता ही है। सभी विषयों के बारे में चिन्तन और विचार प्रकटन भाषा के माध्यम से ही होता है। अगर भाषा का ज्ञान अधूरा है तो अन्य विषयों को पढ़ाने तथा समझाने में विद्यार्थी सफल नहीं बन सकता है। अत एव कोठारी आयोग ने कई देशों के पाठ्यक्रम के अध्ययन के उपरान्त कहा कि उन देशों में उच्च माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का माध्यम उनकी अपनी मातृभाषा है किन्हीं-किन्हीं देशों में उनकी मातृभाषा के अतिरिक्त एक-दो भाषाएँ और पढ़ाई जाती हैं पर वे सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवेश से ही सम्बद्ध हैं।

1.3.03.1. हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान

हिन्दी भाषा को भारत के संविधान ने भारतीय संघ की राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की है। मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा है कि हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर उसका विश्व की साहित्यिक भाषाओं से घनिष्ठ सम्बन्ध है और भारत में इसकी व्यापकता सर्वाधिक है तथापि देश के कई भागों में हिन्दी मातृभाषा नहीं, वरन इतर भाषा है। विद्यालयों में हिन्दी एक विषय ही नहीं अपितु अन्य विषयों को समझने तथा विचार करने का माध्यम भी है। इस कारण पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा को विशिष्ट स्थान मिलना चाहिए। देश की भावात्मक एकता के लिए भी राष्ट्रभाषा हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन प्रत्येक राज्य में अनिवार्य होना चाहिए। जिन राज्यों की मातृभाषा हिन्दी नहीं है, उन्हें अपनी मातृभाषाओं के साथ हिन्दी का भी अध्ययन करना अनिवार्य करना चाहिए। जिन राज्यों की मातृभाषा हिन्दी है, उन्हें भी इसके साथ एक अन्य भारतीय भाषा का शिक्षण करना चाहिए। एक विदेशी भाषा माध्यमिक स्तर पर पढ़नी चाहिए। यह बात त्रिभाषा सूत्र में कथित है। देश की राजनैतिक तथा सांस्कृतिक एकता के लिए राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। माध्यमिक स्तर तक मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना उचित है। परन्तु उच्चतर शिक्षा का माध्यम राष्ट्रभाषा ही होना चाहिए। ऐसा विश्व के सभी विकसित देशों में हो रहा है। अतः उच्च कक्षाओं में अब हर विषय हिन्दी माध्यम से पढ़ाना सम्भव है।

1.3.03.2. पाठ्यक्रम में मातृभाषा के रूप में हिन्दी

मातृभाषा की शिक्षा बालक के बहुमुखी विकास के लिए अति आवश्यक है। मातृभाषा ही सब विषयों, ज्ञान-विज्ञानों का मूलाधार होती है। मातृभाषा सामाजिक संस्थागत यथार्थता है। विद्यालय में शिक्षा हेतु निर्धारित पाठ्यक्रम के द्वारा शिक्षक तथा विद्यार्थियों के लिए उनके कार्यों का दिशा-निर्देश किया जाता है। अतः विद्यालय पाठ्यक्रमों में मातृभाषा का विशेष स्थान दिया जाता है। पाठ्यक्रम में हिन्दी का मातृभाषा के रूप में विशिष्ट महत्त्व प्रदर्शित होता है –

1. देवनागरी वर्णाक्षरों की मुखाकृति को देखना और उसका अभ्यास करने का प्रयत्न करना।
2. ध्वनियों को सुनने का यत्न करना एवं अनुकरण का प्रयास करना।
3. लिपि को देखकर समझना और बोलकर उच्चारण करना।
4. मातृभाषा की शब्दावली के माध्यम से बालक का बहुमुखी विकास होना।
5. हिन्दी शब्द-भण्डार में वृद्धि करना और व्यवहार में प्रयोग क्षमता पैदा करना।
6. हिन्दी साहित्य के कवियों-लेखकों और उनकी रचनाओं से परिचित होना।
7. साहित्यिक मूल्यों को समझकर रचना कर्म के लिए प्रवृत्त होना।

1.3.03.3. पाठ्यक्रम में अन्य भाषा के रूप में हिन्दी

मातृभाषा के अतिरिक्त हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रभाषा भी है। संसार के जो देश एक भाषा-भाषी हैं, वहाँ जनता की मातृभाषा एक ही होती है। भारत एक बहुभाषी देश है। संविधान में 22 भाषाओं को मान्यता दी है। अतः यहाँ आवश्यक नहीं है कि मातृभाषा ही राष्ट्रभाषा होवे। हिन्दीभाषी प्रदेशों में हिन्दी भाषा विद्यार्थियों की मातृभाषा है परन्तु अहिन्दीभाषी प्रदेशों में विद्यार्थियों की मातृभाषाएँ पृथक्-पृथक् क्षेत्रीय भाषाएँ (प्रादेशिक भाषाएँ) हैं। क्षेत्रीय भाषा-भाषी विद्यार्थियों को भी राष्ट्रभाषा हिन्दी का अध्ययन करना आवश्यक है। ये विद्यार्थी हिन्दी को द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में अध्ययन करते हैं। अर्थबोध अन्य भाषा-शिक्षण का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। सीखने वाला कुछ शब्दों को पहचान कर पढ़ सके और अर्थ ग्रहण कर ले, इसका प्रयास होना चाहिए। बोली और लिखी जाने वाली हिन्दी को समझने की योग्यता का विकास करना पड़ता है। पाठ्यक्रम में अन्य भाषा के रूप में हिन्दी का विशिष्ट महत्त्व उभरता है –

1. हिन्दी भाषा के कौशलों का विकास करना।
2. राष्ट्रभाषा के अध्ययन के प्रति जिज्ञासा प्रदर्शित करना।
3. विविध भाषा-भाषी लोगों को एक ही सूत्र में बाँधना।
4. राज्य में आदान-प्रदान के लिए इस भाषा के ज्ञान से सहयोग करना।
5. हिन्दी में लिखित पुस्तकें पढ़कर उनका आशय ग्रहण करने में सहायता देना।
6. भाव ग्रहण एवं भाव प्रकाशन में संकोच एवं झिझक को दूर करना।

7. हिन्दी भाषा में रचित साहित्य का रसास्वादन करना।

1.3.04. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का निर्धारण व उसके सिद्धान्त

माध्यमिक शिक्षा आयोग का कथन है कि "विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम है, जो विद्यार्थी के जीवन को समस्त कोणों से प्रभावित करता है और उनके आदर्श व्यक्तित्व के विकास में सहायता करता है।" पाठ्यक्रम निर्माण के समय निम्नलिखित अंशों पर अवधान देना चाहिए –

1. पाठ्यक्रम शिक्षोद्देश्यों के अनुकूल होवे।
2. विद्यार्थियों के स्तर को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम होवे।
3. पाठ्यक्रम में मानव के यथार्थनुभव सम्मिलित होवें।
4. विद्यार्थियों की रुचि, अभिवृत्ति, सामर्थ्य, अपेक्षानुरूप होवे।
5. पाठ्यक्रम में विषय एवं क्रियाएँ तथा उनका क्रम उपयोगी होवे।
6. पाठ्यक्रम में विद्यमान विभिन्न विषयों व क्रियाओं में सम्बन्ध होवे।
7. पाठ्यक्रम निर्माण में शिक्षा के प्रमुख आधारों का ध्यान रखा जावे।

पाठ्यक्रम और भाषा का समवाय सम्बन्ध है। किसी भी भाषा-शिक्षण के चार कौशल होते हैं – श्रवण, भाषण, पठन और लेखन। अध्यापक को इन चारों कौशलों का विकास करना होता है। भाषा सम्बन्धी पाठ्यक्रम को उस भाषा सम्बन्धी ज्ञान और शिक्षा सम्बन्धी शोध प्रभावित करते हैं। पाठ्यक्रम बनाने के पीछे शिक्षा सम्बन्धी एक निश्चित दृष्टि और ज्ञान अनुभव के रूप में काम करते हैं। जिस भाषा को हमें पढ़ाना है, उसकी संरचना का ज्ञान पहले आवश्यक होता है। अतः भाषा-विवरण हमें उपलब्ध होवे। पढ़ाई जाने वाली भाषा के विश्लेषण, व्याकरण अथवा संरचनात्मक विवरण के बिना उस भाषा को कक्षा में ले जाना या शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम के रूप में अपनाना अमनोवैज्ञानिक व अव्यवहारिक भी है। पाठ्यक्रम निर्माण से निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति होनी चाहिए–

1. भाषा की प्रकृति का ज्ञान
2. अर्थ अवगमन सामर्थ्य
3. अभिव्यक्ति की क्षमता
4. स्वर की अनुकूलता
5. समाजोपयोगी विषय
6. गद्य-पद्य-व्याकरण-नाटक तथा रचना

1.3.05. हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का विभिन्न स्तरों पर विकास

सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक, विद्यार्थी एवं पाठ्यक्रम ये तीन प्रमुख तत्त्व होते हैं। तथा इस शिक्षा प्रक्रिया का आधार पाठ्यक्रम ही होता है। बिना पाठ्यक्रम के शिक्षा की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अतः शिक्षा को सुचारु रूप से चलाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि विद्यार्थियों के लिए उनके स्तरानुकूल पाठ्यक्रम का निर्माण, निर्धारण व विकास किया जाए ताकि विद्यार्थी उस पाठ्यक्रम के माध्यम से नवीन ज्ञान को ग्रहण करें। पाठ्यक्रम निर्माण करते समय यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि वह विद्यार्थियों की उन्नति करने वाला हो। अतः पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वे सभी तत्त्व होने आवश्यक हैं जिनके द्वारा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास होता है। पाठ्यक्रम शिक्षा को सुगम बनाने के लिए अपरिहार्य है। शिक्षण की नींव का कार्य पाठ्यक्रम करता है। कौनसी कक्षा या कौन से स्तर के लिए कैसा पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाए यह भी एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। अतः किसी भी कक्षा या स्तर का पाठ्यक्रम निर्धारण व विकास करने के लिए उस कक्षा से पूर्व की कक्षाओं में विद्यार्थियों ने क्या सीखा है इसकी ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है। विद्यार्थियों के अधिगम के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। हिन्दी भाषा एक सरल एवं सुबोध भाषा है। इस भाषा को भारत की राष्ट्रभाषा के नाम से भी जाना जाता है। हम सब हिन्दी है। हिन्दी भाषा का उद्भव संस्कृत भाषा से माना जाता है। सभी वर्ग के लोगों के द्वारा इस भाषा का प्रयोग किया जाना स्वाभाविक सी बात है। भाषा-शिक्षण का राष्ट्र निर्माण में बहुत प्रभावकारी कार्य माना जाता है। किसी भी प्रकार का सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना शिक्षण है। परन्तु भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा का मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करना ही अभीष्ट नहीं है। बल्कि लक्ष्य भाषा की दक्षता एवं कुशलता का विकास करना, जिससे विद्यार्थी उसे भाषा-भाषी समाज में विचार-विनिमय कर सके। वर्तमान में हिन्दी भाषा को पाठ्यक्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाने लगा है। विभिन्न कक्षाओं में हिन्दी पाठ्यक्रम के लक्ष्यों को निर्धारित कर दिया गया है। हमारे देश में हिन्दी-शिक्षण के प्रमुखतः दो स्वरूप हैं – मातृभाषा के रूप में हिन्दी-शिक्षण तथा अन्य भाषा के रूप में हिन्दी-शिक्षण। हिन्दी पाठ्यक्रम के विकास सन्दर्भ में विभिन्न तत्त्वों का ध्यान रखा जाना चाहिए, यथा – विविधता (गद्य, पद्य, नाटक, लेख, कहानी, जीवन कथा, संवाद, कविता, यात्रा विवरण तथा व्याकरण), सरलता व स्पष्टता, क्रमबद्धता व शृंखलाबद्धता, पूर्वज्ञान आधारिता, अभिरुचि, मनोवैज्ञानिकता, परिवेश, दैनिक कार्य, योग्यता, यथार्थानुभव, पाठ्यक्रम विषय एवं क्रियाएँ।

(1) प्राथमिक स्तर पर हिन्दी का पाठ्यक्रम : विद्यालय में शिक्षा हेतु निर्धारित पाठ्यक्रम के द्वारा शिक्षक तथा विद्यार्थियों के लिए उनके कार्यों का दिशा-निर्देश किया जाता है। शिशु के कोमल मन पर सुन्दर पाठ्यक्रम एवं इसके सन्तुलित एवं व्यावहारिक पाठन का प्रभाव पड़ता है। प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा का अपना विशेष महत्त्व है। हिन्दी भाषा की ध्वनियों का ज्ञान, उच्चारण, शुद्धलेखन, पद विन्यास, सरल वाक्य विन्यास आदि की शिक्षा दी जाए। भाषा-शिक्षण अपने प्रारम्भिक स्तर पर प्रभावपूर्ण होने से बालक भाषाज्ञान पटु होगा और भाषेतर विषयों के वाचन, पठन, लेखन में पर्याप्त दक्षता प्राप्त करेगा। अतः प्राथमिक स्तर पर हिन्दी भाषा के पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा की पाठ्यवस्तु में वर्ण

विचार, कविताएँ, कहानियाँ, व्याकरणांश, रचना आदि का समावेश विद्यार्थियों की योग्यता के अनुसार ही करना चाहिए। किसी भी कक्षा का हिन्दी पाठ्यक्रम प्राथमिक स्तरीय उस कक्ष से पूर्व कक्षा में विद्यार्थियों ने 'क्या सीखा' इस पर ध्यान देकर पाठ्यक्रम का निर्माण व विकास करना चाहिए।

(2) माध्यमिक स्तर पर हिन्दी का पाठ्यक्रम : प्राथमिक स्तर पर शिक्षा अर्जित करने के पश्चात् विद्यार्थी माध्यमिक स्तर में प्रवेश करता है। इस समय उसका मानसिक एवं बौद्धिक स्तर कुछ उन्नत हो गया होता है। हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में इस समय काफी जानकारी हो जाती है जिसके माध्यम से वह हिन्दी पाठ्यक्रम को समझने की योग्यता प्राप्त करता है। प्राथमिक स्तर (कक्षा प्रथम से अष्टम) पर उसे पठन, लेखन, श्रवण एवं मौखिक रूप से अभिव्यक्ति आदि सभी का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इस सभी के आधार पर वह माध्यमिक स्तर पर शिक्षा ग्रहण करने में सक्षमता प्राप्त करना है। सामान्यतः हिन्दी भाषा के माध्यमिक स्तरीय पाठ्यक्रम के समीक्षण से निम्नलिखित स्वरूप सामने आता है – मौलिक एवं स्वतन्त्र भाव प्रकाशन, रचना, गद्यपाठ, पद्यपाठ, व्याकरण तथा पठन सम्बन्धित पाठ्यवस्तु पाठ्यक्रम में निर्धारित व विकसित की जाए।

गद्यपाठ : बृहत् गद्यांशों का छोटे-छोटे अंशों को पढ़ाना, उचित स्तर लय के साथ वाचन करना।

पद्यपाठ : कविता का साभिनय आरोह-अवरोह के साथ वाचन एवं चरणों को कण्ठस्थ कराना।

रचना : शब्दों से कथा रचना, साधारण पद्य रचना,

कल्पना : निबन्ध लेखन।

व्याकरण : पद वाक्यों के विश्लेषण, कारक एवं सभी अंगों का सम्यक् ज्ञान।

(3) उच्च स्तर पर हिन्दी का पाठ्यक्रम : वस्तुतः उच्च स्तर पर भाषा वैकल्पिक तथा प्रौढ़ शैली की होती है। महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के हिन्दी भाषा पाठ्यक्रमों में विशेष योग्यता के लिए अवसर प्रदान करना चाहिए। हिन्दी की उच्च शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थी स्नातक-स्नातकोत्तर उपाधि एवं शोध कार्य करना चाहता है। तब तो उसे हिन्दी भाषा में भावग्रहण की ही नहीं भावाभिव्यक्ति एवं समीक्षा की भी योग्यता प्राप्त करनी होगी। अतः इस स्तर का पाठ्यक्रम निम्नलिखित प्रकार से बन सकता है –

मौखिक भाव प्रकाशन : व्याकरण दृष्टि से शुद्ध, प्रभावात्मक एवं रुचिकर भाषा व शैली से अपने विचार व्यक्त कर सके।

पठन : स्पष्ट, शुद्ध, प्रभावपूर्ण विरामादि चिह्नों को ध्यान में रखते हुए अर्थ ग्रहण की गति का विकास।

रचना : वर्णनात्मक, विचारात्मक, कल्पनात्मक निबन्धों की रचना व पत्र, विज्ञापन, संवाद लिखना।

व्याकरण : रूप, काव्य-रचना, अनुच्छेद-रचना, पदवाक्य-विश्लेषण।

समीक्षा : साहित्य समीक्षा का सामान्य सिद्धान्त ज्ञान, हिन्दी साहित्य परिचय एवं कथनों-उपकथनों का मूल्यांकन।

1.3.06. हिन्दी पाठ्यपुस्तक और पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम के सभी विषयों की शिक्षा में पाठ्यपुस्तकों का अमूल्य योग होता है। किन्तु भाषा की शिक्षा में तो इनका अनुपम योगदान है। भाषा-शिक्षण में तो पाठ्यपुस्तकें साधन और साध्य दोनों रूपों में प्रयोग होती है। साधन के रूप में हिन्दी पाठ्यपुस्तकें बालकों के शब्द, सूक्ति, मुहावरे, लोकोक्ति भण्डार में वृद्धि, वर्ण-विन्यास सिखाने, उच्चारण शुद्ध करना, सस्वर एवं मौन वाचन का अभ्यास कराना, अधिगम कराना, स्वाध्याय की योग्यता के विकास में सहायता करती हैं। जब पाठ्यपुस्तकें काव्य की रसानुभूति कहानी, कविता, नाटक आदि का रसास्वादन कराने के लिए प्रयुक्त होती हैं तो साध्य का कार्य करती हैं। भाषा-शिक्षण में पुस्तकों की उपयोगिता कक्षा के अन्दर और बाहर सभी स्थानों पर होती है।

1.3.06.1. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का पाठ्यक्रम में स्थान

वर्तमान भाषा-शिक्षण पद्धति में पाठ्यपुस्तक का स्थान सर्वोपरि है। एक निश्चित पाठ्यक्रम के अध्ययन के प्रमुख साधन के रूप में एक निश्चित शैक्षिक स्तर पर प्रयुक्त करने के लिए एक निश्चित विषय पर व्यवस्थित ढंग से लिखी हुई पुस्तक को ही पाठ्यपुस्तक कहते हैं। हिन्दी भाषा-शिक्षण पुस्तकों पर निर्भर रहता है। वाचन, वार्तालाप, व्याकरण, रचना, शुद्ध उच्चारण, लेखन आदि सीखने और सिखाने के लिए पाठ्यपुस्तक अत्यावश्यक है। इसके अभाव में शिक्षक और विद्यार्थी का कार्य अपूर्ण रहता है। अतः पाठ्यक्रम में पाठ्यपुस्तक का एक महत्त्वपूर्ण स्थान कल्पित है। पाठ्यपुस्तकों में पाठों का चयन भी मनोविज्ञान के आधुनिकतम प्रयोगों के मतानुसार ही होना चाहिए। शिक्षकों को अच्छी पाठ्यपुस्तकों का चयन करने में स्वतन्त्रता होनी चाहिए। ऐसी पाठ्यपुस्तकों का चयन करना चाहिए जो बालकों के भाषा-ज्ञान का विकास करें, उनका चरित्र-निर्माण कर सकें, देश-प्रेम की भावना को जाग्रत् करें तथा उन्हें सुयोग्य, क्रियाशील नागरिक बना सकें।

1.3.06.2. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का महत्त्व

हिन्दी भाषा-शिक्षण में हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों का बड़ा महत्त्व है। इन पुस्तकों का सुन्दर, शुद्ध, स्तरीय एवं उपयुक्त सामग्री से युक्त होना आवश्यक है। भाषा सम्बन्धी विभिन्न कौशलों को विकसित करने में पाठ्यपुस्तक की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। हिन्दी शिक्षण में पाठ्यपुस्तक के महत्त्व को संक्षेप में निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है –

01. पुस्तकों के द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न विषयों की जानकारी एवं ज्ञान मिलता है।
02. पुस्तकें शिक्षक के लिए आधार निश्चित व विकसित करने में सहायक हैं।
03. पाठ्यपुस्तकों से पाठ्यक्रम-निर्धारण में सहायता मिलती है।
04. विद्यार्थियों में पाठ्यपुस्तकें स्वाध्याय का आधार होती हैं।
05. पाठ्यपुस्तकों की सहायता से एक साथ अनेक विद्यार्थियों को पढ़ाना सम्भव है।
06. पाठ्यपुस्तकों के नाटक, कहानी, एकांकी आदि विद्यार्थियों का मनोरंजन करते हैं।

07. विद्यार्थियों को गृहकार्य देने में पाठ्यपुस्तकों से सुविधा होती है।
08. पाठ्यपुस्तकें भाषा-शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हैं।
09. भाषा में कौशलों का विकास पाठ्यपुस्तकों से ही सम्भव है।
10. साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं रचनात्मक क्रियाओं के आयोजन में इनका महत्त्व है।

1.3.06.3. हिन्दी पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ

ज्ञान के व्यवस्थित रूप से सम्पादन के लिए पाठ्यपुस्तक का निर्माण होता है। एक अच्छी पाठ्यपुस्तक की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। वे ही विशेषताएँ उसके गुणों का निर्धारण करती हैं। पाठ्यपुस्तक के गुणों को क्रमशः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है – आन्तरिक गुण एवं बाह्य गुण।

(क) आन्तरिक गुण : पाठ्यपुस्तक के आन्तरिक गुण वे भीतरी गुण हैं जो उसकी भाषा, शैली, औचित्य, सोद्देश्यता, सार्थकता, सम्बद्धता, व्यावहारिकता, व्याकरण-रचना, मौलिकता, रोचकता, विशुद्धता, अभ्यास, अन्य विशेषताएँ, पाठ्य विषय आदि की दृष्टि से प्रमुख होते हैं।

(ख) बाह्य गुण : पाठ्यपुस्तक के बाह्य गुणों में पुस्तक नाम, आकार, कागज, अवसरानुकूल चित्र, आवरण, प्रकाशन, सम्पादन, साज-सज्जा, मूल्य आदि हैं।

1.3.06.4. हिन्दी पाठ्यपुस्तक के प्रकार

पाठ्यपुस्तकें दो प्रकार की होती हैं – सूक्ष्म अध्ययनार्थ पुस्तकें तथा विस्तृत अध्ययनार्थ पुस्तकें।

1. **सूक्ष्म अध्ययनार्थ पुस्तकें** : सूक्ष्म अध्ययन वाली पुस्तकों का अध्ययन बड़ी गम्भीरता से किया जाता है। इनका उद्देश्य बालकों के शब्द-भण्डार में वृद्धि करना, भाषा-ज्ञान बढ़ाना, सूक्ति-भण्डार एवं लोकोक्ति-भण्डार में वृद्धि करना तथा प्रसंगों को भलिभाँति स्पष्ट करना आदि है। इन पुस्तकों को ही सामान्यतया पाठ्यपुस्तकें कहा जाता है।
2. **विस्तृत अध्ययनार्थ पुस्तकें** : विस्तृत अध्ययन के लिए सहायक पुस्तकों का प्रयोग द्रुत पाठ के लिए किया जाता है। इसमें सीखी शब्दावली का ही प्रयोग किया जाता है। इनका उद्देश्य बालकों को द्रुत गति से पढ़ने का अभ्यास कराना है। द्रुत गति से विद्यार्थी पुस्तक को पढ़कर भी उसका अर्थ समझ लें, यही इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है।

पाठ्यपुस्तकों के गुण-दोषों के आधार पर यदि वर्तमानकाल में प्रचलित पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा की जाए तो बहुत कम पुस्तकें सफल सिद्ध होगी। गुणों की कसौटी पर परखने पर अधिकतर पाठ्यपुस्तकें खरी नहीं उतरती। इन पाठों का संकलन बिना किसी नियम व क्रम के होता है। कक्षा के स्तर को ध्यान में रखकर बहुत कम पाठ लिखे या संकलित किये जाते हैं।

1.3.07. हिन्दी में पाठ्यसहगामी क्रियाएँ

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यसहगामी क्रियाएँ पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकृत हैं। अतः प्रत्येक विषय के शिक्षक का यह प्रयास होना चाहिए कि वह विषयगत जानकारी देते हुए समय-समय पर पाठ्यसहगामी क्रियाओं का सहारा लेते हुए विषय को और भी रुचिपूर्ण व सरल बनाए। पाठ्यसहगामी क्रियाओं के द्वारा न केवल शैक्षिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की ही पूर्ति नहीं होती है वरन् इनके द्वारा नैतिकता, स्नेह, भ्रातृत्वभाव का मार्ग प्रदर्शित करते हुए उनमें अनेक रुचियों का विकास भी किया जा सकता है। हिन्दी भाषा में अधिकाधिक पाठ्यसहगामी क्रियाएँ जुड़ी देखी जाती हैं, क्योंकि सहगामी क्रियाओं की सूची में सबसे अधिक साहित्यिक क्रियाएँ विद्यालयों में सम्पन्न होती हैं। साहित्यिक क्रियाओं के अन्तर्गत भाषण, वाद-विवाद, कविता पाठ, अन्त्याक्षरी, लेखन, नाटक, कवि सम्मेलन, कहानी प्रतियोगिता इत्यादि क्रियाएँ आती हैं।

1.3.07.01. पाठ्यसहगामी क्रिया का अर्थ

पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का लक्ष्य प्रमुख उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहयोग प्रदान करना है। विद्यालय में पाठ्यसहगामी क्रियाएँ जीवनशक्ति हैं। पाठ्यसहगामी क्रियाओं के माध्यम से एक ओर विद्यार्थियों का मनोरंजन करते हुए शिक्षण की यान्त्रिकता को दूर करने में सहायता मिलती है, वहीं दूसरी ओर विद्यार्थियों के भाषागत ज्ञान एवं कौशल का भी विकास सम्भव होता है। भाषा के बहुत से उद्देश्यों की पूर्ति भी इनके द्वारा हो पाती है। विशेष रूप से विद्यार्थियों को आत्माभिव्यक्ति के अवसर प्राप्त होते हैं। उनमें आत्मबल का संचार होता है तथा शुद्ध उच्चारण के साथ वाक्य कथन की कला का परिमार्जन निरन्तर होता है। साहित्यिक क्रियाओं का संचालन करते हुए विद्यार्थियों की साहित्य के प्रति रुचि भी बढ़ायी जा सकती है।

1.3.07.02. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्त्व

आधुनिककाल में शिक्षाशास्त्री इस बात पर सहमत हो गए हैं कि यदि पाठ्यसहगामी क्रियाओं को समुचित रूप से पथ-प्रदर्शित किया जाए तो बड़े ही शैक्षिक महत्त्व की सिद्ध होंगी। इनका बालकों के जीवन में बहुत महत्त्व है, क्योंकि उनके व्यक्तित्व के विकास में इनका बड़ा योगदान है। इन क्रियाओं द्वारा बालकों का शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं सामाजिक विकास होता है। इनके महत्त्व के विषय में माध्यमिक शिक्षा आयोग का मत है कि ये क्रियाएँ बालकों को अपने वैयक्तिक गुणों, क्षमताओं तथा आत्मविश्वास को विकसित करने के लिए अवसर प्रदान करती हैं। इनके साथ ही ये अनुशासन एवं नेतृत्व के सहयोगी गुणों में बालकों को प्रशिक्षण देती हैं। पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्त्व निम्नलिखित बिन्दुओं में परिगणित किया जा सकता है –

1. आत्माभिव्यक्ति के अधिकाधिक अवसर प्रदान कर वाचन कला में निपुण करना।
2. आत्मप्रकाशन के माध्यम से आत्मविश्वास विकसित करना।
3. साहित्य के प्रति रुचि जाग्रत् करते हुए ज्ञानवर्धन करना।
4. मानवीय गुणों का विद्यार्थियों में विकास करना।

5. नेतृत्व गुण एवं क्षमता का विकास करना।
6. सृजनात्मक कौशल विकसित करते हुए मूल्यांकन क्षमता का विकास करना।
7. व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।

1.3.07.03. भाषा से सम्बन्धित पाठ्यसहगामी क्रियाएँ

भाषा से सम्बन्धित पाठ्यसहगामी क्रियाओं में अनेक प्रकार की क्रियाओं को रखा जाता है । यहाँ पर कुछ ऐसी प्रमुख भाषा से सम्बन्धित पाठ्यसहगामी क्रियाओं को स्पष्ट किया जा रहा है –

(1) भाषण प्रतियोगिता : विद्यालयों में भाषण प्रतियोगिता की परम्परा वैदिककाल से है । भाषण प्रतियोगिता को विद्यार्थियों की सहभागिता उनकी झिझक को समाप्त कर आत्मविश्वास के साथ ज्ञानवर्धन करती है। अतः शिक्षक प्रारम्भिक स्तर से ही विद्यार्थियों को हिन्दी भाषण की कला में कुशल करने के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करे। समय-सारिणी के तहत भी बालसभा व वाग्वर्धनी परिषद् के माध्यम से भाषण का आयोजन किया जा सकता है।

(2) वाद-विवाद प्रतियोगिता : भारत में शास्त्रीय चर्चा के तहत वाद-विवाद प्रतियोगिता का प्रचलन प्राचीनकाल से है। इस प्रतियोगिता में विद्यार्थी निर्दिष्ट विषय के सम्बन्ध में अपने विचार पक्ष और विपक्ष में व्यक्त करते हैं। इसमें विद्यार्थी निर्दिष्ट समयावधि स्वतन्त्रतापूर्वक अपने पक्ष का प्रस्तुत करते हैं। विद्यालय में विशेषकर भाषाई ज्ञानवर्धन की दृष्टि इस प्रतियोगिता का आयोजन कराया जाना चाहिए।

(3) अन्त्याक्षरी : हिन्दी भाषा के ज्ञानवर्धन की दृष्टि से अन्त्याक्षरी अतीव उपयोगी सिद्ध है । इसका आयोजन कक्षा को दो वर्गों में बाँटकर व दो विद्यालयों के मध्य किया जा सकता है। प्रथम दल का एक सदस्य किसी पद्य या कविता, दोहा आदि को सुनता है तथा दूसरे दल के सदस्य को छोड़े गये अन्तिम अक्षर से पुनः प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार दोनों दलों के मध्य यह क्रम तब तक चलता रहता है जब तक कोई दल अन्तिम अक्षर से कविता, पद्य, दोहा आदि बोलने में असमर्थ न हो जाये। विजयी दल को पुरस्कृत किया जाता है।

(4) कवि जयन्ती : विद्यार्थियों की साहित्यिक रुचि को विकसित करने कवि या लेखक जयन्ती का समायोजन विद्यालयों में किया जाता है । किसी विशिष्ट कवि या लेखक की काव्यगत रचनाओं को उनकी विशिष्ट तिथि में विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं आमन्त्रित विद्वानों द्वारा स्मरण किया जाता है। जैसे – तुलसी जयन्ती, भारतेन्दु दिवस, वाल्मीकी जयन्ती आदि कवियों की जयन्तियाँ विद्यालय में आयोजित की जाती हैं।

(5) अनुवाद प्रतियोगिता : अनुवाद प्रतियोगिता का प्रतियोगिताओं की शृंखला में प्रमुख स्थान प्रकल्पित है। अनुवाद का अर्थ है कि भाषा में अभिव्यक्त विचारों को उसी रूप में दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना। भाषा की समृद्धि और अभिवृद्धि के लिए अन्य भाषाओं की पुस्तकों एवं ग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद किया जाय । इस प्रतियोगिता का आयोजन उच्च माध्यमिक तथा उच्च स्तर के विद्यार्थियों में भाषा

अनुवाद कला की क्षमता को प्रोत्साहित करने किया जाना चाहिए। इससे विद्यार्थियों में भाषा समालोचन का चिन्तन विकसित होता है।

(6) कवि सम्मेलन : विद्यार्थियों को साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने एवं रचनात्मक क्षमता का विकास करने के उद्देश्य से कवि सम्मेलन को उपयोगी पाठ्यसहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत रखा जाता है। इसमें विद्यार्थियों को उत्कृष्ट कवियों, रचनाकारों की रचनाएँ सुनने का अवसर मिलता है। इसके माध्यम से विद्यार्थी अभिप्रेरित होते हैं।

(7) साहित्य परिषद् : प्राचीनकाल से ही भाषा के क्षेत्र में साहित्य परिषद् का उपयोग देखा एवं समझा जा सकता है। इस परिषद् का प्रमुख उद्देश्य साहित्यिक ज्ञान की वृद्धि करना है। अत एव विद्यालयों में इस परिषद् की स्थापना स्थायी रूप से की जानी चाहिए। इस परिषद् की एक कार्यकारिणी समिति भी होनी चाहिए जिसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक सदस्य पदाधिकारी होने चाहिए। इसके तहत सम्पूर्ण सत्र में किये जाने वाले कार्यक्रमों की योजना बनाने तथा उनके क्रियान्वयन को मूर्त रूप दें।

(8) विद्यालय पत्रिका : विद्यालय पत्रिका द्वारा भी विद्यार्थियों में साहित्यिक रुचि का विकास किया जा सकता है। यह पत्रिका विद्यालय के क्रियाकलापों का प्रतिबिम्ब स्वरूप होती है। विद्यालय के सम्पूर्ण शैक्षिक सत्र में संचालित कार्यक्रमों के साथ-साथ विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के लेख, कविता, संस्मरण, चुटकुलों, कहानियों, प्रहसन आदि का प्रकाशन होता है। इसके आधार पर विद्यार्थियों की सृजनात्मक कुशलता का अनुमान लगाया जा सकता है। उपर्युक्त पाठ्यसहगामी क्रियाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य ऐसी क्रियाएँ है जिनके लिए किसी विशेष आयोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती है तथा माह में एक या दो बार अथवा सप्ताह के अन्तिम दिन शनिवार को सम्पन्न करायी जा सकती है – जैसे लघु नाटक का मंचन, भाषा से सम्बन्धित चित्र पर निर्माण प्रतियोगिता, कहानी प्रतियोगिता, कविता पाठ, फ्लैश कार्ड तैयार करने से सम्बन्धित प्रतियोगिता, मूक अभिनय आदि।

1.3.08. पाठ-सार

विद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले विषयों एवं कार्यकलापों के समुच्चय का नाम पाठ्यक्रम है। शिक्षा पाठ्यक्रम के उद्देश्य की प्राप्ति के निमित एक प्रमुख साधन भी है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना शिक्षा का परम उद्देश्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति में पाठ्यक्रम सहायक होता है। शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। किसी भी राष्ट्र की आवश्यकता वातावरण, संस्कृति, सभ्यता आदि के अनुसार वहाँ की शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं और उसके अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। पाठ्यक्रम से शिक्षक व विद्यार्थी दोनों को शिक्षा का ज्ञान होता है। व्यक्ति, समाज, देश की उन्नति के लिए समय के अनुसार पाठ्यक्रम में परिवर्तन किया जाता है और नये आयाम सम्मिलित किये जाते हैं। पाठ्यक्रम और भाषा का समवाय सम्बन्ध है। भाषा शिक्षा के पाठ्यक्रम में हर विषय के माध्यम रूप में रहती है। वह पढ़ाने का माध्यम भी है। हिन्दीभाषी राज्यों में हिन्दी शिक्षा के माध्यम भाषा के रूप में कार्य कर रही है। हिन्दी का पाठ्यक्रम में मातृभाषा और अन्य भाषा के रूप में शिक्षण होता है। हिन्दी भाषा के पाठ्यक्रम के निर्धारण व निर्माण के समय

निम्नलिखित तत्त्वों यथा – शिक्षोद्देश्य, विद्यार्थी स्तर, यथार्थानुभव, अभिरुचि, सामर्थ्य, क्रियाएँ, शिक्षाधार आदि पर अवधान देना चाहिए।

हिन्दी भाषा पाठ्यक्रम का प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च स्तर पर विकास के सन्दर्भ में विविधता, सरलता, स्पष्टता, क्रमबद्धता, शृंखलाबद्धता, पूर्वज्ञान, रुचि, मनोवैज्ञानिक, परिवेश, दैनिक कार्य, योग्यता, पाठ्यसहगामी क्रिया तथा पाठ्यपुस्तक आदि का समावेश होना चाहिए।

हिन्दी पाठ्यपुस्ततकों का भाषा-शिक्षण में अनुपम अवदान है। हिन्दी पाठ्यपुस्तकें बालकों के शब्द, सूक्ति, मुहावरे, लोकोक्ति भण्डार में वृद्धि, वर्ण विन्यास सिखाने, स्वाध्याय की योग्यता के विकास में सहायता करती है। हिन्दी पाठ्यपुस्तकों के गुणों को आन्तरिक एवं बाह्य दो भागों में बाँटा गया है। पाठ्यपुस्तक दो प्रकार की होती है – सूक्ष्म तथा विस्तृत अध्ययन पुस्तकें।

हिन्दी शिक्षण में पाठ्यसहगामी क्रियाओं का विशेष महत्त्व है। साहित्यिक क्रियाएँ सर्वाधिक विद्यालयों में सम्पन्न होती हैं। भाषण, वाद-विवाद, कवि जयन्ती, अनुवाद, कवि सम्मेलन आदि भाषा से सम्बन्धित पाठ्यसहगामी क्रियाएँ आयोजित की जाती हैं।

1.3.09. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. विद्यालय की शिक्षा व्यवस्था में धुरी के रूप में जाना जाता है –
   (अ) भवन
   (ब) पाठ्यक्रम
   (स) प्राचार्य
   (द) कोई नहीं

   सही उत्तर – (ब) पाठ्यक्रम

2. पाठ्यक्रम का संकुचित अर्थ है –
   (अ) पुस्तकीय ज्ञान
   (ब) जीवन लक्ष्य
   (स) दौड़ का क्षेत्र
   (द) अनुभव

   सही उत्तर – (अ) पुस्तकीय ज्ञान

3. 'क्यूरे' का तात्पर्य है –
   (अ) पाठ
   (ब) दौड़ का मैदान

(स) पाठ्यक्रम

(द) इनमें से कोई नहीं

सही उत्तर – (ब) दौड़ का मैदान

4. पाठ्यपुस्तक के गुणों को प्रमुख रूप से कितने भागों में बाँटागया है ?

(अ) दो

(ब) चार

(स) दस

(द) तीन

सही उत्तर – (अ) दो

5. भारत की राष्ट्रभाषा मानी जाती है ?

(अ) अंग्रेजी

(ब) हिन्दी

(स) गुजराती

(द) जर्मन

सही उत्तर – (ब) हिन्दी

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. पाठ्यक्रम का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।
2. पाठ्यक्रम और भाषा के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट कीजिए।
3. हिन्दी-शिक्षण के माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम को स्पष्ट कीजिए।
4. हिन्दी भाषा के पाठ्यक्रम की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
5. हिन्दी भाषा में पाठ्यसहगामी क्रियाओं को लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम की निर्धारण प्रक्रिया को समझाइए।
2. विभिन्न स्तरों पर हिन्दी भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम का वर्णन कीजिए।
3. पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा के स्थान को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
4. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का महत्त्व सन्दर्भ सहित बताइए।
5. पाठ्यक्रम की प्रकृति पर टिप्पणी लिखिए।

1.3.10. व्यवहार

1. पाठ्यक्रम की प्रकृति को बताइए।

2. हिन्दी पाठ्यपुस्तक का पाठ्यक्रम में स्थान विवेचित कीजिए।
3. उच्च स्तर पर हिन्दी-भाषा पाठ्यक्रम के विकास को लिखिए।
4. हिन्दी पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ बताइए।
5. हिन्दी भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान समझाइए।

1.3.11. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

01. सत्तिगेरी, डॉ॰ के. आय. (2013-14), नूतन हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-80011-53-0
02. यादव, डॉ॰ सियाराम (2011/11), पाठ्यक्रम विकास, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-906741-5-7
03. जीत, भाई योगेन्द्र (2013), नूतन हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-30510-65-1
04. शुक्ल, डॉ॰ रजनीकान्त (2012), हिन्दी शिक्षण के विविध आयाम, तिरूपति, श्रीपति प्रकाशन, ISBN : 978-93-5126-320-3
05. लाल, प्रो॰ रमन बिहारी एवं पलोड़, सुनीता (2011) पाठ्यक्रम निर्माण, मापन एवं मूल्यांकन, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो
06. दुबे, डॉ॰ सत्यनारायण शरतेन्दु, (2011), सरल हिन्दी-भाषा-शिक्षण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन
07. प्रसाद, केशव (2011), हिंदी शिक्षण, नई दिल्ली, धनपत राय पब्लिशिंग कंपनी (प्रा.) लिमिटेड, ISBN : 978-93-84559-78-6
08. पाण्डेय, डॉ॰ रामशकल (2012), हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-47-1
09. त्यागी, डॉ॰ एस. के. (2013), हिन्दी भाषा-शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-38-9
10. सक्सैना, डॉ॰ बीनू (2016), पाठ्यक्रम एवं भाषा, आगरा, राखी प्रकाशन, ISBN : 978-93-85195-59-4
11. सिंह, डॉ॰ गया एवं राय, डॉ॰ अनिल कुमार (2015), शिक्षा प्रशासन एवं प्रबन्धन, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो, ISBN : 978-93-84696-32-0
12. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (1979), भाषा-शिक्षण नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन
13. शर्मा, मार्तण्ड, (2011), हिन्दी शिक्षण, इलाहबाद, शारदा पुस्तक भवन
14. शर्मा, डॉ॰ आर. ए. (2014), पाठ्यक्रम विकास एवं अनुदेशन, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो, ISBN : 978-93-81466-72-8

❖❖❖

खण्ड – 1 : भाषा और भाषा-शिक्षण

इकाई – 4 : भाषा मूल्यांकन और परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

1.4.00. उद्देश्य कथन
1.4.01. प्रस्तावना
1.4.02. भाषा अधिगम
1.4.03. मूल्यांकन की अवधारणा
    1.4.03.01. सतत मूल्यांकन
    1.4.03.02. व्यापक मूल्यांकन
1.4.04. मूल्यांकन के प्रयोजन
1.4.05. मूल्यांकन का महत्त्व
1.4.06. मूल्यांकन की प्रमुख प्रविधियाँ
1.4.07. भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन व परीक्षण
1.4.08. हिन्दी भाषा मूल्यांकन की प्रविधियाँ
    1.4.08.01. मौखिक प्रविधियाँ
    1.4.08.02. लिखित प्रविधियाँ
1.4.09. हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन की उपयोगिता
1.4.10. हिन्दी भाषा कौशल प्रवीणता एवं व्यापकता का मूल्यांकन
1.4.11. हिन्दी भाषा परीक्षण
    1.4.11.1. बोध परीक्षण
    1.4.11.2. अभिव्यक्ति परीक्षण
1.4.12. पाठ-सार
1.4.13. बोध प्रश्न
1.4.14. व्यवहार
1.4.15. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1.4.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएँगे कि –

i. भाषा अधिगम का विवेचन कर सकेंगे।
ii. मूल्यांकन का अर्थ एवं प्रकार समझ सकेंगे।
iii. सतत एवं व्यापक मूल्यांकन को स्पष्ट कर सकेंगे।
iv. मूल्यांकन के प्रयोजन ज्ञात कर सकेंगे।

v. भाषा में मूल्यांकन और परीक्षण को स्पष्ट कर सकेंगे।
vi. हिन्दी भाषा में मूल्यांकन के महत्त्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
vii. हिन्दी भाषा मूल्यांकन की प्रविधियों को समझ सकेंगे।
viii. हिन्दी भाषा में परीक्षण प्रविधियों को समझ सकेंगे।
ix. हिन्दी भाषा में परीक्षण प्रश्नों का निर्माण कर सकेंगे।
x. हिन्दी भाषा परीक्षण को समझ सकेंगे।

1.4.01. प्रस्तावना

शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास का प्रयास पाठ्यक्रम के आधार पर करता है। यह पाठ्यक्रम शिक्षा में एक धुरी के रूप में है। इस पाठ्यक्रम में भाषा का प्रमुख अनिवार्य स्थान होता है। भाषा व्यक्ति के व्यक्तित्त्व के विकास और अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ ही सामाजीकरण का साधन भी हैं। अत एव अनादिकाल से शिक्षा प्रक्रिया का भाषा-शिक्षण अभिन्न अंग रहा है। शिक्षक, विषयवस्तु को भाषा प्रयोग में बाँधकर विद्यार्थी को अधिगम करा कर अपने उद्देश्य में सफल होता है। तैत्तरीयोपनिषद में कहा भी गया है –

आचार्यः पूर्वरूपम्, अन्तेवास्युत्तररूपम्।
विद्या सन्धिः, प्रवचनं सन्धानम्॥

शिक्षक शिक्षण-प्रक्रिया का संस्कारक होता है। उसको विद्यार्थी के अधिगम स्तर को जानना आवश्यक है। इसके लिए शिक्षक हमेशा औपचारिक परीक्षा की प्रतीक्षा नहीं कर सकता है। अधिगम का मूल्यांकन विकासात्मकता के आधार पर किया जाना चाहिए। मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थी के सभी अधिगम अनुभव सम्मिलित होते हैं। अतः मूल्यांकन सतत एवं व्यापक होना चाहिए।

भाषा अधिगम (Language Learning) का सामान्य अर्थ है – भाषा के चार कौशलों यथा श्रवण (Listening) ,भाषण (Speaking), पठन (Reading) तथा लेखन (Writing) का अर्जन एवं उपयोग। भाषा-शिक्षण का मुख्य लक्ष्य भी विद्यार्थियों को भाषा व्यवहार में कुशल बनाना है। व्यक्ति की व्यावहारिकता, सम्प्रेषण क्षमता भी इन चार कौशलों की दक्षता पर निर्भर होती है। इन चारों कौशलों में से श्रवण और पठन ग्राही कौशल हैं। विद्यार्थी भाषा के मौखिक अथवा लिखित रूप से ज्ञान और जानकारी प्राप्त करते हैं। अर्थात् विद्यार्थी कुछ सुनकर व पढ़कर बोध एवं अर्थग्रहण करता है। भाषण और लेखन ऐसे कौशल हैं जिसमें विद्यार्थी द्वारा कोई प्रस्तुति की जाती है। विद्यार्थी इन दोनों कौशलों का प्रयोग सम्प्रेषण और अभिव्यक्ति के लिए करता है। अतः श्रवण व पठन बोधन कौशल एवं भाषण व लेखन अभिव्यक्ति कौशल हैं।

हिन्दी भाषा-शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थी में चारों कौशलों का विकास करना जिससे वह अपनी आवश्यकता के अनुरूप सन्दर्भ में अनुकुल बोलकर, सुनकर, पढ़कर व लिखकर अपने भावों की उपयुक्त अभिव्यक्ति कर सकें। स्पष्ट है कि भाषा अधिगम के मूल्यांकन में इन चारों कौशलों में विद्यार्थी की दक्षताओं का

मूल्यांकन करना होगा। विद्यार्थी के बोधन एवं अभिव्यक्ति के मूल्यांकन के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की रचना करनी होगी। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत पाठ में मूल्यांकन की अवधारणा के साथ ही भाषाई क्षमता, योग्यता, कौशल उपलब्धि, भाषाधिगम आदि के परीक्षण उपायों और साधनों को भी स्पष्ट किया गया है।

1.4.02. भाषा अधिगम

भाषा मानव को ईश्वर का वरदान है। इसके द्वारा मानव विकास के पथ पर अग्रसर होने में समर्थ हुआ है। भाषा के द्वारा अपने भावों-विचारों का विनिमय परस्पर व्यक्ति करता है। अतः यह भाषा एक केन्द्रीय व्यवहार है। भाषा ज्ञान-प्राप्ति का मुख्य साधन है। इस भाषा रूपी साधन के द्वारा बालक परिवार तथा समाज के विभिन्न लोगों से ज्ञान पाता है, तथा विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में ज्ञानार्जन करता है। इस प्रकार सम्पूर्ण शिक्षा भाषा पर निर्भर रहती है।

अधिगम का अर्थ है सीखना। सामान्यतया अनुभव तथा प्रशिक्षण के परिणामस्वरूप बालक (विद्यार्थी) के व्यवहार में आया शाश्वत परिवर्तन तथा परिवर्धन अधिगम कहलाता है। वस्तुतः भाषा अर्जन स्फुरण-प्रेरित अनुकरण साध्य प्रधान है। भाषा-कौशलों पर अधिकार प्राप्त कर उनका परिस्थितियों के अनुकुल व्यवहार में प्रयोग ही भाषा-अधिगम है। भाषा अर्जन के लिए बालक की सहज प्रवृत्ति और सामाजिक परिवेश उत्तरदायी होता है। किसी भी भाषा को सीखने में प्रेरणा का विशेष महत्त्व है। अधिगम की प्रक्रिया उत्प्रेरण का परिणाम है। इससे व्यवहार में परिवर्तन आता है। भाषा-अधिगम एक सर्जनात्मक प्रक्रिया है। मातृभाषा तथा अन्यभाषा अधिगम-प्रक्रिया में पर्याप्त भेद होता है। यह भेद मुख्यतः पाँच बिन्दुओं पर आधारित है –

1. विद्यार्थी की आयु तथा शारीरिक-मानसिक अवस्था।
2. शिक्षक तथा शिक्षण विधि एवं युक्ति।
3. शिक्षण स्थान तथा शिक्षण अवधि।
4. भाषा (प्रथम) भाषा (द्वितीय) में समानता व भिन्नता की मात्रा।
5. मातृभाषा के व्याघात की मात्रा।

भाषा अधिगम की प्रक्रिया एक कौशल को सीखने के समान है। इसमें क्रियाशीलता का अपना विशेष महत्त्व है। किसी कौशल को सीखने में उससे सम्बन्धित क्रियाओं के सतत प्रयोग, आवृत्ति और अभ्यास का महत्त्व होता है।

1.4.03. मूल्यांकन की अवधारणा

शिक्षा एक सतत विकास-प्रक्रिया है। जिसका सम्बन्ध विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास से है। उसके व्यक्तित्त्व के ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक और मनोशारीरिक पक्षों के समुचित सतत विकास से शिक्षा का

प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास की पहचान उसके द्वारा अर्जित समग्र ज्ञान का सतत एवं व्यापक मूल्यांकन करके किया जा सकता है। मूल्यांकन और विकास दोनों परस्पर जुड़े हुए होते हैं। अत एव शिक्षा की सम्पूर्ण अवधि में विद्यार्थी का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के अन्तर्गत परिणामात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनके आधार पर विद्यार्थी के व्यक्तित्त्व के विभिन्न पक्षों का आकलन किया जाता है।

मूल्यांकनशब्द के लिए आंग्ल भाषा में (Evaluation) यह शब्द प्रयुक्त होता है। मूल्यांकनशब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है तथा इसको कई प्रकार से परिभाषित भी शिक्षाशास्त्रियों और मनोविज्ञानियों ने किया है। कुछ परिभाषाएँ यहाँ प्रस्तुत की जा रही हैं, यथा –

"विद्यालय में हुए विद्यार्थियों के व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रदत्तों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।"

– क्वालेन तथा हन्ना

"Evaluation is relatively new concept of measurement that is implied in conventional test & examinations ."

– प्रो॰ रिंग स्टोन

विद्यार्थी को कुछ सिखाने के बाद वह कहाँ तक शिक्षा को ग्रहण कर सका है उसे देखना भी शिक्षा और शिक्षक का प्रधान कार्य है। परीक्षा और मूल्यांकन शिक्षा परिचालन के इन गुरुत्वपूर्ण कार्यों की पूर्ति करते हैं। शिक्षाधिकार अधिनियम के भाग (Section) 29 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि –

(क) पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया संविधान में दिये गये मूल्यों के अनुरूप हो।
(ख) विद्यार्थियों के सीखने और समझने का व्यापक एवं सतत आकलन शिक्षण-प्रक्रिया के समय ही हो।

इसी शिक्षाधिकार के भाग (Section) 24 में शिक्षकों के कर्त्तव्य में भी बाध्यता है कि शिक्षक –

(क) प्रत्येक विद्यार्थी के पढ़ने के स्तर व गति को जाँचना, दर्ज करना और उसके आधार पर शिक्षण योजना तैयार करके पढ़ाना।
(ख) माता-पिता या अभिभावकों को बच्चों के शैक्षिक स्तर के बारे में नियमित जानकारी देना।

मूल्यांकन की आवश्यकता तथा उपयोगिता शिक्षण कार्य की कुशलता एवं उसके परिणामों के संज्ञान तथा शैक्षिक विकास के लिए अनिवार्य है। यह शिक्षण में शिक्षकों की तथा सीखने में विद्यार्थियों की सहायता करता है। अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया में मूल्यांकन की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। उद्देश्यों को तय करने, अधिगम अनुभव प्रस्तुत करने और विद्यार्थी की संप्राप्ति की जाँच में मूल्यांकन-अधिगम काफी योगदान देता है। इसके

अतिरिक्त शिक्षण और पाठ्य विवरण सुधारने में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यह समाज, अभिभावक, और शिक्षा के ढाँचे के प्रति उत्तरदायित्त्व को भी बताता है । इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली का केन्द्र-बिन्दु है । चित्र में प्रदर्शित किया गया है –

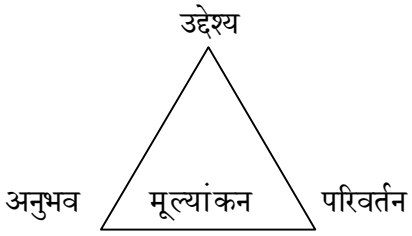

वर्तमान में मूल्यांकन और परीक्षण के मानदण्ड द्वारा विद्यार्थी में एक नियत काल के समय अर्जित ज्ञान का निरीक्षण किया जाता है । मूल्यांकन और परीक्षण की प्रणाली प्राचीन भारतीय शिक्षा में कई रूपों में प्रयुक्त होती थी । भाषा-शिक्षण में भी मूल्यांकनका उपयोग अन्य विषयों की भाँति ही है । भाषा-शिक्षण में पाठ्यक्रम के साथ-साथ ही शैक्षणिक उद्देश्यों को निर्धारित करना आवश्यक हो जाता है । भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाँच क्षमता का मूल्यांकन किया जाता है ।

शिक्षण जगत् में मूल्यांकन शब्द अपेक्षाकृत नया है । विद्यार्थी को कुछ सिखाने के बाद विद्यार्थी कहाँ तक शिक्षा को ग्रहण कर सका है उसे देखना भी शिक्षा और शिक्षक का प्रधान कार्य है । परीक्षा और मूल्यांकन शिक्षा परिचालन के इन गुरुत्वपूर्ण कार्यों की पूर्ति करते हैं । परीक्षा कहने से संकीर्ण-रूढ़िवादी अर्थ, मूल्यांकन कहने से व्यापक अर्थ व्यवहृत होता है । शिक्षा की आधुनिक अवधारणा में पारम्परिक परीक्षा के बदले मूल्यांकनके प्रति अधिक गुरुत्व दिया गया है । मूल्यांकन अधिक व्यापक और विद्यार्थी की समस्त प्रगति का परीक्षण करने के प्रयोग में आता है । साथ ही साथ यह शिक्षण पर भी अपना प्रभाव डालता है । मूल्यांकन उद्देश्य बाधित होता है । मुख्य रूप से यह मूल्यांकनदो प्रकार का है – सतत मूल्यांकन और व्यापक मूल्यांकन।

1.4.03.01. सतत मूल्यांकन

शिक्षा एक सतत गतिशील विकास-प्रक्रिया है । शिक्षा की इस सम्पूर्ण अवधि में विद्यार्थियों का मूल्यांकन भी किया जाता है । अतः मूल्यांकन सतत करते रहने की महत् आवश्यकता पर शिक्षाशास्त्रियों ने जोर दिया है । केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल ने परीक्षा सुधार कार्यक्रम के तहत सतत एवं व्यापक मूल्यांकनको विद्यालयों में लागू किया है । सतत का तात्पर्य लगातार एवं बार-बार से है । सतत मूल्यांकन का आशय शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के अन्तर्गत निरन्तर अवलोकन आवश्यकतानुसार पृष्ठ पोषण तथा मार्गदर्शन करने से है ।

सतत मूल्यांकन करने की एक अविरत विधि है । इसमें किसी निर्दिष्ट पाठ विषय के अंश के शिक्षण के पश्चात् क्रम से दिन, सप्ताह या महीने के अन्तराल पर लगातार मूल्यांकन करना और देखना कि विद्यार्थी क्रम से उन्नति कर रहें हैं या नहीं । इस प्रक्रिया में विद्यार्थियों को निर्दिष्ट लक्ष्य तक पहुँचाया जा सकता है ।

1.4.03.02. व्यापक मूल्यांकन

सामान्यतया साधारण परीक्षा के द्वारा विद्यार्थियों की विषयगत क्षमताओं का मूल्यांकन होता है। लेकिन व्यापक मूल्यांकन विस्तृत एवं सामग्रिक है। व्यापक मूल्यांकन से आशय यह है कि मूल्यांकन अपने आपको केवल ज्ञान तक सीमित नहीं रखे बल्कि विद्यार्थी के विकास में अन्तर्निहित सभी कारकों यथा कौशल, बोध, परख, रुचि, अभिवृत्ति और आदतों को भी ध्यान में रखा जाता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास कर सकते हैं। इसमें विषयों, अवसरों, तरीकों, दायरों तथा उपकरणों की व्यापकता रहती है।

1.4.04. मूल्यांकन के प्रयोजन

शिक्षा का उद्देश्य विषय विशेष में विद्यार्थी के ज्ञान, बोध, प्रयोग व दक्षता में विकास घटित करना है। इस विकास के तहत विद्यार्थियों के आचार व्यवहार एवं कार्य प्रणाली में क्या परिवर्तन हुआ है। इसके लिए मूल्यांकन किया जाता है। जिसके निम्नलिखित प्रयोजन हैं –

1. विद्यार्थियों के कार्यों की परीक्षा लेना।
2. विद्यार्थियों की प्रगति के बारे में निरन्तर निर्णय करना।
3. अनुदेशन की समाप्ति पर विद्यार्थी की सम्प्राप्ति का मापन करना।
4. शैक्षिक उपलब्धि का आकलन करना।
5. शिक्षण एवं अध्ययन में प्रेरणा प्रदान करना।
6. नवीन पाठ्यक्रमों की रचना करना।
7. प्रचलित परीक्षा प्रणाली में सुधार करना।
8. विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रूप से निर्देशन करना।

1.4.05. मूल्यांकन का महत्त्व

शिक्षण-प्रक्रिया में शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति का प्रयास करता है। इन उद्देश्यों की पूर्ति और विद्यार्थियों ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति में किस सीमा तक प्रगति की है, इसका पता मूल्यांकन से लगाया जाता है। शिक्षण में मूल्यांकनका विशेष महत्त्व है, यथा –

01. उद्देश्यों की पूर्ति का ज्ञान।
02. विद्यार्थी कठिनाइयों का ज्ञान।
03. सामूहिक विद्यार्थी कठिनाइयों का ज्ञान।
04. शिक्षण प्रभावपूर्णता का ज्ञान।
05. शिक्षण विधियों का मूल्यांकन।
06. शिक्षण-सामग्री का मूल्यांकन।

07. शिक्षण सम्बन्ध समस्या का समाधान।
08. पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक का मूल्यांकन।
09. शिक्षण साधनों का मूल्यांकन।
10. शिक्षण परिस्थितियों का परिज्ञान।

1.4.06. मूल्यांकन की प्रमुख प्रविधियाँ

वस्तुतः शिक्षा व्यवस्था में मूल्यांकन का क्षेत्र अतिव्यापक और विस्तृत है। मूल्यांकन से विद्यार्थी की वास्तविक स्थिति का ज्ञान शिक्षक प्राप्त करता है। मूल्यांकन में अनेक प्रकार की प्रविधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिए मौखिक परीक्षाएँ, लिखित परीक्षाएँ, प्रयोगात्मक परीक्षाएँ प्रयोग में लायी जाती है। भावात्मक उद्देश्यों के मूल्यांकन में अभिरुची, सूची, रेटिंग स्केल, मूल्यों की परीक्षा आदि प्रयुक्त किये जाते हैं। क्रियात्मक उद्देश्यों में प्रयोगात्मक परीक्षाएँ ही आयोजित की जाती है। इसमें बालक के कौशल का मूल्यांकन किया जाता है।

1.4.07. भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन व परीक्षण

भाषा-शिक्षण में विद्यार्थियों की प्रगति, विकास एवं भाषा-अधिगम का मूल्यांकन अत्यावश्यक होता है। मूल्यांकन में व्यक्तित्व के सभी पक्षों पर समग्र रूप से ध्यान रखा जाता है। इसका सम्बन्ध विषय ज्ञान के अतिरिक्त भाषा सम्बन्धी समस्त कौशलों के सम्बन्ध, अभिरुचि, प्रवृत्ति, व्यक्तित्व, शिक्षण अवधि आदि से भी है। भाषा-शिक्षण समय शिक्षक आकलन करता है कि विद्यार्थी कितना पढ़ पाता है, कैसे पढ़ता है, धाराप्रवाह पठन है, अक्षर पहचान है, भाषा श्रवण बोध है, भाषा अभिव्यक्ति बोध है इत्यादि। भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन के निम्नलिखित बिन्दु हो सकते हैं , यथा –

1. भाषा कौशल।
2. धाराप्रवाहता।
3. स्पष्टता तथा शुद्धता।

व्यापक रूप से विद्यार्थी में भाषा सम्बन्धी सामर्थ्य और क्षमता का मूल्यांकन शिक्षा व्यवस्था के तीनों चरणों यथा – (पाठ पूर्व, पाठ प्रक्रिया, पाठ पश्चात्) के अनुरूप मूल्यांकन को वर्गीकृत करता है। जैसे प्रवेश मूल्यांकन, अभिक्षमता मूल्यांकन, वर्ग निर्धारण मूल्यांकन, निदानात्मक मूल्यांकन, उपलब्धि मूल्यांकन तथा दक्षता मूल्यांकन। मूल्यांकन परीक्षण पर आधारित होता है। शिक्षण के क्षेत्र में परीक्षण समग्र रूप से परीक्षा कहलाता है। भाषा में मूल्यांकन के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण अपनाये जाते हैं।

1.4.08. हिन्दी भाषा मूल्यांकन की प्रविधियाँ

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिगम परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों की उपादेयता की परख की जाती है। हिन्दी शिक्षण में भी मूल्यांकन का विशिष्ट स्थान है। पूर्व में हिन्दी शिक्षण में परीक्षा को ही मूल माना जाता था। शैक्षिक उद्देश्यों आदि को दरकिनार कर दिया जाता था। मूल्यांकन तो सर्वदा उद्देश्य बाधित होता है। मूल्यांकन हिन्दी-शिक्षण के उन्नयन तथा विकास में सहायक है। भाषा में मूल्यांकन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रदत्तों का संग्रह करती है। हिन्दी भाषा मूल्यांकन की प्रविधियों का वर्गीकरण विद्वानों ने कई प्रकार से किया है। भाषा में मूल्यांकन की प्रविधियों को मुख्य रूप से दो वर्गों में विभाजित किया है –

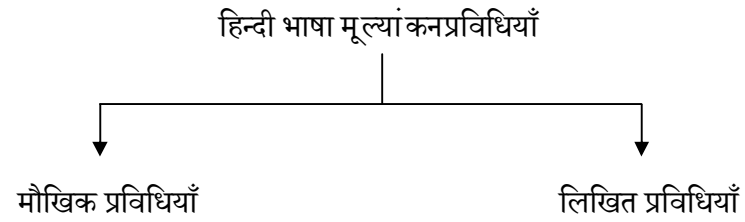

1.4.08.01. मौखिक प्रविधियाँ

मूल्यांकन की इस प्रविधि में विद्यार्थियों की शाब्दिक, अभिव्यक्ति, भाषा-प्रवाह, तार्किक शक्ति एवं भाव भंगिमाओं का मूल्यांकन किया जाता है। इसमें मौखिक परीक्षा ली जाती है।

1.4.08.02. लिखित प्रविधियाँ

मूल्यांकन की इस प्रविधि में विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति, लेखन शैली, भाषा आदि का मूल्यांकन किया जाता है। इसके अन्तर्गत निबन्धात्मक परीक्षाएँ, लघुत्तरात्मक परीक्षाएँ, तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ आयोजित की जाती हैं।

प्रश्नपत्र के बिना परीक्षाएँ नहीं ली जा सकती हैं। प्रश्न के बिना कक्षा में शिक्षण समय अन्तःक्रिया भी सम्भव नहीं है। अतः प्रश्नपत्र निर्माण की प्रक्रिया काफी संवेदनशील व चरणबद्ध है। एक सन्तुलित और मूल्यांकन की दृष्टि से सरल प्रश्नपत्र बनाने के लिए पाठ्यक्रम के सभी अंगों और समयावधि का ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। प्रश्नों की भाषा सरल, स्पष्ट व अभिधात्मक होनी चाहिए। सभी प्रकार के प्रश्नों को अलग-अलग खण्डों में रखा जाना चाहिए। प्रश्नपत्र के आरम्भ में आवश्यक निर्देशों का उल्लेख किया जाना चाहिए। विकल्पों, प्रदेय अंकों, उत्तरों की शब्द-सीमा, परीक्षा की अवधि इत्यादि का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।

1.4.09. हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकन की उपयोगिता

हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकनकी उपयोगिता निम्नलिखित रूप से है, यथा –

1. ज्ञान में वृद्धि
2. मार्ग निर्देशन
3. पाठ्यक्रम बोधन
4. समस्याओं का परिज्ञान
5. विद्यार्थी वर्गीकरण
6. निदान व उपचार
7. भविष्य की तैयारी

1.4.10. हिन्दी भाषा कौशल प्रवीणता एवं व्यापकता का मूल्यांकन

एक पक्ष भाषा का उपयोग मानव जीवन और जगत् को देखने, समझने, उससे जुड़ने एवं प्रकट करता है । द्वितीय पक्ष भाषा में प्रवीणता का सम्बन्ध भाषा कौशलों से जुड़ना है । विद्यालय शिक्षा का एक प्रमुख अभिकरण है । विद्यालय शिक्षा में भाषा विकास के सतत एवं व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता हमेशा महसूस होती है । क्योंकि भाषा-शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य चार मूलभूत कौशलों – सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना का विकास है । ये चारों कौशल आपस में अन्तःसम्बद्ध हैं । इन चारों कौशलों का विकास साथ-साथ होता है । इन कौशलों की उपलब्धि प्रवीणता एवं व्यापकता में निम्नलिखित बातें आती हैं, यथा –

1. गद्य तथा पद्य पठन ।
2. सम्प्रेषण योग्यता ।
3. सुनकर लेखन ।
4. लिपि सम्बन्ध ज्ञान ।
5. निबन्ध, कहानी, प्रार्थना लेखन ।
6. चित्रों का प्रयोग कर विचार जानना आदि ।

इस प्रकार विद्यार्थियों में हिन्दी भाषा कौशल प्रवीणता एवं व्यापकता का मूल्यांकन समाकलित रूप में भी कर सकते हैं ।

1.4.11. हिन्दी भाषा परीक्षण

शिक्षा की अवधारणा परीक्षण की प्रक्रिया को ही एक अभिन्न अंग मानती है । शिक्षण-प्रक्रिया के अन्दर ही परीक्षण की प्रक्रिया भी साथ-साथ ही चलनी चाहिए । परीक्षण की यह पद्धति शिक्षण-प्रक्रिया के लक्ष्य के तहत

सामर्थ्य और क्षमता से जोड़ती है। विद्यार्थी के अधिगम कौशलों के निर्धारण के लिए परीक्षण प्रश्नों की रचना एवं विकास मूल्यांकन का एक प्रमुख चरण माना गया है। विषयान्तर्गत विद्यार्थी के भाषा अधिगम मूल्यांकन के लिए मौखिक, लिखित और प्रेक्षण जैसी प्रविधियाँ उपयोगी होती है। भाषा-शिक्षण में व्याकरण एवं शब्दावली का उपयोग करते हुए वाक्य का शुद्ध उच्चारण और लेखन सिखाया जाता है। अर्थात् भाषिक तथा व्याकरणगत तत्त्वों जैसे – ध्वनि, लिपि, वर्तनी, शब्द, वाक्य आदि का ज्ञान देना शिक्षण का लक्ष्य होता है। इसमें विद्यार्थी बोलकर, पढ़कर, सुनकर और लिखकर अभिव्यक्ति करता है। प्राथमिक स्तर पर भाषा की शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का भी मुख्य उद्देश्य इन चारों कौशलों (श्रवण, भाषण, पठन, लेखन) की बोधन तथा अभिव्यक्ति के क्षेत्रों में भाषाई क्षमता, योग्यता, उपलब्धि तथा अधिगम का विकास है।

चारों भाषा कौशलों की उपलब्धि का मूल्यांकन भी समाकलित रूप में होना चाहिए। विद्यार्थी की योग्यता व कमजोरी निदान हेतु प्रत्येक कौशल विशेष के लिए पृथक्-पृथक् परीक्षणों का निर्माण करना चाहिए। भाषा कौशल परीक्षण प्रश्नों के निर्माण एवं विकास केवल भाषा अधिगम स्तर की दक्षताओं को ध्यान में रखना चाहिए। उत्तम प्रश्न-निर्माण में निम्नलिखित तथ्य होने चाहिए –

1. सुसंगत विषयवस्तु का चयन।
2. अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का निर्धारण।
3. अधिगम प्रतिफलों का निर्दिष्टीकरण।
4. प्रश्नों की विविधता का निर्धारण।
5. दक्षताओं के परीक्षण योग्य प्रश्न-निर्माण।

1.4.11.1. बोध परीक्षण

हिन्दी भाषा-शिक्षण में बोध परीक्षण मौखिक एवं लिखित रूप में किया जाता है। मौखिक परीक्षण में विद्यार्थी के श्रवण बोध तथा भाषा अधिकार का परीक्षण करते हैं। विद्यार्थी से हिन्दी भाषा के किसी भी अनुच्छेद को पढ़वाकर उसमें से प्रश्नों के मौखिक उत्तर कहलवाना उसके पठन बोध का परीक्षण करते हैं। और उसे प्रश्नों के लिखित उत्तर देने में उसके लिखित रूप में विचारों की अभिव्यक्ति योग्यता का परीक्षण करते हैं।

(1) श्रवण बोध परीक्षण

हिन्दी भाषा-शिक्षण और परीक्षण में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। कक्षा में जो कुछ भी सीखा व सिखाया जाता है उसी का परीक्षण किया जाता है। प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थी की श्रवण योग्यता का विकास करवाया जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों की श्रवण योग्यता के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करते हैं। शिक्षक विद्यार्थियों के श्रवण बोध का परीक्षण निम्नलिखित माध्यमों के द्वारा कर सकता है, यथा –

(i) वैयक्तिक प्रश्नों के माध्यम द्वारा।

(ii) किसी सामग्री पर आधारित प्रश्नों के द्वारा।

(iii) विभिन्न निर्देशों व अनुरोधों के आधार पर।

शिक्षक विद्यार्थियों के श्रवण बोध परीक्षण के लिए विभिन्न गतिविधियों का आयोजन कर सकता है, यथा –

(क) वर्तनी एवं उच्चारण : शिक्षक विद्यार्थियों को वर्तनी एवं उच्चारण के लिए ऐसे शब्दों को दोहराने के लिए कहे जिनकी ध्वनियों में थोड़ी बहुत भिन्नता हो जिससे वे भेद बता पाएँ। इसके लिए शब्द युग्मों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे बार-भार, ओर-और, पिला-पीला आदि।

(ख) चित्र परीक्षण : चित्र, मानचित्र, आरेख, प्रतिकृति, इत्यादि के द्वारा भी विद्यार्थियों के श्रवण बोध का परीक्षण किया जा सकता है। विद्यार्थी चित्रों के आधार पर विवरण दे सकते हैं, जैसे – एक चित्र देकर उसके बारे में कुछ कथन दिये जाएँ। इन कथनों से कुछ कथन सत्य और कुछ कथन असत्य। विद्यार्थी बताएँ कि कौनसे कथन सत्य और असत्य हैं ? इत्यादि।

(ग) निर्देशन : प्राथमिक स्तर पर शिक्षक मौखिक निर्देशों से हिन्दी श्रवण बोध परीक्षण कर सकते हैं, जैसे – नमस्ते करो, बैठ जाओ, पुस्तक खोलो, इत्यादि।

(घ) कथा-कहानी कहना व सुनना : शिक्षक विद्यार्थियों को कहानियाँ सुनाकर उन पर आधारित प्रश्न पूछ सकते हैं। कहानी के साथ चित्र प्रदर्शन भी कर सकते हैं।

(2) पठन बोध परीक्षण

हिन्दी भाषा के पठन बोध परीक्षण में अक्षर पहचान से लेकर अर्थ ग्रहण करने तक की क्षमता का परीक्षण किया जाता है। विद्यार्थी परिचित शब्दों, नामों को पहचान पाएँ। शब्दों के अर्थ समझ कर पढ़ें। इसके बाद चित्र कहानी के साथ-साथ लिखे शब्दों, वाक्यों को पढ़ें। पढ़ी हुई सामग्री की मुख्य बात बता पाएँ तथा जो शब्द सीखा उसका उपयोग प्रसंगानुसार कर सकें। नीचे विद्यार्थियों के पठन बोध के परीक्षण के लिए कुछ युक्तियाँ दी गई हैं, यथा –

(i) चित्र परीक्षण : शिक्षक प्राथमिक कक्षाओं के प्रारम्भिक समय में शब्दों, वाक्यांशों, तथा वाक्यों के बोध परीक्षण हेतु चित्रों का प्रयोग कर सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों से चित्र में दर्शाए गए पदार्थों, व्यक्तियों, अन्य किसी भी वस्तु आदि के नाम ठीक रूप से कहने को कह सकते हैं। विद्यार्थी को कुछ ऐसे चित्र भी दिखा सकते हैं जिनके साथ तीन-चार वाक्य लिखे हुए हों। विद्यार्थी उन लिखे हुए वाक्यों को पढ़े और उनमें से एक या दो का सम्बन्ध चित्र से जोड़े।

(ii) पठन सामग्री से परीक्षण : शिक्षक बोध परीक्षण के लिए विद्यार्थियों की पठन योग्यता के अनुरूप कविता, कहानी, संवाद, विवरण, वर्णन, अवतरण जैसी पठन-सामग्री का चयन कर सकते हैं। इनके आधार पर पठन बोध परीक्षण के प्रश्न तैयार किये जा सकते हैं, जैसे –

(क) सत्य-असत्य कथन वाले प्रश्न।

(ख) बहुविकल्पी प्रश्न।

(iii) शब्द-भण्डार परीक्षण : शिक्षक विद्यार्थियों के शब्द भण्ड़ार के परीक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का निर्माण कर सकता है। ये प्रश्न किसी गद्य, पद्य या नाटक, कहानी के आधार पर निर्मित हो सकते हैं, जैसे –

(क) उपर्युक्त शब्दों से रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

(ख) 'अ' खण्ड का 'ब' खण्ड से सुमेलन कीजिए।

(ग) लघु उत्तर वाले प्रश्न।

(घ) सारांशात्मक प्रश्न।

1.4.11.2. अभिव्यक्ति परीक्षण

हिन्दी शिक्षण में विद्यार्थी की अभिव्यक्ति को मौखिक परीक्षण एवं लिखित परीक्षण के द्वारा परखा जा सकता है। हिन्दी भाषा में परीक्षण के लिए मुख्यतया मौखिक एवं लिखित परीक्षा ही ली जाती है। प्रश्नपत्र भी पाठ्यपुस्तक पर ही आधारित होता है। इससे भाषा का बोध कम तथा स्मरण शक्ति की ही जाँच होती है। भाषा के सन्दर्भ में अभिव्यक्ति परीक्षण की युक्तियों में बदलाव पर जोर दिया गया है।

(1) मौखिक अभिव्यक्ति परीक्षण

मौखिक परीक्षण औपचारिक के अलावा अनौपचारिक रूप से भी किया जा सकता है। अनौपचारिक रूप से कक्षा में पढ़ाते समय ही विद्यार्थियों से विभिन्न विषयों पर संवाद करना, प्रश्न पूछना, समूह में चर्चा आयोजित करवाना, अभिनय करवाना आदि क्रियाकलापों के द्वारा विद्यार्थियों के भाषाई कौशलों की जाँच-परीक्षण की जा सकती है। औपचारिक रूप से विद्यार्थियों को मौखिक अभिव्यक्ति के परीक्षण के लिए उन्हें अधिकाधिक बोलने के लिए प्रेरित किया जाए। मौखिक अभिव्यक्ति को व्यक्त करने की योग्यता के परीक्षण के लिए कई प्रकार के परीक्षण प्रश्न बनाए जा सकते हैं, जैसे – मौखिक परीक्षण प्रश्न-उत्तर, कहानी कथन, बोलकर पठन, देखकर वर्णन, सुनकर वर्णन, वस्तुओं का वर्णन तथा सस्वर वाचन इत्यादि प्रविधि से कर सकते हैं।

(2) लिखित अभिव्यक्ति परीक्षण

लिखित परीक्षण में प्रश्न-निर्माण पर बहुत अधिक अवधान देने की आवश्यकता होती है। प्रश्नपत्र ऐसा विनिर्मित हो, जिसमें पढ़ना-समझना, कल्पना करना, स्वतन्त्र अभिव्यक्ति, तर्क करना, सार लिख सकना, तुलना कर अन्तर को समझना की जाँच की जा सके। लिखित परीक्षण श्रुतलेख, आपूर्ति परीक्षण, मातृभाषा में पुनर्लेखन, कहानी का शीर्षक, कहानी से प्रश्न, नाटक का मंचन व संवाद लेखन, कविता व्याख्या एवं भावार्थ लेखन की प्रविधि से कर सकते हैं।

1.4.12. पाठ-सार

शिक्षा प्रक्रिया में भाषा-शिक्षण एक मुख्य एवं महत्त्वपूर्ण विषय है। भाषा-शिक्षण के लिए निर्धारित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के सन्दर्भों में भाषा सिखायी जाती है। भाषा सीखने वाले अपनी आवश्यकताओं के अनुसार भाषा दक्षता अर्जित करते हैं । इनका मूल्यांकन शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का अभिन्न अंग है । भाषा-शिक्षण के आयोजन के विभिन्न आयामों की जानकारी मूल्यांकन विविध स्तरों पर उपलब्ध करता है। मूल्यांकन में विद्यार्थी के सभी अधिगम अनुभव सम्मिलित होते हैं । अतः मूल्यांकन मुख्य रूप से सतत एवं व्यापक दो रूपों में माना गया है। हिन्दी भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन प्रक्रिया में परीक्षण युक्तियों और प्रश्नों के निर्माण का अपना महत्त्व है। मुख्यतया भाषा-अधिगम के सन्दर्भ में हम भाषा का परीक्षण सीखने करते हैं। भाषा-परीक्षण में विभिन्न भाषिक कौशलों में क्षमता का परीक्षण किया जाता है। हिन्दी भाषा-शिक्षण में बोध परीक्षणों और अभिव्यक्ति परीक्षणों की रचना की जाती है। परीक्षण शिक्षण योजना का अपरिहार्य एक अंग है। शिक्षण द्वारा विद्यार्थी के व्यक्तित्व का विभिन्न प्रकार से विकास करना, और परीक्षण द्वारा उस विद्यार्थी के विकास का लेखा प्रस्तुत करना और आगे विकास के लिए उत्प्रेरित तथा अनुप्राणित करना है। वास्तविकता में परीक्षण के बिना शिक्षण लक्ष्य की प्राप्ति नहीं है।

1.4.13. बोध प्रश्न

बहु विकल्पीय प्रश्न

1. भाषा कौशलों पर अधिकार एवं इनका व्यवहार में प्रयोग कहलाता है?
   (क) कौशल
   (ख) भाषा-अधिगम
   (ग) भाषा-शिक्षण
   (घ) शिक्षा

   सही उत्तर – (ख) भाषा-अधिगम

2. मूल्यांकन के लिए अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द है –
   (क) Test
   (ख) Evaluation
   (ग) Examination
   (घ) Observation

   सही उत्तर – (ख) Evaluation

3. शैक्षिक कार्यक्रम या पाठ्यक्रम की समाप्ति पर विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि किसके द्वारा ज्ञात की जाती है?
   (क) पाठ्यक्रम

(ख) मूल्यांकन
(ग) निरीक्षण
(घ) शिक्षण

सही उत्तर – (ख) मूल्यांकन

4. शैक्षणिक प्रवीणता की जाँच में किसका सहारा लेना अनिवार्य है ?
(क) परीक्षण
(ख) पाठ्यक्रम
(ग) विद्यार्थी
(घ) विद्यालय

सही उत्तर – (क) परीक्षण

5. विद्यार्थी की अभिव्यक्ति को किस परीक्षण द्वारा जाँचा जा सकता है ?
(क) मौखिक परीक्षण
(ख) लिखित परीक्षण
(ग) मौखिक व लिखित परीक्षण
(घ) किसी से नहीं

सही उत्तर – (ग) मौखिक व लिखित परीक्षण

लघूत्तरीय प्रश्न

1. भाषा अधिगम का अर्थ लिखिए।
2. मूल्यांकनको स्पष्ट कीजिए।
3. अभिव्यक्ति परीक्षण का क्या तात्पर्य है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा मूल्यांकनकी प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
2. हिन्दी भाषा-परीक्षण को विस्तार से समझाइए।

1.4.14. व्यवहार

1. मूल्यांकनके सम्प्रत्यय को समझाइए।
2. हिन्दी शिक्षण में मूल्यांकनकी उपयोगिता लिखिए।
3. बोध परीक्षण पर संक्षिप्त प्रकाश ड़ालिए।
4. मूल्यांकनका महत्त्व बताइए।
5. भाषा-शिक्षण में मूल्यांकन प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

1.4.15. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

01. पाण्डेय, रामशकल (2012) हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
02. शर्मा, मार्त्तण्ड (2011) हिन्दी शिक्षण, इलाहबाद, शारदा पुस्तक भवन।
03. शुक्ल, रजनीकान्त (2012) हिन्दी शिक्षण के विविध आयाम, तिरूपति, श्रीपति प्रकाशन।
04. सिंह, दिलीप (1999) अन्य भाषा-शिक्षण के बृहत् सन्दर्भ, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन।
05. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (1979) भाषा-शिक्षण, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन।
06. सत्तिगेरी, के. आय. (2013) : नूतन हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
07. शर्मा, च. ल. ना. तथा सिंह, फतेह (2008) संस्कृतशिक्षणं नवीन प्रविधयश्च जयपुर, आदित्य प्रकाशन।
08. प्रसाद, केशव (2015) हिन्दी-शिक्षण, नई दिल्ली, धनपत राय पब्लिशिंग कम्पनी।
09. शर्मा, लक्ष्मीनारायण (1993) भाषा, 1 एवं 2 की शिक्षण विधियाँ और पाठ नियोजन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
10. पाण्डेय, श्रुतिकान्त (2014) हिन्दी भाषा और इसकी शिक्षण विधियाँ, दिल्ली, पी.एच.एल लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।

❖❖❖

खण्ड – 2 : हिन्दी भाषा-संरचना

इकाई – 1 : ध्वनि संरचना

इकाई की रूपरेखा

2.1.00. उद्देश्य कथन
2.1.01. प्रस्तावना
2.1.02. हिन्दी की ध्वनि-व्यवस्था
2.1.03. स्वर : स्वरूप एवं वर्गीकरण
2.1.04. व्यंजन : स्वरूप एवं वर्गीकरण
2.1.05. नासिक्यता
2.1.06. अक्षर
2.1.07. ध्वनि-गुण (खंडेतर अभिलक्षण)
2.1.08. पाठ-सार
2.1.09. बोध प्रश्न
2.1.10. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

2.1.00. उद्देश्य कथन

ध्वनि किसी भाषा व्यवस्था की सबसे आधारभूत इकाई है। ध्वनियों को विभिन्न नियमों से वाक्यों के रूप में संयोजित करके सम्प्रेषण किया जाता है। प्रत्येक भाषा की अपनी एक ध्वनि व्यवस्था होती है। हिन्दी की भी अपनी ध्वनि व्यवस्था है, जिसमें अनेक ध्वनियाँ कुछ गुणों, लक्षणों के आधार पर वर्गीकृत हैं। प्रस्तुत पाठ में इन सभी से परिचय कराया जाएगा। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. ध्वनि की संकल्पना को समझ सकेंगे।
ii. भाषा में ध्वनि व्यवस्था के महत्त्व को जान सकेंगे।
iii. हिन्दी की ध्वनियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
iv. हिन्दी की ध्वनियों-स्वरों, व्यंजनों का वर्गीकरण कर सकेंगे।

2.1.01. प्रस्तावना

भाषा में ध्वनियों के माध्यम से अर्थ का सम्प्रेषण किया जाता है। उदाहरण के लिए जब हमें प्यास लगती है तो 'पानी दीजिए, पानी लाओ, जल चाहिए, पानी कहाँ मिलेगा, प्यास लगी है' आदि वाक्यों का प्रयोग करते हुए हम किसी से पानी माँगते हैं। अतः पानी पीने की इच्छा होना अर्थ तत्त्व है, जबकि ये बोले हुए वाक्य ध्वनि तत्त्व हैं। अतः भाषा दो प्रकार के तत्त्वों को जोड़ने वाली व्यवस्था है – ध्वनि तत्त्व और अर्थ तत्त्व। इसमें ध्वनि तत्त्व माध्यम है, जबकि अर्थ तत्त्व आधार। भाषाविज्ञान में ध्वनियों का अध्ययन 'ध्वनिविज्ञान' (Phonetics) में

किया जाता है। यह अध्ययन उच्चारण, संवहन और श्रवण की दृष्टि भाषा निरपेक्ष रूप से होता है। इसमें किसी भी भाषा की ध्वनियों का विश्लेषण तथा वर्गीकरण किया जाता है।

प्रत्येक भाषा की ध्वनियों की अपनी व्यवस्था होती है। उस व्यवस्था के अनुरूप उन ध्वनियों को वर्गीकृत करते हुए समझा जा सकता है। भाषाई ध्वनियों को अन्य प्रकार की ध्वनियों से अलग करने के लिए भाषाविज्ञान में 'स्वन' (Phone) कहा गया है। जब किसी भाषा की ध्वनियों की बात की जा रही हो, तो स्पष्ट है कि 'स्वनों' की ही बात होती है। भाषाई ध्वनियों को उच्चारण की दृष्टि से उनके उच्चारण स्थान, उच्चारण प्रयत्न आदि के आधार पर देखा जाता है। इसी प्रकार संवहन की दृष्टि से 'ध्वनि तरंग' के रूप में उनकी स्थिति (आयाम, आवृत्ति आदि) तथा श्रवण की दृष्टि से ध्वनियों को सुनने के दौरान होने वाले संवेदनों का अध्ययन किया जाता है। इन तीनों प्रकार के अध्ययनों में उच्चारण की दृष्टि से किया जाने वाला अध्ययन ही अधिक विकसित हो सका है।

हिन्दी भारत की राजभाषा है। भाषा परिवार की दृष्टि से यह भारोपीय भाषा परिवार की एक आधुनिक भारतीय आर्यभाषा है। इसका विकास संस्कृत से हुआ है। इसलिए हिन्दी की ध्वनियाँ मूलतः संस्कृत की ध्वनियाँ ही हैं। फिर भी समय के साथ उनके उच्चारण में कुछ परिवर्तन हुआ है तथा राजनैतिक और समाज-सांस्कृतिक कारणों से जिन भाषाओं का हिन्दी समाज से अधिक संयोग हुआ है, उनका भी कुछ प्रभाव दिखाई पड़ता है। अतः हिन्दी की ध्वनि संरचना का अध्ययन करते हुए इन सभी बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

2.1.02. हिन्दी की ध्वनि-व्यवस्था

हिन्दी की ध्वनि-व्यवस्था से तात्पर्य है – हिन्दी में पाई जाने वाली ध्वनियों, उनके वर्गों तथा उनके वितरण को समझना। 'ध्वनि' भाषा की सबसे छोटी इकाई है, इनसे शब्द अथवा पद बनते हैं और फिर शब्दों से पदबंध और वाक्य। किसी भी ध्वनि का अपना कोई अर्थ नहीं होता, किन्तु एक या एक से अधिक ध्वनियाँ मिलकर अर्थपूर्ण इकाइयों अर्थात् शब्दों का निर्माण करती हैं। भाषाविज्ञान में 'ध्वनि' और 'शब्द' के बीच 'रूपिम' (morpheme) नामक इकाई भी आती है। रूपिम भाषा की लघुतम अर्थवान् इकाई है, जिसके अन्तर्गत मूल शब्द और उपसर्ग / प्रत्यय सभी आ जाते हैं। कौन-कौन सी ध्वनियाँ या किस-किस प्रकार की ध्वनियाँ मिलकर रूपिमों या शब्दों का निर्माण करती हैं ? इसे ध्वनि-व्यवस्था के माध्यम से ही अधिक स्पष्ट तरीके से समझ सकते हैं।

किसी भी भाषा में मूलतः दो प्रकार की ध्वनियाँ होती हैं – स्वर और व्यंजन। हिन्दी में भी स्वर और व्यंजन पाए जाते हैं। स्वरों की संख्या 11 है तो व्यंजनों की संख्या 33 है। हिन्दी की लिपि 'देवनागरी' है। इसके माध्यम से ही हिन्दी ध्वनियों को लिखित रूप में प्रदर्शित करते हैं। हिन्दी की ध्वनियों को देवनागरी लिपि-चिह्नों के माध्यम से इस प्रकार से देख सकते हैं –

स्वर

अ आ *ऑ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

(नोट- देवनागरी में 'अ' के अलावा अन्य स्वर ध्वनियों को मात्राओं (ा *ॅ ी ि ै ु ू े ै ो ौ) के माध्यम से भी व्यक्त किया जाता है, किन्तु यह लिपि से सम्बन्धित बात है, ध्वनि से नहीं। इससे ध्वनियों की संख्या या उनके स्वरूप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।)

व्यंजन

क ख ग घ ङ	(*क़ ख़ ग़)
च छ ज झ ञ	(*ज़)
ट ठ ड ढ ण	(#ड़ ढ़)
त थ द ध न	
प फ ब भ म	(*फ़)
य र ल व श ष स ह	
$ क्ष त्र ज्ञ	

(* = आगत, # = नवीन, $ = संयुक्त)

उपर्युक्त तालिका में देख सकते हैं कि हिन्दी की ध्वनि व्यवस्था में मूलतः 11 स्वर हैं। परम्परागत देवनागरी वर्णमाला में स्वर के अन्तर्गत उपर्युक्त के अलावा 'ऋ, अं, अः' को दिया जाता रहा है, किन्तु आधुनिक भाषावैज्ञानिक दृष्टि से इन्हें स्वर नहीं माना जाता। वर्तमान हिन्दी में 'ऋ' का उच्चारण 'रि' जैसा होता है, जैसे – ऋतु, मृत्यु, ऋण आदि का उच्चारण रितु, म्रित्यु, रिण होता है। 'अं' एक अनुनासिक ध्वनि है जो 'अँ' का प्रतिनिधित्व करता है। इसे आधुनिक भाषाविज्ञान में ध्वनि-गुण के रूप में मानते हैं। अतः 'अं' को भी स्वर के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता। 'अः' (विसर्ग) का उच्चारण अघोष 'ह' के रूप में' होता है। अतः यह भी स्वर के अन्तर्गत नहीं आता।

हिन्दी में मूलतः 33 व्यंजन ही रहे हैं। इनके साथ फारसी से आए 05 अन्य व्यंजनों (क़, ख़, ग़, ज़, फ़) और सम्मिलित दो नई ध्वनियों (ड़, ढ़) को मिला दें तो इनकी संख्या 39 हो जाती है। देवनागरी वर्णमाला में इनके अलावा 'क्ष, त्र, ज्ञ' का समावेश किया जाता है। ये स्वतन्त्र रूप से वर्ण तो हैं किन्तु ध्वनि-व्यवस्था की दृष्टि से ये स्वतन्त्र ध्वनियाँ न होकर दो-दो ध्वनियों के योग हैं, जिसे इस प्रकार से देखा जा सकता है –

क्ष	=	क्+श
त्र	=	त्+र
ज्ञ	=	ज्+ञ

अतः ये ध्वनियाँ नहीं हैं, बल्कि संयुक्त व्यंजन हैं। हिन्दी वैयाकरणों द्वारा इन्हें संयुक्ताक्षर और संयुक्त वर्ण भी कहा गया है। इनमें से 'क्ष' का उच्चारण अब 'छ' की तरह होता है और 'ज्ञ' का 'ग्य' की तरह।

ध्वनि और वर्ण

भाषा का व्यवहार दो रूपों में होता है – वाचिक और लिखित। इनमें वाचिक रूप मूल है तथा लिखित उसका अनुकरण। वाचिक रूप में व्यवहार करने पर हम अपने मुख-विवर से ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं, जो सुनाई पड़ने के साथ वायुमण्डल में विलीन हो जाती हैं। अतः उन्हें लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए प्रत्येक ध्वनि-प्रतीक के लिए कुछ लिखित संकेत विकसित किये गए, जिन्हें 'वर्ण' (letter) नाम दिया गया। वर्णों के समुच्चय को लिपि (Script) कहते हैं। अतः 'ध्वनि' भाषा के उच्चरित रूप की सबसे छोटी इकाई है जबकि उसका लिखित प्रतिनिधित्व 'वर्ण' है। कुछ वैयाकरणों ने ध्वनि व वर्ण में अभेद सम्बन्ध बताया है। किन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि वर्ण ध्वनियों का प्रतिनिधित्व तो करते हैं, किन्तु वर्ण और ध्वनि अलग-अलग चीजें हैं। एक ही ध्वनि के लिए एक से अधिक वर्ण हो सकते हैं, जैसे – अंग्रेजी में 'क' के लिए रोमन लिपि में k, c, q तीन वर्णों का प्रयोग होता है।

2.1.03. स्वर : स्वरूप एवं वर्गीकरण

किसी भाषा की वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में मुख-विवर में वायु-प्रवाह बाधित नहीं होता, स्वर हैं। स्वरों का उच्चारण करने पर हवा फेफड़े से सीधे बाहर आती है और स्वरतंत्रियों में घर्षण करते हुए ध्वनि उत्पन्न करती है, किन्तु उसके अलावा कहीं भी उस वायु को बाधित या संकुचित नहीं किया जाता। अतः स्वर ध्वनियों का उच्चारण बिना किसी अवरोध के होता है और उन्हें उच्चरित करने के लिए किसी अन्य ध्वनि के सहयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती, इसीलिए संस्कृत वैयाकरणों द्वारा स्वर को परिभाषित करते हुए कहा गया है "स्वतो राजन्ते इति स्वराः" (महाभाष्य – पतंजलि) अर्थात् जो स्वतः उच्चरित हो वह स्वर है। संस्कृत और संस्कृत से निष्पन्न भाषाओं में तो यह स्थिति पाई जाती है, किन्तु विश्व की कुछ भाषाएँ (दक्षिण अफ्रीका की बान्तू आदि) ऐसी हैं जिनमें स्वर की तरह व्यंजन भी स्वतन्त्र रूप से उच्चरित होते हैं, इसीलिए आधुनिक भाषावैज्ञानिकों द्वारा स्वरों को परिभाषित करते हुए कहा गया है, "जिन ध्वनियों के उच्चारण में मुख-विवर में कहीं भी वायु का कोई अवरोध न हो, उसे स्वर कहते हैं।"

स्वरों का वर्गीकरण

स्वरों का वर्गीकरण मुख्यतः चार दृष्टियों से किया जा सकता है –

1. मात्रा के आधार पर

किसी स्वर के उच्चारण में जो अवधि लगती है, उसे मात्रा कहते हैं। स्वरों के उच्चारण में अलग-अलग परिमाण में समय लगता है। इस दृष्टि से हिन्दी स्वरों के दो वर्ग किये गए हैं –

(क) ह्रस्व : जिन स्वरों के उच्चारण में अपेक्षाकृत कम (एक मात्रा का) समय लगता है, उन्हें ह्रस्व स्वर कहते हैं, जैसे – अ, इ, उ।

(ख) दीर्घ : जिन स्वरों के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक (दो मात्राओं का समय) लगता है, उन्हें दीर्घ स्वर कहते हैं, जैसे – आ, ई, ऊ, ए, ओ, औ।

ह्रस्व स्वरों को एकमात्रिक और दीर्घ स्वरों को द्विमात्रिक भी कहा गया है। स्वरों की मात्रा के आधार पर अर्थभेद होता है, जैसे – कल-काल, खल-खाल में 'अ' (ह्रस्व) की जगह 'आ' (दीर्घ) स्वर की प्रयोग से शब्द और अर्थ बदल गए हैं। संस्कृत व्याकरण में उपर्युक्त दोनों के अलावा 'प्लुत' के भी रखा गया है। जिन स्वरों के उच्चारण में दो से अधिक मात्रा का समय लगता है, उन्हें प्लुत कहते हैं। हिन्दी में ऐसा कोई स्वर प्राप्त नहीं होता। सम्बोधन में कभी किसी दीर्घ स्वर का ही प्लुत की तरह लम्बा उच्चारण होता है।

2. जिह्वा की ऊँचाई के आधार पर

जिह्वा की ऊँचाई के आधार पर स्वरों के चार वर्ग किये गए हैं –

(क) विवृत : जिन स्वरों के उच्चारण में जिह्वा पूर्णतः नीचे होती है और मुख-विवर पूरा खुला रहता है, तो विवृत स्वर उच्चरित होते हैं, जैसे – 'आ'।

(ख) अर्द्धविवृत : यह वह अवस्था है जिसमें जिह्वा और मुख-विवर के ऊपरी भाग के बीच विवृत की अपेक्षा कम दूरी होती है। अर्थात् ऐसे स्वरों के उच्चारण में जिह्वा थोड़ा ऊपर उठती है, जैसे – अ, ऐ और औ।

(ग) अर्द्धसंवृत : इसमें जिह्वा अर्द्धविवृत की अपेक्षा थोड़ा अधिक किन्तु संवृत की अपेक्षा कम ऊपर उठती है। इससे उच्चरित स्वर अर्द्धसंवृत कहलाते हैं, जैसे – ए और ओ।

(घ) संवृत : जिन स्वरों के उच्चारण में जिह्वा का बहुत अधिक भाग ऊपर उठता है, और वायु संकुचित होकर बिना किसी रुकावट के बाहर निकलती है, संवृत स्वर कहलाते हैं, जैसे – ई, इ, ऊ, उ।

3. जिह्वा की स्थिति के आधार पर

जिह्वा की स्थिति के आधार पर स्वरों के तीन भेद किये जाते हैं –

(क) अग्रस्वर : जिन स्वरों का उच्चारण जिह्वा के अग्रभाग की सहायता से होता है, उन्हें अग्रस्वर कहते हैं, जैसे – इ, ई, ए, ऐ।

(ख) मध्य स्वर : जिन स्वरों का उच्चारण जिह्वा के मध्य भाग की सहायता से होता है, उन्हें मध्य स्वर कहते हैं, जैसे – हिन्दी में 'अ' मध्य स्वर है। इसे केन्द्रीय स्वर भी कहा गया है।

(ग) पश्चस्वर : जिन स्वरों का उच्चारण जिह्वा के पश्च भाग की सहायता से होता है, उन्हें पश्चस्वर कहते हैं, जैसे – ऊ,उ,ओ,औ, आ।

4. होठों की आकृति के आधार पर

होठों की आकृति के आधार पर स्वरों को दो वर्ग हैं –

(क) गोलीय (वर्तुल) : जिन स्वरों का उच्चारण में होठों को गोलाकार करते हुए किया जाता है, उन्हें गोलीय (वर्तुल) स्वर कहते हैं, जैसे – हिन्दी में ऊ, उ, ओ, औ, ऑ गोलीय स्वर हैं।

(ख) अगोलीय (प्रसृत) : जिन स्वरों के उच्चारण में होठ गोलाकार न होकर स्वाभाविक रूप में रहते हैं, उन्हें अगोलीय (प्रसृत) कहते हैं, जैसे – हिन्दी में अ, आ, इ, ई, ए और ऐ अगोलीय स्वर हैं।

नोट : कुछ वैयाकरणों ने 'उदासीन' और 'अर्द्धगोलीय' जैसे वर्ग भी किये हैं किन्तु मुख्यतः दो वर्ग ही प्रचलित हैं।

2.1.04. व्यंजन : स्वरूप एवं वर्गीकरण

जिन ध्वनियों के उच्चारण में मुख-विवर में वायु प्रवाह को कहीं-न-कहीं बाधित किया जाता है, उसे व्यंजन कहते हैं। व्यंजनों का उच्चारण करने पर जब हवा फेफड़े से स्वरतंत्रियों में घर्षण करते हुए ध्वनि उत्पन्न करते हुए बाहर आती है, तो उसे ऊपर मुख-विवर में कहीं-न-कहीं बाधित या संकुचित किया जाता है। संस्कृत और संस्कृत से निकली भाषाओं में व्यंजन ध्वनियों को उच्चरित करने के लिए स्वरों की आवश्यकता पड़ती है, इसीलिए संस्कृत वैयाकरणों द्वारा व्यंजन को परिभाषित करते हुए कहा गया है, "स्वयं राजन्ते इति स्वराः अन्वग भवति व्यंजनमिति।" (– महाभाष्य, पतंजलि) अर्थात् स्वर स्वयं शोभा पाते हैं, जबकि व्यंजन स्वरों का अनुकरण करते हैं। इस परिभाषा यह तात्पर्य है कि व्यंजनों का उच्चारण करते हुए अन्त में स्वर आ ही जाते हैं, जैसे – 'क' बोलने पर बाद में 'अ' आ ही जाता है। इसीलिए व्यंजन ध्वनियों को स्वरों के अलग दिखाने के लिए हल् चिह्न का प्रयोग किया जाता है। एक पूर्ण ध्वनि 'क' को इस प्रकार से व्यक्त करते हैं –

क = क् +अ

अतः ऊपर हिन्दी की ध्वनि-व्यवस्था में प्रत्येक व्यंजन को हल् चिह्न के साथ माना जा सकता है। प्रस्तुति में सुविधा को ध्यान में रखते हुए हल् चिह्न का प्रयोग नहीं किया गया है। वैसे भी हिन्दी में हल् चिह्नों का प्रयोग अब धीरे-धीरे कम हो रहा है। क्योंकि हल् चिह्नों का प्रयोग केवल तत्सम शब्दों के साथ ही किया जाता रहा है। क्योंकि हिन्दी के सभी अकारान्त शब्द व्यंजनान्त होते हैं। इसलिए उन सभी में हल् लगाया जाना चाहिए। किन्तु हम ऐसा नहीं करते।

व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण

परम्परागत वैयाकरणों द्वारा व्यंजन ध्वनियों के निम्नलिखित वर्ग किये गए हैं –

(क) स्पर्श : इसके अन्तर्गत सभी वर्गीय ध्वनियों (क वर्ग से प वर्ग तक कुल पच्चीस ध्वनियाँ) को रखा गया है।

(ख) अन्तस्थ : इसके अन्तर्गत य र ल व आते हैं।

(ग) ऊष्म : इसके अन्तर्गत श ष स ह को रखा गया है।

किन्तु आधुनिक भाषावैज्ञानिक दृष्टि से व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण मुख्यतः दो आधारों पर किया गया है – (1) उच्चारण स्थान के आधार पर और (2) उच्चारण प्रयत्न के आधार पर।

(1) उच्चारण स्थान (Place of Articulation) के आधार पर

स्वरयंत्र के ऊपर वायु-प्रवाह को जिस स्थान पर बाधित किया जाता है, उसे उस ध्वनि का उच्चारण स्थान कहते हैं। इस आधार पर व्यंजनों के निम्नलिखित वर्ग हैं –

(क) द्वयोष्ठ्य : इन व्यंजनों का उच्चारण दोनों होठों के स्पर्श से होता है। हिन्दी में प, फ, ब, भ, म,व द्वयोष्ठ्य व्यंजन हैं।

(ख) दन्त्योष्ठ्य : इन व्यंजनों का उच्चारण ऊपरी दाँत एवं निचले होठों के स्पर्श से होता है, जैसे – फ़ारसी में 'फ़' हिन्दी में दन्त्योष्ठ्य व्यंजन नहींहैं।

(ग) वर्त्स्य : इन व्यंजनों का उच्चारण वर्त्स अर्थात् मसूड़ों से किया जाता है। हिन्दी में जो पहले दन्त्य ध्वनियाँ थीं वे आज वर्त्स्य ध्वनियाँ हैं।

(घ) दन्त्य : इसके अन्तर्गत इन व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा दाँत को स्पर्श करती है – त, थ, द, ध, न, स।

(ङ) मूर्धन्य : इन व्यंजनों का उच्चारण मूर्धा से होता है, जैसे – ट, ठ, ड, ढ, ण, ड़ एवं ढ़ आदि मूर्धन्य व्यंजन हैं।

(च) तालव्य : इन व्यंजनों का उच्चारण तालु स्थान से होता है, जैसे – च , छ, ज, झ, ञ, य तथा श।

(छ) कण्ठ्य : इन व्यंजनों का उच्चारण कण्ठ से होता है। कण्ठ्य व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा का पिछला हिस्सा कोमल तालु को छूता है। इसीलिए कुछ भाषावैज्ञानिक 'कोमल तालव्य व्यंजन' कहते हैं। हिन्दी में क, ख, ग, घ, ङ कण्ठ्य हैं।

(ज) काकल्य : इन व्यंजनों का उच्चारण काकल स्थान से किया जाता है। हिन्दी में 'ह' ध्वनि काकल्य व्यंजन है।

(2) उच्चारण प्रयत्न (Mannar of Articulation) के आधार पर

व्यंजन ध्वनि के उच्चारण के लिए भाषाभाषी द्वारा सम्बन्धित उच्चारण स्थान पर जो प्रयास किया जाता है उसे उच्चारण प्रयत्न कहते हैं। प्रमुख उच्चारण प्रयत्नों के आधार पर व्यंजनों के निम्नलिखित वर्ग हैं –

(क) स्पर्श (Stops) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनके उच्चारण में जिह्वा सम्बन्धित उच्चारण स्थान को स्पर्श करती है। स्पर्श करने पर वायु मुख-विवर में अवरुद्ध होकर बाहर निकलती है। इसके अन्तर्गत हिन्दी की कण्ठ्य, मूर्धन्य, दन्त्य, वर्त्स्य और ओष्ठ्य ध्वनियाँ आ जाती हैं। अतः क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, त, थ, द, ध, प, फ, ब, भ स्पर्श ध्वनियाँ हैं।

(ख) स्पर्श संघर्षी (Africates) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनके उच्चारण में जिह्वा उच्चारण स्थान को स्पर्श करती है तथा मुख-विवर से वायु घर्षण के साथ निकलती है। जैसे – च छ ज झ।

(ग) संघर्षी (Fricatives) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनका उच्चारण करते समय मुख-विवर में वायु अत्यन्त सँकरे मार्ग से निकलती है और मुख-विवर में घर्षण होता है। जैसे – श, ष, स, ह।

(घ) पार्श्विक (Laterals) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनके उच्चारण में जिह्वा दन्त अथवा वर्त्स को छूती है, और उस समय वायु जिह्वा के अगल-बगल से बाहर निकलती है, जैसे – 'ल'।

(ङ) लुण्ठित (Trills) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनके उच्चारण में जिह्वा एक या अधिक बार वर्त्स स्थान को स्पर्श करती है, जैसे – 'र'।

(च) उत्क्षिप्त (Flapped) : इसके अन्तर्गत वे व्यंजन आते हैं, जिनके उच्चारण में जिह्वा मूर्धा को तेजी से स्पर्श करती है। जैसे – 'ड़' और 'ढ़'।

(छ) नासिक्य (Nasals) : वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में वायु मुख-विवर और नासिका विवर दोनों मार्ग से एक साथ निकलती है, नासिक्य कहलाती हैं, जैसे – ङ , ञ, ण, न, म। भाषावैज्ञानिकों द्वारा म्ह, न्ह को महाप्राण नासिक्य कहा गया है।

(ज) अर्द्धस्वर (Semivowels) : वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण के समय जिह्वा एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर सरकती है और वायु मुख-विवर को सँकरा बना देती है, अर्द्धस्वर कहते हैं, जैसे – 'य' और 'व'।

उपर्युक्त दो प्रमुख आधारों के अलावा कुछ अन्य आधारों पर भी व्यंजनों को वर्गीकृत किया गया है। इनमें से दो प्रमुख अन्य आधारों पर वर्गीकरण इस प्रकार है –

(3) घोषत्व के आधार पर

किसी ध्वनि के उच्चारण में स्वर-तंत्रियों में होने वाले कम्पन की मात्रा घोषत्व है। इसके आधार पर ध्वनियों के दो वर्ग हैं –

(क) अघोष : जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियों में बहुत कम कम्पन हो, वे ध्वनियाँ अघोष कहलाती हैं। हिन्दी में 'क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष, स और विसर्ग (ः)' अघोष ध्वनियाँ हैं।

(ख) सघोष : जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियों में अधिक कम्पन हो तो वे ध्वनियाँ सघोष कहलाती हैं। हिन्दी में सभी स्वर और 'ग, घ, ङ, ज, झ, ञ, ड, ढ, ण, ड़, ढ़, द ,ध, न, ब, भ, म, य, र, ल, व, ह' व्यंजन सघोष हैं।

नोट : जी.बी. धल आदि जैसे भाषाविद् सभी स्वरों को सघोष ध्वनि मानते हैं।

(4) प्राणत्व के आधार पर

प्राणत्व से तात्पर्य है – ध्वनि के उच्चारण में 'वायु' (प्राण) की मात्रा। इस आधार पर दो वर्ग हैं –

(क) अल्पप्राण : वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में कम मात्रा में वायु का प्रयोग किया जाता है, वे अल्पप्राण ध्वनि होती हैं। हिन्दी में क,ग,ङ, च,ज,ञ, ट,ड,ण, त,द,न, प,ब,म, य,र,ल,व अल्पप्राण व्यंजन हैं।

(ख) महाप्राण : जिन ध्वनियों के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में वायु का प्रयोग किया जाता है, उन्हें महाप्राण ध्वनि कहते हैं। हिन्दी में प्रत्येक वर्गीय ध्वनियों के दूसरे और चौथे व्यंजन – ख,घ, छ,झ, ठ, ढ, थ, ध तथा फ, भ महाप्राण है। इनके अतिरिक्त श, ष, स और ह महाप्राण हैं।

2.1.05. नासिक्यता

किसी ध्वनि के उच्चारण में नाक से भी ध्वनि निकलने की स्थिति नासिक्यता है। यदि किसी ध्वनि के उच्चारण में वायु नासिका विवर से निकलती है तो ऐसी ध्वनि नासिक्य ध्वनि कहलाती है। हिन्दी में दो प्रकार की नासिक्य ध्वनियाँ हैं – अनुस्वार (ं) तथा अनुनासिक (ँ)। इनमें से 'अनुस्वार' पंचमाक्षर ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करता है। वर्गीय ध्वनियों का पंचम वर्ण ङ, ञ, ण, न, म है, को ही अनुस्वार के माध्यम से लिखा जाता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित को देखें –

गङ्गा → गंगा
चञ्चल → चंचल
ठण्डा → ठंडा
तन्तु → तंतु
कम्पन → कंपन

'अनुनासिक' (ँ) स्वतन्त्र ध्वनि नहीं है। यह स्वर के साथ ही प्रयुक्त होती है। अनुनासिक के उच्चारण के समय मुख-विवर में कोई अवरोध नहीं होता, केवल इसके उच्चारण के समय वायु नासिका व मुख-विवर दोनों मार्गों से निकलती है। अतः अनुनासिक एक स्वन-गुण (ध्वनि-गुण) होता है। आजकल अनुनासिक की जगह अनुस्वार ही लिखने की परम्परा चल पड़ी है, किन्तु अनुस्वार और अनुनासिक में भेद से कुछ शब्दों के अर्थ में अन्तर आ जाता है, जैसे – 'हंस – हँस' में जहाँ 'हंस' पक्षी है, वहीं 'हँस' हँसना क्रिया का धातु रूप है।

2.1.06. अक्षर

ध्वनि वैज्ञानिक अध्ययन में 'अक्षर' एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। कुछ विद्वानों द्वारा 'वर्ण' को भी अक्षर की तरह माना गया है, जबकि अक्षर एक स्वतन्त्र इकाई है। अक्षर को इस प्रकार से परिभाषित किया गया है, "कोई

एक ध्वनि या एक से अधिक ध्वनियों का समूह जो यह एक ही श्वासाघात में उच्चरित हो, अक्षर है। यदि एक ही श्वासाघात में कई ध्वनियाँ एक साथ उच्चरित होती हैं तो उनमें एक मुखर ध्वनि (Sonorous) होती है 'स्वर' सबसे मुखर ध्वनि होती है। अतः जिन शब्दों में जितने स्वर होते हैं, उतने अक्षर होंगे। उदाहरण के लिए अ, आ, इ, ई, उ, ऊ आदि सभी स्वर एक-एक अक्षर हैं। इसी प्रकार एक व्यंजन और एक स्वर का योग अक्षर हो सकता है, जैसे – गा (ग्+आ)। दो व्यंजन और एक स्वर का योग भी अक्षर हो सकता है जैसे – त्र (त्+र्+अ), काम (क्+आ+म्), आदि। हिन्दी में पाँच व्यंजन और एक स्वर के योग से बना 'स्वास्थ्य' (स् + व् + आ + स् + थ् + य्) शब्द सबसे बड़ा अक्षर है।

2.1.07. ध्वनि-गुण (खंडेतर अभिलक्षण)

भाषा व्यवहार में केवल ध्वनियों का ही प्रयोग नहीं होता, बल्कि ध्वनि के साथ कुछ अन्य तत्त्वों का भी प्रयोग होता है, जिससे भाषा स्वाभाविक प्रतीत होती है। इन तत्त्वों को ध्वनि-गुण (खंडेतर अभिलक्षण) कहते हैं। इन्हें मात्रा, बलाघात, सुर, अनुनासिकता और संगम आदि के रूप में निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया जाता है –

1. मात्रा : किसी ध्वनि के उच्चारण में लगने वाले समय को 'मात्रा' कहते हैं। इसी के आधार पर स्वरों को ह्रस्व एवं दीर्घ कहा जाता है।
2. बलाघात : जब बोलते समय किसी ध्वनि या शब्द पर विशेष बल दिया जाता है तो इसे 'बलाघात' कहते हैं। कुछ भाषाओं में शब्द के भाग या ध्वनि पर अलग-अलग बल देने से अर्थ परिवर्तन होता है, जैसे – अंग्रेजी के 'Present' शब्द में प्रथम अक्षर पर बल देने पर 'Present का अर्थ 'उपस्थित' होता है और दूसरे अक्षर पर बल देने पर Per'sent का अर्थ 'उपहार' होता है।
3. सुर : एक वाक्य बोलते हुए आवाज की लय की अवस्था सुर कहलाती है। इसके तीन भेद हैं –उच्च, निम्न और समउच्च में सुर नीचे से ऊपर जाता है, निम्न में ऊपर से नीचे आता है और सम में बराबर रहता है।
4. अनुनासिकता : ध्वनि या शब्द का प्रयोग करते हुए नासिक्यता का प्रयोग अनुनासिकता है।
5. संगम अथवा संहिता (Juncture) : दो शब्दों या सार्थक ध्वनि-समूहों के बीच विराम का प्रयोग संगम या संहिता है। इसके कारण अर्थभेद हो जाता है। इसका सर्वप्रसिद्ध उदाहरण है –

रोको मत + जाने दो।
रोको + मत जाने दो।

2.1.08. पाठ-सार

हिन्दी संस्कृत से निकली हुई एक प्रमुख भारतीय आर्यभाषा है। इसमें मूलतः 10 स्वर और 33 व्यंजन हैं। किन्तु आगत और नवीन ध्वनियों को भी मिला देने पर हिन्दी में 11 स्वर और 39 व्यंजन प्राप्त होते हैं। इनके

अलावा हिन्दी वर्णमाला में 'क्ष,त्र,ज्ञ' भी पाए जाते हैं, जो दो ध्वनियों से मिलकर बने हैं। हिन्दी ध्वनियों का वर्गीकरण अनेक आधारों पर किया जा सकता है। स्वरों को मात्रा, जिह्वा की स्थिति, जिह्वा की ऊँचाई और होठों की स्थिति के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। व्यंजनों को उच्चारण स्थान, उच्चारण प्रयत्न, घोषत्व और प्राणत्व के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। हिन्दी की ध्वनि संरचना में नासिक्यता और अक्षर की अवधारणा भी महत्त्वपूर्ण है। जब हम भाषा व्यवहार करते हैं तो ध्वनियों के साथ-साथ कुछ ध्वनि-गुणों का भी प्रयोग करते हैं। मात्रा, बलाघात, सुर, अनुनासिकता, संगम आदि महत्त्वपूर्ण ध्वनि-गुण हैं जो ध्वनि, शब्द और वाक्य के रूप को प्रभावित करते हैं।

2.1.09. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से कौन-सा आगत स्वर है ?
   (क) अ
   (ख) ए
   (ग) ऑ
   (घ) औ

   सही उत्तर : (ग) ऑ

2. इनमें से कौन-सा एक संयुक्त व्यंजनहै ?
   (क) ख़
   (ख) क्ष
   (ग) ड़
   (घ) विसर्ग (ः)

   सही उत्तर : (ख) क्ष

3. इनमें से कौन-सा ह्रस्व स्वर है ?
   (क) आ
   (ख) ए
   (ग) औ
   (घ) इ

   सही उत्तर : (घ) इ

4. इनमें से कौन-सा विवृत स्वर है ?
   (क) आ
   (ख) ए
   (ग) औ

(घ) इ

सही उत्तर : (क) आ

5. इनमें से कौन-सा अन्तस्थ व्यंजन है ?
   (क) क
   (ख) ड़
   (ग) व
   (घ) ह

सही उत्तर : (ग) व

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. ध्वनि और वर्ण में अन्तर बताइए।
2. उच्चारण प्रयत्न के आधार पर हिन्दी व्यंजनों को वर्गीकृत कीजिए।
3. हिन्दी में नासिक्यता पर प्रकाश डालिए।
4. घोषत्व और प्राणत्व के आधार पर व्यंजनों को वर्गीकृत कीजिए।
5. अक्षर क्या है ? यह ध्वनि से कैसे अलग है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी की ध्वनि-व्यवस्था में कितने स्वर और व्यंजन हैं और क्यों ? ऋ, अं, अः, क्ष, त्र, ज्ञ से अलगाते हुए विस्तार से बताइए।
2. स्वर को परिभाषित करते हुए विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत कीजिए।
3. व्यंजन को परिभाषित करते हुए उच्चारण स्थान के आधार पर वर्गीकृत कीजिए।
4. स्वर और व्यंजन में अन्तर बताइए।
5. ध्वनि-गुण (खंडेतर अभिलक्षण) क्या हैं ? सोदाहरण समझाइए।

2.1.10. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. कुमार, कविता (2006). हिंदी व्याकरण: एक नवीन दृष्टिकोण. नई दिल्ली : किताबघर.
2. गर्ग रमेशचन्द्र (1973). हिंदी व्यंजन स्वनिमों के प्रभेदक अभिलक्षण. हिंदी भाषाविज्ञान विशेषांक (1973) भाषा प्रौद्योगिकी. नई दिल्ली. केंद्रीय हिंदी निदेशालय.
3. धल. जी. बी. (1984). ध्वनिविज्ञान. द्वितीय संस्करण-1984. पटना. बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी.
4. जग्गी, शारदा (1973). हिंदी स्वर स्वनिमों के प्रभेदक लक्षण. हिंदी भाषाविज्ञान विशेषांक (1973), भाषा (त्रैमासिक), नई दिल्ली. केंद्रीय हिंदी निदेशालय.

5. पाण्डेय, अनिल कुमार (2014). हिंदी की ध्वनि व्यवस्था. शोधप्रेरक, अंतरराष्ट्रीय पत्रिका. ISSN-2231413X. जुलाई-2014. लखनऊ : वीर बहादुर सेवा संस्थान.
6. भोलानाथ तिवारी (2012). भाषाविज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा. नई दिल्ली. किताबघर.
7. शर्मा, देवेन्द्रनाथ, शर्मा, दिप्ति (2001). भाषाविज्ञान की भूमिका. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन.
8. Jones Daniel (1956). An Outline of English Phonetics. Cambridge.
9. Jones D. (1950). The Phoneme, its Nature & use. Cambridge.
10. Chatterji S.K. (1957). Phonetic Transcriptions in Indian Languages. Indian Linguistics, Vol.17, June 1957.

❖❖❖

खण्ड – 2 : हिन्दी भाषा-संरचना

इकाई – 2 : शब्द संरचना

इकाई की रूपरेखा

2.2.0. उद्देश्य कथन
2.2.1. प्रस्तावना
2.2.2. शब्द संरचना
2.2.3. शब्द के प्रकार
    2.2.3.1. अर्थ की दृष्टि से शब्द के प्रकार
    2.2.3.2. प्रयोग की दृष्टि से शब्द के प्रकार
    2.2.3.3. रूपिमिक संख्या की दृष्टि से शब्द के प्रकार
    2.2.3.4. निर्माण प्रक्रिया की दृष्टि से शब्द के प्रकार
2.2.4. निर्मित शब्दों की संरचना का विश्लेषण
    2.2.4.1. उपसर्गयुक्त शब्द
    2.2.4.2. प्रत्ययय़ुक्त शब्द
    2.2.4.3. उपसर्ग और प्रत्ययय़ुक्त शब्द
    2.2.4.4. सन्धिकृत शब्द
    2.2.4.5. सामासिक शब्द
    2.2.4.6. अन्य शब्द
2.2.5. पाठ-सार
2.2.6. बोध प्रश्न
2.2.7. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

2.2.0. उद्देश्य कथन

भाषा में 'स्वनिम' से लेकर 'प्रोक्ति' तक विविध भाषिक इकाइयाँ (स्वनिम, रूपिम, शब्द / पद, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य और प्रोक्ति) पाई जाती हैं। इनमें 'शब्द' वह केन्द्रीय इकाई है, जिसका बाह्य संसार में अपना एक अर्थ होता है। शब्द केवल एक इकाई नहीं है, बल्कि यह एक भाषिक स्तर है जहाँ सार्थक खण्डों की एक व्यवस्था भी कार्य करती है। प्रस्तुत पाठ में शब्द संरचना के स्तर पर सार्थक खण्डों की व्यवस्था का परिचय कराया जाएगा। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. शब्द संरचना का तात्पर्य समझ सकेंगे।
ii. शब्द के प्रकारों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
iii. मूल शब्द और निर्मित शब्द में अन्तर कर सकेंगे।
iv. हिन्दी के निर्मित शब्दों की संरचना का विश्लेषण कर सकेंगे।

2.2.1. प्रस्तावना

भाषा एक व्यवस्था है जिसके माध्यम से ध्वनि प्रतीकों द्वारा विचार करने और विचारों को आपस में सम्प्रेषित करने की सुविधा प्राप्त होती है। इसमें एक ध्यान देने वाली बात यह है कि हम बोलने और सुनने में प्रयोग तो 'ध्वनि' का करते हैं, किन्तु सम्प्रेषण 'अर्थ' का होता है, जबकि ध्वनियाँ स्वयं में अर्थहीन होती हैं। अतः प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि तब ध्वनियों के माध्यम से अर्थ का सम्प्रेषण कैसे हो जाता है ? इसका उत्तर है – "ध्वनियाँ विविध भाषिक स्तरों पर संरचित होकर 'वाक्य' नामक सम्प्रेषणात्मक इकाई का निर्माण करती हैं।" वाक्यों में शब्द लगे होते हैं। शब्दों का अपना अर्थ तो होता है, किन्तु वे वाक्य में जाकर ही सम्प्रेषणीय बन पाते हैं। भाषा में वाक्य से बड़ी इकाई 'प्रोक्ति' पाई जाती है। इस प्रकार प्राप्त होने वाले भाषा के स्तर निम्नलिखित हैं –

स्वनिम →रूपिम → शब्द / पद → पदबंध →उपवाक्य →वाक्य →प्रोक्ति

इनमें स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि 'शब्द' केन्द्रीय इकाई है। भाषाई स्तरों में 'शब्द' रूपिम से बड़ी और पदबंध से छोटी इकाई है। शब्दार्थ की दृष्टि से देखा जाए तो शब्द 'स्वतन्त्र अर्थ को धारण करने वाली इकाई' है। वाक्य में प्रयुक्त होने पर शब्द 'पद' बन जाते हैं। इन सब बिन्दुओं की ओर संकेत करते हुए प्रस्तुत पाठ में 'हिन्दी की शब्द-संरचना' का विस्तृत विवेचन किया जाएगा।

2.2.2. शब्द संरचना

'शब्द' वह ध्वनि समूह है, जिसका अपना एक अर्थ होता है। एक ध्वनि वाले कुछ शब्दों को छोड़ दिया जाए तो सामान्यतः शब्द एक से अधिक ध्वनियों से निर्मित होते हैं। ध्वनियों का अपना कोई अर्थ नहीं होता। किन्तु किसी भी भाषा में बहुत सारे शब्द एकाधिक सार्थक खण्डों से भी मिलकर बने होते हैं। जिन शब्दों के और अधिक सार्थक खण्ड नहीं किये जा सकते, वे 'मूल शब्द' (Root Word) कहलाते हैं। भाषाविज्ञान में 'रूपिम' की संकल्पना दी गई है। सभी मूल शब्द और उपसर्ग / प्रत्यय रूपिम होते हैं। जिन शब्दों में एक से अधिक सार्थक खण्ड मिले होते हैं, वे 'निर्मित / व्युत्पादित शब्द' (Derived Word) कहलाते हैं। निर्मित शब्दों में प्रयुक्त सार्थक घटकों की व्यवस्था उनकी 'शब्द संरचना' है। हिन्दी की शब्द संरचना को समझने के लिए हिन्दी के निर्मित शब्दों में लगने वाले सार्थक खण्डों और उनकी व्यवस्था का विश्लेषण किया जाता है।

2.2.3. शब्द के प्रकार

शब्द पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है, जैसे – अर्थ की दृष्टि से, प्रकार्य की दृष्टि से, रूपिमिक संख्या की दृष्टि से और संरचना की दृष्टि से। इन्हें संक्षेप में इस प्रकार देखा जा सकता है –

2.2.3.1. अर्थ की दृष्टि से शब्द के प्रकार

इस आधार पर शब्द के दो प्रकार किये जाते हैं –

(क) कोशीय शब्द : वे शब्द जिनका कोशीय अर्थ होता है। अर्थात् जो शब्द बाह्य संसार में एक अर्थ या सन्दर्भ रखते हैं, कोशीय शब्द होते हैं, जैसे – घर, अच्छा, खेलना आदि।

(ख) व्याकरणिक शब्द : वे शब्द हैं जिनका कोशीय अर्थ नहीं होता है और जो कोशीय शब्दों को आपस में जोड़कर वाक्य को व्याकरणिक बनाने के लिए प्रयुक्त होते हैं, व्याकरणिक शब्द कहलाते हैं, जैसे– परसर्ग (ने, को, से, में पर), सहायक क्रियाएँ (है, हैं, था, थी, थे) आदि।

2.2.3.2. प्रयोग की दृष्टि से शब्द के प्रकार

प्रयोग के आधार पर शब्द को दो रूपों में देखा जा सकता है –

(क) शब्द : शब्द वह भाषिक इकाई है जिसका बाह्य संसार (मनःमस्तिष्क) में एक स्वतन्त्र अर्थ होता है।

(ख) पद : पद वह भाषिक इकाई है जिसका वाक्य में स्वतन्त्र व्यवहार होता है। वाक्य में प्रयुक्त होकर शब्द ही पद बन जाते हैं।

2.2.3.3. रूपिमिक संख्या की दृष्टि से शब्द के प्रकार

किसी भाषा की लघुतम अर्थवान् इकाई रूपिम (morpheme) है। रूपिमिक संख्या की दृष्टि से भी शब्द के दो प्रकार किये जा सकते हैं –

(क) एकरूपिमक : वे शब्द जिनमें एक ही रूपिम हो, एकरूपिमिक शब्द कहलाते हैं। सभी मूल शब्द एकरूपिमिक होते हैं।

(ख) बहुरूपिमिक : वे शब्द जिनमें एक से अधिक रूपिम हों, बहुरूपिमिक शब्द कहलाते हैं। सभी निर्मित शब्द बहुरूपिमिक होते हैं।

2.2.3.4. निर्माण प्रक्रिया की दृष्टि से शब्द के प्रकार

संरचना की दृष्टि से शब्द मूलतः दो प्रकार के होते हैं – मूल शब्द और निर्मित शब्द। मूल शब्द एक ही अर्थवान् इकाई (रूपिम) से बने होते हैं, इसलिए उनकी संरचना नहीं होती। किन्तु निर्मित शब्दों में एक से अधिक अर्थवान् इकाइयाँ होती हैं। इसलिए उनकी संरचना होती है। निर्मित शब्दों की ही शब्द संरचना देखी जाती है। निर्माण प्रक्रिया की दृष्टि से ऐसे शब्दों के निम्नलिखित प्रकार किये जा सकते हैं –

01. उपसर्गयुक्त शब्द : ऐसे शब्द जो मूल शब्दों के साथ उपसर्ग जोड़ने से निर्मित होते हैं, उपसर्गयुक्त शब्द कहलाते हैं, जैसे – अकाल, संरचना, विकास आदि।
02. प्रत्यययुक्त शब्द : वे शब्द जो मूल शब्दों के साथ प्रत्यय जोड़ने से निर्मित होते हैं, प्रत्ययुक्त शब्द कहलाते हैं, जैसे – ज्ञानी, कथनीय, बालपन आदि।
03. उपसर्ग और प्रत्ययुक्त शब्द : वे शब्द जिनमें मूल शब्दों के साथ उपसर्ग और प्रत्यय दोनों जुड़े होते हैं, उपसर्ग और प्रत्ययुक्त शब्द कहलाते हैं, जैसे – ज्ञानी, कथनीय, बालपन आदि।
04. सामासिक शब्द : जब दो शब्दों को जोड़कर एक नया शब्द बनाया जाता है, तो इस प्रकार निर्मित शब्द को सामासिक शब्द कहते हैं, जैसे – राजघर, नीलकमल आदि।
05. सन्धिकृत शब्द : दो शब्दों के योग में ध्वन्यात्मक परिवर्तन होने की स्थिति 'सन्धि' है। सन्धि द्वारा निर्मित शब्द सन्धिकृत शब्द कहलाते हैं, जैसे – विद्यालय, सूर्योदय आदि।
06. पुनरुक्त शब्द : एक ही शब्द की दो बार आवृत्ति करके बनाए गए शब्द पुनरुक्त शब्द कहलाते हैं। ऐसे शब्दों में दो प्रकार की पुनरुक्ति होती है, (i) पूर्ण पुनरुक्ति, जैसे – घर-घर, रग-रग आदि; और (ii) आंशिक पुनरुक्ति, जैसे – पानी-वानी, साथ-संगत आदि।
07. प्रतिध्वन्यात्मक शब्द (Onomatopoic Words) : बाह्य संसार की ध्वनियों का अनुकरण करके बनाए गए शब्द प्रतिध्वन्यात्मक शब्द कहलाते हैं। सामान्यतः ये शब्द पुनरुक्त होते हैं, जैसे – खट-खट, भौं-भौं, धाँय-धाँय, सर्र-सर्र आदि।
08. संक्षिप्त रूप (Abbreviation) : शब्दों के आरम्भ स्थान से कुछ वर्णों को लेकर भी बनाए गए शब्द इस श्रेणी में आते हैं। यह प्रक्रिया मूलतः अंग्रेजी जैसी भाषाओं में अपनाई जाती है, जैसे – Professor के लिए Prof., Doctor के लिए Dr. आदि। इन शब्दों का हिन्दी में भी प्रो०, डॉ० आदि के रूप में प्रचलन देखा जा सकता है।
09. संकुचित शब्द (Contraction) : यह भी अंग्रेजी (या इस प्रकार की) भाषाओं में शब्द-निर्माण की विशेषता है, जैसे, I am के लिए I'm, It is या It has के लिए It's, She will के लिए She'll आदि।
10. परिवर्णी शब्द (Acronym) : कई शब्दों वाले किसी नाम के शब्दों के प्रथम वर्णों या अक्षरों को मिलाने से बनने वाले शब्द 'परिवर्णी शब्द' कहलाते हैं। यह भी हिन्दी में अंग्रेजी के प्रभाव से आया है, जैसे – भाजपा, BBC आदि।
11. कतित रूप (Clipped form) : यह भी मुख्यतः अंग्रेजी (या इस प्रकार की) भाषाओं में शब्द-निर्माण की विशेषता है। प्रायः ऐसे शब्दों का हिन्दी में देवनागरीकरण कर लिया जाता है, जैसे – Telephone के लिए 'Phone' को हिन्दी में 'फोन', Gymnasium के लिए 'Gym' को हिन्दी में 'जिम' आदि।

अतः स्पष्ट है कि हिन्दी में कई प्रकार से शब्दों का निर्माण होता है। इनमें उपसर्ग / प्रत्यय योजन, समास और सन्धि संस्कृत से आई हुई प्रक्रियाएँ हैं तो संक्षिप्त रूप, परिवर्णी शब्द और कतित रूप जैसी प्रक्रियाएँ अंग्रेजी के प्रभाव से समाविष्ट हुई हैं। इन सभी प्रक्रियाओं से निर्मित शब्दों की शब्द संरचना का विश्लेषण आगे किया जा रहा है –

2.2.4. निर्मित शब्दों की संरचना का विश्लेषण

2.2.4.1. उपसर्गयुक्त शब्द

उपसर्ग (Prefix) वे भाषिक इकाइयाँ हैं जिन्हें शब्द के पूर्व जोड़कर नए शब्दों की रचना की जाती है। जिस शब्द के साथ उपसर्ग जुड़ते हैं, उससे ये पहले आते हैं। अतः इनका सूत्र इस प्रकार दिया जा सकता है –

उपसर्ग	+	शब्द	=	निर्मित शब्द
अ	+	भाव	=	अभाव
अति	+	अधिक	=	अत्यधिक

हिन्दी में निम्नलिखित प्रकार के उपसर्ग प्राप्त होते हैं –

1. तत्सम उपसर्ग : संस्कृत के कुछ उपसर्ग हिन्दी में ज्यों-के-त्यों आ गए हैं। ऐसे उपसर्गों को तत्सम उपसर्ग कहा जाता है। हिन्दी में निम्नलिखित तत्सम उपसर्ग हैं –

अति, अधि, अनु, अप, अभि, अव, आ, उत्, उप, दुर्, दुस्, निर्, निस्, नि, परा, परि, प्र, प्रति, वि, सम्, सु

2. तद्भव उपसर्ग : हिन्दी में कुछ ऐसे उपसर्ग हैं, जो संस्कृत उपसर्गों ध्वन्यात्मक दृष्टि से कुछ परिवर्तित रूप हैं। इन्हें तद्भव उपसर्ग भी कहते हैं, जो इस प्रकार हैं –

अ, अन, कु, दु, नि, औ, भर, सु, अध, उन, पर, बिन

3. अरबी / फ़ारसी उपसर्ग : हिन्दी में अरबी / फ़ारसी भाषाओं से आए उपसर्ग इस प्रकार हैं –

कम, खुश, गैर, ना, ब, बा, बद, बे, ला, सर, हम, हर

4. अंग्रेजी उपसर्ग : हिन्दी में अंग्रेजी शब्दों का प्रचलन पिछले कुछ दशकों से तेजी से बढ़ा है। उन शब्दों के साथ कुछ उपसर्ग भी आए हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं –

सब, डिप्टी, वाइस, जनरल, चीफ़, हेड

इसी प्रकार कुछ हिन्दी में संस्कृत के कुछ ऐसे अव्यय शब्द, जैसे – अधः, अन्तः, अ, चिर, पुनर् आदि हैं जो उपसर्ग की तरह प्रयुक्त होते हैं। प्रत्येक उपसर्ग का अपना एक अर्थाभाव होता है। जब वह किसी शब्द के साथ जुड़ता है तो उस उपसर्ग के जुड़ने से निर्मित शब्द में उपसर्ग का भाव आ जाता है। उदाहरण के लिए कुछ उपसर्गों को देख सकते हैं –

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अति	अधिक, बहुत	अत्यधिक, अत्यन्त, अतिरिक्त, अतिशय
अधि	ऊपर, श्रेष्ठ	अधिकार, अधिपति, अधिनायक
अनु	पीछे, समान	अनुचर, अनुकरण, अनुसार, अनुशासन
अप	बुरा, हीन	अपयश, अपमान, अपकार

इसी प्रकार सभी उपसर्गों के अर्थ और प्रयोग देखे जा सकते हैं। शब्दवर्ग की दृष्टि से भी उपसर्गों को वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे – संज्ञा से विशेषण बनाने वाले, विशेषण से संज्ञा बनाने वाले, जातिवाचक संज्ञा से भाववाचक संज्ञा बनाने वाले, विशेषण से क्रियाविशेषण बनाने वाले आदि।

उपसर्ग का स्थान

उपसर्ग द्वारा निर्मित शब्दों की संरचना में यह देखा जाता है कि वे शब्दों के साथ कितने स्थान पूर्व तक जुड़ सकते हैं ? हिन्दी में उपसर्ग सामान्यतः दो स्थान पूर्व तक जुड़ते हैं –

(क) प्रथम पूर्वस्थान : प्रथम पूर्वस्थान पर सभी उपसर्ग आते हैं। उदाहरण – वि + कार = विकार, सु + कर्म = सुकर्म आदि।

(ख) द्वितीय पूर्व स्थान : द्वितीय पूर्वस्थान से तात्पर्य है एक उपसर्ग जुड़े हुए शब्द में एक और उपसर्ग जोड़ने का स्थान। हिन्दी में दो उपसर्गों से बहुत सारे शब्द निर्मित होते हैं, जैसे – उप + विभाग = उपविभाग, अति + सजग = अतिसजग आदि। किन्तु प्रथम पूर्वस्थान पर कौन-सा उपसर्ग होने पर द्वितीय पूर्वस्थान पर कौन-सा उपसर्ग आएगा, यह शोध का विषय है, जैसे – 'उप + विभाग' तो होता है किन्तु 'वि + उपभाग' नहीं होता।

2.2.4.2. प्रत्यययुक्त शब्द

प्रत्यय (Suffix) वे बद्ध रूपिम हैं, जो किसी शब्द के अन्त में जुड़कर नए शब्द का निर्माण करते हैं। हिन्दी में प्रत्यय दो प्रकार के हैं – व्युत्पादक (Derivational) और रूपसाधक (Inflectional)। व्युत्पादक प्रत्यय (Derivational Suffix) वे प्रत्यय हैं, जिनके द्वारा नए कोशीय शब्द निर्मित होते हैं। रूपसाधक प्रत्यय (Inflectional Suffix) वे प्रत्यय हैं, जिनके द्वारा किसी शब्द के विविध व्याकरणिक रूप निर्मित होते हैं। व्युत्पादक प्रत्ययों का अध्ययन 'शब्द संरचना' का विषय है और रूपसाधक प्रत्ययों का अध्ययन 'रूप संरचना' का। प्रत्यय शब्द के अन्त में लगते हैं। अतः इनका सूत्र इस प्रकार से दिया जा सकता है –

शब्द	+	प्रत्यय	=	निर्मित शब्द
गर्म	+	आहट	=	गर्माहट
खाट	+	ओला	=	खटोला

उपसर्गों की तरह प्रत्ययों के भी चार वर्ग किये जा सकते हैं –

1. तत्सम प्रत्यय : संस्कृत के वे प्रत्यय जो हिन्दी में ज्यों-के-त्यों आ गए हैं, तत्सम प्रत्यय कहलाते हैं। इन प्रत्ययों के दो वर्ग किये गए हैं – कृत प्रत्यय, जैसे – -अक (लेखक), -अन (लेखन), आदि; तद्धित प्रत्यय, जैसे – -आहट (घबराहट), -ई (सुंदरी) आदि। कृत प्रत्यय धातुओं के साथ जोड़े जाते हैं, जबकि तद्धित प्रत्यय नाम पदों के साथ।
2. तद्भव प्रत्यय : हिन्दी में कुछ तद्भव प्रत्यय भी पाए जाते हैं, जैसे – -आई (पंडिताई), -आलू (दयालू) आदि।
3. देशज प्रत्यय : कुछ प्रत्यय देशज प्रयोगों से हिन्दी में आए हैं, जैसे – -अक्कड़ (पियक्कड़), -आटा (फर्राटा) आदि।
4. अरबी / फ़ारसी प्रत्यय : कुछ अरबी / फ़ारसी भाषाओं के कुछ प्रत्यय भी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं, जैसे – -आना (याराना), -खोर (आदमखोर) आदि।

शब्दों के साथ लगने के बाद नए शब्दों में प्रत्ययों का अर्थ या भाव समाहित हो जाता है, उदाहरण के लिए कुछ को देखा जा सकता है –

प्रत्यय	**अर्थ**	**उदाहरण**
अंत	किया हुआ	गढ़ंत, बढ़ंत
आ	स्त्रीलिंग प्रत्यय	प्रिया, बछिया
आऊ	वाला	टिकाऊ, थकाऊ
त्व	भाव	मातृत्व, नेतृत्व

इसी प्रकार सभी प्रत्ययों के अर्थ और प्रयोग देखे जा सकते हैं। शब्दवर्ग की दृष्टि से भी प्रत्ययों को वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे – संज्ञा से विशेषण बनाने वाले, विशेषण से संज्ञा बनाने वाले, जातिवाचक संज्ञा से भाववाचक संज्ञा बनाने वाले, पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने वाले, क्रिया से संज्ञा बनाने वाले, क्रिया से विशेषण बनाने वाले, विशेषण से क्रियाविशेषण बनाने वाले आदि।

प्रत्यय का स्थान

किसी भी मूल शब्द के साथ प्रत्यय मूल शब्द के बाद मुख्यतः चार स्थान तक जुड़ सकतेहैं। इन्हें निम्नलिखित प्रकार से देखा जा सकता है –

(क) प्रथम पश्च स्थान : किसी शब्द के तुरंत बाद प्रयुक्त होने का स्थान प्रथम पश्च स्थानहै। इस स्थान पर प्रत्ययों को जोड़कर सर्वाधिक शब्दों का निर्माण किया जाता है, जैसे – गर्म + ◌ी = गर्मी, लेख + अक = लेखक, मानव + ता = मानवता आदि।

(ख) द्वितीय पश्च स्थान : किसी शब्द के बाद एक प्रत्यय लग जाने बाद प्रयुक्त होने का स्थान द्वितीय पश्च स्थान है, जैसे – वन्दन (वन्द +न) + ीय = वन्दनीय, भारतीय (भारत + ीय) + ता = भारतीयता आदि।

(ग) तृतीय पश्च स्थान : किसी शब्द के बाद दो प्रत्यय लग जाने बाद प्रयुक्त होने का स्थान तृतीय पश्च स्थान है, जैसे – भारतीयता (भारत + ीय+ ता) + वाद = भारतीयतावाद।

(घ) चतुर्थ पश्च स्थान : किसी शब्द के बाद तीन प्रत्यय लग जाने बाद प्रयुक्त होने का स्थान चतुर्थ पश्च स्थान है, जैसे – भारतीयतावाद (भारत + ीय+ ता+ वाद) से भारतीयतावादी। चार स्थानों तक प्रत्ययों के जुड़ने से बनने वाले शब्द कम ही होते हैं।

2.2.4.3. उपसर्ग और प्रत्ययायुक्त शब्द

शब्दों के साथ उपसर्ग और प्रत्यय जुड़ने की ऐसी स्थिति नहीं है कि किसी शब्द के साथ उपसर्ग जुड़ जाने पर प्रत्यय नहीं जुड़ेगा अथवा प्रत्यय जुड़ जाने पर उपसर्ग नहीं जुड़ेगा, बल्कि प्रत्ययायुक्त शब्द में उपसर्ग और उपसर्गायुक्त शब्द में प्रत्यय जुड़ते हैं। वे शब्द जिनमें उपसर्ग और प्रत्यय दोनों जुड़े होते हैं, उपसर्ग और प्रत्ययायुक्त शब्द कहलाते हैं। इनके मूलतः तीन वर्ग किये जा सकते हैं –

(क) उपसर्ग + प्रत्ययायुक्त शब्द : वे शब्द जिनमें पहले से प्रत्यय जुड़े होते हैं, बाद में उपसर्ग जोड़े जाते हैं, इस वर्ग में आते हैं, जैसे – अ + भारतीय = अभारतीय। ऐसे शब्दों में प्रत्यय हटा देने पर उपसर्ग का योग सम्भव नहीं होता, जैसे – अ + भारत से 'अभारत' नहीं बना सकते।

(ख) उपसर्गायुक्त शब्द + प्रत्यय : वे शब्द जिनमें पहले से उपसर्ग जुड़े होते हैं, बाद में प्रत्यय जोड़े जाते हैं, इस वर्ग में आते हैं, जैसे – निषेध + आत्मक = निषेधात्मक। ऐसे शब्दों में उपसर्ग हटा देने पर प्रत्यय का योग सम्भव नहीं होता, जैसे – षेध + आत्मक से 'षेधात्मक' नहीं बना सकते।

(ग) उपसर्ग + शब्द + प्रत्यय : वे शब्द जिनमें उपसर्ग और प्रत्यय स्वतन्त्र होते हैं, जैसे – 'वि + देश + ई = विदेशी। ऐसे शब्दों में से उपसर्ग या प्रत्यय हटा देने पर शब्द प्रभावित नहीं होता, जैसे – केवल 'वि+ देश' से 'विदेश' अथवा 'देश + ई' से देशी बना सकते हैं।

2.2.4.4. सन्धिकृत शब्द

जब दो शब्दों को मिलाने पर ध्वन्यात्मक परिवर्तन भी होता है तो इस ध्वनि-परिवर्तन को सन्धि कहते हैं। यह परिवर्तन सामान्यतः प्रथम शब्द के अन्तिम वर्ण और द्वितीय शब्द के प्रथम वर्ण में होता है। वैसे इसके कुछ अपवाद (जैसे – घुड़दौड़) भी हैं, जिनमें शब्द के अंदर सन्धि हुई है। शब्द के बाहर और अंदर होने वाले परिवर्तन के आधार पर वर्तमान में सन्धि के दो वर्ग किये जा रहे हैं – बाह्य सन्धि और आन्तरिक / आभ्यन्तर सन्धि। हिन्दी में सन्धि मूलतः संस्कृत से ही आईहै। अतः संस्कृत व्याकरण परम्परा के आधार पर सन्धि के निम्नलिखित प्रकार किये जाते हैं –

(क) स्वर सन्धि : जब दो शब्दों का योग करने पर स्वरों में परिवर्तन होता है तो इस सन्धि को स्वर सन्धि कहते हैं। इसके चार प्रकार हैं –

(i) दीर्घ सन्धि –

(अ+अ/अ+आ/आ+आ = आ)	देव + आलय	= देवालय
(इ+इ/इ+ई/ई+ई =ई)	गिरि + ईश	= गिरीश
(उ+उ/उ+ऊ/ऊ+ऊ = ऊ)	भानु+उदय	= भानूदय

(ii) गुण सन्धि –

(अ+ई/आ+ई = ए)	महा+ई	= महेश
(अ +उ/आ+उ = ओ)	महा+उत्सव	= महोत्सव

(iii) वृद्धि सन्धि –

(अ + ऐ = ऐ)	मत + ऐक्य	= मतैक्य
(अ + औ = औ)	परम + औषध	= परमौषध

(iv) यण सन्धि –

(इ + आ = या)	इति + आदि	= इत्यादि

(ख) व्यंजन सन्धि : जब दो शब्दों का योग करने पर व्यंजनों में परिवर्तन होता है तो इस सन्धि को व्यंजन सन्धि कहते हैं। इसके कुल 12 प्रकार किये गए हैं, जैसे –

(i) क, च, ट, प का ग, ज, ड, ब, जैसे – वाक् + ईश = वागीश
(नियम- अनुनासिक के अलावा कोई घोष ध्वनि आने पर।)

(ii) त् का द्, जैसे – सत् + बुद्धि = सद्बुद्धि
(नियम- त' के बाद किसी स्वर या 'ग, घ, द, ब, भ, य, र,व' के आने पर।)

इसी प्रकार विभिन्न स्थितियों में व्यंजनों में परिवर्तन देखा जा सकता है।

(ग) विसर्ग सन्धि : विसर्ग के बाद विभिन्न प्रकार की ध्वनियों के आने से होने वाले वर्ण परिवर्तन को विसर्ग सन्धि कहते हैं। इसमें सात प्रकार के परिवर्तन होते हैं, जैसे –

विसर्ग के बाद 'अ' का 'ओ' में परिवर्तन (मनः + बल = मनोबल)

'र' में परिवर्तन (दुः + उपयोग = दुरुपयोग)

सन्धि को भी समास का एक उपप्रकार माना गया है क्योंकि सन्धि में भी मूल प्रक्रिया दो शब्दों को जोड़ने की ही होती है, इसमें शब्द योग के साथ-साथ ध्वनि-परिवर्तन भी होता है। अतः यह प्रक्रिया शब्द और ध्वनि दोनों से जुड़ी हुई है। इसलिए कुछ विद्वान इसे ध्वनि-संरचना के अन्तर्गत भी रखते हैं। 'सन्धि' मूलतः ध्वनि संरचना और शब्द संरचना के बीच की कड़ी है जिसका अध्ययन आधुनिक भाषाविज्ञान में स्वनिमविज्ञान (Phonology / Phonemics) और रूपविज्ञान (Morphology) की संयुक्त शाखा रूपस्वनिमविज्ञान (Morpho-phonology / Morphophonemics) के अन्तर्गत किया जाता है।

2.2.4.5. सामासिक शब्द

दो या दो से अधिक शब्दों को जोड़कर नया स्वतन्त्र शब्द बनाने की प्रक्रिया समास है। समास द्वारा निर्मित शब्द को सामासिक शब्द कहते हैं। हिन्दी में समास के माध्यम से अनेक शब्दों का निर्माण होता है। इस प्रक्रिया में दो शब्द आपस में जुड़ते हैं तथा एक नए अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं। आपस में जुड़ने वाले शब्दों के बीच कोई प्रत्यय आदि दिखाई नहीं पड़ता है किन्तु उन शब्दों के बीच किसी-न-किसी विभक्ति का लोप होता है। समास द्वारा निर्मित शब्दों को अलग-अलग विश्लेषित किया जा सकता है। किसी सामासिक शब्द को विश्लेषित करने की प्रक्रिया को 'समास-विग्रह' कहते हैं। समास के निम्नलिखित प्रकार किये गए हैं –

1. **अव्ययीभाव समास** : वह समास जिसमें पहला पद प्रधान होता है और पूरा शब्द क्रियाविशेषण का कार्य करता है, अव्ययीभाव समास है, जैसे – यथासम्भव, प्रतिपल, भरसक आदि।
2. **तत्पुरुष समास** : वह समास जिसमें दूसरा पद प्रधान होता है, तत्पुरुष समास कहलाता है। इस समास में पहला शब्द अधिकांशतः संज्ञा या विशेषण होता है और उसके विग्रह में इस शब्द के साथ 'कर्त्ता और सम्बोधन' के अलावा सभी कारक सम्बन्ध प्राप्त होते हैं। उदाहरणार्थ – राजमाता (राजा की माता), स्वर्गदूत (स्वर्ग का / से आया हुआ दूत) आदि। तत्पुरुष के मुख्यतः दो भेद हैं – व्याधिकरण तत्पुरुष और समानाधिकरण तत्पुरुष। समानाधिकरण तत्पुरुष को ही कर्मधारय समास कहा गया है।
3. **कर्मधारय समास** : जिस समास के विग्रह में दोनों घटक शब्दों में एक ही विभक्ति पाई जाती है, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इसके कई उपभेद हैं, जिन्हें मुख्यतः दो वर्गों में रखा गया है – विशेषतावाचक कर्मधारय, जैसे – महाजन, पुरुषोत्तम आदि; उपमावाचक कर्मधारय, जैसे – चन्द्रमुखी, चरणकमल आदि।
4. **द्वन्द्व समास** : जिस समास में दो पद मिलकर एक ही इकाई का कार्य करते हैं, उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। इसके मुख्यतः तीन भेद किये गए हैं – इतरेतर द्वन्द्व, जैसे – भाई-बहन, रोटी-कपड़ा आदि; समाहार द्वन्द्व, जैसे – चाय-पानी, घर-बार आदि; और वैकल्पिक द्वन्द्व, जैसे – कम-अधिक, थोड़ा-बहुत आदि।
5. **बहुव्रीहि समास** : वह समास जिसमें कोई भी पद प्रधान नहीं होता और जिसमें दोनों पदों के अर्थ की जगह एक नए अर्थ की प्राप्ति होती है, बहुव्रीहि समास कहलाता है, जैसे – अनन्त (जिसका कोई अन्त न हो = आकाश / ईश्वर), लम्बोदर (लम्बा है उदर जिसका = गणेश) आदि।

6. **द्विगु समास** : वह समास जिसमें पहला पद संख्यावाची शब्द होता है, द्विगु समास कहलाता है, जैसे – त्रिभुवन, पंचवटी, अष्टाध्यायी, दोपहर, चौमासा, सतसई, चौराहा, दुपट्टा, चहारदिवारी आदि।

हिन्दी में समास के माध्यम से संज्ञा, जैसे – ताजमहल, राजदरबार आदि; सर्वनाम, जैसे – कोई-न-कोई आदि; विशेषण, जैसे – मूढ़मति, क्षमाप्रार्थी आदि; क्रिया, जैसे – खाना-पीना, दौड़-भाग आदि; क्रियाविशेषण, जैसे – रातोंरात, सुबह-शाम आदि सभी शब्दवर्गों के शब्द बनते हैं। भोलानाथ तिवारी द्वारा 'हिन्दी भाषा की संरचना' में वाक्य स्तर पर समासों की भी बात की गई है, जैसे – दहीबड़ा – बड़ा जो दही में पड़ा हो, डाकघर – घर जो डाक के लिए हो आदि। अर्थ की दृष्टि से भी सामासिक शब्दों को दो वर्गों में रखा जा सकता है, एक – वे सामासिक शब्द जिनमें मूल शब्दों का अर्थ परिवर्तित नहीं होता, जैसे – देशभक्ति, यथाशीघ्र आदि; दो – वे सामासिक शब्द जिनमें मूल शब्दों का अर्थ परिवर्तित हो जाता है, जैसे – बारहसिंहा, दशानन, जलपान आदि।

2.2.4.6. अन्य शब्द

हिन्दी में अधिकांश शब्द उपसर्ग / प्रत्यय योजन, समास और सन्धि से बनते हैं, किन्तु इनके अलावा और भी कुछ युक्तियाँ हैं, जिनसे शब्दों का निर्माण होता है। इन युक्तियों से बनने वाले शब्दों की चर्चा ऊपर 'शब्द के प्रकार' के अन्तर्गत की जा चुकी है। उनकी संरचना के विश्लेषण सम्बन्धी प्रमुख बातें इस प्रकार हैं –

(क) पुनरुक्त शब्द

हिन्दी में कई प्रकार से पुनरुक्त शब्दों की रचना होती है, जैसे –

(i) पूर्ण पुनरुक्ति – संज्ञा, जैसे – घर-घर; सर्वनाम, जैसे – मैं-मैं; क्रिया, जैसे – खा-खा; विशेषण, जैसे – सुन्दर-सुन्दर; क्रियाविशेषण, जैसे – जहाँ-जहाँ आदि।
(ii) आंशिक पुनरुक्ति – जैसे – संज्ञा, जैसे – पानी-वानी; सर्वनाम, जैसे – तुम-तड़ाम; क्रिया, जैसे – खाना-वाना; विशेषण, जैसे – सुंदर-उंदर; क्रियाविशेषण, जैसे – जहाँ-तहाँ आदि।
(iii) स्वरागम – जैसे – माल +माल = मालामाल, रात + रात- रातोंरात।
(iv) स्वर-परिवर्तन – जैसे – कट-कुट, छेड़-छाड़ आदि।
(v) व्यंजनागम – जैसे – इमली-शिमली आदि।
(vi) व्यंजन-परिवर्तन – जैसे – मोटा-झोटा, लटके-झटके आदि।
(vii) बीच में उपसर्ग – जैसे – वाद-विवाद, दिन-प्रतिदिन आदि।
(viii) बीच में परसर्ग – जैसे – गाँव-का-गाँव, जैसा-का-वैसा आदि।
(ix) बीच में 'न' – जैसे – कोई-न-कोई, किसी-न-किसी आदि।

इस प्रकार पुनरुक्त शब्दों की संरचना का विश्लेषण किया जा सकताहै।

(ख) प्रतिध्वन्यात्मक शब्द

प्रतिध्वन्यात्मक शब्द भी पुनरुक्त शब्द ही होते हैं, जैसे – खट-खट, भौं-भौं, धाँय-धाँय, सर्र-सर्र आदि।

(ग) संक्षिप्त रूप और संकुचित शब्द

ये दोनों मूलतः अंग्रेजी जैसी भाषाओं में से सम्बद्ध हैं। इसलिए हिन्दी में इनकी संरचना का विश्लेषण अपेक्षित नहीं है।

(घ) परिवर्णी शब्द

परिवर्णी शब्दों का निर्माण अंग्रेजी के प्रभाव से हिन्दी में आया है, किन्तु आज इनका प्रयोग व्यापक पैमाने पर हो रहा है। परिवर्णी शब्दों की संरचना को उनमें आए प्रत्येक वर्ण के पूर्ण शब्द को ज्ञात करके विश्लेषित किया जा सकता है, जैसे – भाजपा = भारतीय जनता पार्टी, रासेयो = राष्ट्रीय सेवा आयोग। रोमन वर्णों से बने परिवर्णी शब्दों को अंग्रेजी शब्दों के माध्यम से जाना जा सकता है, जैसे – UGC (यू.जी.सी.) = University Grants Commition आदि। अंग्रेजी के कुछ परिवर्णी शब्दों में एक ही शब्द के एकाधिक वर्ण लिए गए रहते हैं, इसलिए ऐसे शब्दों में प्रत्येक वर्ण (letter) का विस्तार अपेक्षित नहीं होता, जैसे – M.Phil. (एम.फिल.) = Master of Philosophy. इसी प्रकार कुछ शब्दों में क्रम आगे-पीछे भी किया जा सकता है, जैसे – Ph.D. = Doctorate/Doctor of Philosophy.

(ङ) कतित रूप

ऐसे शब्दों का हिन्दी में निर्माण के बजाए देवनागरीकरण ही किया जाता है। इसलिए इनकी संरचना के सम्बन्ध में भी यहाँ विस्तार नहीं दिया जा रहा है।

2.2.5. पाठ-सार

शब्द भाषा की वह आधारभूत इकाई है, जो स्वतन्त्र रूप से अर्थ को धारण करती है। यह भाषिक इकाई के साथ-साथ एक भाषिक स्तर भी है। निर्माण की दृष्टि से हिन्दी शब्दों के दो वर्ग किये जा सकते हैं – मूल शब्द और निर्मित शब्द। मूल शब्दों में एक ही सार्थक खण्ड होता है, इसलिए उनकी संरचना का अध्ययन नहीं किया जाता। निर्मित शब्दों की संरचना का विश्लेषण किया जा सकता है। हिन्दी में कई प्रकार से शब्दों का निर्माण होता है, जिनमें उपसर्ग योग, प्रत्यय योग, उपसर्ग और प्रत्यय योग, समास, सन्धि, पुनरुक्ति, संक्षिप्तीकरण, कतन आदि प्रमुख हैं। इन सभी विधियों से निर्मित शब्दों की संरचना का विश्लेषण शब्दों के निर्माण में लगे घटकों और उनकी व्यवस्था को प्राप्त करके किया जा सकता है।

हिन्दी में सामान्यतः उपसर्ग दो स्थानों तक और प्रत्यय चार स्थानों तक जुड़ते हैं। एक ही शब्द में उपसर्ग और प्रत्यय दोनों आ सकते हैं। दो स्वतन्त्र शब्दों को जोड़कर भी हिन्दी में शब्द निर्माण किया जाता है। जब दो शब्दों का योग होने पर शब्दों में कोई ध्वन्यात्मक परिवर्तन नहीं होता है तो उसे समास और ध्वन्यात्मक परिवर्तन होता है तो उसे सन्धि कहते हैं। इनके विविध प्रकार भी होते हैं, जिनका परिचय प्रस्तुत पाठ में दिया गया है। इन उपसर्ग, प्रत्यय, समास और सन्धि के अलावा कुछ अन्य विधियों से निर्मित शब्द भी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। इन विधियों में पुनरुक्ति, संक्षिप्ति और कतन प्रमुख हैं। हिन्दी में पुनरुक्ति कई प्रकार से होती है। संक्षिप्ति और कतन मूलतः अंग्रेजी के प्रभाव से विकसित पद्धतियाँ हैं।

2.2.6. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से किसका शब्द-संरचना से सम्बन्ध नहीं है ?
   (क) स्वनिम
   (ख) रूपिम
   (ग) शब्द
   (घ) प्रत्यय

   सही उत्तर : (क) स्वनिम

2. इनमें से कौन-सा अर्थ की दृष्टि से शब्द का एक प्रकार नहीं है ?
   (क) कोशीय शब्द
   (ख) व्याकरणिक शब्द
   (ग) पद
   (घ) इनमें से कोई नहीं

   सही उत्तर : (ग) पद

3. इनमें से कौन-सा एक उपसर्गयुक्त शब्द है ?
   (क) विकास
   (ख) बालपन
   (ग) कथनीय
   (घ) घुड़दौड़

   सही उत्तर : (क) विकास

4. इनमें से कौन-सा एक सामासिक शब्द है ?
   (क) विकास
   (ख) बालपन
   (ग) कथनीय

(घ) घुड़दौड़

सही उत्तर : (घ) घुड़दौड़

5. इनमें से कौन-सा प्रतिध्वन्यात्मक शब्द है ?
   (क) घर-घर
   (ख) सर्र-सर्र
   (ग) रातोंरात
   (घ) पानी-वानी

सही उत्तर : (ख) सर्र-सर्र

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा के विविध स्तरों पर शब्द की स्थिति समझाइए।
2. शब्द संरचना से आप क्या समझते हैं ? संक्षेप में बताइए।
3. अर्थ की दृष्टि से शब्द के कितने प्रकार होते हैं ? उदाहरण के साथ चर्चा कीजिए।
4. प्रयोग की दृष्टि से शब्द के कितने प्रकार होते हैं ? उदाहरण के साथ चर्चा कीजिए।
5. पुनरुक्त शब्दों की संरचना को सोदाहरण समझाइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. निर्माण-प्रक्रिया की दृष्टि से शब्द के कितने प्रकार होते हैं ? उदाहरण के साथ विस्तृत चर्चा कीजिए।
2. उपसर्गयुक्त शब्दों की संरचना की सविस्तार व्याख्या कीजिए।
3. प्रत्ययों के योग से शब्द कैसे बनते हैं ? प्रत्यय के प्रकार बताते हुए सोदाहरण समझाइए।
4. सामासिक शब्दों की संरचना पर प्रकाश डालिए।
5. हिन्दी में कौन-कौन सी सन्धियाँ हैं ? टिप्पणी लिखिए।

2.2.7. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. उप्रेती, मुरारीलाल (2009). हिंदी में प्रत्यय और पश्चाश्रयी विचार. नई दिल्ली. आलेख प्रकाशन.
2. गुरु, कामताप्रसाद (2009). हिंदी व्याकरण. नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
3. तिवारी, भोलानाथ (2004). हिंदी भाषा की संरचना. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन.
4. तिवारी, भोलानाथ (2012). भाषाविज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा. नई दिल्ली. किताबघर.
5. द्विवेदी, कपिलदेव (2002). भाषाविज्ञान और भाषाशास्त्र. चौक वाराणसी. विश्वविद्यालय प्रकाशन.
6. पाण्डेय, अनिल कुमार (2010). हिंदी संरचना के विविध पक्ष नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
7. जैन, पी.सी. (2002). हिंदी प्रयोग : एक शैक्षिक व्याकरण. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन.
8. वाजपेयी, किशोरीदास (1998). हिंदी शब्दानुशासन. वाराणसी. नागरी प्रचारिणी सभा.

खण्ड – 2 : हिन्दी भाषा-संरचना

इकाई – 3 : रूप संरचना

इकाई की रूपरेखा

2.3.00. उद्देश्य कथन
2.3.01. प्रस्तावना
2.3.02. रूप-संरचना
2.3.03. रूप-संरचना और व्याकरणिक कोटियाँ
    2.3.03.1. लिंग (Gender)
    2.3.03.2. वचन (Number)
    2.3.03.3. पुरुष (Person)
    2.3.03.4. कारक (Case)
    2.3.03.5. काल (Tense)
    2.3.03.6. पक्ष (Aspect)
    2.3.03.7. वृत्ति (Mood)
    2.3.03.8. वाच्य (Voice)
2.3.04. संज्ञा शब्दों की रूप-संरचना
2.3.05. सर्वनाम शब्दों की रूप-संरचना
2.3.06. विशेषण शब्दों की रूप-संरचना
    2.3.06.1. संख्यावाची विशेषणों की रूप-संरचना
2.3.07. क्रिया शब्दों की रूप-संरचना
2.3.08. अन्य शब्दों की रूप-संरचना
2.3.09. पाठ-सार
2.3.10. बोध प्रश्न
2.3.11. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

2.3.00. उद्देश्य कथन

भाषा में 'स्वनिम' से लेकर 'प्रोक्ति' तक विविध भाषिक इकाइयाँ (स्वनिम, रूपिम, शब्द / पद, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य और प्रोक्ति) पाई जाती हैं। इनमें शब्दों / पदों के योग से वाक्य की रचना होती है। किन्तु एक शब्द के बाद दूसरे शब्द को रखने मात्र से ही वाक्य निर्मित नहीं होते, बल्कि उनके रूप में व्याकरणिक दृष्टि से कुछ परिवर्तन किये जाते हैं, जिसका अध्ययन रूप-संरचना में किया जाता है। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. रूप-संरचना की अवधारणा को समझ सकेंगे।
ii. रूप-संरचना में व्याकरणिक कोटियों की भूमिका को जान सकेंगे।
iii. संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया (विकारी शब्दों) की रूप-संरचना को देखेंगे।
iv. कुछ अन्य शब्दों की रूप-संरचना से परिचित हो सकेंगे।

2.3.01. प्रस्तावना

किसी भी भाषा में तीन इकाइयाँ आधारभूत होती हैं – ध्वनि, शब्द और वाक्य। किन्तु भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करने पर निम्नलिखित इकाइयाँ प्राप्त होती हैं –

(ध्वनि / स्वन) स्वनिम → रूपिम → शब्द / पद →पदबंध → उपवाक्य →वाक्य → प्रोक्ति

इन इकाइयों में 'स्वनिम' ध्वनि-प्रतीकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। स्वनिमों का अपना अर्थ नहीं होता, किन्तु ये अर्थभेदक होते हैं। अर्थात् ये शब्दों के बीच अर्थ में अन्तर उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। रूपिम किसी भाषा की लघुतम अर्थवान् इकाई है। रूपिमों द्वारा कोशीय और व्याकरणिक दोनों प्रकार के अर्थ व्यक्त किये जाते हैं। 'शब्द' किसी भाषा की वह इकाई है, जो स्वतन्त्र रूप से अर्थ का वहन करती है। शब्दों के साथ व्याकरणिक सूचनाएँ जुड़ने पर वे पद बन जाते हैं। आधुनिक भाषाविज्ञान में मूल शब्दों नए शब्दों और शब्दरूपों के निर्माण को दो नाम दिए गए हैं – व्युत्पादन और रूपसाधन (Derivation and Inflection)। व्युत्पादन द्वारा मूल शब्दों से नए-नए शब्दों का प्रजनन किया जाता है। रूपसाधन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोशीय शब्दों के उन रूपों को प्रजनित किया जाता है जो वाक्य में प्रयुक्त होते हैं। भारतीय वैयाकरणों द्वारा इन्हें ही 'पद' कहा गया है। इसीलिए रूपसाधन को पदसाधन भी कहा गया है। भाषाविज्ञान में रूपविज्ञान में 'रूपसाधन' के माध्यम से बनने वाले शब्द-रूपों का अध्ययन ही रूप-संरचना के अन्तर्गत आता है।

2.3.02. रूप-संरचना

ध्वनियों के योग से शब्द या पद बनते हैं और शब्दों के योग से 'वाक्य' बनते हैं। 'शब्द' किसी भाषा की वह इकाई है, जो स्वतन्त्र रूप से अर्थ का वहन करती है। उदाहरण के लिए 'पुस्तक', 'मेज' शब्दों के स्वतन्त्र अर्थ हैं। इन्हें मिलाकर वाक्य बनाया जा सकता है,किन्तु केवल शब्दों का योग वाक्य नहीं होता। जब शब्दों को वाक्य में प्रयुक्त किया जाता है, तो उनमें कुछ व्याकरणिक परिवर्तन किये जाते हैं, जिससे सम्प्रेषणीय वाक्य की रचना होती है। इन परिवर्तनों के बाद शब्द 'पद' में बदल जाते हैं।

2.3.03. रूप-संरचना और व्याकरणिक कोटियाँ

शब्दों से जब शब्दरूपों (पदों) का निर्माण किया जाता है तो शब्द में शाब्दिक अर्थ के साथ-साथ कुछ अन्य व्याकरणिक सूचनाएँ भी जुड़ जाती हैं। ये सूचनाएँ व्याकरणिक कोटियों (लिंग, वचन, पुरुष, काल, पक्ष,

वृत्ति आदि) से सम्बन्धित होती हैं। शब्द के मूल रूप में भी इनसे सम्बन्धित कुछ सूचनाएँ रहती हैं, किन्तु वाक्य में प्रयोग होने पर उनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन हो जाता है। अतः रूपसाधन शब्दों में व्याकरणिक सूचनाओं के अनुरूप परिवर्तन करने की प्रक्रिया है। अतः रूप-संरचना में रूपसाधन हेतु विभिन्न प्रकार के शब्दों के साथ लगने वाले प्रत्ययों आदि का अध्ययन करने पूर्व व्याकरणिक कोटियों का ज्ञान आवश्यक है। व्याकरणिक कोटि की सूचना में परिवर्तन से शब्द का रूप परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों को देखें –

बच्चा खाना खाता है।

बच्चे खाना खाते हैं।

उपर्युक्त वाक्यों में 'बच्चा' और 'बच्चे' शब्द 'बच्चा' कोशीय शब्द के दो रूप हैं, जो दो अलग-अलग वाक्यों में प्रयुक्त हुए हैं। इनमें शब्द के साथ ही 'लिंग' और 'वचन' सम्बन्धी सूचनाएँ निहित हैं। 'बच्चा' शब्द एकवचन, पुल्लिंग है जबकि 'बच्चे' शब्द बहुवचन पुल्लिंग है। इसी प्रकार क्रिया और विशेषण आदि विकारी शब्दवर्गों के शब्दों का भी वाक्य में प्रयोग होने पर उनके साथ व्याकरणिक कोटियों की सूचना आ ही जाती है। यहाँ ध्यान रखने वाली बात है कि यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक शब्द पर सभी व्याकरणिक कोटियों का प्रभाव हो ही। शब्द के वर्ग और उसकी प्रकृति के अनुसार सम्बन्धित व्याकरणिक कोटि का प्रभाव पड़ता है और उसका रूप परिवर्तित होता है। हिन्दी की रूप-संरचना को प्रभावित करने वाली व्याकरणिक कोटियाँ इस प्रकार हैं –

2.3.03.1. लिंग (Gender)

प्राणियों की वह प्रकृति जिससे उनके 'नर' या 'मादा' होने का बोध होता है, प्राकृतिक लिंग (Sex) है। भाषा में इसका बोधन व्याकरणिक लिंग (Gender) है। मूल रूप से लिंग के तीन प्रकारकिये जा सकते हैं – पुरुष, स्त्री और अन्य। इस आधार पर तीन लिंग होते हैं – पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग। किन्तु कुछ भाषाओं में कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं, जिनसे पुरुष और स्त्री दोनों प्रकार लिंगों का बोध होता है, जिन्हें 'उभयलिंग' कहते हैं। किन्तु इन चारों लिंगों का सभी भाषाओं में पाया जाना आवश्यक नहीं है। सभी भाषाएँ अपनी-अपनी प्रकृति और समाज-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुरूप लिंगों का बोध कराती हैं।

हिन्दी में दो लिंग पाए जाते हैं – पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। अतः इसमें नर और मादा के अलावा अन्य प्रकार के सभी शब्दों को भी इन्हीं दो लिंगों में विभक्त करके देखा जाता है। हिन्दी में लिंग के आधार पर संज्ञा, विशेषण और क्रिया के रूप प्रभावित होते हैं। इन्हें आगे देखा जाएगा।

2.3.03.2. वचन (Number)

वाक्य में प्रयुक्त शब्द द्वारा होने वाला उसकी संख्या का बोध वचन (Number) है। अधिकांश भाषाओं में वचन का विभाजन 'एक' और 'अनेक' दो रूपों में किया जाता है। इस आधार पर वचन के दो प्रकार होते हैं –

एकवचन और बहुवचन। हिन्दी में भी यही स्थिति पाई जाती है। यद्यपि संस्कृत जैसी भाषाओं में द्विवचन भी प्राप्त होता है, किन्तु हिन्दी में केवल दो ही वचन हैं। वचन के आधार पर भी हिन्दी में संज्ञा, विशेषण और क्रिया के रूप प्रभावित होते हैं। हिन्दी में 'संज्ञा' शब्दों की रूपरचना को वचन के साथ-साथ परसर्ग भी प्रभावित करते हैं।

2.3.03.3. पुरुष (Person)

पुरुष (Person) द्वारा यह ज्ञात होता है कि भाषिक उक्ति वक्ता के सम्बद्ध है या श्रोता से अथवा किसी अन्य से। यह व्याकरणिक कोटि शब्दवर्गों (या शब्दभेदों) में मुख्यतः 'सर्वनाम' से सम्बन्धित है। सभी संज्ञा शब्द सदैव अन्य पुरुष में होते हैं। पुरुष के तीन प्रकार हैं – उत्तम पुरुष या प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष, अन्य पुरुष। हिन्दी सर्वनाम तीनों पुरुषों में एकवचन और बहुवचन दोनों रूपों में पाए जाते हैं, जैसे – मैं, हम, तुम, तुम लोग, वह, वे आदि।

2.3.03.4. कारक (Case)

कारक (Case) सम्बन्ध है जो वाक्य की मुख्य क्रिया को वाक्य में आए संज्ञा पदबंधों से जोड़ता है। यह पदबंध स्तर की इकाई है। कारक को व्यक्त करने के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रत्यय, शब्द आदि प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी में इन कारक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति परसर्गों के माध्यम से होती है। संस्कृत में विभक्तियों द्वारा कारकों की अभिव्यक्ति होती थी। इसी कारण कुछ वैयाकरणों द्वारा परसर्गों को विभक्ति नाम दिया गया है। संज्ञाओं के साथ परसर्ग अलग लिखे जाते हैं और सर्वनामों के साथ जोड़कर। किन्तु परसर्गों का प्रयोग होने पर संज्ञाओं के रूप भी बदलते हैं, जैसे – लड़का का बहुवचन रूप 'लड़के' है जो परसर्ग लगने पर 'लड़कों' हो जाता है।

2.3.03.5. काल (Tense)

किसी भाषिक अभिव्यक्ति द्वारा उसमें घटित कार्य-व्यापार के समय की दी जाने वाली सूचना काल है। भिन्न भाषाओं में कालों की संख्या अलग-अलग हो सकती है। फिर भी, अधिकांश भाषाओं में तीन काल पाए जाते हैं, जो हिन्दी में भी हैं – वर्तमान काल, भूतकाल और भविष्यकाल। इसका सम्बन्ध 'क्रिया' से है। काल के आधार पर हिन्दी में केवल क्रियाओं के ही रूप प्रभावित होते हैं। इसका प्रभाव मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया दोनों पर देखा जा सकता है।

2.3.03.6. पक्ष (Aspect)

किसी काल विशेष में घटित होने वाली घटना के घटित होने की अवस्था का बोध कराने वाली व्याकरणिक कोटि पक्ष (Aspect) है। पक्ष और काल एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। काल का सम्बन्ध क्रिया के व्यापार के समय को सूचित करने से है तो पक्ष का सम्बन्ध उस समय विशेष में व्यापार के घटित होने की अवस्था

से। पक्ष के दो प्रकार हैं – पूर्ण और अपूर्ण। अपूर्ण पक्ष के कुछ उपप्रकार भी किये गए हैं, जैसे – स्थित्यात्मक, नित्य, सातत्य आदि।

2.3.03.7. वृत्ति (Mood)

विभिन्न भाषाओं में कुछ वाक्य ऐसे होते हैं जिनसे वे सूचनाएँ या क्रिया व्यापार अभिव्यक्त होते हैं जो बाह्य संसार में घटित ही नहीं हुए रहते हैं। उन्हें वक्ता द्वारा विभिन्न प्रकार के कारणों से केवल अभिव्यक्त मात्र किया जाता है। इसमें वक्ता की इच्छा हो सकती है, जैसे – 'मैं जाना चाहता हूँ।' इस वाक्य में 'जाने' का व्यापार घटित नहीं हो रहा है केवल यह वक्ता की इच्छा मात्र है। इसी प्रकार आज्ञा, निवेदन, सलाह और विवशता आदि सम्बन्धी वाक्य भी देखे जा सकते हैं। इस प्रकार के वाक्यों द्वारा व्यक्त भावों को सामूहिक रूप से वृत्ति (Mood) नाम दिया गया है । वृत्ति के 'सम्भावनार्थक, आज्ञार्थक / निवेदनार्थक, सामर्थ्यसूचक, बाध्यतासूचक, हेतुहेतुमद्भाव' प्रकार किये गए हैं।

2.3.03.8. वाच्य (Voice)

वाच्य (Voice) एक वाक्यस्तरीय व्यवस्था है जो क्रिया और वाक्य में उसके अन्विति कर्त्ता (Agreementizer) के बीच सम्बन्ध को निरूपित करती है। 'कर्त्ता' और 'कर्म' क्रिया से सीधे-सीधे जुड़े होते हैं और उसके रूप को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं। अतः 'क्रिया का रूप कर्त्ता के आधार पर निर्मित हो रहा है या कर्म के आधार पर या दोनों से नहीं' – को व्यक्त करने वाली व्याकरणिक कोटि 'वाच्य' है। इसके तीन प्रकार हैं – कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य।

2.3.04. संज्ञा शब्दों की रूप-संरचना

किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान आदि को इंगित या संकेतित करने वाले शब्दों को जिस वर्ग में रखते हैं, उसे संज्ञा (Noun) कहते हैं। हिन्दी में संज्ञा के तीन प्रकार किए हैं – व्यक्तिवाचक, जातिवाचक और भाववाचक। रूप-संरचना की दृष्टि से देखा जाए तो व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता है, क्योंकि व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ किसी का नाम होती हैं और किसी नाम पर व्याकरणिक कोटियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जातिवाचक और भाववाचक संज्ञाओं की रूप-संरचना देखी जाती है। इनमें भी दो प्रकार के शब्द पाए जाते हैं – विकारी और अविकारी।

विकारी से तात्पर्य उन शब्दों से जिनके रूप में परिवर्तन होता है और अविकारी से तात्पर्य उन शब्दों से जिनके रूप में परिवर्तन नहीं होता है। उदाहरण के लिए 'चावल' अविकारी संज्ञा है जबकि 'सब्जी' विकारी। वचन के आधार पर इनमें की स्थिति विकार देख सकते हैं –

चावल पक रहा है। (एकवचन)
सब्जी पक रही है। (एकवचन)
पूरा बाजार चावल से भरा पड़ा है। (बहुवचन)
पूरा बाजार सब्जियों से भरा पड़ा है। (बहुवचन)

हिन्दी में संज्ञाओं का रूपसाधन मुख्यतः वचन और उनकी परसर्गीय स्थिति के आधार पर होता है। वचन की दृष्टि से दो रूप होते हैं – एकवचन और बहुवचन। परसर्गीय स्थिति के आधार पर संज्ञा शब्दों के दो रूप माने गए हैं – प्रत्यक्ष रूप और तिर्यक रूप। 'प्रत्यक्ष रूप' (Direct form) का अर्थ है – शब्द का वह रूप जिसके बाद परसर्ग न आया हो, तथा 'तिर्यक/परसर्गीय रूप' (Oblique form) का अर्थ है – शब्द का वह रूप जिसके बाद परसर्ग आया हो। अब इन चारों को एक-दूसरे के साथ मिला देने पर चार रूप हो जाते हैं – एकवचन प्रत्यक्ष, एकवचन तिर्यक, बहुवचन प्रत्यक्ष और बहुवचन तिर्यक। जब शब्द का रूप परिवर्तित होता है तो उसमें सम्बन्धित सूचना आ जाती है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों को देखें –

वह लड़का घर जा रहा है।
उस लड़के को बुलाओ।
यहाँ लड़के खेल रहे हैं।
यहाँ लड़कों को खेलने दो।

इन वाक्यों में कोशीय शब्द 'लड़का' के चार रूपों – 'लड़का, लड़के, लड़के और लड़कों' का प्रयोग किया गया है। वाक्य '2' और '3' में प्रयुक्त 'लड़के' शब्द भले ही दिखने की दृष्टि से एक ही हैं, किन्तु इनका प्रयोग अलग-अलग व्याकरणिक सूचनाओं के लिए हुआ है। इन चारों शब्दों द्वारा व्यक्त व्याकरणिक सूचनाएँ इस प्रकार हैं –

लड़का : एकवचन प्रत्यक्ष
लड़के : एकवचन परसर्गीय
लड़के : बहुवचन प्रत्यक्ष
लड़कों : बहुवचन परसर्गीय

इसे एक सारिणी के रूप में निम्नलिखित प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है –

वचन	**कारक (तिर्यकता)**	
	प्रत्यक्ष	**तिर्यक**
एकवचन	लड़का	लड़के
बहुवचन	लड़के	लड़कों

लड़के शब्द 'एकवचन परसर्गीय' है या 'बहुवचन प्रत्यक्ष' का निर्धारण उसके आगे आए हुए परसर्ग से होता है। यदि शब्द के बाद परसर्ग आया हो तो वह एकवचन होगा (वाक्य– 2) और यदि नहीं आया हो तो

बहुवचन (वाक्य– 3)। इसी प्रकार सभी विकारी संज्ञा शब्दों के रूप निर्मित होते हैं। इस प्रकार के अलग-अलग रूप वाले शब्दों और उनके रूपों के संकलन को शब्दरूप सारिणी (Word form table) कहते हैं। किसी संज्ञा शब्द के कौन-कौन से शब्दरूप निर्मित होंगे यह उस शब्द के लिंग, अन्तिम वर्ण, शब्द के वाक्यात्मक व्यवहार और प्रत्यय जुड़ने की स्थिति पर निर्भर करता है। हिन्दी में कुछ विकारी शब्दों के शब्दरूप इस प्रकार से बनाए जा सकते हैं –

क्र.सं.	शब्द	एक.प्रत्यक्ष	एक.तिर्यक	बहु.प्रत्यक्ष	बहु.तिर्यक
1.	**लड़का**	लड़का	लड़के	लड़के	लड़कों
2.	**लड़की**	लड़की	लड़की	लड़कियाँ	लड़कियों
3.	**साधू**	साधू	साधू	साधू	साधुओं
4.	**सड़क**	सड़क	सड़क	सड़कें	सड़कों
5.	**भाषा/ धेनु/ माँ**	भाषा/ धेनु/ माँ	भाषा/ धेनु/ माँ	भाषाएँ/ धेनुएँ/ माँएँ	भाषाओं/ धेनुओं/ माँओं
6.	**पेड़**	पेड़	पेड़	पेड़	पेड़ों
7.	**राजा/ कीटाणु**	राजा/ कीटाणु	राजा/ कीटाणु	राजा/ कीटाणु	राजाओं/ कीटाणुओं

इसी प्रकार अलग रूप-रचना वाले अन्य शब्दों की भी सूची तैयार की जा सकती है। इनमें से प्रत्येक शब्द अपनी तरह के अन्य शब्दों का भी प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरण के लिए 'लड़का' शब्द की तरह – छाता, कपड़ा, कमरा, झोला, मेला, खाका, गाना आदि; लड़की शब्द की तरह – बकरी, खिड़की, नारी, कली, रानी आदि; साधू की तरह – बाबू, नींबू, आलू आदि; सड़क की तरह – मेज, कलम, दवात, दुकान, फाइल आदि शब्दों के रूप बनते हैं। किन-किन शब्दों के रूप एक तरह से बनते हैं, इसे भाषा व्यवहार से ही प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान में विभिन्न भाषाओं के कार्पस निर्मित किये गए हैं, जिनमें शब्दों के सभी रूपों को एक स्थान पर प्राप्त किया जा सकता है।

2.3.05. सर्वनाम शब्दों की रूप-संरचना

संज्ञा शब्दों के स्थान पर आ सकने वाले शब्दों को सर्वनाम कहते हैं। सर्वनाम वाक्य में संज्ञा का ही प्रकार्य सम्पन्न करते हैं। उनका सन्दर्भ शब्द सदैव संज्ञा होता है जो श्रोता को ज्ञात होता है अथवा ज्ञात न होने की अवस्था श्रोता उसका सन्दर्भ से अनुमान लगाता है। वाक्य स्तर पर विवेचन की दृष्टि से सर्वनामों को संज्ञा पदबंध के अन्तर्गत ही रखा जाता है। सामान्यतः किसी भी भाषा में सर्वनामों की संख्या बहुत ही सीमित होती है। हिन्दी में मूल सर्वनामों (पुरुषवाचक सर्वनामों) की संख्या मात्र 07 है जो निजवाचक, सम्बन्धवाचक, प्रश्नवाचक, निश्चयवाचक और अनिश्चयवाचक सर्वनामों को मिला देने पर लगभग 15 हो जाती है। हिन्दी के मूल सर्वनाम इस प्रकार हैं –

(1) पुरुषवाचक सर्वनाम

प्रथम / उत्तम पुरुष	–	मैं, हम
मध्यम पुरुष	–	तू, तुम और आप
अन्य पुरुष	–	वह, वे (यह, ये)

(2) निजवाचक सर्वनाम – अपना, खुद

(3) सम्बन्धवाचक सर्वनाम – जो

(4) प्रश्नवाचक सर्वनाम – क्या, कौन

(5) निश्चयवाचक सर्वनाम – यह, वह

(6) अनिश्चयवाचक सर्वनाम – कोई, कुछ

सर्वनामों में रूपसाधन परसर्गों के योग से होता है। सर्वनामों में परसर्ग जोड़े जाने के बाद कुछ रूपिमिक परिवर्तन भी होते हैं। कुछ सर्वनामों में ये परिवर्तन समान होते हैं तो कुछ में भिन्न। यह भिन्नता इतनी विविधतापूर्ण है कि सभी सर्वनामों की रूप-संरचना के विश्लेषण के लिए एक प्रतिरूप (pattern) नहीं बनाया जा सकता। चूँकि सर्वनामों की संख्या बहुत कम है, इसलिए इनके सभी रूपों को एक सारिणी के माध्यम से इस प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है –

सर्वनाम	(परसर्ग) ने, को, से, के लिए, का/की/के (रा/री/रे) में पर (+ही)
वह	वह, उस, उसने, उसको, उसे, उससे, उसका, उसकी, उसके, उसमें, उसपर, उसी, वही
वे	वे, उन, उन्होंने, उनको, उन्हें, उनसे, उनका, उनकी, उनके, उनमें, उनपर, उन्हीं
तुम	तुम, तुमने, तुमको, तुम्हें, तुमसे, तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हारे, तुममें, तुमपर, तुम्हीं
तू	तू, तूने, तुझको, तुझे, तुझसे, तेरा, तेरी, तेरे, तुझमें, तुझपर, तुझी
आप	आप, आपने, आपको, आपसे, आपका, आपकी, आपके, आपमें, आपपर, आप ही
मैं	मैं, मैंने, मुझको, मुझे, मुझसे, मेरा, मेरी, मेरे, मुझमें, मुझपर, मुझी
हम	हम, हमने, हमको, हमें, हमसे, हमारा, हमारी, हमारे, हममें, हमपर, हम्हीं
यह	यह, इस, इसने, इसको, इसे, इससे, इसका, इसकी, इसके, इसमें, इसपर, इसी, यही
ये	ये, इन, इन्होंने, इनको, इन्हें, इनसे, इनका, इनकी, इनके, इनमें, इनपर, इन्हीं
जो	जो, जिस, जिसने, जिसको, जिसे, जिससे, जिसका, जिसकी, जिसके, जिसमें, जिसपर, जिन, जिन्होंने, जिन्हें, जिनसे, जिनका, जिनकी, जिनके, जिनमें, जिनपर, जिन्हीं
कौन	कौन, किस, किसने, किसको, किसे, किससे, किसका, किसकी, किसके, किसमें, किसपर, किसी किन, किन्होंने, किन्हें, किनसे, किनका, किनकी, किनके, किनमें, किनपर, किन्हीं

2.3.06. विशेषण शब्दों की रूप-संरचना

विशेषण वे शब्द हैं जो संज्ञा शब्दों की विशेषता बताते हैं। सामान्यतः ये संज्ञा पदबंधों में आश्रित पद के रूप में प्रयुक्त होते हैं। पूरक (complement) पदबंध के रूप में ये स्वतन्त्र रूप से भी वाक्य में प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी विशेषणों को कई आधारों पर वर्गीकृत किया गया है। इनमें 'रचना' और 'अर्थ' दो मुख्य आधार हैं। रचना के आधार पर दो भेद हैं – मूल और व्युत्पन्न, अर्थ के आधार पर विशेषणों को गुणवाचक, संख्यावाचक, परिमाणवाचक, सार्वनामिक आदि वर्गों में विभक्त किया जाता है।

रूप-संरचना की दृष्टि से देखा जाए तो विशेषणों के भी दो वर्ग किये जा सकते हैं – विकारी और अविकारी। विकारी विशेषणों में रूपिमिक परिवर्तन होता है, जबकि अविकारी विशेषण सदैव एक ही रूप में प्रयुक्त होते हैं। सामान्य रूप में कहा जाता है कि 'आकारान्त' (आ से समाप्त होने वाले) विशेषण विकारी होते हैं। इनके 'एकारान्त' और 'ईकारान्त' रूप बनते हैं, जैसे – 'अच्छा' में अन्त में 'आ' आया है तो 'अच्छे' और 'अच्छी' इसके दो रूप बनेंगे। विशेषणों में यह विकार 'लिंग' और 'वचन' के आधार पर होता है। इसे एक तालिका के माध्यम से निम्नलिखित प्रकार से देख सकते हैं –

	लिंग	
वचन	**पुल्लिंग (Masculine)**	**स्त्रीलिंग (Feminine)**
एकवचन (Singular)	अच्छा	अच्छी
बहुवचन (Plural)	अच्छे	अच्छी

उदाहरण –

अच्छा लड़का खेल रहा है।
अच्छे लड़के खेल रहे हैं।
अच्छी लड़की खेल रही है।
अच्छी लड़कियाँ खेल रही हैं।

इसके अलावा 'वाँ' अन्तिम अक्षर वाले विशेषणों में भी सम्बन्धित संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार परिवर्तन होता है। यह स्थिति 'संख्यावाची शब्द + वाँ' में स्पष्ट दिखाई पड़ती है, जैसे –

मेरा यहाँ **दसवाँ** स्थान है।
मैं **दसवीं** कक्षा में पढ़ता हूँ।
मेरा लड़का **दसवें** स्थान पर आया।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि 'आ' (और आँ) से समाप्त होने वाले विशेषणों में रूपिमिक परिवर्तन होता है, किन्तु ऐसे सभी विशेषणों में यह स्थिति नहीं प्राप्त होती। उदाहरण के लिए 'घटिया' शब्द को ही लें तो 'घटिया आदमी' (एकवचन, पुल्लिंग), घटिया लोग (बहुवचन, पुल्लिंग), घटिया औरत (एकवचन, स्त्रीलिंग),

घटिया औरतें (बहुवचन, स्त्रीलिंग) में किसी भी रूप में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है। अतः ऐसे आकारान्त विशेषणों को चिह्नित करना आवश्यक है जिनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। भोलानाथ तिवारी द्वारा 'हिन्दी की भाषा संरचना' में निम्नलिखित पाँच प्रकार के आकारान्त अविकारी विशेषण शब्दों की चर्चा की गई है –

(1) यान्त – सीकिया, टुटपूँजिया, पुरबिया, रसिया, घटिया, बढ़िया, लफाड़िया, झंझटिया, कानपुरिया, बंबइया, ननिया, ममिया, चचिया आदि।
(2) वान्त – महकौवा, जुड़वाँ, सवा, भगवा, ढलुवा, ढलवाँ, उठौवा, गेरुवा आदि।
(3) संस्कृत तत्सम – महा, हर्ता, कर्त्ता (-धर्ता)।
(4) फ़ारसी-अरबी शब्द – (जिनमें मूलतः अन्त में 'आ' न होकर 'अ:' था तथा वह हिन्दी में आकर 'आ' हो गया) खुलासा, सोफ़ियाना, सालाना, शायराना, आवारा, संजिंदा, मौजूदा, शर्तिया, शौकिया, दुतरफ़ा, एकतरफ़ा, नाकारा, लापता, बचकाना, माहाना ... आदि। 'ताज़ा' भी इसी वर्ग में है। इसमें भी परिवर्तन नहीं होता है (ताज़ा फल, ताज़ा सब्जी, ताज़ा ख़बर) किन्तु कुछ लोग ताज़ा-ताज़ी-ताज़े बोलते हैं, जो मानक नहीं है।
(5) अन्य –
    (i) तद्भव – आगबाबूला, चौकन्ना, छुट्टा, पोंगा, इकट्ठा।
    (ii) विदेशी – तनहा, आला।

इसी प्रकार कुछ विशेषणों के 'ओंकारान्त' रूप भी बनते हैं, जब वे वाक्य में 'संज्ञा' के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे – 'बूढ़ा' के चार रूप बनेंगे – बूढ़ा, बूढ़ी, बूढ़े, बूढ़ों। ऐसे विशेषणों को अलग से चिह्नित किया जाता है।

2.3.06.1. संख्यावाची विशेषणों की रूप-संरचना

किसी भी भाषा में संख्याओं का संख्यावाची विशेषण के रूप में विश्लेषण किया जाता है। हिन्दी में संख्याओं की रूप-संरचना अपेक्षाकृत अधिक जटिल है। प्रत्येक संख्या के कई विकारी रूप प्राप्त होते हैं। इनके सम्बन्ध में एक सामान्य नियम तो 'ओंकारान्त' रूप का दिया जा सकता है। 'एक' को छोड़कर सभी संख्यावाची विशेषणों के ओंकारान्त रूप बनते हैं और अपने ओंकारान्त रूप में भी संख्यावाची शब्द विशेषण का ही कार्य करते हैं, जैसे – तीन से 'तीनों', चार से 'चारों' आदि। तीन के अंत्य 'न' के सादृश्य में 'दो' का ओंकारान्त रूप बनाने पर 'न' का आगम हो जाता है और 'दोनों' रूप बनता है।

ओंकारान्त रूप के अलावा गिनती के क्रम में संख्याओं में विकार होते हैं। भोलानाथ तिवारी द्वारा 'हिन्दी की भाषा संरचना' में इस प्रकार के विकारों की विस्तृत चर्चा की गई है। यहाँ हम उदाहरण के लिए कुछ संख्याओं के रूपों को देख सकते हैं –

रूपिम		उपरूप	वितरण
एक	:	ग्या	-रह
		इक्या	-अन, -आसी, -नवे
		अक	-एल
		पह	-ल-
		प्रथ	-म
		अव	-अल
		डे	-ढ़
		ड्यो	-ढ़-
		एक	अन्यत्र (एक, इक्(ए>इ))
दो	:	ब	-तीस, -आलीस, -हत्तर, -आसी
		बा	-रह, -ईस, -अन, -सठ, -नवे
		बी	-स (बीस)
		जो	-ड़-
		द्वि	-उक्ति, -आगमन
		दोन	-ओं प्रत्यय (दोनों)
		आई	-ढ
		दो	-अन्यत्र (दो, दू (ओ>ऊ), दु(ओ>उ))

तिवारीजी की पुस्तक 'हिन्दी की भाषा संरचना' में इसी प्रकार अन्य संख्याओं के रूपों को देखा जा सकता है।

2.3.07. क्रिया शब्दों की रूप-संरचना

वह शब्दवर्ग है जिसके अन्तर्गत आने वाले शब्दों के माध्यम से किसी कार्य के करने या होने का भाव प्रकट होता है, अथवा किसी वस्तु की स्थिति, अवस्था आदि का बोध होता है, क्रिया है। रूप-संरचना की दृष्टि से क्रिया सबसे अधिक जटिल शब्दवर्ग है। हिन्दी में क्रिया पर लिंग, वचन, पुरुष, काल, पक्ष, वृत्ति और वाच्य लगभग सभी व्याकरणिक कोटियों का प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव कहीं शब्दरूप में दिखाई पड़ता है तो कहीं पदबंध रचना पर। क्रिया के मूल रूप को 'धातु' को कहते हैं। धातु क्रिया का वह मूलांश है जिसमें कोई प्रत्यय नहीं लगा होता। धातु में ही प्रत्यय लगते हैं तथा क्रियारूपों की रचना होती है। हिन्दी में क्रियाओं के ही सबसे अधिक रूप बनते हैं। इनकी कुल संख्या 22 से 28 तक है। किन्तु यहाँ ध्यान रखने वाली बात है कि प्रत्येक क्रिया के सभी रूप निर्मित नहीं होते। किस क्रिया के कितने रूप बनेंगे, यह उस क्रिया की आर्थी प्रकृति और सम्बन्धित कर्त्ता तथा कर्म की स्थिति पर निर्भर करता है। '+मानव' कर्त्ता वाली क्रियाओं के सबसे अधिक रूप बनते हैं।

रूप-संरचना की दृष्टि से हिन्दी क्रियाओं (धातुओ) के दो वर्ग किये जा सकते हैं – स्वरान्त और व्यंजनान्त। स्वरान्त धातुओं के साथ स्वर वाले प्रत्यय लगते हैं और व्यंजनान्त मात्राओं के साथ मात्राओं वाले प्रत्यय। कुछ प्रत्यय दोनों प्रकार की क्रियाओं में समान होते हैं। स्वरात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार के प्रत्ययों की अलग-अलग गणना करने पर प्रत्ययों की कुल संख्या 41 हो जाती है। किन्तु चूँकि मात्राएँ स्वरों का ही प्रतिनिधित्व करती हैं, इसीलिए दोनों को एक साथ रखा जाता है। मात्राओं को भी स्वरों के साथ रखते हुए धातुओं के साथ जुड़ने वाले प्रत्ययों को इस प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है –

क्र.सं.	चिह्नक	उदाहरण
01.	ता	चलता, खाता
02.	ती	चलती, खाती
03.	ते	चलते, खाते
04.	ना	चलना, खाना
05.	ने	चलने, खाने
06.	नी	चलनी, खानी
07.	या/ ◌ा	खाया, चला
08.	ई/ ◌ी	खाई, चली
09.	ए/ ◌े	खाए, चले
10.	ईं/ ◌ीं	खाईं, चलीं
11.	एँ/ ◌ें	खाएँ, चलें
12.	ओ/ ◌ो	खाओ, चलो
13.	इए/ ◌िए	खाइए, चलिए
14.	इएगा/ ◌िएगा	खाइएगा, चलिएगा
15.	ऊँ/ ◌ूँ	खाऊँ, चलूँ
16.	एगा/ ◌ेगा	खाएगा, चलेगा
17.	एगी/ ◌ेगी	खाएगी, चलेगी
18.	एँगे/ ◌ेंगे	खाएँगे, चलेंगे
19.	एँगी/ ◌ेंगी	खाएँगी, चलेंगी
20.	ओगे/ ◌ोगे	खाओगे, चलोगे
21.	ओगी/ ◌ोगी	खाओगी, चलोगी
22.	ऊँगा/ ◌ूँगा	खाऊँगा, चलूँगा
23.	ऊँगी/ ◌ूँगी	खाऊँगी, चलूँगी
24.	कर	चलकर, खाकर

'पाना' क्रिया या 'पा' धातु की प्रविष्टि प्राप्त होने पर उसके रूप इस प्रकार से दिखाए जा सकते हैं –

पा → पा, पाता, पाती, पाते, पाके, पाना, पानी, पाने, पाकर, पाया, पाए, पाई, पाएगा, पाएगी, पाएँगे, पाएँगी, पाइए, पाइएगा, पाओ, पाऊँ, पाऊँगा, पाऊँगी, पाईं ।

उपर्युक्त सूची में केवल मानक प्रत्ययों को रखा गया है। इनमें से कुछ प्रत्ययों के अमानक रूप भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे – 'ए / ये, ई / यी/, ऊँ / ऊं आदि। इन प्रत्ययों के आधार पर 'पाये, पायी, पायेगा, पायेगी, पायेंगे, पायेंगी, पाइये, पाइयेगा, पाऊं, पाऊंगा, पाऊंगी, पायीं' रूप भी निर्मित होते हैं।

हिन्दी क्रियाओं के जो रूप निर्मित होते हैं उनके, विभिन्न आधारों कई वर्ग बनाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए क्रियाओं का अर्थ या उसके साथ जुड़ने वाले 'कर्त्ता' द्वारा क्रियाओं के रूप प्रभावित होते हैं, जैसे – जिन क्रियाओं के के कर्त्ता '+मानव' होते हैं, उन्हीं क्रियाओं के आज्ञा / सलाह / निवेदन सूचक क्रियारूप बनते हैं –

(i) तुम **दौड़ो**। (आज्ञा)
(ii) *तुम **भौंको**।
(iii) आप **आइए**। (निवेदन)
(iv) *आप **भौंकिए**।

इन वाक्यों में देख सकते हैं कि किसी को दौड़ने का आदेश तो दिया जा सकता है, किन्तु भौंकने का नहीं दिया जा सकता। इसके स्वाभाविक कर्त्ता 'कुत्ते' को तो बिल्कुल नहीं। अतः जिन क्रियाओं कर्त्ता '+मानव' होते हैं, उनके तो सभी रूप बनते हैं, किन्तु जिनके कर्त्ता '-मानव' होते हैं, उनके वे रूप नहीं बनते जो केवल 'मानव' कर्त्ता पर ही लागू होते हैं। उदाहरण के लिए आदेश, परामर्श, निवेदन के रूप केवल मानव कर्त्ता वाली क्रियाओं के ही बनते हैं। इसी प्रकार प्रथमपुरुष और मध्यमपुरुष के भविष्यकालिक रूप भी केवल मानव कर्त्ता वाली क्रियाओं के ही बनते हैं।

सहायक क्रियाओं के भी कुछ रूप बनते हैं, जिनकी चर्चा आगे की जा रही है।

2.3.08. अन्य शब्दों की रूप-संरचना

हिन्दी में मूलतः संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया शब्दों के ही रूप बनते हैं। इनके अलावा कुछ अन्य शब्दों के भी कुछ रूप देखे जा सकते हैं। वैसे इनकी संख्या बहुत ही कम है। अन्य वर्गों के निम्नलिखित शब्दों में रूपविकार होता है –

(i) **प्रश्नवाचक शब्द** : प्रश्नवाचक सर्वनाम के रूप में प्रयुक्त होने वाले 'कौन' शब्द का विकार होता है और इसके 'किस' एवं 'किन दो तिर्यक रूप बनते हैं। फिर इनमें परसर्ग जुड़ते हैं, जैसे – किसने, किसको, किसे, किससे, किसका, किसकी, किसके, किसमें, किसपर, किन्होंने, किन्हें, किनसे, किनका, किनकी, किनके, किनमें, किनपर आदि। इसी प्रकार 'कैसा' से 'कैसा, कैसी, कैसे' और 'कितना' से 'कितना, कितनी, कितने' रूप भी बनते हैं।

(ii) **परसर्ग** : 'का' परसर्ग के का, की, के तथा '-रा, -री, -रे' रूप बनते हैं।

(iii) **क्रियाविशेषण** : यहाँ और वहाँ में 'ही' का योग होने पर 'यहाँ से यहीं', 'वहाँ से वहीं' रूप बनते हैं।

(iv) **सहायक क्रिया** : मुख्य क्रियाओं के अलावा सहायक क्रियाओं के भी कुछ रूप बनते हैं, जैसे – है से 'है, हैं, हो, हूँ' रूप बनते हैं और था से 'था, थी, थे' रूप बनते हैं।

2.3.09. पाठ-सार

रूप-संरचना की दृष्टि से हिन्दी एक समृद्ध भाषा है। हिन्दी में 'लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, पक्ष, वृत्ति और वाच्य' आठ व्याकरणिक कोटियाँ पाई जाती हैं, जो किसी-न-किसी रूप में रूप-संरचना को प्रभावित करती हैं। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया चार शब्दवर्गों में रूपिमिक विकार होता है। हिन्दी संज्ञा शब्दों के अधिकतम चार रूप देखे जाते हैं, जो वचन और परसर्गीय स्थिति (कारक) द्वारा प्रभावित होते हैं। सर्वनामों की रूप-संरचना अपेक्षाकृत जटिल है। चूँकि सर्वनामों की संख्या बहुत सीमित है, इसलिए उनके सभी रूपों को सूचीबद्ध रूप से देखा जा सकता है। हिन्दी में केवल आकारान्त विशेषणों के ही रूप बनते हैं जो लिंग और वचन से प्रभावित होते हैं, किन्तु सभी आकारान्त विशेषणों के भी रूप नहीं बनते। इसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। संख्यावाची विशेषणों में अपेक्षाकृत अधिक रूपिमिक विकार पाया जाता है। 'क्रिया' हिन्दी का सर्वाधिक विकारी शब्दवर्ग है। इस पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से लगभग सभी व्याकरणिक कोटियों का प्रभाव पड़ता है। हिन्दी क्रियाओं में 24 प्रत्यय जुड़ते हैं। उनमें कुछ प्रत्ययों के स्वारान्त और मात्रान्त दो रूप प्राप्त होते हैं। कुछ प्रत्ययों के ऐसे रूप भी हिन्दी में प्रचलित हैं, जिन्हें केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा अमानक घोषित किया गया है। किन्तु व्यवहार में होने के कारण इनका भी ज्ञान आवश्यक है। इन चारों शब्दवर्गों के अलावा कुछ प्रश्नवाचक शब्दों, क्रियाविशेषण, परसर्ग और सहायक क्रियाओं में भी विकार देखने को मिलता है, जिसकी चर्चा प्रस्तुत पाठ में की गई।

2.3.10. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से कौन-सी व्याकरणिक कोटि का 'पद' से सीधा संज्ञा से सम्बन्धित नहीं है ?
   (क) लिंग

(ख) वचन
(ग) पुरुष
(घ) काल

सही उत्तर : (घ) काल

2. निम्नलिखित में से किसका सम्बन्ध 'पक्ष' से है ?
(क) सातत्य
(ख) सम्भावना
(ग) आज्ञा
(घ) परामर्श

सही उत्तर : (क) सातत्य

3. इनमें से कौन-सी विकारी संज्ञा नहीं है ?
(क) छाता
(ख) पेड़
(ग) चीनी
(घ) कोयल

सही उत्तर : (ग) चीनी

4. इनमें से कौन-सा सम्बन्धवाचक सर्वनाम है ?
(क) वह
(ख) यह
(ग) जो
(घ) इनमें से कोई नहीं

सही उत्तर : (ग) जो

5. 'बाइस' में 'बा' किस संख्या का विकारी रूप है ?
(क) एक
(ख) दो
(ग) तीन
(घ) चार

सही उत्तर : (ख) दो

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. रूप-संरचना से आप क्या समझते हैं ? संक्षेप में समझाइए।
2. वचन को परिभाषित कीजिए और इसके प्रकार बताइए।

3. वृत्ति और पक्ष में अन्तर बताइए।
4. संख्यावाची विशेषण 'दो' के सभी उपरूपों की सूची दीजिए।
5. कौन-से प्रश्नवाचक शब्द, परसर्ग और क्रियाविशेषण शब्दों के रूप बनते हैं ? उनके रूप बनाकर दिखाइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी में कौन-कौन सी व्याकरणिक कोटियाँ पाई जाती हैं ? किन्हीं चार के बारे में सोदाहरण समझाइए।
2. संज्ञा शब्दों की रूप-संरचना की सविस्तार चर्चा कीजिए।
3. सर्वनाम किसे कहते हैं ? हिन्दी सर्वनामों के रूपों की तालिका बनाइए।
4. विशेषण शब्दों की रूप-संरचना पर सविस्तार टिप्पणी लिखिए।
5. हिन्दी क्रियाओं के रूप-निर्माण में कौन-कौन से प्रत्यय लगते हैं ? सोदाहरण विस्तार से व्याख्या कीजिए।

2.3.11. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. उप्रेती, मुरारीलाल (2009) हिंदी में प्रत्यय और पश्चाश्रयी विचार. नई दिल्ली. आलेख प्रकाशन.
2. गुरु, कामताप्रसाद (2009). हिंदी व्याकरण. नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
3. तिवारी, भोलानाथ (2004). हिंदी भाषा की संरचना. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन.
4. तिवारी, भोलानाथ (2012). भाषाविज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा. नई दिल्ली. किताबघर.
5. द्विवेदी, कपिलदेव (2002). भाषाविज्ञान और भाषाशास्त्र. चौक वाराणसी. विश्वविद्यालय प्रकाशन.
6. पाण्डेय, अनिल कुमार (2010) हिंदी संरचना के विविध पक्ष. नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
7. जैन, पी.सी. (2002) हिंदी प्रयोग : एक शैक्षिक व्याकरण. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन.
8. वाजपेयी, किशोरीदास (1998). हिंदी शब्दानुशासन. वाराणसी. नागरी प्रचारिणी सभा.

❖❖❖

खण्ड – 2 : हिन्दी भाषा-संरचना

इकाई – 4 : वाक्य संरचना

इकाई की रूपरेखा

2.4.0. उद्देश्य कथन
2.4.1. प्रस्तावना
2.4.2. वाक्य : परिभाषा एवं स्वरूप
2.4.3. पदबंध : स्वरूप एवं प्रकार
2.4.3.1. संरचना की दृष्टि से पदबंध के प्रकार
2.4.3.1.1. अन्तःकेन्द्रिक पदबंध
2.4.3.1.1.1. सविशेषक (Attributive) पदबंध
2.4.3.1.1.2. समवर्गीय (Appositional) पदबंध
2.4.3.1.1.3. समानाधिकरण (Coordinative) पदबंध
2.4.3.1.2. बाह्यकेन्द्रिक पदबंध
2.4.3.1.2.1. अक्ष-सम्बन्धक (Axis relater) पदबंध
2.4.3.1.2.2. गुंफित (Closed-knit) पदबंध
2.4.3.2. पदबंधों का प्रकार्यात्मक वर्गीकरण
2.4.3.2.1. संरचनात्मक प्रकार्य की दृष्टि से वर्गीकरण
2.4.3.2.1.1. संज्ञा पदबंध
2.4.3.2.1.2. सर्वनाम पदबंध
2.4.3.2.1.3. विशेषण पदबंध
2.4.3.2.1.4. क्रिया पदबंध
2.4.3.2.1.5. क्रियाविशेषण पदबंध
2.4.3.2.1.6. अव्यय पदबंध
2.4.3.2.2. व्याकरणिक प्रकार्य की दृष्टि से पदबंध के प्रकार
2.4.4. उपवाक्य : स्वरूप एवं प्रकार
2.4.4.1. मुख्य उपवाक्य
2.4.4.2. आश्रित उपवाक्य
2.4.4.2.1. संज्ञा उपवाक्य
2.4.4.2.2. विशेषण उपवाक्य
2.4.4.2.3. क्रियाविशेषण उपवाक्य
2.4.5. वाक्य : घटक एवं प्रकार
2.4.5.1. वाक्य के घटक
2.4.5.1.1. उद्देश्य (Subject)
2.4.5.1.2. विधेय (Predicate)
2.4.5.2. वाक्य के प्रकार

2.4.5.2.1. संरचना की दृष्टि से
2.4.5.2.1.1. सरल वाक्य
2.4.5.2.1.2. मिश्र वाक्य
2.4.5.2.1.3. संयुक्त वाक्य
2.4.5.2.2. अर्थ की दृष्टि से
2.4.5.2.2.1. कथनात्मक वाक्य
2.4.5.2.2.2. आज्ञार्थक वाक्य
2.4.5.2.2.3. मनोभावात्मक वाक्य
2.4.6. पाठ-सार
2.4.7. बोध प्रश्न
2.4.8. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

2.4.0. उद्देश्य कथन

भाषा में 'स्वनिम' से लेकर 'प्रोक्ति' तक विविध भाषिक इकाइयाँ (स्वनिम, रूपिम, शब्द / पद, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य और प्रोक्ति) पाई जाती हैं। "वाक्य' इनमें प्रोक्ति के बाद सबसे बड़ी इकाई है। प्रस्तुत पाठ में 'वाक्य' के विविध पक्षों पर प्रकाश डाला जाएगा। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. वाक्य की अवधारणा को समझ सकेंगे।
ii. पदबंध की अवधारणा और इसके प्रकारों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
iii. उपवाक्य की अवधारणा और इसके प्रकारों से परिचित हो सकेंगे।
iv. वाक्य के घटकों और प्रकारों को जान सकेंगे।

2.4.1. प्रस्तावना

'भाषा' ध्वनि प्रतीकों के माध्यम से विचारों, भावों और सूचनाओं के सम्प्रेषण की व्यवस्था है। इस व्यवस्था में कई स्तर पाए जाते हैं, जिनमें 'वाक्य' आधारभूत स्तर है। सम्पूर्ण भाषा व्यवहार वाक्यों के माध्यम से ही किया जाता है, इसीलिए वाक्य को भाषा व्यवहार की मूलभूत इकाई कहते हैं। व्याकरणिक रचना की दृष्टि से 'वाक्य' किसी भी भाषा की सबसे बड़ी इकाई है और सम्प्रेषण की दृष्टि से सबसे छोटी इकाई। व्याकरणिक रचना की दृष्टि से किसी भाषा की सबसे बड़ी इकाई कहने से तात्पर्य है – वाक्य ऐसी सबसे बड़ी भाषिक इकाई है, जिसकी संरचना का व्याकरणिक दृष्टि से विश्लेषण किया जा सकता है। भाषा का मूल कार्य है – सम्प्रेषण। सम्प्रेषण की दृष्टि से वाक्य को सबसे छोटी इकाई इसलिए कहा जाता है, कि सम्प्रेषण के लिए वक्ता द्वारा कम से कम एक वाक्य का प्रयोग किया ही जाता है। सम्प्रेषण की दृष्टि से सबसे बड़ी भाषिक इकाई 'प्रोक्ति' है। प्रोक्ति किसी एक कथ्य या सन्दर्भ से जुड़े वाक्यों का समूह है, जैसे – कोई कथा, कहानी, कविता, व्याख्यान, कार्यक्रम आदि।

2.4.2. वाक्य : परिभाषा एवं स्वरूप

किसी भी भाषा में तीन इकाइयाँ आधारभूत होती हैं – ध्वनि, शब्द और वाक्य। ध्वनियों के योग से शब्द या पद बनते हैं और शब्दों या पदों के योग से 'वाक्य' बनते हैं। ध्वनियों का अपना कोई अर्थ नहीं होता, किन्तु शब्दों का अर्थ होता है। शब्दों के केवल अर्थ सम्प्रेषणीय नहीं होते, अर्थात् केवल एक शब्द का प्रयोग करके किसी सूचना का सम्प्रेषण नहीं किया जा सकता, जैसे – मोहन, राम, घर, बाजार, जाना, गया, जाता आदि कोई एक शब्द सुनकर श्रोता किसी सम्प्रेषणीय बात को नहीं समझ सकता। इनमें से आवश्यक शब्दों को उचित संक्रम में मिला देने पर सम्प्रेषण सम्भव हो जाता है, जैसे – राम गया, मोहन घर जाता है आदि। शब्दों का उचित संक्रम में यही योग 'वाक्य' कहलाता है। वाक्य शब्दों के योग से बनता है, किन्तु शब्द जब वाक्य में आते हैं, तो वे पद बन जाते हैं। इसलिए वाक्य को परिभाषित करते हुए कह सकते हैं कि "पदों का वह समुच्चय वाक्य है जो उचित संक्रम में हो तथा जिससे कम-से-कम एक सूचना का सम्प्रेषण होता हो।" अतः शब्दों या पदों के उचित संक्रम में योग से वाक्य निर्मित होते हैं। एक वाक्य में आने वाले पद विभिन्न प्रकार्यों को पूरा करते हैं। 'क्रिया' वाक्य का केंद्र होती है। वाक्य निर्माण के लिए क्रिया पद के साथ कम एक संज्ञा पद अवश्य होते हैं। वैसे सन्दर्भ आधारित वाक्य एक शब्द के भी हो सकते हैं, किन्तु वे वाक्य तभी कहलाते हैं, जब उनका सन्दर्भ श्रोता को पता हो, जैसे – यदि कोई पूछे – 'कौन आया' और उत्तर मिले – 'राम', तो इसका अर्थ यह हुआ कि 'राम आया'। इसमें 'आया' शब्द नहीं बोला गया है, क्योंकि 'कौन आया ?' प्रश्न में इसकी सूचना प्राप्त हो चुकी है। वाक्य की रचना के लिए संस्कृत आचार्यों द्वारा तीन आवश्यक तत्त्वों की बात की गई है –

(क) आकांक्षा : जब किसी शब्द का वाक्य में प्रयोग होता है तो उसे अन्य शब्दों की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता को ही संस्कृत आचार्यों ने आकांक्षा कहा है, जैसे – वाक्य में कर्त्ता शब्द के आते ही क्रिया (और सकर्मक क्रियाओं में कर्त्ता) की आकांक्षा।

(ख) योग्यता : वाक्य में प्रकार्य के स्तर पर एक शब्द के साथ दूसरे शब्द के जुड़ सकने की क्षमता को योग्यता कहते हैं। इसके दो प्रकार हैं – अर्थमूलक योग्यता, व्याकरणमूलक योग्यता। अर्थमूलक योग्यता से तात्पर्य है – अर्थ की दृष्टि से शब्दों का आपस में प्रयुक्त हो सकने की क्षमता, जैसे – घमंडी बच्चा, *घमंडी पेड़। व्याकरणमूलक योग्यता से तात्पर्य है – व्याकरण की दृष्टि से शब्दों का आपस में प्रयुक्त हो सकने की क्षमता, जैसे – अच्छा लड़का, *अच्छा लड़की।

(ग) सन्निधि : वाक्य निर्माण के लिए उच्चरित या अभिव्यक्त शब्दों का एक-दूसरे के पास या समीप होने की अवस्था सन्निधि है। इसे आसक्ति भी कहा गया है।

वाक्य पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। सूरजभान सिंह द्वारा 'हिन्दी का वाक्यात्मक व्याकरण' में वाक्य पर कई दृष्टियों से चर्चा की गई है। इन्होंने दर्शनपरक दृष्टिकोण, संस्कृत व्याकरण परम्परा, अर्थपरक दृष्टिकोण, संरचनात्मक दृष्टिकोण, भाषा विशिष्ट दृष्टिकोण, मनोवादी दृष्टिकोण, प्रकार्यपरक दृष्टिकोण और सन्दर्भपरक दृष्टिकोण से वाक्य को परिभाषित और व्याख्यायित किया है। 'वाक्य संरचना' को समझने के

लिए हमें वाक्य के घटकों पर विचार करना होगा। इस दृष्टि से तीन इकाइयों का अध्ययन आवश्यक है – पदबंध, उपवाक्य और वाक्य। प्रस्तुत पाठ में आगे तीनों इकाइयों की विस्तृत चर्चा की जा रही है।

2.4.3. पदबंध : स्वरूप एवं प्रकार

पदबंध ही वह आधारभूत भाषिक इकाई है, जिससे वाक्य की रचना होती है। पदबंधों के योग से ही वाक्य निर्मित होते हैं। पदबंध को परिभाषित करते हुए कहा गया है – "कोई भी एक पद या एक से अधिक पदों का समूह जो वाक्य में किसी एक ही प्रकार्य को सम्पन्न करता हो, पदबंध है।" डॉ॰ अनिल कुमार पाण्डेय के अनुसार, "पद या पदों का विस्तार पदबंध है।" अर्थात् एक अकेला पद भी एक पदबंध का काम कर सकता है और एक से अधिक पद भी एक ही पदबंध का कार्य कर सकते हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्यों को देखा जा सकता है –

लड़का (पदबंध-1)	सब्जी (पदबंध-2)	लाएगा। (पदबंध-3)
मेरा लड़का (पदबंध-1)	हरी सब्जी (पदबंध-2)	लाता है। (पदबंध-3)
मेरा बड़ा लड़का (पदबंध-1)	बहुत हरी सब्जी (पदबंध-2)	लाता रहा है। (पदबंध-3)
मेरा सबसे बड़ा लड़का (पदबंध-1)	बहुत अधिक हरी सब्जी (पदबंध-2)	ले जा रहा है। (पदबंध-3)

उपर्युक्त वाक्यों में हम देख सकते हैं कि आरम्भ में एक-एक शब्द या पद पदबंध का काम कर रहे हैं। किन्तु बाद के वाक्यों में शब्दों या पदों की संख्या तो बढ़ रही है, लेकिन पदबंधों की नहीं। दूसरे वाक्य में दो-दो शब्द मिलकर एक पदबंध का निर्माण कर रहे हैं, तीसरे वाक्य में तीन-तीन शब्द मिलकर एक पदबंध का निर्माण कर रहे हैं और इसी प्रकार चौथे वाक्य में चार-चार शब्द मिलकर एक पदबंध का निर्माण कर रहे हैं। एक पदबंध बनाने के लिए यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि कितने पद एक साथ प्रयुक्त हो रहे हैं, बल्कि यह महत्त्वपूर्ण है कि कितने पद एक ही प्रकार्य को सम्पन्न कर रहे हैं। इसी कारण एक पद या एक से अधिक पदों के समूह को पदबंध कहा गया है। कौन-कौन से पद एक साथ मिलकर एक पदबंध का कार्य कर सकते हैं ? इसे समझने के लिए पदबंध के प्रकारों को जानना होगा।

भाषाविज्ञान में पदबंध को दो दृष्टियों से वर्गीकृत किया गया है – संरचना की दृष्टि से और प्रकार्य की दृष्टि से।

2.4.3.1. संरचना की दृष्टि से पदबंध के प्रकार

संरचना की दृष्टि से पदबंध के दो वर्गकिये गए हैं – अन्तःकेन्द्रिक और बाह्यकेन्द्रिक।

2.4.3.1.1. अन्तःकेन्द्रिक पदबंध

वे पदबंध जिनका शीर्ष (या केंद्र) पदबंध में उपस्थित होता है, अन्तःकेन्द्रिक पदबंध कहलाते हैं। 'शीर्ष' पदबंध का वह हिस्सा या भाग होता है, जो अकेले सम्पूर्ण पदबंध के स्थान पर प्रयुक्त होने की क्षमता रखता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित वाक्य को देखें –

वह लड़का	सादा पानी	पीता है।
(पदबंध-1)	(पदबंध-2)	(पदबंध-3)

इस वाक्य में 'वह लड़का' में 'लड़का' तथा 'सादा पानी' में 'पानी' शब्द शीर्ष हैं। क्योंकि सम्पूर्ण पदबंध की जगह केवल इनका प्रयोग करके भी सार्थक वाक्य निर्मित किया जा सकता है –

लड़का	पानी	पीता है।
(पदबंध-1)	(पदबंध-2)	(पदबंध-3)

अन्तःकेन्द्रिक पदबंध के तीन प्रकार हैं –

2.4.3.1.1.1. सविशेषक (Attributive) पदबंध

वे पदबंध जिनमें एक पद शीर्ष होता है और अन्य पद उस पर आश्रित होते हैं, सविशेषक पदबंध कहलाता है। बिना परसर्ग के संज्ञा पदबंध सविशेषक पदबंध होते हैं जिनमें मुख्य पद 'संज्ञा' होता है, और विशेषण या अन्य शब्द वर्गों के शब्द उस पर आश्रित होते हैं, जैसे–

आश्रित	**शीर्ष**
सुन्दर	लड़का
नया	कपड़ा
बहुत अधिक नया	कपड़ा

इसी प्रकार विशेषण पदबंध में 'विशेषण' शीर्ष होता है और अन्य प्रविशेषण आदि पद उस पर आश्रित होते हैं, जैसे –

आश्रित	**शीर्ष**
बहुत	नया
बहुत अधिक	नया

2.4.3.1.1.2. समवर्गीय (Appositional) पदबंध

समवर्गीय पदबंध वे पदबंध होते हैं जिनमें एक से अधिक शीर्ष पद होते हैं और दोनों में से कोई भी एक पद सम्पूर्ण पदबंध का कार्य करने की क्षमता रखता है। उदाहरण के लिए 'घर और दुकान', 'चावल और दाल', 'कुर्ता या पजामा' आदि। सामान्यतः इन पदबंधों में दोनों शीर्षों के बीच 'और, या' जैसे संयोजक प्रयुक्त होते हैं, जैसा कि इन उदाहरणों में देखा जा सकता है।

2.4.3.1.1.3. समानाधिकरण (Coordinative) पदबंध

समानाधिकरण पदबंधों की रचना ऐसे दो पदबंधों के योग से होती है जो बाह्य संसार में एक ही इकाई को व्यक्त करते हैं अतः उन दोनों में से किसी एक का प्रयोग करने पर भी पूरे पदबंध का अर्थ आ जाता है उदाहरण के लिए 'राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद आज भाषण देंगे' इस वाक्य में राष्ट्रपति राम और रामनाथ कोविंद दोनों में से किसी एक को रखकर के वाक्य बनाया जा सकता है जैसे 'राष्ट्रपति आज भाषण देंगे' 'रामनाथ कोविंद आज भाषण देंगे' इसी प्रकार 'अमेरिका की राजधानी न्यूयॉर्क में यह घटना घटी' इस वाक्य में अमेरिका की राजधानी और न्यूयॉर्क समानाधिकरण पदबंध की रचना कर रहे हैं इसे हम 'अमेरिका की राजधानी में यह घटना घटी' और 'न्यूयॉर्क में यह घटना घटी' में से किसी के भी द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

2.4.3.1.2. बाह्यकेन्द्रिक पदबंध

ऐसे पदबंध जिनमें पदबंध के अंदर शीर्ष नहीं होता, बाह्यकेन्द्रिक पदबंध कहलाते हैं। अर्थात् ऐसे पदबंध जिनमें से कोई भी पद स्वतन्त्र रूप से सम्पूर्ण पदबंध की तरह प्रयुक्त होने की क्षमता नहीं रखता, बाह्यकेन्द्रिक पदबंध कहलाते हैं। ऐसे पदबंधों में कोई भी शीर्ष पदबंध नहीं होता।

बाह्यकेन्द्रिक पदबंधों के दो प्रकार होते हैं –

2.4.3.1.2.1. अक्ष-सम्बन्धक (Axis relater) पदबंध

ऐसे पदबंध जिनमें एक घटक अक्ष या केंद्र होता है और दूसरा घटक उसे वाक्य के दूसरे अंगों से जोड़ता है, अक्ष-सम्बन्धक पदबंध कहलाते हैं। इन पदबंधों में दूसरा पद सम्बन्ध-तत्त्व होता है, जिसका काम केन्द्रीय घटक (अक्ष) को दूसरे वाक्य के दूसरे तत्त्वों से जोड़ना होता है, जैसे –

राम ने रावण को बाण से मारा।

इस वाक्य में 'राम ने, रावण को, बाण से' तीन संज्ञा पदबंध हैं। इन तीनों में 'राम, रावण और बाण' अक्ष हैं, जिन्हें क्रमशः 'ने, को, से' सम्बन्ध-तत्त्व वाक्य के अन्य घटकों से जोड़कर वाक्य की रचना करते हैं। अतः हिन्दी में परसर्गों के साथ बनने वाले पदबंध अक्ष-सम्बन्धक पदबंध कहलाते हैं।

2.4.3.1.2.2. गुंफित (Closed-knit) पदबंध

ऐसे पदबंध जिनमें सभी घटक पद सम्मिलित रूप से पदबंध का कार्य कर रहे होते हैं, गुंफित पदबंध कहलाते हैं। ऐसे पदबंधों के पदों के बीच न तो हम कोई शीर्ष और अन्य जैसा सम्बन्ध पाते हैं, और ना ही अक्ष-सम्बन्धक जैसा कोई सम्बन्ध पाते हैं। हिन्दी के क्रिया पदबंध को इस श्रेणी में रखा जाता है। उदाहरण के लिए 'गया, जाएगा, खाता है, खा रहा होगा' आदि को देखा जा सकता है।

2.4.3.2. पदबंधों का प्रकार्यात्मक वर्गीकरण

प्रकार्यात्मक दृष्टि से पदबंधों को दो रूपों में वर्गीकृत किया गया है – संरचनात्मक प्रकार्य की दृष्टि से और व्याकरणिक प्रकार्य की दृष्टि से।

2.4.3.2.1. संरचनात्मक प्रकार्य की दृष्टि से वर्गीकरण

संरचनात्मक प्रकार्य के आधार पर पदबंधों के निम्नलिखित वर्ग किये जाते हैं –

2.4.3.2.1.1. संज्ञा पदबंध

ऐसा पदबंध जिसका शीर्ष पद संज्ञा होता है संज्ञा पदबंध कहलाता है । संज्ञा पदबंध रचनाएँ अन्तःकेन्द्रिक पदबंध रचनाएँ होती हैं। उदाहरण के लिए 'लड़का, अच्छा लड़का, बहुत अच्छा लड़का, सबसे अधिक अच्छा लड़का' आदि ये सभी संज्ञा पदबंधहैं।

2.4.3.2.1.2. सर्वनाम पदबंध

वे पदबंध जिनका शीर्ष पद सर्वनाम होता है, सर्वनाम पदबंध कहलाते हैं। सर्वनाम पदबंध सामान्यतः एक शब्द या दो शब्द से बनते हैं, क्योंकि सर्वनामों के साथ विशेषक नहीं लगते, जैसे – मैं, तुम, तुम लोग आदि। आधुनिक वाक्य विश्लेषण में इन्हें संज्ञा पदबंध केअन्तर्गत ही विश्लेषित किया जाता है।

2.4.3.2.1.3. विशेषण पदबंध

वे पदबंध जिनका शीर्ष पद विशेषण होता है, विशेषण पदबंध कहलाते हैं, जैसे – सुन्दर, बहुत सुन्दर, बहुत अधिक सुन्दर, सबसे अधिक सुन्दर और सरल आदि।

2.4.3.2.1.4. क्रिया पदबंध

वे पदबंध जो क्रिया पदों से निर्मित होते हैं, क्रिया पदबंध कहलाते हैं। हिन्दी में क्रिया पदबंध की रचना मुख्य क्रिया तथा सहायक क्रिया के योग से होती है। हिन्दी के क्रिया पदबंध बाह्य केंद्रक पदबंध होतेहैं। हिन्दी

क्रिया पदबंधों के चार प्रकार किये गए हैं – सरल क्रिया पदबंध, मिश्र क्रिया पदबंध, यौगिक क्रिया पदबंध और संयुक्त क्रिया पदबंध।

2.4.3.2.1.5. क्रियाविशेषण पदबंध

वे पदबंध जो वाक्य में क्रियाविशेषण का कार्य करते हैं, क्रियाविशेषण पदबंध कहलाते हैं। हिन्दी में कुछ क्रियाविशेषण शब्द पाए जाते हैं। ऐसे पदों के शार्ष होने पर क्रियाविशेषण पदबंधों की रचना होती है, जैसे – तेज, सबसे तेज, बहुत अधिक तेज आदि। इसी प्रकार कुछ कृदन्त और अन्य घटक भी क्रियाविशेषण पदबंध का कार्य करते हैं।

2.4.3.2.1.6. अव्यय पदबंध

हिन्दी में कुछ ऐसी पदबंध स्तरीय इकाइयाँ पाई जाती हैं, जो वाक्य में स्वतन्त्र प्रकार्य करती हैं, किन्तु उपर्युक्त में से किसी के अन्तर्गत नहीं आतीं। इन सभी को अव्यय पदबंध के अन्तर्गत रखा गया है, जैसे – नकारात्मक-सकारात्मक प्रयोग (न, नहीं, मत, हाँ), समुच्चयबोधक, विस्मयादिबोधक आदि।

2.4.3.2.2. व्याकरणिक प्रकार्य की दृष्टि से पदबंध के प्रकार

वाक्य में सभी पदबंध विभिन्न प्रकार्यात्मक भूमिकाओं के माध्यम से आपस में जुड़े होते हैं। इन भूमिकाओं को व्याकरणिक प्रकार्य कहते हैं। इस दृष्टि से पदबंधों को 'कर्त्ता पदबंध, कर्म पदबंध, करण पदबंध, (अर्थात् सभी कारक सम्बन्ध) और पूरक पदबंध आदि में वर्गीकृत किया जाता है।

2.4.4. उपवाक्य : स्वरूप एवं प्रकार

उपवाक्य पदबंध से बड़ी किन्तु वाक्य से छोटी इकाई है। यह वाक्य स्तर की ही इकाई है। उपवाक्य को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि उपवाक्य वह वाक्यस्तरीय भाषिक इकाई है, जो अपने से बड़े वाक्य का अंग होती है। एक उपवाक्य में वाक्य की तरह 'उद्देश्य और विधेय' आवश्यक घटक होते हैं, किन्तु बड़े वाक्यों का अंग होने के कारण वाक्य ही उपवाक्य बनते हैं। 'उपवाक्य' 'मिश्र वाक्य' और 'संयुक्त वाक्य' में पाए जाते हैं, जिनकी चर्चा आगे 'वाक्य' वाले खण्ड में की जाएगी।

उपवाक्य के दो प्रकार किये गए हैं – मुख्य उपवाक्य और आश्रित उपवाक्य। इन्हें संक्षेप में इस प्रकार समझ सकते हैं –

2.4.4.1. मुख्य उपवाक्य

किसी असरल वाक्य का वह उपवाक्य जिसके अर्थ को समझने के लिए दूसरे सम्बन्धित उपवाक्य के अर्थ को समझने की आवश्यकता नहीं होती, मुख्य उपवाक्य कहलाता है, जैसे –

मैंने कहा कि तुम घर जाओ।

इस वाक्य में 'मैंने कहा' मुख्य उपवाक्य है। यदि इसमें 'कहा' के बाद पूर्ण विराम लगा दिया जाए, तो भी यह वाक्य पूर्ण और सम्प्रेषणीय है।

2.4.4.2. आश्रित उपवाक्य

ऐसा उपवाक्य जिसके अर्थ या सन्दर्भ को समझने के लिए दूसरे उपवाक्य का बोध आवश्यक होता है, आश्रित उपवाक्य कहलाता है, जैसे – उपर्युक्त उदाहरण 'मैंने कहा कि तुम घर जाओ' में 'कि तुम घर जाओ' आश्रित उपवाक्य है, क्योंकि यह अपने पूरे अर्थ को व्यक्त नहीं कर रहा है। इसी प्रकार 'वह लड़का बाहर बैठा है जो कल आया था' वाक्य में 'वह लड़का बाहर बैठा है' मुख्य उपवाक्य है जबकि 'जो कल आया था' आश्रित उपवाक्य है, क्योंकि 'जो कल आया था' को सुनकर पूरे अर्थ की अनुभूति नहीं हो पा रही है। आश्रित उपवाक्य के तीन प्रकार किये गए हैं –

2.4.4.2.1. संज्ञा उपवाक्य

वे आश्रित उपवाक्य जो मुख्य उपवाक्य में संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने की क्षमता रखते हैं, संज्ञा उपवाक्य कहलाते हैं। ये सामान्यतः मुख्य उपवाक्य में 'कर्त्ता' और 'कर्म' के स्थान पर आने की क्षमता रखते हैं, जैसे – 'मैंने कहा कि तुम घर जाओ' में 'कि तुम घर जाओ' संज्ञा उपवाक्य है। इसे मुख्य उपवाक्य में स्थानान्तरित करते हुए वाक्य को 'मैंने तुम्हें घर जाने को कहा' के रूप में भी लिखा जा सकता है।

2.4.4.2.2. विशेषण उपवाक्य

वे उपवाक्य जो मुख्य उपवाक्य में विशेषण के स्थान पर प्रयुक्त होने की क्षमता रखते हैं, विशेषण उपवाक्य कहलाते हैं, जैसे – 'वह लड़का बाहर बैठा है जो कल आया था' वाक्य में 'जो कल आया था' विशेषण उपवाक्य है क्योंकि इस वाक्य को 'कल आया हुआ लड़का बाहर बैठा है' के रूप में भी लिखा जा सकता है, जिसमें 'कल आया हुआ' विशेषण का काम कर रहा है।

2.4.4.2.3. क्रियाविशेषण उपवाक्य

वे उपवाक्य जो मुख्य उपवाक्य में क्रियाविशेषण का कार्य करते हैं, क्रियाविशेषण उपवाक्य कहलाते हैं, जैसे – 'ज्यों ही बिजली आई, पंखा चलने लगा' वाक्य में 'ज्यों ही बिजली आई' क्रियाविशेषण उपवाक्य है, क्योंकि यह 'पंखा चलने' की विशेषता बता रहा है।

2.4.5. वाक्य : घटक एवं प्रकार

वाक्य वह इकाई है जो पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराती है। एक पूर्ण वाक्य द्वारा कम-से-कम एक मंतव्य व्यक्त किया जाता है। इसके लिए एक संज्ञा पदबंध और क्रिया पदबंध का होना आवश्यक होता है जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। यहाँ पर हम वाक्य के घटकों एवं प्रकारों की चर्चा करेंगे।

2.4.5.1. वाक्य के घटक

वाक्य को मूलतः दो घटकों से निर्मित माना जाता है – उद्देश्य और विधेय।

2.4.5.1.1. उद्देश्य (Subject)

वाक्य का वह भाग जिसके बारे में कुछ कहा जाता है, उसे उद्देश्य कहते हैं, जैसे –

लड़का बीमार है।
मोहन विद्यालय जाता है।

इन वाक्यों में 'लड़का' और 'मोहन' उद्देश्य हैं, क्योंकि वाक्य में इन्हीं के बारे में सूचना दी जा रही है।

2.4.5.1.2. विधेय (Predicate)

वाक्य का वह भाग जिसके माध्यम से उद्देश्य के बारे में कुछ कहा जाता है, विधेय कहलाता हैं, जैसे –

लड़का बीमार है।
मोहन विद्यालय जाता है।

इन वाक्यों में 'बीमार है' और 'विद्यालय जाता है' विधेय हैं, क्योंकि वाक्य में इन्हीं के माध्यम से उद्देश्य के बारे में सूचना दी जा रही है।

कुछ आधुनिक भाषावैज्ञानिकों द्वारा 'उद्देश्य' को 'टॉपिक' और 'विधेय' को 'कमेंट' कहा गया है।

2.4.5.2. वाक्य के प्रकार

वाक्य को मुख्यतः दो आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है – संरचना की दृष्टि से और अर्थ की दृष्टि से।

2.4.5.2.1. संरचना की दृष्टि से

संरचना की दृष्टि से वाक्य के तीन प्रकार होते हैं – सरल वाक्य, मिश्र वाक्य और संयुक्त वाक्य।

2.4.5.2.1.1. सरल वाक्य

ऐसे वाक्य जिनमें केवल एक समापिका क्रिया होती है, सरल वाक्य कहलाते हैं। ऐसे वाक्यों में केवल एक उद्देश्य और एक विधेय होते हैं, जैसे –

वह घर जाता है।
मैं खाना नहीं खाता हूँ।
तुम बाजार कब जाओगे ?

उपर्युक्त वाक्यों में 'जाना, खाना, जाना' समापिका क्रिया हैं। इनमें प्रत्येक वाक्य के माध्यम से एक ही सूचना का सम्प्रेषण किया जा रहा है। सरल वाक्य कितने भी लम्बे हों, उनसे केवल एक ही काम के सम्पन्न होने की सूचना प्राप्त होती है।

2.4.5.2.1.2. मिश्र वाक्य

ऐसे वाक्य जिनमें एक मुख्य उपवाक्य होता है ,और एक या एक से अधिक आश्रित उपवाक्य होते हैं, मिश्र वाक्य कहलाता है, जैसे –

उसने कहा कि तुम्हारा नाम बहुत अच्छा है।
यदि तुम घर जाओगे तो मैं बाजार से मिठाई लाऊँगा।

उपवाक्य' के बारे में ऊपर चर्चा की जा चुकी है। मिश्र वाक्यों की रचना मुख्य उपवाक्य के साथ संज्ञा, विशेषण और क्रियाविशेषण सभी प्रकार के उपवाक्यों के योग से होती है। इनकी रचना में दो पक्षों के बीच व्यधिकरण समुच्चयबोधकों (Subordinating conjunctions), जैसे – कि, जो, जो...कि, जिस, क्योंकि, इसलिए आदि का प्रयोग किया जाता है।

2.4.5.2.1.3. संयुक्त वाक्य

ऐसे वाक्य जिनमें एक से अधिक मुख्य उपवाक्यों का प्रयोग होता है तथा वे आपस में समानाधिकरन समुच्चयबोधकों (Coordinating conjunctions) के माध्यम से जुड़े होते हैं, संयुक्त वाक्य कहलाते हैं, जैसे –

मैं घर जाऊँगा और तुम बाजार जाओगे।
आज बारिश होगी या ओले पड़ेंगे।

2.4.5.2.2. अर्थ की दृष्टि से

अर्थ की दृष्टि से वाक्य के कई प्रकार किये जाते हैं, जिन्हें मुख्यतः निम्नलिखित वर्गों में विभाजित करके देखा जा सकता है –

2.4.5.2.2.1. कथनात्मक वाक्य

ऐसे वाक्य जिनमें किसी व्यक्ति, वस्तु आदि के बारे में कोई कथन उद्धृत किया जाता है या कोई बात कही जाती है, कथनात्मक वाक्य कहलाते हैं। सभी प्रकार के सरल और सूचनात्मक वाक्य 'कथनात्मक' होते हैं, जैसे –

घोड़ा सुन्दर है।
लड़का बाजार जाता है।

इन वाक्यों का नकारात्मकीकरण करने पर नकारात्मक वाक्य बनते हैं, जैसे – घोड़ा सुन्दर नहीं है, लड़का बाजार नहीं जाता है आदि। इसी प्रकार प्रश्न का भाव देने पर प्रश्नवाचक वाक्य बनते हैं, जैसे – क्या घोड़ा सुन्दर है ?, घोड़ा कितना सुन्दर है ?, क्या लड़का बाजार जाता है ?, लड़का कैसे बाजार जाता है ?

2.4.5.2.2.2. आज्ञार्थक वाक्य

वे वाक्य जिनमें वक्ता का उद्देश्य श्रोता को निर्देशित या प्रभावित करना होता है, आज्ञार्थक वाक्य कहलाते हैं। इनमें तीन प्रकार की चीजें पाई जाती हैं – आज्ञा, परामर्श और निवेदन। उदाहरण –

तुम वहाँ बैठे रहो।
हमें शोर नहीं करना चाहिए।
कृपया आप बाहर जाइए।

आज्ञार्थक वाक्यों के केवल नकारात्मक रूप ही बनते हैं। कुछ विशेष परिस्थितियों में ही उनके प्रश्नवाचक रूप बन पाते हैं।

2.4.5.2.2.3. मनोभावात्मक वाक्य

ऐसे वाक्य जिनमें वक्ता अपने मनोभावों या संवेगों को व्यक्त करता है, मनोभावात्मक वाक्य कहलाते हैं। इनमें वक्ता अपनी स्वयं की बात को व्यक्त करना चाहता है। इच्छा, विस्मय आदि से सम्बन्धित वाक्य इसमें आते हैं, जैसे –

आपकी यात्रा मंगलमय हो।
काश, आज बारिश होती।
ओह ! बहुत दुखद समाचार है।

मनोभावात्मक वाक्यों के प्रश्नवाचक और नकारात्मक रूप नहीं बनते।

2.4.6. पाठ-सार

वाक्य भाषा की मूल सम्प्रेषात्मक इकाई है। हम व्यवहार में वाक्यों का ही प्रयोग करते हैं। इनकी रचना प्रक्रिया जटिल होती है। संस्कृत वैयाकरणों द्वारा वाक्य रचना के लिए आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि जैसे तत्त्वों की बात की गई है। वाक्य पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है, जैसे – संरचनात्मक दृष्टिकोण, प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण, मनोभावात्मक दृष्टिकोण, सम्प्रेषणात्मक दृष्टिकोण आदि। वाक्य रचना की मूल इकाई पदबंध है। पदबंध से बड़ी और वाक्य से छोटी इकाई 'उपवाक्य' है। अतः वाक्यों की संरचना को पूर्णतः समझने के लिए पदबंध और उपवाक्य की संरचना का भी ज्ञान होना आवश्यक है।

पदबंधों को संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक दोनों दृष्टियों से वर्गीकृत किया गया है। प्रकार्यात्मक वर्गीकरण के भी दो आधार है – संरचनात्मक प्रकार्य तथा व्याकरणिक प्रकार्य। उपवाक्य मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं – मुख्य और आश्रित। आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं – संज्ञा, विशेषण और क्रियाविशेषण। वाक्य में दो आधारभूत घटक हैं – उद्देश्य और विधेय। वाक्य को भी मुख्यतः दो आधारों पर वर्गीकृत किया गया है – संरचना के आधार पर और अर्थ के आधार पर। संरचना के आधार पर वाक्य के 'सरल, मिश्र और संयुक्त' तीन प्रकार किये गए हैं तो अर्थ के आधार पर मुख्यतः 'कथनात्मक, आज्ञात्मक और मनोभावात्मक' तीन वर्ग हैं। प्रस्तुत पाठ में इन सभी की चर्चा की गई है।

2.4.7. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से वाक्यविज्ञान से सम्बन्धित नहीं है ?
   (क) पदबंध
   (ख) उपवाक्य

(ग) शब्द

(घ) वाक्य

सही उत्तर : (ग) शब्द

2. 'सुन्दर फूल' किस प्रकार का पदबंध है ?

(क) सविशेषक

(ख) समवर्गीय

(ग) समानाधिकरण

(घ) इनमें से कोई नहीं

सही उत्तर : (क) सविशेषक

3. 'राम ने' किस प्रकार का पदबंध है ?

(क) सविशेषक

(ख) समवर्गीय

(ग) अक्ष-सम्बन्धक

(घ) इनमें से कोई नहीं

सही उत्तर : (ग) अक्ष-सम्बन्धक

4. इनमें से कौन-सा आश्रित उपवाक्य का एक प्रकार नहीं है ?

(क) संज्ञा उपवाक्य

(ख) विशेषण उपवाक्य

(ग) क्रियाविशेषण उपवाक्य

(घ) मुख्य उपवाक्य

सही उत्तर : (घ) मुख्य उपवाक्य

5. 'मैंने कहा कि तुम नहीं हारोगे' किस प्रकार का वाक्य है ?

(क) सरल वाक्य

(ख) मिश्र वाक्य

(ग) संयुक्त वाक्य

(घ) इनमें से कोई नहीं

सही उत्तर : (ग) शब्द में व्युत्पादक प्रत्यय योग

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. संस्कृत वैयाकरणों द्वारा बताए गए वाक्य के आवश्यक तत्त्वों की व्याख्या कीजिए।
2. मुख्य उपवाक्य और आश्रित उपवाक्य में अन्तर बताइए।
3. वाक्य और उपवाक्य में अन्तर बताइए।

4. कथनात्मक वाक्य किसे कहते हैं ? उदाहरण के साथ चर्चा कीजिए।
5. आज्ञात्मक वाक्य क्या हैं ? संक्षेप में समझाइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पदबंध क्या है ? संरचना की दृष्टि से पदबंध के प्रकारों का विस्तृत वर्णनकीजिए।
2. पदबंध को वाक्य की मूलभूत संरचनात्मक इकाई के रूप में बताते हुए प्रकार्य की दृष्टि से इसके प्रकारों की सविस्तार चर्चा कीजिए।
3. उपवाक्य क्या है ? इसके प्रकारों को सोदाहरण समझाइए।
4. वाक्य किसे कहते हैं ? वाक्य के घटकों की उदाहरण के साथ विस्तृत व्याख्या कीजिए।
5. संरचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकार बताइए।

2.4.8. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. गुरु, कामताप्रसाद (2009). हिंदी व्याकरण. नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
2. तिवारी, भोलानाथ (2004). हिंदी भाषा की संरचना. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन.
3. तिवारी, भोलानाथ (2012). भाषाविज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा. नई दिल्ली. किताबघर.
4. द्विवेदी, कपिलदेवस (2002). भाषाविज्ञान और भाषाशास्त्र. चौक वाराणसी. विश्वविद्यालय प्रकाशन.
5. पाण्डेय, अनिल कुमार (2010) हिंदी संरचना के विविध पक्ष. नई दिल्ली. प्रकाशन संस्थान.
6. पाण्डेय, कैलाश नाथ (2006). भाषाविज्ञान का रसायन. गाजीपुर. गाजीपुर साहित्य संसद.
7. मिश्रा, एम. के. (2008) अभिनव हिंदी व्याकरण. नई दिल्ली. आत्माराम एंड सन्स.
8. वाजपेयी, किशोरीदास. (1998). हिंदी शब्दानुशासन. वाराणसी. नागरी प्रचारिणी सभा.
9. सिंह, सूरजभान. (2000). हिंदी का वाक्यात्मक व्याकरण. नई दिल्ली. साहित्य सहकार.
10. जगन्नाथन, वी. आर. (2016) वाक्य की परिभाषा एवं स्वरूप. ई.पी.जी. पाठशाला इकाई.

उपयोगी लिंक :

http://epgp.inflibnet.ac.in/epgpdata/uploads/epgp_content/S000018HI/P001757/M023495/ET/1506595412HND_P5_M16_VaakyaKiParibhashaEvamSwaroop.pdf

❖❖❖

खण्ड – 3 : भाषा-शिक्षण : प्रविधि और अधिगम

इकाई – 1 : भाषा-शिक्षण विधियाँ

इकाई की रूपरेखा

3.1.0. उद्देश्य कथन
3.1.1. प्रस्तावना
3.1.2. भाषा-शिक्षण में शामिल विद्यार्थियों की विभिन्न श्रेणियाँ
    3.1.2.1. मातृभाषा विद्यार्थी
    3.1.2.2. द्वितीय भाषा विद्यार्थी
    3.1.2.3. विदेशी विद्यार्थी
3.1.3. भाषा-शिक्षण विधियाँ
    3.1.3.1. भाषा परिचय विधियाँ
    3.1.3.2. भाषा अनुवाद विधि
    3.1.3.3. वाद-विवाद विधि
    3.1.3.4. भूमिका निर्वाह विधि
    3.1.3.5. सामाजिक नाटक
    3.1.3.6. बुद्धयोत्तेजक विधि (Brainstorming)
3.1.4. पाठ-सार
3.1.5. बोध प्रश्न
3.1.6. व्यावहारिक (प्रायोगिक) कार्य
3.1.7. कठिन शब्दावली
3.1.8. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

3.1.0. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप जान पाएँगे कि –

i. भाषा-शिक्षण क्या है।
ii. भाषा-शिक्षण में किस प्रकार के विद्यार्थी शामिल होते हैं।
iii. भाषा-शिक्षण में प्रयोग होने वाली विधियाँ क्या हैं।
iv. हिन्दी भाषा पढ़ाने में उन विधियों का प्रयोग कैसे किया जाता है।

3.1.1. प्रस्तावना

किसी भी भाषा-शिक्षण प्रणाली का लक्ष्य विद्यार्थियों में निम्नलिखित योग्यता लाना है –

(1) श्रवण-कौशल (सुनने की योग्यता)
(2) मौखिक अभिव्यक्ति योग्यता (बोलने/ बातचीत की योग्यता)
(3) लेखन कौशल (लिखने की योग्यता)
(4) पठन कौशल (पढ़ने की योग्यता)

3.1.2. भाषा-शिक्षण में शामिल विद्यार्थियों की विभिन्न श्रेणियाँ

प्रस्तावना में जिन योग्यताओं का वर्णन है, उनके सम्बन्ध में यह याद रखने की आवश्यकता है कि भाषा-शिक्षण में तीन प्रकार के विद्यार्थी शामिल होते हैं –

(i) मातृभाषीय विद्यार्थी
(ii) द्वितीयभाषीय विद्यार्थी
(iii) विदेशी भाषा के रूप में अध्ययन करने वाले विद्यार्थी

कुछ भाषाविद् द्वितीयभाषीय तथा विदेशी भाषा के विद्यार्थियों को समान रूप से अन्य भाषा के विद्यार्थी कहते हैं।

3.1.2.1. मातृभाषा विद्यार्थी

विद्यार्थी किसी भाषा को जब मातृभाषा के रूप में सीखते हैं उन्हें निम्नलिखित लाभ स्वभाविक रूप से प्राप्त होते हैं –

1. कई शब्दों का प्रयोग घर की बातचीत में ही हो जाता है। अतः भाषा-विद्यार्थी उन शब्दों के अर्थ से पहले परिचित होते हैं।
2. चूँकि विद्यार्थी भाषा को रात-दिन प्रयोग में लाते हैं, इसलिए उन्हें व्याकरण के कई पहलुओं की जानकारी स्वभाविक रूप से पहले से होती है, जैसे कि शब्दों के लिंग, बहुवचन आदि।
3. मातृभाषीय विद्यार्थी जो पाठशाला में प्रवेश लेते हैं, वे हालाँकि बोलचाल की भाषा से परिचित होते हैं, परन्तु वे वर्णमाला, अक्षरों के विभिन्न रूपों और शब्दों को लिखने आदि से अपरिचित होते हैं। अतः उन विद्यार्थियों को अधिक आवश्यकता लिपि से प्रयोगात्मक रूप से परिचित होने की होती है। इसके पश्चात् इन विद्यार्थियों को उच्च श्रेणी के भाषा प्रयोग में भी मार्गदर्शन की आवश्यक हो सकती है जैसे कि पत्र-लेखन, निबन्ध-लेखन आदि जिसमें यह विद्यार्थी गैर-मातृभाषीय विद्यार्थियों की तुलना में जल्दी सीख सकते हैं।

3.1.2.2. द्वितीय भाषा विद्यार्थी

भारत के कई राज्यों की अपनी अलग राज्य भाषा है जैसे कि दक्षिण भारत के राज्य आंध्रप्रदेश और तेलंगाना में तेलुगू, तमिलनाड में तमिल, केरल में मलयालम और कर्नाटक में कन्नड़; गोवा में कोंकणी, पंजाब में पंजाबी, गुजरात में गुजराती, बंगाल में बंगाली, ओडिशा में उड़िया और पूर्वोत्तर क्षेत्र के राज्यों की अपनी स्थानीय भाषाएँ। इन भाषा के विद्यार्थी या तो स्थानीय भाषा के माध्यम के स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते हैं या अंग्रेज़ी माध्यम से स्कूली शिक्षा पूरी करते हैं। ऐसे अधिकांश विद्यार्थी हिन्दी का द्वितीय भाषा के रूप में चयन करते हैं। भारत के अधिकांश राज्यों में प्रचलित शिक्षा प्रणाली के अनुसार द्वितीय भाषा की शिक्षा चौथी या पाँचवीं कक्षा से प्रारम्भ होती है जबकि स्कूली शिक्षा के त्रिभाषा सूत्र (Three-language formula) के अन्तर्गत प्रथम भाषा की शिक्षा प्रथम कक्षा से होती है और यही भाषा पर अधिक ज़ोर दिया जाता है। भारत में कुछ गैर-मातृभाषीय विद्यार्थी भी हिन्दी को प्रथम भाषा के रूप पढ़ते हैं, जबकि कई विद्यार्थी हिन्दी को द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ते हैं। भारत में हिन्दी को द्विभाषा के रूप में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को निम्नलिखित लाभ प्राप्त हैं –

1. उनका सम्पर्क हिन्दी मातृभाषीय विद्यार्थियों से अक्सर होता रहता है, अतः कक्षा की शिक्षा के साथ-साथ वास्तविक संसार का अभ्यास भी हो जाता है।
2. हिन्दी के रेडियो और टेलिविज़न के कार्यक्रम तथा फ़िल्में देशभर में प्रसिद्ध हैं और उनके कारण कई गैर-मातृभाषीय विद्यार्थी सरलतापूर्वक हिन्दी बाल लेते हैं।
3. हिन्दी समाचारपत्र तथा मासिक पत्रिकाएँ भी विद्यार्थियों को भाषा सीखने के नए आयाम प्रदान करते हैं।
4. हिन्दी का व्यापक रूप से साइनबोर्डों तथा परिपत्रों में प्रयोग, इंटरनेट का चिट्ठाजगत, सामाजिक जालक्रम आदि हिन्दी के द्वितीय भाषा के रूप में शिक्षा को प्रोत्साहित करते हैं।
5. केन्द्रीय सरकार के हिन्दी में अध्यादेश तथा सरकार द्वारा हिन्दी का व्यापक रूप से प्रयोग, कुछ राज्यों में भी इसी प्रकार का हिन्दी का व्यापक रूप से प्रयोग तथा हिन्दी की बढ़ती वैश्विक लोकप्रियता विद्यार्थियों को अपनी ओर आकर्षित कर रही है।

द्वितीय भाषा की शिक्षा न केवल भारत में है, बल्कि कई अन्य देशों में है। कनाडा में अंग्रेज़ी और फ़्रेन्च भाषाओं का समान रूप से आधिकारिक भाषाओं के तौर पर प्रयोग और नागरिकों को इन में से एक भाषा के द्वितीय भाषा के रूप में शिक्षा के अवसर, तुर्की के कुर्द लोगों की बहुसंख्या वाले क्षेत्र में द्वितीय भाषा के रूप में उस भाषा के अध्ययन के अवसर इसी के उदाहरण हैं।

3.1.2.3. विदेशी विद्यार्थी

विदेशी भाषा के अध्ययन की कुछ समस्याएँ इस प्रकार हैं –

1. अधिकांश रूप से ऐसे विद्यार्थी सीखी जा रही भाषा के लिए नवागन्तुक तथा अपरिचित होते हैं।

2. विद्यार्थी प्रारम्भ में न तो भाषा की शब्दावली और न ही व्याकरण से परिचित होते हैं। उन्हें भाषा-लिपि का भी कोई ज्ञान नहीं होता है।
3. विद्यार्थी ऐसे वातावरण से भी वंचित होते हैं जहाँ अध्ययन की जा रही भाषा का व्यापक रूप से प्रयोग हो रहा हो – जैसे कि स्थानीय लोगों की उस भाषा में बातचीत, रेडियो और टेलिविज़न कार्यक्रम, रास्तों के साइनबोर्ड आदि में भाषा का प्रयोग आदि।
4. विदेशी भाषा सीखने के पाठ्यक्रम में जिन पुस्तकों का प्रयोग किया जाता है, उनमें से अधिकांश पुस्तकें उन देशों में तैयार की जाती हैं जिनमें यह भाषा प्रमुख रूप से बोली जाती है। अन्य देश के विद्यार्थियों को कई बार एक मुख्य समस्या यह हो सकती है कि वे उस वातावरण से अपरिचित होते हैं। अतः उन्हें वातावरण की भी जानकारी की आवश्यकता होती है।

यदि हम हिन्दी के विदेशी विद्यार्थियों को देखें तो हम ये विशेषताएँ पाते हैं –

(1) अधिकांश विदेशी विद्यार्थी स्नातक या स्नातकोत्तर के स्तर पर शिक्षा प्राप्त करते हैं।
(2) चूँकि इनमें से अधिकतर विद्यार्थियों को हिन्दी का कोई ज्ञान इस स्तर से पूर्व नहीं होता है, उनकी स्थिति लगभग एक भारतीय बालक की होती है जो पाठशाला में पहली बार हिन्दी के अक्षर और वर्णमाला सीख रहा है।
(3) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और संस्कृति के स्तर पर भारत की लोकप्रियता इस शिक्षा के मुख्य कारण हैं।
(4) चूँकि विद्यार्थी वयस्क होते हैं और स्वेच्छापूर्वक भाषा सीखते हैं, इसलिए वे भाषा को कम समय में सीख लेते हैं।
(5) कुछ विदेशी विद्यार्थियों ने इतना कठोर परिश्रम किया है कि वे भाषा में न केवल निपुण हुए हैं, बल्कि उन्होंने हिन्दी तथा भारतीय संस्कृति पर काफ़ी शोध किया है और कई किताबें भी लिखी हैं।

3.1.3. भाषा-शिक्षण विधियाँ

किसी भी भाषा को सीखने के लिए कई विधियों को प्रयोग में लाया जाता है। उनमें से प्रमुख विधियों को नीचे लिखा गया है। एक शिक्षक का यह दायित्व है कि वह विद्यार्थियों के भाषा में योग्यता के अनुरूप इन विधियों का प्रयोग करे तथा किसी भी विधि का अधिक या कम प्रयोग करे।

3.1.3.1. भाषा परिचय विधियाँ

इन विधियों का प्रयोग किसी भाषा-शिक्षण कार्यक्रम के प्रारम्भ में होता है। जैसा कि विधि के नाम से ही प्रतीत होता है, इन विधियों का अन्य विधियों से पूर्व प्रयोग होता है।

1. **वर्णमाला गीत** : प्रारम्भिक स्तर पर किसी भाषा में शब्दों को सिखाने के लिए इस विधि को प्रयोग में लाया जाता है। जैसे कि अंग्रेज़ी में लोकप्रिय गीत है –

A for Apple
B for Boy
C for Cat
...

हिन्दी में इस विधि को कुछ इस प्रकार से प्रयोग में लाते हैं –

अ से अनार
आ से आम
इ से इमली
...

इस विधि को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए हम या तो वर्णमाला गीत के वस्तुओं को विद्यार्थियों को दिखा सकते हैं, या उन वस्तुओं को चार्ट में दिखा सकते हैं। जब विद्यार्थी गीत को समझकर गाते हुए याद करते हैं, तो अक्षरों और वस्तुओं के बीच के सम्बन्ध को उनके याद रखने की सम्भावना अधिक रहती है।

2. **ध्वनि पद्धति** : इसमें विद्यार्थियों को शब्दों और वाक्यों को पहले सुनना पड़ता है और फिर दुहराकर कर याद करना होता है।
3. **प्रसंग** – इस विधि के अन्तर्गत हम विभिन्न शब्दों के प्रासंगिक तालमेल बनाने का प्रयास करते हैं जिससे कि विद्यार्थी शब्दों और उनके प्रयोग को समझ सकें। उदाहरणार्थ अध्यापक कुछ वाक्य ऐसे बोर्ड पर लिख सकता है जिन्हें विद्यार्थी वास्तविक रूप में कक्षा के अन्दर देख सकते हैं। जैसे –

पुस्तक मेज़ पर है।

यहाँ विद्यार्थी देख सकते हैं कि एक पुस्तक वास्तविक रूप मेज़ पर है। उन्हें 'पुस्तक' और 'पुस्तक' के साथ-साथ पूर्वसर्ग 'पर' का अर्थ भी समझ में आ जाता है।

4. **विद्या में आनन्द का तत्त्व** : सीखते समय विद्यार्थी यदि नए अनुभव करते हुए वाक्यों को परिस्थिति के अनुसार बदलाव लाएँ तो उनकी शिक्षा और भी आनन्दमय हो सकती है। उदाहरणार्थ ऊपर हम एक वाक्य विद्यार्थियों को समझा चुके हैं कि 'पुस्तक मेज़ पर है।' अध्यापक इसी पुस्तक को कुर्सी पर रख सकता है और ऐसा करने पर विद्यार्थी परिस्थिति अनुरूप वाक्य बदलकर 'पुस्तक कुर्सी पर है' कहेंगे।

फिर यदि वही पुस्तक खिड़की पर रख दी जाए तो विद्यार्थी परिस्थिति अनुरूप वाक्य बदलकर 'पुस्तक खिड़की पर है' कहेंगे।

इस अभ्यास में विद्यार्थी आनन्दपूर्वक पुस्तक, मेज़, कुर्सी और खिड़की शब्दों के प्रयोग तथा 'पर' शब्द का परिस्थिति बताने में महत्त्व को समझ गए हैं।

5. सामूहिकता : इस विधि में शब्दों को जोड़कर उनके सम्बन्धों को बताने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण –

(i) विद्यार्थी → अध्यापक → प्रधानाचार्य → पाठशाला

(लेखाचित्र (चार्ट) के रूप में विद्यार्थियों को दिखाया जाता है)

इससे विद्यार्थी अपने सहपाठियों, अध्यापकों और प्रधानाचार्य के पाठशाला में सम्बन्धों को समझ सकते हैं।

(ii) टूथपेस्ट+टूथब्रश → साफ़ दाँत

(लेखाचित्र (चार्ट) के रूप में विद्यार्थियों को दिखाया जाता है)

इससे से विद्यार्थी समझ जाते हैं कि प्रतिदिन टूथपेस्ट और टूथब्रश के प्रयोग से दाँत साफ़ होते हैं।

6. अपठित गद्यांश (Reading Comprehension) : इस प्रणाली के अन्तर्गत विद्यार्थियों को एक पैरा दिया जाता है और उसे पढ़कर कुछ प्रश्न हल करने को कहा जाता है। इस प्रणाली के दो रूप हो सकते हैं – सीधे प्रश्न और अप्रत्यक्ष प्रश्न।

(क) सीधे प्रश्न : जो सम्भवतः पैरा ही के कोई वाक्य में मिल जाएँ।

(ख) अप्रत्यक्ष प्रश्न : जिनमें विद्यार्थियों को पूरे पैरा समझकर हल करना होता है। उदाहरण के लिए यदि पैरा में कहा जाए कि किसी पात्र ने 20 वर्ष की आयु से पूर्व कोई विदेशी यात्रा नहीं की। अब यदि प्रश्न पूछा जाए कि उसने किस आयु में प्रथम विदेशी यात्रा की ? तो इसका उत्तर यही होगा कि उसने 20 वर्ष की आयु के पश्चात् प्रथम विदेश यात्रा की। हालाँकि दिए पाठ से इससे सटीक उत्तर देना सम्भव नहीं है क्योंकि कहीं भी ये वर्णन नहीं है कि इस पात्र ने 21, 22 या 23 वर्ष की आयु में प्रथम विदेश यात्रा की।

7. लिंग और बहुवचन : किसी भाषा को सीखते समय लिंग और बहुवचन का सिखाना भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी भाषा के सीखने में यह तो और भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि हम हर समय संज्ञा को पुल्लिंग या स्त्रीलिंग के रूप में प्रयोग करते हैं। उदाहरण –

(i) बस चलने लगी।

(यहाँ 'बस' के लिए हम 'चलने लगी' इसलिए कह रहे हैं क्योंकि यह स्त्रीलिंग है।)

(ii) झंडा फहराने लगा।

(यहाँ 'झंडा' के लिए हम 'फहराने लगा' इसलिए कह रहे हैं क्योंकि यह पुल्लिंग है।)

यहाँ अध्यापक को बताना होगा कि कैसे भाषा में संज्ञा शब्दों को स्त्रीलिंग में पुल्लिंग में बाँटा गया है, हालाँकि जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है उनमें जीवन नहीं है।

वाक्यों में बहुवचन कई नए भाषा सीखने वाले विद्यार्थियों की समझ में नहीं आ सकता है। उन्हें सरल रूप से उदाहरणों से समझाया जा सकता है। उदाहरण –

(i) लड़कियाँ पढ़ रही हैं।
(स्त्रीलिंग 'लड़की' का बहुवचन)

(ii) लड़के पढ़ रहे हैं।
(पुल्लिंग 'लड़का' का बहुवचन)

(iii) दो आदमी पढ़ रहे हैं।
(पुल्लिंग 'आदमी' प्रासंगिक रूप से बहुवचन है हालाँकि प्रयोग करते समय वचन बदलने के लिए शबद में कोई बदलाव नहीं है)

इसी प्रकार से कई और व्याकरण से जुड़े विषयों पर केन्द्रित शिक्षा उदाहरणों के साथ दी जा सकती है।

3.1.3.2. भाषा अनुवाद विधि

इस विधि में मातृभाषीय विद्यार्थी एक भाषा के वाक्य / शब्द / मुहावरे को अपने मातृभाषा में अनुवाद करते हुए भाषा सीखते हैं। उदाहरणार्थ –

(1) अंग्रेज़ी में 'Herculean Task' किसी कठिन और लगभग असम्भव कार्य के सम्पन्न होने को कहते हैं। यह कहावत प्राचीन रोम के योद्धा हर्क्यूलस की शक्ति और कार्य-योग्यता पर आधारित है। इसी को ध्यान में रखते हुए हम हिन्दी में 'भगीरथ कार्य' कहते हैं। भगीरथ पुराणों के अनुसार इक्ष्वाकुवंशीय सम्राट् दिलीप के पुत्र थे। इन्होंने घोर तपस्या से गंगा को पृथ्वी पर अवतरित किया था जो किसी कठिन और असम्भव कार्य के सम्पन्न होने जैसी ही बात है।

(2) इसी प्रकार से अंग्रेज़ी में जब हम "What is your father?" कहते हैं तो हिन्दी में अर्थ "आपके पिता क्या हैं ?" नहीं है बल्कि उसका अर्थ है "आपके पिता क्या काम करते हैं ?" हालाँकि वाक्य में कहीं भी 'काम' की बात नहीं है। भाषा-शिक्षण में इसी प्रकार से शब्दों के प्रयोग पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

3.1.3.3. वाद-विवाद विधि

इस विधि में विद्यार्थियों को विभिन्न विषयों पर अपने विचार प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जिससे वे शब्दों के प्रयोग को समझ सकते हैं अच्छे वाक्य बना सकते हैं। उदाहरणार्थ अध्यापक विद्यार्थियों के आगे एक प्रश्न रखते हैं कि – "क्या प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए ?"

इसके सकारात्मक और नकारात्मक उत्तर हो सकते हैं और विद्यार्थियों को अपनी सोच अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है –

(i) यह सिद्ध हो चुका है कि मातृभाषा में शिक्षा बालक के उन्मुक्त विकास में सर्वाधिक उपयुक्त होती है... (या)

(ii) अंग्रेज़ी विश्व और विज्ञान की अधिमान्य भाषा है और उसे शिक्षा का माध्यम बनाना...

इस विधि का लक्ष्य चर्चा के किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से अधिक विद्यार्थियों में भाषा के प्रयोग को सुधारना और अनुकूल दिशा में केन्द्रित करना है।

3.1.3.4. भूमिका निर्वाह विधि

इस विधि में विद्यार्थी वास्तविक संसार के व्यक्तियों की भूमिका निर्वाह करते हुए भाषा का प्रयोग सीखते है। उदाहरणार्थ – डॉक्टर और रोगी के बीच वार्ता या माता और बेटी के बीच कोई काल्पनिक वार्तालाप को दो छात्राएँ प्रस्तुत कर सकती हैं। ऐसा करने के दौरान भाषा की प्रयोगात्मक शैली को सीखा जा सकता है।

3.1.3.5. सामाजिक नाटक

इस विधि में किसी सामाजिक व्यवस्था और लोगों की किसी विषय में प्रतिक्रियाओं को दिखाया जाता है। इस शैली से किसी भी भाषा और समाज को समझने विद्यार्थियों को मदद मिलती है।

3.1.3.6. बुद्धयोत्तेजक विधि (Brainstorming)

इस विधि में विद्यार्थियों को सोचने और अपने मन से अनोखे उत्तर देने का अवसर मिलता है। उदाहरणार्थ अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न करता है – "इस पाठशाला में मुझे सबसे अच्छी बात क्या लगती है ?"

इसके कई उत्तर हो सकते हैं। हर विद्यार्थी अपनी सोच से एक नया उत्तर दे सकता है जो कभी-कभी अध्यापक के लिए भी आश्चर्यजनक हो सकता है –

(i) इस पाठशाला में मुझे सबसे अच्छी बात इसका इतिहास लगता है। यहाँ से कई महान शिक्षाविद, डॉक्टर, इंजिनियर, वैज्ञानिक पढ़कर ...

(ii) इस पाठशाला में मुझे सबसे अच्छी बात इसमें प्राप्त सुविधाएँ लगती हैं। यहाँ पर विज्ञान प्रयोगशाला की विशेषता यह है...

इस प्रकार से मुक्त रूप से विचार प्रकट करने से विद्यार्थी भाषा को और भी प्रभावी ढंग से सीख सकते हैं।

3.1.4. पाठ-सार

इस पाठ में हमने भाषा-शिक्षण के बारे में कई बातें सीखी हैं। हमने देखा है कि किसी भी भाषा-शिक्षण कार्यक्रम में मूल रूप से तीन प्रकार के विद्यार्थी सम्मिलित होते हैं – मातृभाषीय विद्यार्थी, द्वितीय भाषा विद्यार्थी और विदेशी भाषा-विद्यार्थी। इन विद्यार्थियों में हमने देखा कि मातृभाषीय विद्यार्थियों को भाषा सीखने में कुछ स्वभाविक लाभ प्राप्त होते हैं, जैसे कि चूँकि विद्यार्थी भाषा को रात-दिन प्रयोग में लाते हैं, इसलिए उन्हें व्याकरण के कई पहलुओं की जानकारी पहले से होती है, जैसे कि शब्दों के लिंग, बहुवचन आदि। हमने द्वितीय भाषा के विद्यार्थियों के बारे में पढ़ा है और पाया है कि भारत के अधिकांश राज्यों में प्रचलित शिक्षा प्रणाली के अनुसार द्वितीय भाषा की शिक्षा चौथी या पाँचवीं कक्षा से प्रारम्भ होती है जबकि स्कूली शिक्षा के त्रिभाषा सूत्र (Three-language formula) के अन्तर्गत प्रथम भाषा की शिक्षा प्रथम कक्षा से होती है और यहीं भाषा पर अधिक ज़ोर दिया जाता है। भारत में कुछ गैर-मातृभाषीय विद्यार्थी भी हिन्दी को प्रथम भाषा के रूप पढ़ते हैं, जबकि कई विद्यार्थी हिन्दी को द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ते हैं। हमने विदेशी भाषा के विद्यार्थियों और उनकी समस्याओं का भी अध्ययन किया है। प्रस्तुत पाठ में हमने विभिन्न भाषा-शिक्षण विधियों का आकलन भी किया है, जैसे कि भाषा परिचय विधियाँ, भाषा अनुवाद विधि, वाद-विवाद विधि और बुद्धयोत्तेजक विधि। हमने उदाहरणों में विशेष रूप से हिन्दी भाषा-शिक्षण पर बल दिया है। इन विधियों में कुछ विधियों का शिक्षक विद्यार्थियों की भाषा योग्यता के अनुसार चयन कर सकते हैं और प्रयोग में ला सकते हैं। भाषा-शिक्षण में एक समस्या यह भी हो सकती है कि एक ही कक्षा में विभिन्न श्रेणी के विद्यार्थी हो सकते हैं। ऐसे समय पर अध्यापक की भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण होती है। एक शिक्षक को सर्वप्रथम ध्यान विदेशी विद्यार्थियों पर होना चाहिए, फिर द्वितीय भाषा विद्यार्थी और मातृभाषीय विद्यार्थी पर। एक शिक्षक का यह भी कर्त्तव्य है कि वह कक्षा के वातावरण को सौहार्दपूर्ण बनाए जिससे सभी विद्यार्थी भाषा सीखने के मूल लक्ष्य को प्राप्त कर सकें।

3.1.5. बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा-शिक्षण में विदेशी विद्यार्थियों को किस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है ?
2. भारत के राज्यों और वहाँ की राज्य भाषाओं के बारे में जानकारी दीजिए।
3. भाषा अनुवाद विधि के बारे में आप क्या जानते हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा-शिक्षण में शामिल विभिन्न प्रकार के विद्यार्थियों के बारे में विस्तृत जानकारी दीजिए।
2. भाषा परिचय विधियों पर विस्तृत जानकारी दीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. इनमें में किस विधि में विद्यार्थी गाकर भाषा को सीखते हैं ?
   (क) वर्णमाला गीत
   (ख) सामूहिकता
   (ग) भाषा अनुवाद विधि
   (घ) वाद-विवाद विधि

2. रूस में हिन्दी का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी इनमें किस श्रेणी में आते हैं ?
   (क) द्वितीय भाषा विद्यार्थी
   (ख) विदेशी भाषा विद्यार्थी
   (ग) विज्ञान क्षेत्र के विद्यार्थी
   (घ) अन्य श्रेणी के विद्यार्थी

3. इनमें से किस विधि के अन्तर्गत विद्यार्थियों को सोचने और अपने मन से अनोखे उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है ?
   (क) वर्णमाला गीत
   (ख) बुद्धयोत्तेजक विधि
   (ग) भाषा अनुवाद विधि
   (घ) सामाजिक नाटक विधि

4. इनमें से किस विधि में किसी सामूहिक व्यवस्था और लोगों की किसी विषय में प्रतिक्रियाओं को दिखाया जाता है ?
   (क) भाषा अनुवाद विधि
   (ख) बुद्धयोत्तेजक विधि
   (ग) सामाजिक नाटक विधि
   (घ) वर्णमाला गीत

5. इनमें किस विधि में विद्यार्थियों को शब्दो और वाक्यों को पहले सुनना पड़ता है और फिर दुहराकर कर याद करना पड़ता है ?
   (क) सामाजिक नाटक विधि
   (ख) ध्वनि पद्धति
   (ग) सामाजिक नाटक विधि
   (घ) अपठित पाठ विधि

3.1.6. व्यावहारिक (प्रायोगिक) कार्य

1. भाषा-शिक्षण की किन्हीं दो विधियों के बारे अपने शब्दों में जानकारी दीजिए और साथ ही अपने अनुभव पर आधारित उदाहरणों से बताइये कि विद्यार्थी इन विधियों से कैसे लाभान्वित होते हैं।
2. आकाशवाणी के हिन्दी विदेश सेवा प्रभाग की विभिन्न सेवाओं के बारे में लिखिए और इस बात का विशेष रूप से उल्लेख कीजिए कि किस प्रकार से आकाशवाणी विदेशी विद्यार्थियों के हिन्दी सीखने में सहायक है।

3.1.7. कठिन शब्दावली

वर्णमाला : किसी भाषा या को लिखने के लिए प्रयुक्त मानक प्रतीकों (अक्षरों) के क्रमबद्ध समूह को वर्णमाला कहते हैं।

चिट्ठाजगत : इंटरनेट पर मौजूद बॉग समूह (Blogosphere)

सामाजिक जालक्रम : सामाजिक मीडिया (Social networking / Media)

ध्वनि पद्धति : आवाज़ या सुनकर दुहराने की पद्धति

अनुवाद विधि : एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में अभिव्यक्त करते हुए भाषा सिखाना

बुद्धयोत्तेजक विधि : (Brainstorming) इस विधि में विद्यार्थियों को सोचने और अपने मन से अनोखे उत्तर देने का अवसर मिलता है।

3.1.8. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. हिन्दी भाषा और इसकी शिक्षण विधियाँ : हिन्दी भाषा और शिक्षण विधियों की परिचायक; श्रुतिकान्त पाण्डेय; PHI Learning Pvt. Ltd, 2014.
2. अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की व्यव्हारिक परख; गुर्रम कोंडा नीरजा; वाणी प्रकाशन; 2015.

3. A Cognitive Approach to Language Learning; Peter Skehan; Oxford University Press, 1998.
4. Learn Hindi in 30 Days Through English; Krishna Gopal Vikal; Diamond Pocket Books (P) Ltd; 2006.
5. Language Teaching Research and Language Pedagogy; Rod Ellis; John Wiley & Sons; 2012.

❖❖❖

खण्ड – 3 : भाषा-शिक्षण : प्रविधि और अधिगम

इकाई – 2 : उत्तरसंरचना विधियाँ

इकाई की रूपरेखा

3.2.0. उद्देश्य कथन
3.2.1. प्रस्तावना
3.2.2. उत्तरसंरचना : परिचय
3.2.3. भाषा अधिगम तथा उत्तरसंरचना
3.2.4. भाषा अधिगम : उत्तरसंरचना विधियाँ
    3.2.4.1. नॉर्टन की सामाजिक अस्मिता विधि
    3.2.4.2. स्किफिलेन और ओच की भाषिक सामाजिकीकरण विधि
    3.2.4.3. वान लिएर की पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य विधि
3.2.5. पाठ-सार
3.2.6. बोध प्रश्न
3.2.7. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

3.2.0. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. उत्तरसंरचना के बारे में जान पाएँगे।
ii. भाषा अधिगम के सन्दर्भ में उत्तरसंरचना के पहल के बारे में समझ सकेंगे।
iii. बोनी नॉर्टन की भाषा अधिगम सम्बन्धी सामाजिक अस्मिता विधि को समझ पाएँगे।
iv. वान लिएर की पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य विधि के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
v. स्किफेलिन और ओच की भाषाई सामाजिकीकरण विधि को समझ पाएँगे।

3.2.1. प्रस्तावना

भाषा अधिगम के क्षेत्र में उत्तरसंरचना एक बहुत ही नयी विचारधारा है जिसने भाषा अधिगम के संरचनावादी दृष्टिकोण को चुनौती दीहै। संरचनावादी विचारधारा में भाषा अधिगम सम्बन्धी सामान्य बातों पर ही ध्यान केन्द्रित किया गया है तथा अधिगमकर्त्ता के वास्तविक समाज-सांस्कृतिक गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में भाषा अधिगम की आवश्यकता तथा स्थितियों के बारे में बहुत अधिक तथा चुनिंदा रूप से विश्लेषित नहीं किया गया है। परन्तु भाषा अधिगम के उत्तरसंरचनावादी विचारकों ने अधिगमकर्त्ता की वास्तविक स्थिति को आधार मानकर भाषा अधिगम सम्बन्धी विधियों को विभिन्न शोध द्वारा प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। इन विचारकों में अग्रणी हैं – बोनी नॉर्टन, वान लिएर तथा स्किफेलिन और ओच। इन विचारकों ने अपनी गम्भीर अध्ययन तथा

शोध द्वारा भाषा अधिगम सम्बन्धी नये मापदंडों को रेखांकित किया है जिसे उत्तरसंरचना विधि के रूप में जाना जाता है।

3.2.2. उत्तरसंरचना : परिचय

भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र में उत्तरसंरचना एक नव्य सिद्धान्त है। साथ ही इसे एक बहुत जटिल सिद्धान्त भी माना गया है। यही कारण है कि संरचनावाद की तुलना में हमें उत्तरसंरचना की व्याख्या काफी कम मिलती है। उत्तरसंरचना ने भाषा तथा साहित्य के साथ-साथ समाजविज्ञान को भी एक नयी धारा प्रदान की। उत्तरसंरचना की अवधारणा बीसवी सदी में फ्रेंच दर्शन से उभरकर आयी जिसके मुख्य पोषक थे – जेक देरिदा, माइकल फौकल्ट और मारिया क्रिस्तिवा। इस दार्शनिक परम्परा को उत्तरसंरचना कहने का उद्देश्य यह है कि इसके प्रतिपादक विद्वान् देरिदा, फौकल्ट तथा क्रिस्तिवा पहले संरचनावाद के समर्थक थे। संरचनावाद की यह मान्यता कि "अर्थ संस्कृति की अभिन्न अंग नहीं है" के विपरीत उत्तरसंरचनावादी दर्शन की यह मान्यता है कि "अर्थ को संस्कृति से अलग नहीं किया जा सकता।" चूँकि उत्तरसंरचनावादी विचारक अपनी इस अवधारणा को उत्तरसंरचना के रूप में अभिहित नहीं करते इसलिए उनके द्वारा इस परम्परा को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया है। इसलिए अधिकतर विषयों में उत्तरसंरचना को संरचनावाद के विरोधी या प्रतिक्रिया के आधार पर ही देखा जाता है।

3.2.3. भाषा अधिगम तथा उत्तरसंरचना

भाषा अधिगम के सन्दर्भ में उत्तरसंरचना को उपर्युक्त दोनों प्रसंगों में देखा गया है। भाषा अधिगम के उत्तरसंरचनावादी सिद्धान्तकार उदासीन कक्षागत भाषा अधिगम से परे समाज-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में सक्रिय रूप से शामिल होकर द्वितीय या विदेशी भाषा अधिगम की वकालत करते हैं। साथ ही संरचनावादी विचारधारा में भाषा अधिगम के सन्दर्भ में सीमित सामाजिक कारकों की ही चर्चा की गई है। परन्तु उत्तरसंरचना में सामाजिक परिवेश, स्थिति तथा विभिन्न सामाजिक कारकों को भाषा अधिगम को प्रभावित करने वाले मुख्य घटकों के रूप में दर्शाया गया है। इसलिए द्वितीय तथा विदेशी भाषा अधिगम के उत्तरसंरचनावादी विचारक भाषा अधिगम के कार्य को लक्ष्य भाषी समाज में शामिल होकर प्रयत्न तथा प्रत्यक्षण के माध्यम से करने की सलाह देते हैं। क्योंकि लक्ष्यभाषी समाज की सामाजिक मूल्यों, आदर्शों तथा विश्वासों को सही रूप में जानने के लिए यह अत्यावश्यक है कि किसी भी भाषा की मुख्य सम्पदा है और भाषा की अर्थवत्ता को प्रभावित करती है।

3.2.4. भाषा अधिगम : उत्तरसंरचना विधियाँ

भाषा अधिगम की उत्तरसंरचना विधियाँ मूलतः द्वितीय तथा विदेशी भाषा अधिगम की सामाजिक सिद्धान्त हैं। ये विधियाँ भाषा के निरपेक्ष कक्षागत अधिगम के बदले लक्ष्य भाषा के समाज-सांस्कृतिक परिवेश में सक्रिय रूप से सहभागिता के माध्यम से भाषा अधिगम की सलाह दी गयी है। साथ ही इस नवीन विचारधारा में भाषिक अस्मिता तथा सामाजिक अस्मिता को भाषा अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों के रूप में भी

परिभाषित किया गया है तथा भाषा अधिगम के इन बिन्दुओं पर विस्तृत रूप में परिक्षण के लिए भी कहा गया है। नीचे इन विधियों के बारे में विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

3.2.4.1. नॉर्टन की सामाजिक अस्मिता विधि

भाषा अधिगम के सन्दर्भ में बोनी नॉर्टन एक अग्रणी उत्तरसंरचनावादी विचारक है। उन्होंने वर्तमान विश्व के बहुभाषिक स्थिति तथा इसमें भाषा अधिगम में आनेवाली अस्मिता के प्रश्न को मुखर किया है। नॉर्टन ने भाषा को केवल मात्र सम्प्रेषण के एक उदासीन साधन के रूप में नहीं देखा है। उनका मानना है कि भाषा वास्तव में सामाजिक सम्बन्धों का माध्यम है, क्योंकि भाषा के द्वारा ही किसी व्यक्ति को शक्तिशाली सामाजिक नेटवर्क की प्राप्ति या अप्राप्ति होती है जो अधिगमकर्त्ता को बोलने का अवसर प्रदान करती है। नॉर्टन का कहना है कि द्वितीय भाषा अधिगम सिद्धान्तों में उन भाषा शिक्षार्थियों की संकल्पना को भी सामने लाना चाहिए जो जटिल सामाजिक अस्मिता से जूझ रहे हैं। उन्होंने इसे दिन-प्रतिदिन की सामाजिक अन्योन्यक्रिया में बार-बार सामने आने वाली निरन्तर साम्यहीन सामाजिक संरचना के बृहत् सन्दर्भ में देखने की आवश्यकता पर भी बल दिया है।

लम्बे अरसे तक कनाडा के पाँच प्रवजनकारी वयस्क महिलाओं पर की गई केस स्टडी के डेटा नॉर्टन की सिद्धान्त का मूल आधार है। डायरीज, प्रश्नावली, व्यक्तिगत तथा समूह साक्षात्कार के माध्यम से नॉर्टन ने अपनी इस शोध के लिए डेटा एकत्रित किया। नॉर्टन ने यह प्रलेख प्रस्तुत किया कि किस प्रकार इन महिलाओं की सामाजिक स्व-अस्मिता या अन्य द्वारा आरोपित अस्मिता स्थानीय भाषाभाषियों के साथ बातचीत के अवसर को ग्रहण करने या न करने की निर्णय को प्रभावित करती है।

उनके द्वारा प्रस्तुत इवा नाम की महिला का उदाहरण यह दिखता है कि किस प्रकार उसकी सामाजिक अस्मिता समय के साथ बदलती गयी और किस प्रकार यह बदलाव उसकी सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करती रही। प्रथमावस्था में इवा एक अप्रवासी महिला के रूप में सामने आयी। उस समय वह अंग्रेजी अच्छी तरह से नहीं बोल पाती थी, जिसके कारण वह अपनी सहकर्मियों के साथ बातचीत करते समय बहुत असहज और अटपटा महसूस करती थी और वह अपने आप को बेवकूफ जैसा महसूस करने लगती थी। उसे लगता था कि उसकी भाषिक सीमाबद्धता के कारण उसके साथ बात करने वाला व्यक्ति उसकी बातों को नहीं समझ पाते थे। इसलिए वह किसी से बातचीत नहीं करना चाहती थी या किसी बातचीत में भाग नहीं लेना चाहती थी। समय के साथ साथ इवा की सम्प्रेषण दक्षता बेहतर होने लगी और कार्यस्थल पर उसने अपनी कमजोर स्थिति को चुनौती देते हुए अपनी एक नयी पहचान बना ली। नॉर्टन का कहना है कि इवा ने अपनी पहचान एक 'बहुसांस्कृतिक नागरिक' की रूप में बना ली। अपनी भाषिक कौशल के विकास के साथ साथ इवा वाक् अधिकार के प्रति भी सजग होने लगी। वह अपनी सहकर्मियों के साथ बात करते समय अपनी सम्मान तथा महत्त्व के प्रति सचेत होने लगी और उसके लिए समयोचित प्रतिक्रिया भी देने में सक्षम हुई। अपनी पूर्वावस्था में वह किन स्थितियों से गुजरी थी और किस प्रकार सामाजिक जगत् से जुड़ी थी, इस नयी चेतना ने उसकी सामाजिक आचरण को बदल दिया और यह सिखाया कि किस प्रकार उसकी हाशिये की स्थिति को चुनौती दी जाए।

इस सन्दर्भ में दूसरा उदाहरण 'मार्टिना' नाम की एक चेकोस्लोवाकिया मूल की महिला का प्रस्तुत किया है जो कैनाडा की एक रेस्टोरेंट में काम करती है। एक बेहतर जिन्दगी की तलाश में मार्टिना कनाडा आई थी परन्तु अंग्रेजी अच्छी तरह से न बोल पाने के कारण मार्टिना को अपने से छोटे उम्र के सहकर्मियों से सम्मान तथा पहचान पाने के लिए किस प्रकार संघर्ष करना पर रहा था। इस उदाहरण को नोर्टन ने अपने भाषा अधिगम के सिद्धान्त को बताने के आधार रूप में प्रस्तुत किया है। नॉर्टन ने इस उदाहरण को 'एकाधिक अस्मिता और संघर्ष स्थिति' के रूप में दर्शाया है। जब मार्टिना अपनी परिवार के साथ कनाडा आई थी, तब न उसके पति और न वह अंग्रेजी बोल पाती थी। इसलिए शुरू में वह भाषाई स्तर पर अपने बच्चों पर निर्भर थी। कार्यस्थल पर अपनी संघर्ष के बारे मार्टिना कहती है कि वह जिस रेस्तरां में काम करती है वहाँ अक्सर रेस्तरां के मैनेजर के बच्चे आते थे जो मार्टिना के बच्चे से भी कम उम्र के होने के बावजूद भी उससे रूखे अंदाज में टेबल पोंछने या अन्य काम करने के लिए आदेश देते रहते थे। मार्टिना कहती है कि वह अजनबीयत की एक अजीब सी स्थिति में खड़ी थी। मार्टिना ने यह भी कहा कि इस तरह की स्थिति को प्रतिरोध करने के लिए तथा अपनी पहचान बनाने के लिए उसे अपने सहकर्मियों के साथ घरेलू सम्बन्ध विकसित करना पड़ रहा है। अप्रवासी होने के कारण तथा अंग्रेजीभाषी न होने के कारण मार्टिना अंग्रेजी में बातचीत करने के लिए सहज नहीं हो पाती थी और अपने आप को बेवकूफ और हीन महसूस करती थी, जबकि वह अच्छी प्रगति भी कर चुकी थी। फिर भी मार्टिना ने चुप्पी साध लेना स्वीकार नहीं किया। अप्रवासी होने के साथ साथ वह एक माँ भी थी और परिवार की मुख्य अनुरक्षक भी क्योंकि वह अपने पति पर निर्भर नहीं हो सकती थी। एक ही समय में उसे परिवार के विभिन्न दायित्वों को निभाना पड़ा। जैसे – मकानमालिक से बातचीत करना, अपने बच्चों के लिए स्कूल की व्यवस्था करना इत्यादि। इसके अलावा भी मार्टिना ने अपने पति को बेरोजगार भत्ता दिलाने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जब उसके पति ने नौकरी खो दी थी। माँ और पत्नी के दायित्वों को निभाने हेतु बोलते रहने की मार्टिना के निर्णय अप्रवासी महिला के रूप में आने वाली वस्तुगत स्थिति को रोकने के लिए सहायक हुई। इससे उसमें अपनी वाक् अधिकार के प्रति सजगता आई और इसके फलस्वरूप उसकी सम्प्रेषण दक्षता भी बेहतर होने लगी।

नारीवादी उत्तरसंरचनावादी परम्पराविहीन की सामाजिक अस्मिता का उत्तरसंरचना सिद्धान्त तथा अपनी इस अध्ययन के आँकड़ों का विश्लेषण करते हुए नॉर्टन ने यह सुझाव दिया है कि व्यक्ति और व्यक्ति तथा भाषा अधिगम के सन्दर्भ के सम्बन्ध की अवधारणा को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता है। उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि अधिगमकर्त्ता की भाषा तथा भाषा अधिगम सम्बन्धी पारम्परिक दृष्टिकोण को बदलकर भाषा सम्बन्धी वास्तविक तथा परिवर्तनशील पहलुओं तथा उसमें क्षमता (Power) की महत्त्व को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है। अर्थात् अधिगमकर्त्ता की भिन्न सामाजिक अस्मिता हो सकती है, जिसे घटना तथा स्थिति के फलस्वरूप बदला, छोड़ा या बेहतर किया जा सकता है। इसके लिए अधिगमकर्त्ता को अपने वाक् अधिकार के प्रति सजग होने की आवश्यकता है। यह सजगता मूलतः किस प्रकार प्रमुख भाषिक वर्ग अपने हितों की रक्षा करने के लिए बोलने के किन नियमों को प्रयोग में लाते हैं, इस बात की समझ प्राप्त करना है। इसलिए अधिगमकर्त्ता के लिए आवश्यक है कि वह अपनी एक पहचान बनाने के लिए संघर्ष करें जो उसे लक्ष्य भाषा को सिखने के लिए सर्वोत्तम स्थिति के निर्माण में सहायक होगी।

3.2.4.2. स्किफिलेन और ओच की भाषिक सामाजिकीकरण विधि

भाषा सामाजिकीकरण की अवधारणा इस सिद्धान्त का मूल आधार है। डफ़ ने भाषा सामाजिकीकरण को परिभाषित करते हुए कहा है कि भाषा सामाजिकीकरण मूलतः वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी समुदाय या संस्कृति के नौसिखिया या नवागन्तुक को उस समुदाय में सम्प्रेषणात्मक दक्षता, भाषिक सदस्यता तथा वैधानिकता प्राप्त होती है। यह प्रक्रिया भाषा के माध्यम से चलती है और जिसकी प्रमुख लक्ष है समुचित अस्मिता, उसूलों और लक्ष्य समूह से जुड़े हुए मानक तथा अमानक व्यवहार का अभिग्रहण। इस सिद्धान्त को नृ-तात्त्विक भाषाविद् स्किफेलिन और ओच ने प्रस्तावित किया था। मादागास्कार के नॉन-वेस्टर्न समाज, पश्चिमी सामोआ और पपुआ निउगिनिया में किये गए उनके नृ-तात्त्विक अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया। यहाँ के तीन समुदायों के विकास की पटभूमि का विश्लेषण करने के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि घर के मुख्य अनुरक्षकों के वक्तव्य में उनकी समुदाय की सामाजिक विश्वास तथा प्रमूल्यों की अभिव्यक्ति होती है और इसलिए उनके बच्चों के साथ उनकी संवाद में जैविक रूप से अभिकल्पिक हाव-भाव से भी कुछ अधिक होती है जो उन प्रमूल्यों को समझने हेतु अभिव्यक्त की जाती है। इसके अलावा स्किफेलिन और ओच इसे सांस्कृतिक गतिविधि भी मानते हैं जो उस समुदाय की सामाजिक अर्थवत्ता की बृहत् व्यवस्था को प्रतिफलित करती है जिसमें बच्चे सामाजिक होते तथा बनते हैं। इसलिए इस संकल्पना में किसी बच्चे को उस समुदाय की सामाजिक प्रतिमान की परिचय देने हेतु व्यवहार में लाई गई भाषा और भाषा व्यवहार हेतु शिशु का सामाजिकीकरण यह दोनों शामिल है।

प्रथम भाषा अधिगम की इस संकल्पना ने हाल ही में द्वितीय भाषा अधिगम के शोधकर्त्ताओं का ध्यान आकर्षित किया है। इन विचारकों ने यह प्राक्कल्पना प्रस्तुत की है कि द्वितीय भाषा अधिगम में उस भाषिक समुदाय की सदस्य बनने की क्रिया भी शामिल है। साथ ही उस भाषिक समुदाय में सदस्यता प्राप्ति का अधिगम भी मूलतः उस भाषा का अधिगम है। डफ़ के अनुसार द्वितीय भाषा सामाजिकीकरण में प्रथम भाषा सामाजिकीकरण के कई नियम लागू होते हैं, जैसे – दोनों ही भाषाएँ घर, स्कूल या कार्यक्षेत्र में व्यवहृत तथा प्रयोग में लायी जाती है। उनका मानना है कि द्वितीय भाषा के सन्दर्भ में यह सामाजिकीकरण प्रक्रिया अधिगमकर्त्ता के लिए अधिक कठिन होते हैं क्योंकि वह पहले एक अन्य भाषा तथा उसके सामाजिक नियमों को अर्जित कर चुके होते हैं। हालाँकि द्वितीय तथा विदेशी भाषा के अधिगम के समय उस भाषिक समुदाय में अधिगमकर्त्ता को बिलकुल वही परिवेश, स्वीकृति और स्थिति मिल पाए जो प्रथम भाषा अधिगम के समय प्राप्त होती है इसकी कोई निश्चितता नहीं है। सम्भव है कि लक्ष्य भाषी समुदाय में अधिगमकर्त्ता को विचारधाराओं या व्यावहारिक कारणों से प्रतिरोध का भी सामना करना पड़े। हालाँकि अपनी भाषा सामाजिकीकरण उपागमन के अध्ययन में डफ़ ने इस पर बहुत अधिक विरोध प्रकट नहीं किया है। इस अध्ययन में उन्होंने यह उदाहरण प्रस्तुत किया कि किस प्रकार समाज-राजनैतिक परिवर्तन सन 1989 के बाद के हंगेरी के गणतन्त्रीकरण से सम्बन्धित है और इससे कैसे हंगेरी के पारम्परिक मौखिक मूल्यांकन की प्रथा को प्रभावित किया। सन 1980 के द्वितीयार्द्ध में हंगेरी में ऐसे अनेक स्कूलों की स्थापना की गई जिसमें अंग्रेजी को शिक्षण के नए माध्यम के रूप में शामिल किया गया। अंग्रेजी के साथ-साथ एक पश्चिमी दृष्टिकोण भी साथ में लाया जिसने हंगेरी के कठोर और दमनकारी शिक्षा व्यवस्था का निर्मूलन कर

एक नयी शिक्षा व्यवस्था की नींव रखी। इस नयी व्यवस्था में विद्यार्थियों का मूल्यांकन समूह कार्य प्रेजेंटेशन के माध्यम से किया जाने लगा जिसने पुराने हंगेरियन शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थियों के मूल्यांकन व्यवस्था को परिवर्तित किया। पुरानी मूल्यांकन व्यवस्था में शिक्षक द्वारा कक्षा में एक एक कर विद्यार्थियों को बुलाकर पढ़ाये गए पाठ को सुनाने के लिए कहा जाता था तथा कक्षा में ही उसका मूल्यांकन किया जाताथा। इस शोध में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार समाज-राजनैतिक परिवर्तन कक्षागत शिक्षण को प्रभावित करती है।

कारिबेयन द्वीपसमूह के डोमिनिका में पाऊ द्वारा की गई अध्ययन में यह बात सामने आई है कि किसी समुदाय की भाषिक वैचारिकी स्कूल तथा घरेलु वातावरण में बच्चों की भाषा सामाजिकीकरण को प्रभावित करती है। इस समुदाय में दो भाषा व्यवहार में लायी जाती है, पहला एक फ्रेंच-आधारित क्रेओल जिसे 'पातवा' कहा जाता है, तथा दूसरा है अंग्रेजी जो उस क्षेत्र की राजभाषा है। पातवा सामान्यतः गाँव की भाषा है। बच्चों के माता-पिता तथा शिक्षकों का मानना है कि पातवा अंग्रेजी के अधिगम में बाधा डालती है जिसके कारण पातवा की सामाजिक प्रयोग को सीमित किया जा रहा है। इस चिन्ता के कारण उस समुदाय के लोगों ने यह उपाय निकला कि बच्चों को पातवा में बोलने के लिए प्रोत्साहित न किया जाए। परन्तु पाऊ ने यह पाया कि वयस्क लोग पातवा को अंग्रेजी से कई मायनों में अभिव्यक्ति के लिए बेहतर मानते हैं तथा इसका व्यवहार भी करते हैं। इसके फलस्वरूप बच्चे घर में पातवा तथा स्कूल में अंग्रेजी का प्रयोग करते हैं। इस जटिल भाषिक गतिविधि से उस समुदाय की पॉवर रिलेशन के प्रति सजगता तथा उसकी सामाजिक भूमिका सिद्ध होती है। इस अध्ययन के आधार पर पाऊ कहते हैं कि भाषा सामाजिकीकरण का स्वरूप किसी समुदाय या समूह के आदर्शों तथा अन्योन्य क्रिया के बृहत् सवरूप के द्वारा संगठित तथा अंकित की जाती है। डफ़ तथा पाऊ की इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार भाषा के प्रयोग द्वारा अधिगमकर्त्ता सामाजिक बनते हैं। कुछ अन्य अध्ययन द्वारा भाषा सामाजिकीकरण के कुछ अन्य पहलू भी सामने आए हैं। उदाहरण के लिए मात्सुमुरा के अध्ययन से यह देखने का प्रयास किया गया है कि सामाजिक स्थिति के प्रत्यक्षण में परिवर्तन और साथ ही इस परिवर्तन अंग्रेजी के प्रेग्मेटीक प्रयोग में प्रभाव को उन्होंने दो समूहों के अंग्रेजी अधिगम को तुलनात्मक अध्ययन द्वारा उजागर किया है। इन दो समूहों में पहला समूह है वे जापानी विद्यार्थी जो पहले जापान में अंग्रेजी सीखते है और बाद में कनाडा में और दूसरे समूह में है वे विद्यार्थी जो केवल जापान में ही अंग्रेजी सीखते हैं। इन दो विद्यार्थी समूहों के अध्ययन से यह देखने को मिला कि पहला समूह जो बाद में कनाडा में अंग्रेजी का अधिगम करते हैं वे दूसरे समूह की तुलना में अंग्रेजी में अधिक आत्मविश्वासी और दक्ष होते हैं क्योंकि वे लक्ष्य भाषा समाज में सामाजिकीकरण के दौर से गुजरते है। इन अध्ययनों को समेकित करते हुए डफ़ ने भाषा सामाजिकीकरण के सन्दर्भ में कुछ बिन्दुओं पर विचार किया है –

(1) लक्ष्य भाषा में सम्प्रेषण क्षमता के विकास तथा लक्ष्य भाषा समूह के प्रमूल्यों, भाषिक व्यवहार तथा अस्मिता इत्यादि के बारे में जानने के लिए सामाजिक अन्योन्यक्रिया आवश्यक है।

(2) सामाजिकीकरण की प्रक्रिया द्विदिशात्मक है जिसमें उस भाषिक समुदाय के अच्छे ज्ञानी व्यक्ति की भूमिका नौसिखियों को उस भाषिक समुदाय के प्रमूल्यों, आदर्शों तथा विश्वासों को सीखने में महत्त्वपूर्ण होती है और दूसरी ओर नोसिखिया भी उनके मार्गदर्शक को अपनी आवश्यकताओं के बारे में बता सकते हैं।

(3) भाषा तथा अन्य प्रतीक व्यवस्था सम्प्रेषण और सांस्कृतिक ज्ञान के बीच मध्यस्थता करते हैं।

(4) भाषा अधिगम और सामाजिकीकरण एक स्थायी प्रक्रिया है।

(5) द्वितीय तथा विदेशी भाषा सामाजिकीकरण लक्ष्य भाषा की सांस्कृतिक तथा भाषाई कोश को पुनरुत्पादित नहीं करता। इसमें उस भाषा तथा संस्कृति का आंशिक अर्जन किया जा सकता है तथा उसकी मान्यता और व्यवहार को नाकारा जा सकता है।

3.2.4.3. वान लिएर की पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य विधि

वान लिएर के अनुसार भाषा अधिगम के पारिस्थितिक सिद्धान्त में उन्मजन की अवधारणा एक मुख्य पूर्वानुमान है। इसने कार्टेसियन रिडक्शनिज्म को प्रतिस्थापित किया है। कार्टेसियन रिडक्शनिज्म मूलतः वह परम्परा है जिसके समर्थक किसी जटिल अवधारणा को कई घटकों में विभाजित कर उन घटकों का पृथक-पृथक रूप में विश्लेषित कर किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की विधि को समर्थन करते हैं। बजाय इसके कि प्रत्येक वस्तु को अविभाज्य तथा परस्पर निर्भरशीलता की नियमों के आधार पर विश्लेषित किया जाए। वस्तु तथा विषयों की यह परस्पर निर्भरशीलता परिवर्तन या वस्तु की उन्मजन प्रकृति को सूचित करते हैं जो उसकी पूर्व अवस्था तक घटाया नहीं जा सकता। इसलिए पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य सिद्धान्त यह कहता है कि अधिगमकर्त्ता को समाज-सांस्कृतिक वातावरण में डूब जाना चाहिए जो अर्थ से परिपूर्ण है। लिएर का कहना है कि यह आर्थी परिपूर्णता अधिगमकर्त्ता के इस समाज-सांस्कृतिक वातावरण में घुलने-मिलने के साथ-साथ उनके लिए और अधिक फलदायी होने लगता है। द्वितीय तथा विदेशी भाषा अधिगम के गत्यात्मक तथा उन्मजन अभिलक्षण के अलावा भी पारिस्थितिक सिद्धान्त शिक्षार्थी की मौखिक और अमौखिक अन्योन्य क्रिया की महत्त्व को रेखांकित करती है। वान लिएर के शब्दों में कहें तो यह प्रक्रिया न केवल अधिगम को सुगम बनाती है बल्कि अधिगमकर्त्ता को प्राथमिक स्तर से सिखने के अवसर भी प्रदान करती है। भाषा को विभिन्न प्रतीकोत्पादित व्यवस्था के रूप में देखने का आधार मूलतः पारिस्थितिक भाषाविज्ञान की देन है। भाषाविज्ञान की इस शाखा ने भाषा की प्रतीकवैज्ञानिक अवधारणा को ग्रहण किया है, जो सम्प्रेषण को शब्द व्यवहार से भी कहीं ऊँचा मानते हैं। इस अवधारणा ने अर्थोत्पादन के अन्य श्रोतों जैसे – आंगिक भाषा, चित्र, कलाकृतियाँ आदि को भी समाहित किया है। इसलिए वान लिएर कहते हैं कि परिवेश प्रतीकों के एक बजट प्रदान करता है जिसके जरिये एक सक्रिय अधिगमकर्त्ता दूसरों के साथ बातचीत की गतिविधि में भाग लेते हैं, जो अधिगमकर्त्ता से अधिक, उनसे कम या उनके समान भाषिक क्षमता वाले व्यक्ति हो सकते हैं। इसलिए अधिगम वातावरण प्रकार्य अप्रत्यक्ष अधिगमकर्त्ता के लिए न केवल भाषिक इनपुट प्रदान करता है बल्कि बातचीत के अवसर भी प्रदान करते हैं जो किसी विशेष स्थिति में उपलब्ध हो सकती है। लिएर के अनुसार 'उपलब्धता' (affordance) मूलतः एक संभावित स्थिति है जिसका उद्भव तब होता है

जब हम भौतिक और सामाजिक संसार के साथ अन्योन्य क्रिया (interaction) में भाग लेते हैं। इस संकल्पना को और अधिक स्पष्ट करने के लिए लिएर ने एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि उपलब्धता की इस संकल्पना को एक 'पत्ते' के उदाहरण से समझा जा सकता है जो भिन्न जीवों के लिए भिन्न आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए उपलब्ध है, जैसे – कैटरपिलर के लिए खाद्य के रूप में, मकड़ी के लिए छत के रूप में तथा वैद्य के लिए औषधि के रूप में उपलब्ध है । अपने स्वरूप को बदले बिना ही एक पत्ते को प्रयोगकर्त्ता के आवश्यकतानुसार भिन्न कार्यों के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। भाषा अधिगम के पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य की संकल्पना में 'affordance' मूलतः वैकल्पिक इनपुट की संकल्पना है। यह अधिगमकर्त्ता तथा परिवेश की स्वरूप को दर्शाता है जो अधिगमकर्त्ता के लिए प्रासंगिक होता है। अधिक स्पष्ट रूप में यह कहा जा सकता है कि एक सक्रिय अधिगमकर्त्ता भाषिक अफ्फोरदेंस को समझने में सक्षम होता है और उन्हें भाषिक गतिविधियों में शामिल करता है।

कहा जा सकता है कि पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य भाषा अधिगम के लिए अन्योन्य क्रिया की भूमिका को प्रतिपादित करता है। लिएर के अनुसार संवाद में ही अर्थ की बात/ मोल-तोल होती है जो वास्तविक रूप में अधिगम का संकेत है । जब अर्थ के सन्दर्भ में वार्तालाप होती है तब अधिगमकर्त्ता नए शब्दों तथा भाषिक अभिव्यक्तियों के सन्दर्भ में ज्ञान प्राप्त करता है जो उसकी लक्ष्य भाषा की भाषिक सम्पदा को सम्पन्न करता है। संक्षेप में कहें तो पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य द्वितीय तथा विदेशी भाषा अधिगम सम्बन्धी 'बोधात्मक विधि' है। इसमें अधिगमकर्त्ता पारिस्थिति, सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण में प्रत्यक्ष रूप से शामिल होकर प्रयोग के माध्यम से भाषा का अधिगम करता है । यह सिद्धान्त भाषा के उन्मजन प्रकृति को उजागर करता है और साथ ही अधिगमकर्त्ता द्वारा अर्थपूर्ण वार्तालाप के माध्यम से अपनी भाषाई कोश को समृद्ध करने पर जोर देता है।

3.2.5. पाठ-सार

भाषा अधिगम एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसकी शुरुआत संसार में भाषा विविधता के साथ ही हुई । भाषा मनुष्य की सम्प्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है इसलिए भाषा वैविध्य की खाई को पार करना भी आवश्यक है जिससे भाषा अधिगम की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहे। चूँकि भाषा समाज में पनपती है तथा समाज में ही जीवित रहती है इसलिए भाषा अधिगम को सार्थक बनाने के लिए अधिगमकर्त्ता का भाषिक सामाजिकीकरण अत्यावश्यक है । भाषा अधिगम के सन्दर्भ में उत्तरसंरचनावादी विचारक कक्षा अधिगम से कहीं अधिक वास्तविक तथा उस भाषा के सामाजिक परिवेश का हिस्सा बनकर प्रयोग द्वारा भाषा अधिगम करने के समर्थक हैं। प्रस्तुत पाठ में जिन उत्तरसंरचनात्मक विधियों का विवेचन किया गया है उसे देखने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है।

3.2.6. बोध प्रश्न / अभ्यास

रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु उचित विकल्प का चुनाव कीजिए–

1. वान लिएर भाषा अधिगम के ..... के पोषक हैं। (सामाजिक अस्मिता / पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य)
2. भाषा अधिगम के सन्दर्भ में अफ्फोरदेंस के बारे में ..... ने कहा है। (स्किफेलिन / वान लिएर)
3. भाषा सामाजिकीकरण ..... की अवधारणा है। (नॉर्टन / स्किफेलिन और ओच)
4. प्रथम भाषा अधिगम के कुछ नियम द्वितीय भाषा अधिगम में भी लागू ..... हैं। (होते / नहीं होते)
5. "परिवेश अधिगमकर्त्ता को एक प्रतीकों एक बजट प्रदान करता है।" यह ..... का कथन है। (लिएर / ओच)

सही उत्तर – (1) पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य (2) वान लिएर (3) स्किफेलिन और ओच (4) होती है (5) लिएर

कथन के सही / गलत होने की पहचान कीजिए –

1. उत्तरसंरचना अर्थ की असीमितता को उजागर करता है। (सही / गलत)
2. भाषा अधिगम एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। (सही / गलत)
3. भाषा अधिगम के लिए भाषा सामाजिकीकरण आवश्यक नहीं है। (सही / गलत)
4. उत्तरसंरचना कक्षागत भाषा अधिगम को अधिक महत्त्व देती है। (सही / गलत)
5. भाषा का समस्त कार्य-व्यापार अर्थद्योतन हेतु चलती है। (सही / गलत)

सही उत्तर – (1) सही (2) सही (3) गलत (4) गलत (5) सही

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा सामाजिकीकरण से आप क्या समझते हैं ?
2. भाषा अधिगम की उत्तरसंरचना विधि के बारे में संक्षेपमें लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. बोनी नॉर्टन की भाषा अधिगम विधि को उदाहरण सहित विस्तार से लिखिए।
2. भाषा अधिगम के पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य को सोदाहरण समझाइए।

3.2.7. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. Norton, B. (1995). Social Identity, Investment and Language Learning. TESOL Quarterly, 29, P. 9-31, Online ISSN : 1545-7249
2. Norton, B. (1997). Language, Identity and the Ownership of English. TESOL Quarterly, 31, P. 409-429, ISSN : 1545-7249

3. Norton, B. (2000). Identity and Language Learning: Gender, ethnicity and educational change. Harlow: Longman
4. Schieffelin, B. & Ochs, E. (1986). Language Socialization. Annual Review of Anthropology, 15, P.161-191
5. Van Lier, L. (2004). The Ecoligy and Semiotics of Language Learning. A Socio-cultural Perspective. Boston: Kluwer Academic. P.91, ISBN : 978-1-4020-7912-2
6. Van Lier, L. (2009). From Input to Affordance: Social-Interactive Learning from an Ecological Perspective. In J.P. Lantolf (Ed.), Sociocultural Theory and Second Language Learning. New York: Oxford University Press. P. 245-160
7. Weedon, C. (1987). Feminist Practice and Poststructuralist Theory. London: Blackwell.
8. Matsumura, S. (2001). Learning the Rules for Offering Advice: A Quantitative Approach to Second language Socialization. Language Learning, 51, P. 635-679
9. Duff, P.A. (1995). An Ethnography of Communication in immersion Classrooms in Hungary. TESOL Quarterly, 25, P.505-537
10. Duff, P.A. (1996). Different Languages, Different Practices: Socialization of Discourse Competence in dual-language School Classroom: Qualitative Research in Second Language Acquisition. New York: Cambridge University Press. P. 407-433
11. Duff, P. (2007). Language Socialization as Socioculturel Theory: Insights and Issues. Language Teaching, 40, P.309-319
12. Ellis, R. (2012). The Study of Second Language Acquisition (2nd ed.). Oxford: Oxford University Press.
13. Paugh, A.L. (2005). Acting Adult: Language Socialization, Shift, and Ideologies in Dominicana, West Indies. In J.Cohen, K.T. McAlister, K. Rolstad, & J.MacSwam (Eds.), Proceedings of the 4th International Symposium on Bilingualism. Somerville, MA: Cascadilla Press. P.1807-1820.

❖❖❖

खण्ड – 3 : भाषा-शिक्षण : प्रविधि और अधिगम

इकाई – 3 : भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर और मल्टीमीडिया का अनुप्रयोग

इकाई की रूपरेखा

3.3.00. उद्देश्य कथन
3.3.01. प्रस्तावना
3.3.02. भाषा-शिक्षण का सम्प्रत्यय
  3.3.02.1. भाषा-शिक्षण में माध्यम एवं उपकरण
  3.3.02.2. भाषा-शिक्षण में बहुसंचार सामग्री
3.3.03. भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर का सम्प्रत्यय
  3.3.03.1. कंप्यूटर का अर्थ एवं कार्य
  3.3.03.2. कंप्यूटर के प्रकार एवं गुण
  3.3.03.3. शिक्षण के स्रोत के रूप में कंप्यूटर
3.3.04. कंप्यूटर सह अनुदेशन
  3.3.04.1. कंप्यूटर द्वारा हिन्दी भाषा-शिक्षण
  3.3.04.2. हिन्दी भाषा-शिक्षण अनुदेशन में कंप्यूटर के कार्य
  3.3.04.3. हिन्दी भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन का वैशिष्ट्य
  3.3.04.4. हिन्दी भाषा में कंप्यूटर सह अनुदेशन की उपयोगिता
3.3.05. मल्टीमीडिया का सम्प्रत्यय
  3.3.05.1. मल्टीमीडिया के प्रकार
  3.3.05.2. मल्टीमीडिया के प्रमुख घटक
  3.3.05.3. मल्टीमीडिया का शिक्षा में उपयोग
3.3.06. हिन्दी भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया का अनुप्रयोग
  3.3.06.1. इंटरनेट (Internet)
  3.3.06.2. ई-अधिगम (E-Learning)
  3.3.06.3. मल्टीमीडिया प्रोजेक्टर (Multimedia Projector)
  3.3.06.4. आभासीय कक्षा कक्ष (Virtual Class Room)
  3.3.06.5. स्मार्ट कक्षा (Smart Class)
  3.3.06.6. स्मार्ट बोर्ड (Smart Board)
3.3.07. हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य माध्यमों का उपयोग
  3.3.07.1. हिन्दी शिक्षण में श्रव्य माध्यमों का उपयोग
  3.3.07.2. हिन्दी शिक्षण में दृश्य माध्यमों का उपयोग
  3.3.07.3. हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य माध्यमों का उपयोग
3.3.08. पाठ-सार
3.3.09. बोध प्रश्न
3.3.10. व्यवहार

3.3.11. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

3.3.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

i. भाषा-शिक्षण का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
ii. हिन्दी भाषा-शिक्षण में सूचना प्रौद्योगिकी का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iii. हिन्दी भाषा-शिक्षण में बहुमाध्यमों और उपकरणों का प्रयोग जान सकेंगे।
iv. हिन्दी भाषा-शिक्षण में संचार सामग्री का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
v. भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर अनुप्रयोग का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vi. हिन्दी भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vii. भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया के अनुप्रयोग का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
viii. हिन्दी भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया के विविध आयामों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.3.01. प्रस्तावना

भाषा-शिक्षण का क्षेत्र आज के वैज्ञानिक समय में अतिव्यापक और सहज हो गया है। भाषा-शिक्षण की प्रविधि अधिक वैज्ञानिक और बोधगम्य है एवं उसकी विधियाँ-प्रविधियाँ नूतन स्वरूप में भाषा-शिक्षण के नवीन लक्ष्यों और उद्देश्यों को साधने की दृष्टि प्रयोग में आ रही है। भारत एक बहुभाषी देश है। हिन्दी को संविधान ने राष्ट्र भाषा का दर्जा दिया है। हिन्दीभाषी प्रदेशों में हिन्दी का मातृभाषा और अहिन्दीभाषी प्रदेशों में अन्यभाषा के रूप में शिक्षण होता है। विद्यार्थी के क्षमता तथा कौशल सम्बन्ध विकास की पहचान के अभ्यास सामग्री तथा दृश्य-श्रव्य साधनों का भी हिन्दी-शिक्षण में प्रयोग बढ़ा है। सूचना प्रौद्योगिकी से आज वर्तमान प्रभावित है। इस प्रभावीकरण ने एक संचार भाषा को जन्म दिया है। आज संचार भाषा के रूप में हिन्दी विकसित हो रही है। इस संचार भाषा हिन्दी के शिक्षण से वैश्विक स्तर पर भारतीय संस्कृति विकसित हो रही है।

आज कंप्यूटर का हिन्दी से गहरा नाता बन चुका है "वह मशीन साधित अनुवाद करता है, वर्तनी का सुधार करता है, सही शब्द सुझाता है, व्याकरण-विधान करता है और हमारे मौखिक तथा लिखित सन्देशों का सम्प्रेषण करता है।" भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया का भी विशिष्ट स्थान है। अब शिक्षण-अधिगम में नये माध्यमों का विकास हो रहा है। कंप्यूटर, इन्टरनेट, उपग्रह संचार प्रणाली, ई-मेल, माध्यम, मल्टीमीडिया, हिन्दी वेबसाइट आदि का अनुप्रयोग हिन्दी भाषा-शिक्षण में बढ़ रहा है। मल्टीमीडिया उच्चारण, वाक्य निर्माण, व्याकरण-शिक्षण, भाषा-कौशल आदि में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार भाषा-शिक्षण में नए माध्यमों के अनुप्रयोग पर विस्तृत चर्चा प्रस्तुत पाठ में की गई है।

3.3.02. भाषा-शिक्षण का सम्प्रत्यय

शिक्षण का सामान्य अर्थ है – शिक्षा देना, पढ़ाना, ज्ञान प्रदान करना, सिखाना, कौशल विकसित करना इत्यादि। शिक्षण को एक ऐसी प्रक्रियाओं की व्यवस्था माना गया है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे को ज्ञान प्रदान करने के शिक्षण के कार्य को सम्पन्न करने के लिए अनेक प्रकार की क्रियाएँ करता है और विद्यार्थियों के व्यवहार में आत्मीयता के साथ वाँछित परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

किसी भी प्रकार का सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना शिक्षण कहलाता है परन्तु भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा का मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करना ही अभीष्ट नहीं हैं। बल्कि लक्ष्य-भाषा की दक्षता एवं कुशलता का विकास करना, जिससे विद्यार्थी उस भाषा-भाषी समाज में विचार-विनिमय कर सके।

भाषा-शिक्षण में मुख्यतः दो बातें आती हैं – प्रथम भाषाई दक्षता का विकास करना अर्थात् भाषा का ज्ञान (भाषाई व्यवस्था तथा संरचना आदि) प्रदान करना। द्वितीय भाषाई दक्षता का व्यावहारिक रूप, जिसमें प्राप्त दक्षता के ज्ञान को व्यवहार में परिवर्तन कर अपने भावों-विचारों को मौखिक-लिखित रूप से अभिव्यक्त करना तथा वक्ता या लेखक के भावों-विचारों को सुनकर या पढ़कर ग्रहण करना होता है।

भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में प्रथम विभाजन मातृभाषा और अन्य भाषा-शिक्षण के रूप में है। इन दोनों ही प्रकार की शिक्षण प्रकृति, प्रणाली और प्रयोक्ता की अपनी आवश्यकता, प्रयोजन एवं अभिप्रेरण के कारण भिन्न-भिन्न हो जाती है। हमारे देश की विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था में हिन्दी का शिक्षण इन दोनों रूपों में होते हैं। हिन्दी भाषा-शिक्षण में उपकरणों का प्रयोग पाठ्यसामग्री को रोचक एवं सुबोध करता है। विद्यार्थी के ज्ञान को स्पष्ट करने में इनकी नितान्त आवश्यकता है।

3.3.02.1. भाषा-शिक्षण में माध्यम एवं उपकरण

वर्तमान में भाषा-शिक्षण में सामग्री अनिवार्य होती है । शिक्षण-सामग्री के अन्तर्गत पाठ्यपुस्तकें, व्याकरण व शब्दकोश को मूल सामग्री के रूप में तथा अभ्यास सामग्री, आधुनिक उपकरणों आदि को व्यावहारिक सामग्री के रूप में देखा व प्रयुक्त किया जाता है । भाषा-शिक्षण को सम्प्रेषणपरक, उद्देश्यमूलक, वैज्ञानिकपरक बनाने में विविध माध्यमों व उपकरणों की उपादेयता स्वयं सिद्ध है।

शिक्षाविदों और मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि जिस सीमा तक बालक की ज्ञानेन्द्रियों को क्रियाशील रखा जाएगा उतना ही अधिक प्रभाव पड़ेगा। बिना दृश्य-श्रव्य सामग्री के विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता मात्र रह जाएगा। यही कारण है कि आज शिक्षण विधि को प्रभावी तथा सजीव बनाने के लिए दृश्य-श्रव्य उपकरणों की आवश्यकता का अनुभव तेजी से किया जाने लगा है।

3.3.02.2. भाषा-शिक्षण में बहुसंचार सामग्री

भाषा-शिक्षण की योजना के तीन चरण माने जाते हैं – चयन (Selection), अनुस्तरण (Gradation), और प्रस्तुतीकरण (Presentation) । चयन के चरण में पाठ्यबिन्दुओं का चयन किया जाता है, और उन्हें पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित किया जाता है । ये पाठ्यबिन्दु, ध्वनि, लिपि, वर्तनी, शब्द तथा वाक्य आदि सभी भाषिक तत्त्व हैं । जिनका ज्ञान प्रदान करना ही भाषा-शिक्षण का लक्ष्य है । पाठ्यक्रम निर्माता भाषा की संरचना तथा सीखने वालों की भाषा को ध्यान में रखकर पाठ्यबिन्दुओं का चयन कर सकते हैं।

चयनित पाठ्यबिन्दुओं को पाठ्यपुस्तक में प्रस्तुतीकरण के क्रम से अनुस्त रित किया जाता है । अनुस्तरण का उद्देश्य सरल व आवश्यक तत्त्व सीखने से है, बाद में क्रम से अन्य तत्त्व सीखें । चयन और अनुस्तरण पाठ्यसामग्री निर्माण से सम्बन्धित चरण है। तथा पाठ्यपुस्तक कक्षा शिक्षण में प्रस्तुतीकरण का चरण है।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के प्रमुख तीन आयाम शिक्षाशास्त्रियों ने माने हैं – विद्यार्थी, सामग्री तथा शिक्षक द्वारा उसका प्रस्तुतीकरण । शिक्षण-सामग्री में दृश्य-श्रव्य उपकरणों की आवश्यकता व उनके महत्व के साथ ही शिक्षक को इन सबका सम्यक् ज्ञान होना चाहिए । इस सामग्री में से वह किसका कब, कैसे और कितना उपयोग करें । भाषा-शिक्षण को स्वाश्रित बनाने में श्यामपट्ट, चार्ट, फ्लैश कार्ड, ग्रामोफोन, स्लाइड आदि को प्रथम चरण में, भाषा प्रयोगशाला को दूसरे चरण में, रेडियो, दूरदर्शन, टेप रिकार्डर को तीसरे चरण एवं कंप्यूटर को चौथे चरण में देखा जा सकता है ।

स्वाश्रित शिक्षण विधि में पाठ 'स्वयं शिक्षक' के रूप में कार्य कर सकें । भाषा-शिक्षण-सामग्री का निर्माण होने के पश्चात् उसे 'कंप्यूटर' अपने 'प्रोग्राम' द्वारा विद्यार्थियों के लिए उपलब्ध करता है । भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर द्वारा भारतवाणी एक परियोजना के तहत भारतीय भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को एक पोर्टल (वेबसाइट) पर उपलब्ध करना है । यह बहुसंचार का सटीक कार्य है ।

3.3.03. भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर का सम्प्रत्यय

सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर एक नयी उपलब्धि है । वस्तुतः इस युग में कंप्यूटर का मशीनी अनुवाद, कृत्रिम वाक्, संश्लेषण, पाठ-विश्लेषण, कोश-निर्माण, विज्ञान इत्यादि अनेक क्षेत्रों में सार्थक प्रयोग किया जा रहा है परन्तु इधर भाषा-शिक्षण में भी इसका उपयोग तीव्रता से बढ़ा है । नई भाषा सीखने के उत्सुक विद्यार्थी इस कंप्यूटर की सहायता से प्रभावी रूप में और कम समय में भाषा सीख सकते हैं, क्योंकि इसके माध्यम से उन्हें तत्काल सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, त्रुटियों या दोषों की जानकारी हो जाती है तथा पाठ निर्देश और पाठ अभ्यास भी मिल सकते हैं ।

कंप्यूटर की सम्भावनाओं और क्षमताओं का और भी विश्लेषण करें तो वर्तमान समय में इसके प्रयोग की अनिवार्यता सिद्ध होती है । आज कंप्यूटर व संचार प्रविधि के सम्मेलन ने कंप्यूटर प्रयोग को नये आयाम दिये हैं ।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सहज व बोधगम्य बना दिया है। विद्यालय में लोकल एरिया नेटवर्क तथा इंटरनेट ने ज्ञान सम्प्रेषण एवं सामूहिक अधिगम की सीमा को विस्तृत कर दिया है।

विज्ञान प्रविधि के इस युग में ज्ञान के नवोन्मेष का रूप सामने उभर कर आया है। ऐसे में बहुत से क्षेत्रों में कंप्यूटर आधारित शिक्षा का महत्त्व बढ़ा है। इनमें कंप्यूटर-शिक्षण का काफी महत्त्व है। कंप्यूटर-शिक्षण-प्रक्रिया के माध्यम से विद्यालयों में विद्यार्थियों को शिक्षित करना एक विशिष्ट प्रौद्योगिक ज्ञान को संवर्धित करने का प्रयास है। कंप्यूटर शिक्षा को 1980 से ही बढ़ावा मिल रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है – "क्योंकि कंप्यूटर महत्त्वपूर्ण और सर्वव्यापक साधन बन गया है अतः इसके बारे में जानकारी और उनके प्रयोग में प्रशिक्षण व्यावसायिक शिक्षा का अंग बनाया जाएगा।"

हिन्दी भाषा-शिक्षण की विषयवस्तु का भी तकनीकी माध्यम से शिक्षण किया जा सकता है। भाषा के वर्ण, शब्द, उच्चारण का ज्ञान सम्पादन भाषा प्रयोगशाला में दिया जावे। अधिगम कौशलों का विकास सरल वाचन के उपरान्त जटिल कौशल का विकास किया जाता है। कंप्यूटर सह अनुदेशन की सहायता से हिन्दी भाषा-शिक्षण प्रभावी होगा।

3.3.03.1. कंप्यूटर का अर्थ एवं कार्य

कंप्यूटर एक इलेक्ट्रानिक मशीन है जिसमें अपरिष्कृत आँकड़े (रॉ डेटा) प्रयोगकर्त्ता द्वारा डाले जाते हैं, यह इन आँकड़ों को दिए गए निर्देशों के अनुसार (प्रोग्राम) में कन्ट्रोल के अंदर प्रोसेस करता है, परिणाम (आउटपुट) देता है तथा परिणामों को भविष्य में प्रयोग हेतु भण्डारण (स्टोर) कर लेता है। यह आंकिक तथा गैर आंकिक (गणितीय एवं तार्किक) दोनों प्रकार के आँकड़ों को प्रोसेस कर सकता है। इस प्रकार कंप्यूटर को हम एक ऐसा यन्त्र कह सकते हैं जिसमें उच्च स्तरीय संगणक (Calculater), टंकण-यंत्र (Type Writer), टेलीविजन (T.V.) तथा मेमोरी (Memory) का अनोखा संगम होता है।

कंप्यूटर के जनक चार्लेस वाबेज माने जाते है। कंप्यूटर मानव मस्तिष्क से कहीं अधिक तीव्र गति से संगणना तथा विश्लेषण कर सकता है। इसके द्वारा प्रदत्त गणनाएँ न केवल तीव्र गति से होती है वरन् उनमें शुद्धता की मात्रा भी अधिक होती है। कंप्यूटर द्वारा की गणनाओं में त्रुटियों की सम्भावना शून्य होती हैं। प्रत्येक कंप्यूटर मुख्यतया पाँच कार्य करता है, यथा –

(1) आगत (Input) द्वारा दिए गए आँकड़ों को स्वीकारना।
(2) आँकड़ों (Data) का भण्डारण (Storage) करना।
(3) प्रयोग करने वाले की आवश्यकतानुसार उन आँकड़ों को प्रोसेस (Process) करना।
(4) निर्गत (Out put) के रूप में परिणाम (Result) देना।
(5) कंप्यूटर के अन्दर सभी कार्य नियन्त्रण (Control) में रखना।

नीचे प्रदर्शित आकृति कंप्यूटर के कार्यों को स्पष्ट करती है –

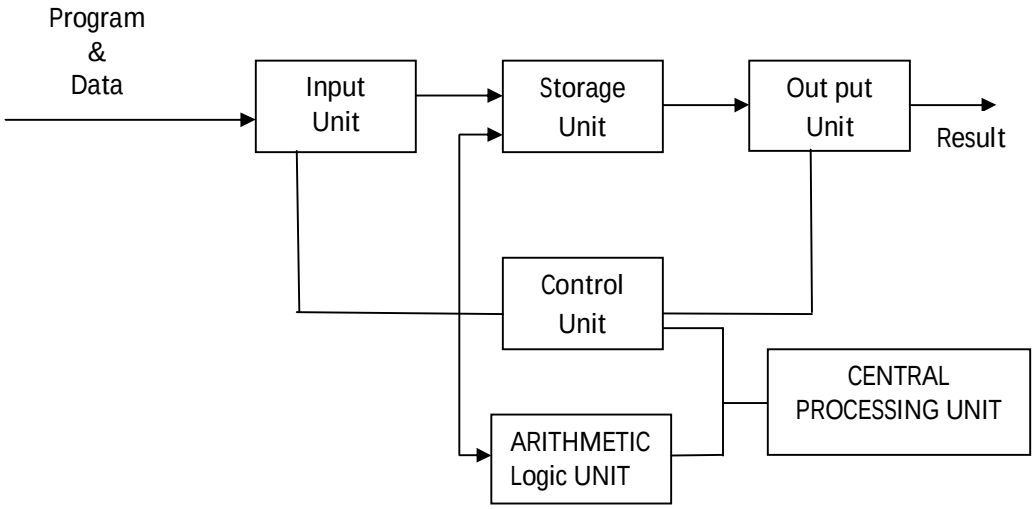

3.3.03.2. कंप्यूटर के प्रकार एवं गुण

आपने विद्यालयों, बैंकों, रेलवे स्टेशनों, पुस्तकालयों तथा अन्य जगहों पर प्रयोग होते हुए कंप्यूटर देखे होंगे। इन कंप्यूटर की याददाशत, आकार एवं कार्य कुशलता एक दूसरे से परस्पर भिन्न होती है। कंप्यूटर को उनके कार्य के नियमों, आकार तथा ब्रांड के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। कंप्यूटर प्रमुख रूप से अग्रलिखित प्रकार के होते हैं –

1. एनालॉग कंप्यूटर : एनालॉग कंप्यूटर मापन एवं भौतिक कार्य में प्रयोग किये जाते हैं, जैसे – तापमान मापना, विद्युत वेग, रक्त परीक्षण आदि में।
2. डिजिटल कंप्यूटर : डिजिटल कंप्यूटर सूचनाओं के आदान-प्रदान में प्रयुक्त किये जाते हैं, जैसे – बैंकों का लेन-देन, उत्पादन का हिसाब आदि।
3. हाइब्रिड कंप्यूटर : हाइब्रिड कंप्यूटर एनालॉग तथा डिजिटल दोनों ही प्रकार के कंप्यूटर का मिश्रित रूप होता है। इसके चार प्रमुख प्रकार होते हैं। कक्षा शिक्षण-अधिगम कार्य हेतु इन्हीं का प्रयोग किया जाता है।
4. माइक्रो कंप्यूटर : माइक्रो कंप्यूटर स्टोरेज क्षमता में कंप्यूटर में सबसे नीचे स्तर पर होते हैं। पहले माइक्रो कंप्यूटर 8-बिट माइक्रोप्रोसेसर चिप्स से बनाए गए थे । व्यक्तिगत कंप्यूटर (P.C.) की सामान्य एप्लीकेशन इस वर्ग की है। इसमें Input & output होते हैं। 8-बिट चिप की संशोधित किस्म 16-बिट तथा 32-बिट चिप है।
5. मिनी कंप्यूटर : मिनी कंप्यूटर एक समय पर एक से अधिक उपभोक्ता के प्रयोग करने के लिए बनाया गया है। इनमें भण्डारण क्षमता तथा कार्य करने की गति अधिक होती है।

6. मेनफ्रेम कंप्यूटर : मेनफ्रेम कंप्यूटर मैमोरी में मिनी कंप्यूटर से बड़े होते हैं । यह कंप्यूटर बहुत से उपभोक्ताओं का कार्यभार सँभाल सकते हैं । इनका उपयोग अक्सर केन्द्रीय डेटा बेस के लिए बड़े संस्थानों जैसे बैंक, बीमा, रक्षा आदि के लिए होता है ।
7. सुपर कंप्यूटर : ये सबसे तेज तथा बहुत महँगी मशीनें होती है । अन्य कंप्यूटर के मुकाबले इनकी बहुत अधिक प्रोसेसिंग गति होती है। इनकी मल्टी प्रोसेसिंग तकनीक भी होती है। सैकड़ों माइक्रो प्रोसेसर्ज़ को मिलाकर एक सुपर कंप्यूटर का निर्माण किया जाता है । इसका उपयोग अनुसन्धान, एयरक्राफ्ट डिज़ाइन, विज्ञान आदि में किया जाता है ।

कंप्यूटर के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं –

(1) कंप्यूटर के साथ काम करने के कुछ उपयोगी प्रेरणा प्रदान करते हैं ।
(2) उच्च कोटि की क्रियाएँ विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं को पुनर्बलन देती हैं ।
(3) विद्यार्थियों को व्यक्तिगत अनुदेशन द्वारा प्रभावी वातावरण प्रदान किया जाता है ।
(4) अभिलेखों को सुरक्षित रखने की क्षमता सरल बनाई जा सकती है ।
(5) शिक्षक के ज्ञान क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है ।

3.3.03.3. शिक्षण के स्रोत के रूप में कंप्यूटर

प्रत्येक व्यक्ति विषयवस्तु या अवधारणाओं पर विभिन्न स्रोतों से जैसे पाठ्य पुस्तक, सन्दर्भ सामग्री, समाचार पत्र, दूरदर्शन आदि से सूचना एकत्र करता है । इन सभी में छपी हुई सामग्री से अधिकांश परिचित ही होते हैं । सूचना प्रविधि के काल में आप इंटरनेट (अन्तर्जाल) के माध्यम से भी सूचना प्राप्त कर सकते हैं । इंटरनेट कंप्यूटर का एक डिसेंट्रेलाइज्ड ग्लोबल नेटवर्क है । वेब दस्तावेजों का एक क्लैक्शन है जिसका प्रयोग इंटरनेट तथा वेब सर्चिंग साफ्टवेयर का प्रयोग करके कर सकते हैं । वेब इंटरनेट पर उपलब्ध विषयवस्तु से बना होता है । इंटरनेट कंप्यूटर के कई नेटवर्कों का एक बृहत् नेटवर्क है । इंटरनेट तथा वेब का एक दूसरे से गहरा सम्बन्ध है लेकिन एक ही चीज दोनों नहीं हैं । इंटरनेट तकनीकी ने कक्षा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बहुत अधिक भागीदारी निभाई है । कक्षा में इंटरनेट का प्रयोग सूचना की तकनीकी, सहक्रियाओं की तकनीकी तथा सामाजिकता की तकनीकी के रूप में कर सकते हैं । इंटरनेट पर हमें इंटरनेट मेल (E-mail), वर्ल्डवाइड वेब (www), फाइल ट्रांसफर प्रोटोकाल (F.T.P.), टेलनेट (Telnet), ई-कामर्स (E-Commerce) आदि की सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं ।

अब बाजार में हिन्दी के सैकड़ों वेबसाइट्स उपलब्ध हो गए हैं तथा हिन्दी में भी ई-मेल करना सुलभ हो गया है । अमेरिकी वैज्ञानिक श्री रिक ब्रिग्ज़ की यह धारणा है कि संस्कृत भाषा कंप्यूटर प्रोग्राम की दृष्टि से आदर्श भाषा है । इसलिए देवनागरी लिपि में कार्य करना कठिन नहीं है । हाल ही में सी-डैक ने 'लीला प्रबोध' नाम से एक ऐसे मल्टीमीडिया स्वयं शिक्षक पैकेज का विकास किया है जिसकी सहायता से विंडोज़ परिवेश में कोई भी व्यक्ति

कंप्यूटर के माध्यम से हिन्दी सीख सकता है। शब्दों और हिन्दी वाक्यों का उच्चारण और वाचन भी सुन सकते हैं। इस प्रकार शिक्षण के स्रोत रूप में कंप्यूटर का महत्व निर्विवाद है।

3.3.04. कंप्यूटर सह अनुदेशन

कक्षा में शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रयोग केवल शिक्षण में ही सहायता नहीं करता बल्कि बच्चों में अधिगम के लिए रुचि और जिज्ञासा भी जाग्रत् करता है। शिक्षण-अधिगम हेतु सूचनाएँ एकत्र करने, कक्षा में एक साथ सीखने के लिए कंप्यूटर के अनुप्रयोग ने एक महत्वपूर्ण भूमिका हासिल कर ली है जिसे सामान्यतः कंप्यूटर सह अनुदेशन कहते हैं। कंप्यूटर सह अनुदेशन को आंग्लभाषा में Computer Assisted Instruction (CAI) कहा जाता है। पहला व्यावसायिक कंप्यूटर 1951 में गणना ब्यूरो (Census Bureau) द्वारा अनुप्रयोग में लाया गया एवं कंप्यूटर सह अनुदेशन (CAI) का प्रयास 1961 में हुआ जब 'इलोनिसिस विश्वविद्यालय' ने स्वचालित शिक्षण-प्रक्रिया हेतु अभिक्रमित तर्क (PLATO) को विकसित किया। इस प्रकार सामान्य शिक्षा में कंप्यूटर का प्रयोग सन् 1960 के आसपास प्रारम्भ हुआ।

संक्षेप में कंप्यूटर सह अनुदेशन एक ऐसे अनुदेशन की ओर संकेत करता है जिसे कंप्यूटर तकनीकी की सहायता से संचालित किया जाता है। इसे शिक्षण मशीन तथा अभिक्रमित अनुदेशन से एक कदम आगे के नवाचार के रूप में माना जा सकता है। इसका क्षेत्र, तकनीक तथा आयाम अधिक व्यापक हैं। कुछ निश्चित शब्दों में कंप्यूटर सह अनुदेशन को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है –

"कंप्यूटर सह अनुदेशन का क्षेत्र अब इतना व्यापक हो गया है कि अब इसे मात्र शिक्षण मशीन अथवा अभिक्रमित अनुदेशन के अनुप्रयोगों के रूप में नहीं समझा जा सकता।"

– हिलगार्ड तथा बाउर (1977)

"कंप्यूटर सह अनुदेशन को शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में विद्यार्थी, कंप्यूटर नियन्त्रित प्रस्तुतीकरण (CCP) तथा अनुक्रिया मूलपाठ उपकरण (PRA) के मध्य चलने वाली अन्तःक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।"

– भट्ट (1992)

कंप्यूटर सह अनुदेशन के विभिन्न रूप हैं। विभिन्न तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में जिस प्रकार की परिस्थितियाँ होती हैं, जिस प्रकार का प्रयोजन होता है तथा विद्यार्थी को जिस प्रकार के अनुदेशन की आवश्यकता होती है उसी अनुदेशन का अनुप्रयोग कर लिया जाता है। पूछताछ रूप, अभ्यास रूप, ट्यूटोरियल रूप, गेम्स रूप, अनुरूपित रूप, समस्या समाधान रूप, खोज रूप व प्रबन्धन रूप ये प्रमुख कंप्यूटर सह अनुदेशन के रूप हैं।

3.3.04.1. कंप्यूटर द्वारा हिन्दी भाषा-शिक्षण

कंप्यूटर एक ऐसा इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जो विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को एकत्रित कर उनका मुद्रण कर सकता है, या उनकी व्याख्या तथा विश्लेषण कर आवश्यक परिणाम देता है। इसके द्वारा अनुदेशन के अन्तर्गत अधिगम करने वाले विद्यार्थी के लिए विभिन्न प्रकार की अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न किया जा सकता है। हिन्दी भाषा-शिक्षण में प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों को वर्ण तथा शब्दों की पहचान कराकर अधिगम कराने में सहायक होता है। इसके लिए कंप्यूटर से जुड़े प्रोजेक्टर (Projector) द्वारा विद्यार्थियों को वर्णों की पहचान प्रक्रिया के सम्बन्ध में निर्देश देने के बाद यह पूछा जाता है कि पर्दे पर प्रदर्शित वर्णों अ, आ, इ, उ आदि का कौनसा वर्ण है ? विद्यार्थी माइक्रोफोन में बोलकर अपना उत्तर कंप्यूटर को भेजते है। उसके पश्चात् पर्दे पर सही उत्तर प्रदर्शित हो जाता है। एवं यदि विद्यार्थी का सही उत्तर है तो कंप्यूटर के द्वारा विद्यार्थी की प्रशंसा भी की जाती है और विद्यार्थियों को त्रुटियों के आधार पर कंप्यूटर द्वारा अभ्यास कार्य प्राप्त होता है। इसके अन्तर्गत अतिरिक्त सही एवं गलत उत्तरों का विवरण भी तैयार होता रहता है।

विद्यार्थियों में कंप्यूटर के द्वारा सरल वाचन कौशल का विकास करवाया जाता है। सरल वाचन कौशल विकास के पश्चात् जटिल कौशल का विकास किया जाता है तथा ज़रूरत के हिसाब से कौशल के लिए सूचनाओं को बड़े स्तर पर व्यवस्थित तथा संशोधन एवं पुनर्व्यवस्थित किया जाता है। विद्यार्थियों को उनकी उपलब्धि एवं त्रुटियों की मात्रात्मक जानकारी भी दी जाती है।

यदि कोई विद्यार्थी कंप्यूटर द्वारा अधिगम करने में कठिनाई महसूस करता है, तो इसकी जानकारी भी कंप्यूटर द्वारा शिक्षक को प्रदान की जाती है, जिससे विद्यार्थी की कठिनाइयों के आधार पर शिक्षक द्वारा भी शिक्षण करवाया जा सके।

3.3.04.2. हिन्दी भाषा-शिक्षण अनुदेशन में कंप्यूटर के कार्य

आज कंप्यूटर ने शिक्षण के क्षेत्र में अत्यधिक योगदान दिया है। विश्व के प्रगतिशील देशों में आज कंप्यूटर सह अनुदेशन तकनीकी एक प्रभावशाली साधन के रूप में उभर कर हमारे सामने आई है। वस्तुतः अनुदेशन का शिक्षा के सभी स्तरों पर प्रयोग किया जाता है। कंप्यूटर सह अनुदेशन एक ऐसे अनुदेशन की ओर संकेत करता है जिसे कंप्यूटर तकनीकी की सहायता से संचालित किया जाता है। इसे शिक्षण मशीन तथा अभिक्रमित अनुदेशन से एक कदम आगे के नवाचार के रूप में माना जा सकता है। भाषा-शिक्षण अनुदेशन के क्षेत्र में कंप्यूटर के निम्नलिखित कार्य हैं –

(1) विभिन्न प्रकार के अभिक्रमित अनुदेशों का संचय करना।
(2) चुम्बकीय टेप तथा कार्डों पर विभिन्न विषयों से सम्बन्धित सूचनाओं का संग्रह करना।
(3) संचित सूचनाओं में से वांछित प्रदत्तों का चयन करना।
(4) संचित सूचनाओं का सम्प्रेषण करना।

(5) नियन्त्रित दशाओं में शिक्षण कार्य करना।
(6) शिक्षण विधियों एवं शिक्षण-सामग्री की प्रभावशीलता की जाँच करना।
(7) वैयक्तिक भिन्नताओं के अनुसार अनुदेशन करना।
(8) विद्यार्थियों को स्वतः अनुदेशन प्राप्त करने में दक्ष बनाना।

3.3.04.3. हिन्दी भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन का वैशिष्ट्य

हिन्दी भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में विद्यार्थी एवं शिक्षक के व्यवहार को मात्रात्मक दृष्टि से सुनिश्चितता प्रदान कर देना मानवकीय प्रतिमान एवं परिश्रम का अद्भुत उदाहरण है। भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में विद्यार्थी एवं शिक्षक के व्यवहार को मात्रात्मक रूप में प्रस्तुत कर देना तथा अधिगम जैसी प्रक्रिया को मात्रात्मक एवं गुणात्मक दृष्टि से विकसित करने की प्रक्रिया इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। विभिन्न शिक्षण यन्त्रों एवं कंप्यूटर जैसे साधनों ने इस दिशा में अपना योगदान देकर आश्चर्यजनक परिणाम सामने रखे हैं। कंप्यूटर सह अनुदेशन के माध्यम से अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न किया जाता है। भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन के निम्नलिखित वैशिष्ट्य हैं –

01. यह स्वतः अनुदेशन प्रदान करने में सहायक है।
02. वर्णमाला को सिखाने में मददगार है।
03. इसे सभी स्तरों पर प्रयुक्त किया जाता है।
04. रिक्त स्थानों की पूर्ति की जा सकती है।
05. एक समय में अनेक प्रकार के अभिक्रम प्रस्तुत किये जा सकते हैं।
06. कोई सीनेरी दिखाकर मौखिक अभिव्यक्ति करा सकते हैं।
07. यह अभिक्रमित अध्ययन पर आधारित है।
08. विभिन्न अधिगम स्वरूपों के आधार पर विभिन्न प्रकार के अभिक्रम यथा – व्याकरण की शिक्षा के वाक्य, तुलना, निष्कर्ष सूत्र आदि प्रस्तुत किये जाते हैं।
09. यह योग्य अध्यापकों की पूर्ति करने में सहायक है।
10. विद्यार्थियों के व्यवहारों को नियन्त्रित किया जा सकता है।
11. व्यवहार की शिक्षा के द्वारा शब्द सामने रखकर उसे वाक्य में प्रयुक्त कर सकते हैं।
12. यह व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन का एक रूप है। बालक स्वयं भी वाक्य बना सकता है।
13. विद्यार्थियों को पूर्व योग्यताओं के आधार पर अनुदेशन दिया जा सकता है।
14. विद्यार्थियों एवं कंप्यूटर के मध्य प्रभावपूर्ण अन्तःक्रिया की व्यवस्था रहती है।
15. विद्यार्थियों को गलत उत्तर देने की स्थिति में अपनी त्रुटि के कारण का ज्ञान हो जाता है।
16. विद्यार्थियों का मूल्यांकन करने तथा उनके स्तरों का विश्लेषण तत्काल होता है।
17. विद्यार्थियों की उपलब्धि का समस्त आलेख इस प्रक्रिया में रखा जाता है।

3.3.04.4. हिन्दी भाषा में कंप्यूटर सह अनुदेशन की उपयोगिता

निस्सन्देह अनुदेशन भाषा-शिक्षण को सरल, स्पष्ट, रुचिकर तथा प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है। अनुदेशन तकनीकी का आधार मशीन प्रणाली है। यह तकनीकी सीखने की प्रक्रिया को प्रेरित करती है। अनुदेशन सामग्री का चयन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। कंप्यूटर सह अनुदेशन प्रणाली का उपयोग कई प्रकार के उपकरणों के अनुदेशन के लिए किया जा सकता है। जैसे – गद्य, पद्य, रचना, व्याकरण इत्यादि।

01. कंप्यूटर की सहायता से विद्यार्थियों को व्यक्तिनिष्ठ प्रोग्राम उपलब्ध कराये जा सकते हैं।
02. कंप्यूटर द्वारा शब्दों का ज्ञान, शब्द संग्रह आदि सूचनाओं को संचित एवं व्यवस्थित किया जा सकता है।
03. विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार कंप्यूटर द्वारा प्रदत्त कार्य का चयन किया जा सकता है।
04. अनुदेशन के प्रति विद्यार्थियों में रुचि, जागरूकता, जिज्ञासा का विकास होता है।
05. अभिक्रमित रूप में गठित सामग्री को रोचकता के साथ प्रस्तुत किया जाता है।
06. विभिन्न विद्यार्थियों को एक पाठ्यवस्तु को कई अनुदेशों के वैयक्तिक अनुदेशन के आधार पर अध्ययन का मौका मिलता है।
07. विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान के सम्बन्ध में निर्णय लिया जा सकता है।
08. अनुसन्धान कार्यों में, प्रदत्तों के संकलन एवं विश्लेषण में सहायक है।
09. प्रस्तुतीकरण के साथ-साथ विद्यार्थियों की अनुक्रियाओं का अवलोकन किया जाता है।
10. विद्यार्थियों की कमजोरियों को ज्ञात करके उनके उपचारात्मक निदान में सहायक है।
11. विद्यार्थियों के उत्तरों के अंकन, उनकी उपलब्धि का आलेख तैयार करने में सहायक है।
12. विद्यार्थियों को अनुक्रिया के पश्चात् पुनर्बलन में सहायक है।
13. यह तकनीकी प्रभाव शिक्षकों की कमी को पूरा कर सकती है।

3.3.05. मल्टीमीडिया का सम्प्रत्यय

'मल्टीमीडिया' यह शब्द आंग्लभाषा का Multimedia हिन्दी में प्रयुक्त है। मल्टीमीडिया का हिन्दी शब्द 'बहुमाध्यम' है। 'मल्टीमीडिया' शब्द Media (माध्यम) या मीडिया का ही एक अगला चरण है जो Multi (अनेक) और Media (माध्यम) अर्थात् संचार के साधन या माध्यम से बना है, जिसका अर्थ है संचार के लिए अनेक साधन या माध्यम।

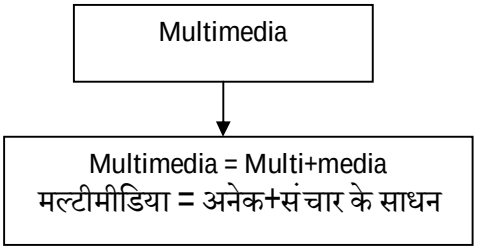

'मीडिया' (Media) एक ऐसा माध्यम है जो सम्पूर्ण मानव समाज तक सूचना, शिक्षा, मनोरंजन आदि के बारे में जानकारी को पहुँचाता है। वैश्विक इस युग में मीडिया का कार्य एवं आवश्यकता दिन-प्रतिदिन सभी क्षेत्रों में बढ़ रही है। आधुनिक विशाल घरेलू बाजार में प्रस्तुत संचार साधन, उपकरण एवं मॉडलों की संख्या मुख्यरूप से बढ़ रही है और आमतौर पर मल्टीमीडिया के कई मॉडल भी हैं जो कंप्यूटर के साथ जुड़े रहे हैं एक मल्टीमीडिया डिवाइस है। सबसे अधिक शिक्षण क्षेत्र में मल्टीमीडिया सिस्टम का उपयोग हो रहा है।

किसी भी सूचना को किसी माध्यम (Medium) द्वारा ही प्रस्तुत किया जा सकता है, जैसे – शब्द (Text), रेखाचित्र (Graphics), एनिमेशन (Animation), श्रव्य (Audio), दृश्य (video) या श्रव्य-दृश्य (Audio-Video) आदि। किसी सूचना की प्रस्तुति में एक साथ एक से अधिक माध्यमों का प्रयोग मल्टीमीडिया कहलाता है।

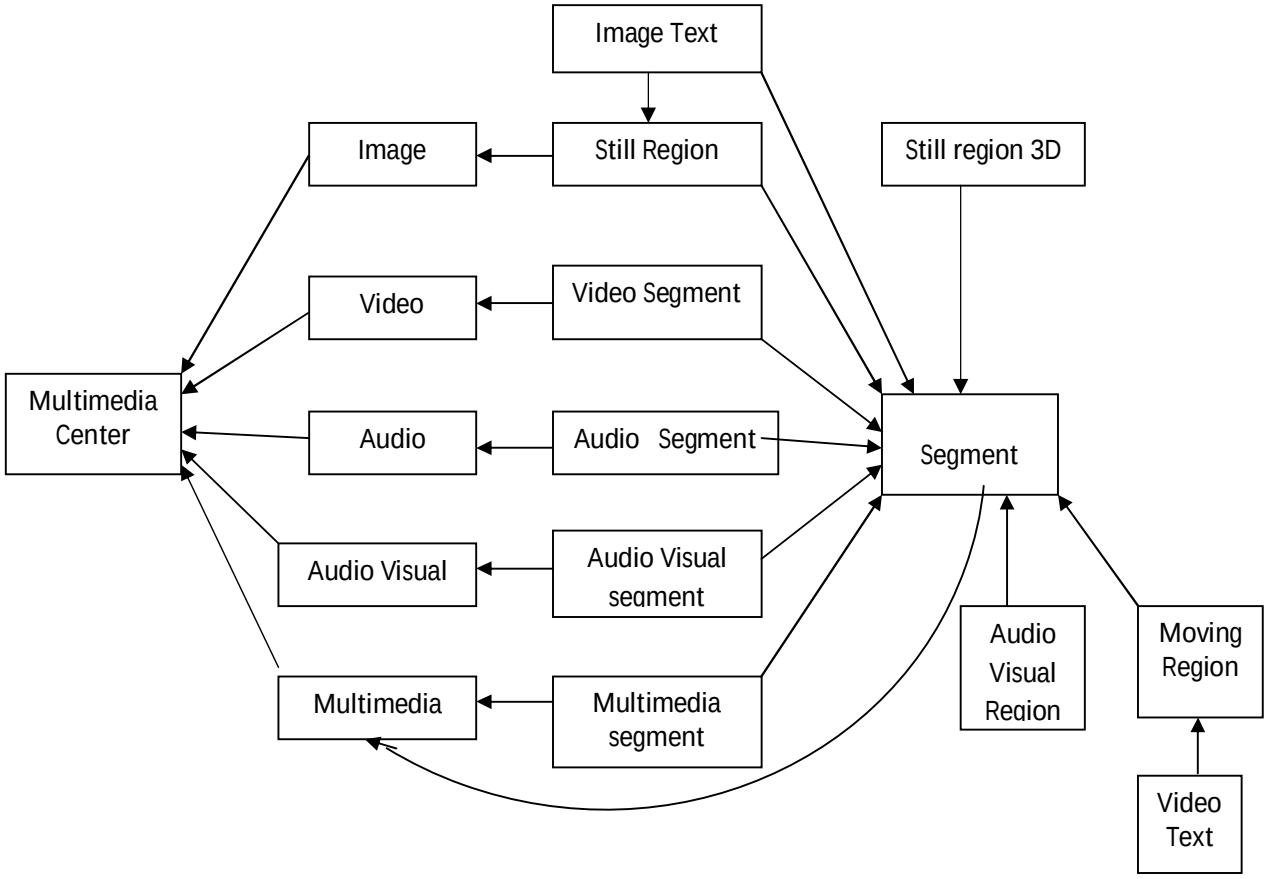

मल्टीमीडिया उदाहरण चित्र

मल्टीमीडिया का प्रयोग कर सूचना को सरल, रोचक, मनोरंजक और सुग्राह्य बनाया जाता है। आज मल्टीमीडिया का प्रयोग शिक्षा, व्यापार, मनोरंजन, विज्ञान आदि अनेक क्षेत्रों में किया जा रहा है।

आधुनिक युग में समय एवं परिस्थितियों के अनुसार ज्ञान ग्रहण करने एवं उनके आदान-प्रदान में प्रतिदिन नवीन चिन्तन एवं शोध किये जा रहे हैं, जिनके परिणामस्वरूप शिक्षा में नवाचारों का आगमन हुआ है। सूचना-सम्प्रेषण तकनीकी के विकास ने सभी क्षेत्रों में क्रान्ति ला दी है। आज कंप्यूटर के संग्रह में स्थित विषय सामग्री तथा इंटरनेट प्रणाली से उपलब्ध विशाल ज्ञान भण्डार को काम में ही नहीं लाया जाता अपितु इनके माध्यम से ही ऐसी सभी अन्तःक्रिया सम्बन्धी सुविधाएँ भी प्राप्त होती हैं। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में 'ई-लर्निंग' (ई-अधिगम) सूचना सम्प्रेषण प्रविधि की मुख्य क्रान्ति है। ई-लर्निंग में एक या अधिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, माध्यमों या साधनों द्वारा अधिगम सम्पादित किया जाता है। 'ई-अधिगम' एक शैक्षिक उपागम, प्रविधि माध्यम एवं शैक्षिक विषय के रूप में स्वीकार किया जाता है। अपने व्यवहारात्मक रूप में ई-लर्निंग में शिक्षण-अधिगम तकनीकी तथा बहुमाध्यम प्रविधि सम्मिलित रहती है। इसके द्वारा सभी प्रकार के आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक सूचना सम्प्रेषण माध्यम जैसे सी. डी. रोम, डी.वी.डी., टेलीकान्फ्रेंसिंग, इंटरनेट, वीडियो, रेडियो, भाषा प्रयोगशाला, संगणक यन्त्र (कंप्यूटर), शैक्षिक दूरदर्शन, मुद्रित सामग्री, शैक्षिक आकाशवाणी, उपग्रह दूरदर्शन, पाठयपुस्तक, वेब ब्लॉग्स आदि का सहयोग लेकर उपयोगी शिक्षण एवं अधिगम कार्य सम्पन्न किया जा सकता है। 'ई' शिक्षा हेतु विभिन्न माध्यमों का प्रयोग किया जाता है, यथा – बहुमाध्यम-अधिगम, संगणकधारित अनुदेशन, अन्तर्जाल आधारित प्रशिक्षण, वेब आधारित प्रशिक्षण, ऑनलाइन शिक्षा, आभासीय शिक्षा, आभासीय अधिगम वातावरण तथा मोबाइल लर्निंग।

3.3.05.1. मल्टीमीडिया के प्रकार

आप सभी न्यूज चैनल, दूरदर्शन, अखबार, इंटरनेट, रेडियो, वीडियो आदि देखते और सुनते हैं, ये सभी मीडिया के विविध संसाधन हैं और सभी एक साथ अनेक लोगों तक जानकारी को पहुँचाते हैं इस तरह मल्टीमीडिया अपना कार्य करता है। मल्टीमीडिया के कार्य करने के तरीकों को देखते हुए इसे मुख्यतः तीन भागों में बाँटा जाता है –

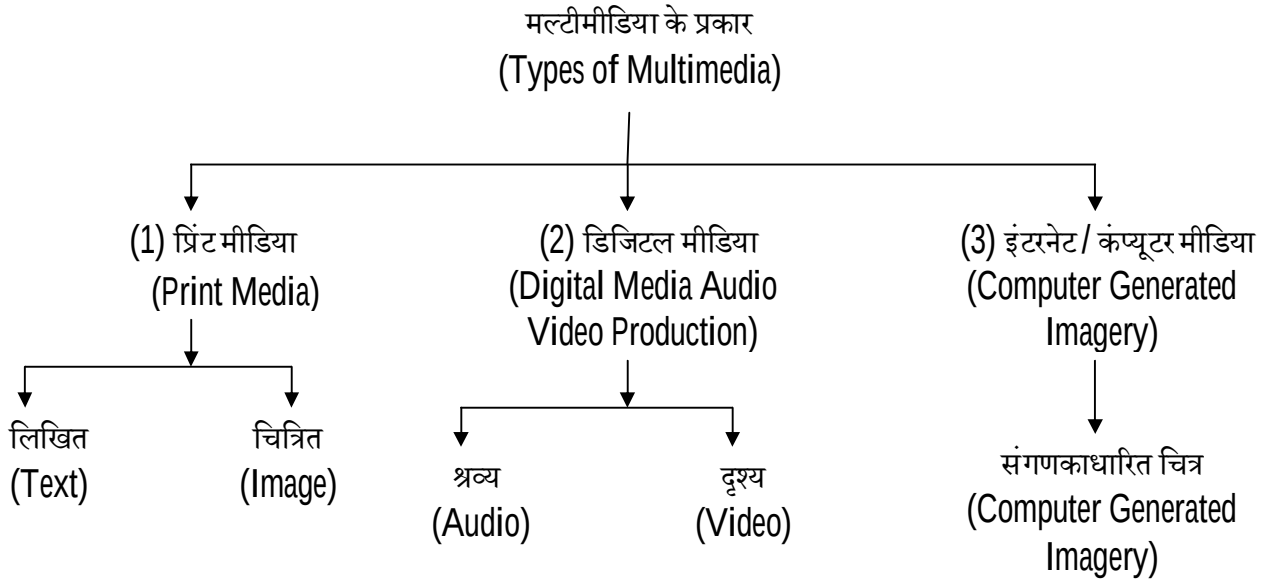

(1) प्रिंट मीडिया : प्रिंट मीडिया ने भी शिक्षण अधिगम की क्रिया को प्रभावित किया है। इसमें जो जानकारी मिलती है या जिसे अग्रसारित करना होता है वो लिखित या छपे रूप में प्राप्त होती है। पाठ्यपुस्तकें तथा अन्य मुद्रित सामग्री प्रिंट मीडिया में आती है। प्रिंट मीडिया के भी दो प्रकार होते हैं – लिखित और चित्रित।

(क) लिखित (Text) : इसके अन्तर्गत जानकारी को लिखित रूप में पहुँचाया जाता है।

(ख) चित्रित (Image) : इसमें चित्र के माध्यम से जानकारी को समझाया जाता है।

(2) डिजिटल मीडिया : डिजिटल मीडिया शिक्षण अधिगम को अधिक प्रभावित करता है। डिजिटल मीडिया को प्रसारित करने के लिए भी दो प्रकार होते हैं – श्रव्य और दृश्य।

(क) श्रव्य (Audio) : श्रव्य का सबसे अच्छा माध्यम रेडियो है। रेडियो शिक्षण का बहुत ही महत्वपूर्ण साधन है। इसमें आप जो भी आवाज सुनते हैं वह श्रव्य (Audio) मीडिया में आती है। इसका उपयोग सॉफ्टवेयर (Software) बनाने में भी बहुत किया जाता है। टेपरिकार्डर, ग्रामाफोन, लिंग्वाफोन आदि हैं।

(ख) दृश्य (Video) : दृश्य (Video) सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी का एक ऐसा माध्यम या साधन है जिसके द्वारा किसी भी कार्यक्रम को देखा व सुना जा सकता है। दूरदर्शन, मोबाईल, फिल्म आदि वीडियो मीडिया का ही हिस्सा होती हैं।

(3) इंटरनेट / कंप्यूटर मीडिया : प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण उपज कंप्यूटर है। कंप्यूटर से नवीनतम सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। सूचना प्रविधि युग में इंटरनेट (Internet) के माध्यम से सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। मल्टीमीडिया के इस प्रकार का एक भाग है – संगणक आधारित चित्रण।

(क) संगणक आधारित चित्रण (Computer Generated Imagery) : इसे कंप्यूटर ग्राफिक भी कहा जाता है। इसमें मुख्यतः एनीमेशन (Animation), कंप्यूटर से बनाये गये VFX तथा SFX इत्यादि आते हैं। ये सब मल्टीमीडिया की आधारभूत जानकारी है।

3.3.05.2. मल्टीमीडिया के प्रमुख घटक

मल्टीमीडिया आज के समय में सूचना प्रविधि का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध क्षेत्र है। मल्टीमीडिया बहुत सारे घटकों (Elements) जैसे – Text, Image, Art sound, Animation and Video इत्यादि का संयुक्तरूप है। इस मीडिया कंप्यूटर सूचना को ऑडियो (Audio) वीडियो (Video), इमेज (Image), एनीमेशन (Animation) इत्यादि के माध्यम से प्रदर्शित (Represent) किया जा सकता है। आज हम एनीमेट्रिड ऑडियो क्लिप (Audio Clip) वीडियो क्लिप (Video Clip) इत्यादि को सन्देश (Massage) के रूप में एक कंप्यूटर से दूसरे कंप्यूटर के पास भेज सकते हैं तथा किसी भी क्लिप (Clip) में उपलब्ध माध्यम से एलीमेन्टर में संशोधन किया जा सकता है। कंप्यूटर के माध्यम से Text, Graphics, Audio, Video, Animation इत्यादि को

नियन्त्रित तथा डिजिटल (Digital) रूप में Transmit, Process, Store and Represent किया जा सकता है। यह सब प्रक्रिया मल्टीमीडिया प्रणाली है। इस मल्टीमीडिया प्रणाली (System) के निम्नलिखित घटक होते हैं –

1. चित्र युक्तियाँ (Picture Devices) : वीडियो कैमरा, वीडियो रिकार्डर आदि
2. भण्डारण युक्तियाँ (Storage Devices) : हार्डडिस्क, CD-Ram, DVD-Ram
3. आगत युक्तियाँ (Input Devices) : माइक्रोफोन, Key बोर्ड, 3 D इनपुट डिवाइस
4. सम्प्रेषण संजाल (Communication Devices) : क्षेत्रीय नेटवर्क, इंटरनेट मल्टीमीडिया
5. संगणक प्रणाली (Computes System) : मल्टीमीडिया डेस्कटॉप मशीनें
6. प्रदर्शन युक्तियाँ (Display Devices) : बक CD क्वालिटी स्पीकर, HDTV, SVGA, Hi-Res Monitors, Color Printers.

3.3.05.3. मल्टीमीडिया का शिक्षा में उपयोग

सूचना-सम्प्रेषण प्रविधि के इस युग में हम सभी प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, मुद्रित-अमुद्रित सामग्री जैसे नामों से परिचित हैं। कंप्यूटर में आँकड़े (Data), पाठ्यसामग्री (Maintains) चित्र (Image), ध्वनि (Sound) आदि को एकत्रित करना ही मल्टीमीडिया है। कंप्यूटर मल्टीमीडिया का सबसे प्रभावशाली साधन है। मल्टीमीडिया सूचना-शिक्षण-मनोरंजन का अद्भुत मिश्रण है। लोग परस्पर जुड़ने तथा अपने तथ्यों को समझने के लिए अनेक प्रकार के माध्यमों पर निर्भर रहते हैं। मल्टीमीडिया सूचना-सम्प्रेषण की दृष्टि से अत्यन्त लाभकारी साधन है। इसके उपयोग से शिक्षक अपने विचारों को और भी प्रभावी ढंग से समझाने के साथ-साथ उसे सिद्ध भी कर सकता है। इस कारण आज मल्टीमीडिया का उपयोग शिक्षा एवं प्रविधि दोनों में बढ़ रहा है।

3.3.06. हिन्दी भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया का अनुप्रयोग

शैक्षिक तकनीकी एवं सूचना सम्प्रेषण प्रविधि के शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में बढ़ते हुए प्रयोग के फलस्वरूप अब श्रव्य-दृश्य साधनों को उसके कठोर उपागम (Hardware) तथा कोमल उपागम (Software) के रूप में विकसित किया जा रहा है। साधारण चित्रों, मानचित्रों, मॉडल तथा ग्राफिक प्रविधियों से लेकर मुद्रित सामग्री, दूरदर्शन, चलचित्रों, रेडियो, कंप्यूटर तथा शिक्षण मशीनों का उपयोग आम रूप में देखने को मिलता है। सूचना प्रौद्योगिकी से वर्तमान प्रभावित है। आज भारत में हिन्दी सबसे अधिक बोली, समझी और पढ़ी जाती है। आज हिन्दी संचार भाषा के रूप में विकसित हो रही है। हिन्दी भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया की अनुपम भूमिका है। इसकी मदद से हिन्दी शिक्षण सहज एवं रुचिपूर्ण हो गया है। मल्टीमीडिया उच्चारण, वाक्य निर्माण, व्याकरण-शिक्षण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षण-अधिगम में मल्टीमीडिया एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। कंप्यूटर की मल्टीमीडिया टेक्नॉलॉजी और वेब टेक्नॉलॉजी भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में क्रान्ति ला रही है। कंप्यूटर पैकेज तथा वेब में ऑडियो (Audio) वीडियो (Video) इंटरफेस के जरिए विद्यार्थी शब्दों एवं वाक्यों का अनुतान सहित मानक उच्चारण सुन सकता है और वीडियो (Video) पाठों में उन्हें बोलता हुआ देख भी सकता है।

प्रत्येक मूल पाठ के साथ उससे जुड़ा चलचित्र (Video Clip) उपलब्ध रहता है। वीडियो (Video) के बोले गए अंश पाठ में स्वतः अलग रंग में अंकित हो जाते है जिससे विद्यार्थी उच्चारित तथा लिखित अंशों के मध्य मिलान कर सकता है।

आज के समय में मल्टीमीडिया ने कक्षा-शिक्षण को रोचक बना दिया है। विद्यार्थियों के सामने पाठ्य विषय को विविध रूपों में मल्टीमीडिया के माध्यम से प्रस्तुत किया जाना सरल हो गया है। 'हिन्दी-शिक्षण' में मल्टीमीडिया की इलेक्ट्रॉनिक अनुप्रयोगों और प्रक्रियाओं में वेब-आधारित शिक्षा, कंप्यूटर आधारित शिक्षा, कोष निर्माण, आभासी कक्षाएँ और डिजिटल युक्तियाँ सम्मिलित हैं। इसमें इंटरनेट, ऑडियो टेप, उपग्रह दूरदर्शन, ध्वनिमुद्रित यन्त्र , शैक्षिक दूरदर्शन, कंप्यूटर आदि के माध्यम से पाठ्य सामग्रियों का वितरण किया जाता है।

आधुनिक वैश्विक युग में कंप्यूटर यन्त्र का हिन्दी भाषा के साथ गहरा सम्बन्ध स्थापित हो गया है। "वह मशीन साधित अनुवाद करता है, वर्तनी का सुधार करता है, सही शब्द सुझाता है, व्याकरण-विधान करता है, उच्चारण-अभ्यास कराता है, भिन्न-भिन्न रंग रूपों में मुद्रण करता है और हमारे मौखिक तथा लिखित सन्देशों का दूर प्रेषण भी करता है।" कई संस्थाएँ हिन्दी की समृद्धि तथा प्रसार के लिए कार्य कर रही हैं। मल्टीमीडिया के सन्दर्भ में निम्नलिखित का अनुप्रयोग अद्यतनीय है, यथा –

3.3.06.1. इंटरनेट (Internet)

वस्तुतः इंटरनेट (Internet) दुनियाभर में फैले हुए छोटे-बड़े कंप्यूटर का एक विराट संजाल तन्त्र (Network) है, जो विभिन्न माध्यम पँक्तियों से एक-दूसरे से सम्पर्क करते हैं। संसार के लगभग सभी नेटवर्क इंटरनेट से जुड़े हुए हैं। इसमें मुख्यतः ई-मेल (E-mail), वर्ल्ड वाइड वेब (www), एफ.टी.पी. (FTP) तथा ई-कामर्स (E-commerce) आदि सुविधाएँ हैं।

इंटरनेट एक बहुत विस्तृत विषय है, जबकि वर्ल्ड वाइड वेब (www) इंटरनेट में प्राप्त होने वाली एक सुविधा है, जिसके द्वारा हम सूचनाएँ देखते हैं। वास्तव में इंटरनेट कंप्यूटर को जोड़ता है और वर्ल्ड वाइड वेब (www) उससे जुड़े कंप्यूटर को सूचनाएँ वेब पृष्ठों के माध्यम से उपलब्ध कराता है। इस कार्य में इंटरनेट एक्सप्लोरर (Internet Explorer) तथा किसी ब्राउजर (Browser) कार्यक्रम (Program) की सहायता ली जाती है, जैसे – याहू (Yahoo), नेट स्केप (Netscape), इण्डिया टाइम्स (India times), वेब दुनिया (Web dunia) इत्यादि।

इंटरनेट के माध्यम से आप अपने कंप्यूटर पर बैठे हुए दुनिया भर की सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। इंटरनेट पर हिन्दी भाषा सम्बन्धित ऐसे संसाधन उपलब्ध हैं जिनके माध्यम से हिन्दी भाषा और लिपि सम्बन्धी अपेक्षित कार्य कर सकते हैं, जैसे – पाठ्यसामग्री में लुप्त शब्द की सन्दर्भ में खोज, पाठ्यसामग्री का सार-संक्षेप, शब्दानुवाद, अंग्रेजी जाल पृष्ठों पर उपलब्ध सामग्री अंश का अनुवाद, वेब सॉफ्टवेयर का रूपान्तरण, ऑनलॉइन लेखन, उच्चारण शिक्षण, हिन्दी अध्ययन-अध्यापन के संसाधन (पावर प्वॉइंट प्रस्तुति, स्लाइड्स, ग्राफिक्स आदि), ई-

मेल, चैट, ब्लॉग, ट्वीट्स आदि सोशल नेटवर्किंग के माध्यम एवं साधन, मोबाइल, कंप्यूटर इत्यादि हिन्दी के सूचना, शिक्षा और भाषा प्रौद्योगिकी के अनुरूप अनेक यन्त्रों को आत्मसात् किया है। कंप्यूटर विद्वानों का मत है कि देवनागरी लिपि वैज्ञानिकी लिपि है, जिसमें सभी प्रकार की मानवीय ध्वनियों से सम्बन्धित लिपि-चिह्न है और जो कंप्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

3.3.06.2. ई-अधिगम (E-Learning)

ई-अधिगम से तात्पर्य है – इंटरनेट एवं अन्य दृश्य तथा श्रव्य इलेक्ट्रोनिक साधनों का उपयोग करते हुए शिक्षा प्राप्त करना। इसमें संजाल (Network) से सुसज्जित संगणक यन्त्र (Computer) द्वारा कौशल एवं ज्ञान का आदान-प्रदान किया जाता है। ई-अधिगम में वेब आधारित सीखना, कंप्यूटर द्वारा सीखना, आभासीय कक्षा-कक्ष और डिजिटल सहभागिता आदि प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं।

ई-अधिगम में विषयवस्तु इंटरनेट, इंट्रोनेट, ऑडियो या वीडियो टेप, सैटेलाइट, टी.वी., सी.डी. रोम आदि के माध्यम से उपलब्ध करायी जाती है तथा इसमें लेख, चित्र, एनीमेशन, स्तर के अनुरूप वीडियो और ऑडियो भी होते हैं। इससे विद्यार्थी स्वयं की गति से अनुदेशक द्वारा प्रदत्त निर्देशों के अनुसार सीख सकता है। एक्स्ट्रानेट इंटरनेट, इंट्रानेट के मध्य सम्पर्क की इकाई है।

ई-लर्निंग (अधिगम) में हिन्दी भाषा-शिक्षण के कई पाठ्य ग्रन्थ, सॉफ्टवेयर और श्रव्य-दृश्य सी.डी. आदि हिन्दी में बनाये गये हैं। रेडियो, टी.वी. आदि से भी भाषा-शिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है। इसी सन्दर्भ में 'आई पैड और टेबलेट' पर विद्यार्थियों को शिक्षा के नए आयाम पढ़ने को मिलेंगे। होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र, मुम्बई ने विद्यालय तथा महाविद्यालय स्तर पर हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए स्वतन्त्र हिन्दी में 'ई-लर्निंग पोर्टल' बनाया है।

ई-लर्निंग (अधिगम), नूतन पठन-पाठन प्रविधि है। इसके प्रयोग से कंप्यूटर, टी.वी. प्रोजेक्टर, वीडियो, स्टिल कैमरा, टेपरिकार्डर, चित्र आदि का प्रयोग होने से विद्यार्थियों का ध्यानाकर्षण बढ़ जाता है। हिन्दी शिक्षण में नवतन्त्र ज्ञान का प्रयोग कर दूर शिक्षा, दृश्य-श्रव्य शिक्षा, आभासी कक्षा दे सकते हैं। इस प्रकार हिन्दी में ई-लर्निंग द्वारा नई शिक्षण प्रविधि के सहारे विषय के श्रव्य-दृश्यात्मक बनाकर ज्यादा सम्प्रेषणशील, रोचक तथा सुग्राह्य बनाया जा सकता है।

3.3.06.3. मल्टीमीडिया प्रोजेक्टर (Multimedia Projector)

मल्टीमीडिया प्रोजेक्टर के माध्यम से वीडियो, फोटो फिल्म प्रस्तुतीकरण या कंप्यूटर डेटा (Data) को एक पर्दे पर बड़े रूप में दिखाया जाता है। इसके भाषा शिक्षा तथा अन्य शिक्षण विषयों में निम्नलिखित उपयोग होते हैं, यथा –

1. प्रविधि युक्त कक्षा में लेख, रेखाचित्र, फोटो आदि को बड़ा करके दिखाना इससे कक्षा-कक्ष रंगीन, रुचिकर एवं संसाधन युक्त लगता है।
2. शिक्षक इसके माध्यम से पावर प्वाइंट प्रस्तुति, मल्टीमीडिया सामग्री, वीडियो या अन्य अधिगम सामग्री, फिल्म को एक साथ बड़े विद्यार्थी समूह के सामने प्रस्तुत कर सकते हैं।
3. शिक्षक कक्षा में एक पाठ को प्रोजेक्टर के माध्यम से सभी विद्यार्थियों को चित्रों सहित एक साथ पढ़ा तथा दिखा सकते हैं।
4. ऑडियो एवं वीडियो एवं ग्राफिक्सयुक्त लेख को भी इसके माध्यम से भी प्रदर्शित किया जा सकता है।

3.3.06.4. आभासीय कक्षा कक्ष (Virtual Class Room)

आभासीय कक्षा-कक्ष एक ऐसा कक्षा-कक्ष होता है, जिसके अन्तर्गत शिक्षक प्रशिक्षक और विद्यार्थी ऑनलाइन (Online) वातावरण में वेब कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से संवाद स्थापित करते हैं। इससे विद्यार्थी शिक्षक वेबकेम और माइक्रोफोन के माध्यम से एक-दूसरे से संवाद स्थापित करते हैं तथा शिक्षक द्वारा अध्यापन कराते समय विद्यार्थी उस पर विचार-विमर्श करते हैं।

आभासीय कक्षा-कक्ष में इंटरनेट के माध्यम से कृत्रिम कक्षा-कक्ष वातावरण का निर्माण करते हुए, दूर बैठे हुए विद्यार्थियों (अध्येताओं) को सुविधाजनक सम्प्रेषण वातावरण को उपलब्ध करवाते हैं। इसमें अधिगमकर्त्ता को ऐसा अनुभव होता है कि वह पारम्परिक कक्षा में अध्ययन कर रहा है। इसमें विद्यार्थी अपने प्रश्नों और विचारों पर अनुक्रिया भी प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही कंप्यूटर तथा लेपटॉप के डेस्कटॉप को सॉफ्टवेयर के माध्यम से परस्पर बाँट सकते हैं और विद्यार्थी या शिक्षक इंटेरेक्टिव बोर्ड पर स्वयं लिख सकते हैं। इसमें Text Notes के अतिरिक्त माइक्रोफोन जैसी तकनीकी का भी लाभ लिया जा सकता है। इसे 'ब्रेक आउट सेशन' जैसी सम्प्रेषण तकनीकों का सहारा लिया जा सकता है। अधिगमकर्त्ता श्वेत बोर्ड द्वारा नोट्स एवं संसाधनों का आदान-प्रदान करते हैं।

3.3.06.5. स्मार्ट कक्षा (Smart Class)

वर्तमान में शिक्षा में गुणवत्ता एक मूल आवश्यकता होती जा रही है। प्रविधि मानवीय जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर रही है। भारत में स्मार्ट कक्षा-कक्ष एक आधुनिक शिक्षण विधि के रूप में उभर रही है। जो विद्यार्थियों को सभी विषयों की गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने में सहयोग प्रदान कर रही है। स्मार्ट कक्षा-कक्ष शिक्षण विधि के माध्यम से विद्यार्थियों में प्रत्यय निर्माण, प्रत्यय का विस्तारण, पठन कौशल में सुधार तथा शैक्षिक उपलब्धियों में गुणात्मक गुण प्राप्त किया जा सकता है। इस कक्षा में अनुदेशनात्मक सामग्री तथा त्रि-आयामी एनिमेशन मॉड्यूल (3D Animated Module) का उपयोग किया जाने लगा हैं। आज सभी उत्तम विद्यालय स्मार्ट कक्षा-कक्ष शिक्षण-प्रक्रिया को अपना रहे हैं।

आज शिक्षक कक्षा में किसी भी शिक्षण-सामग्री के रूप में वास्तविक पदार्थ जैसी शिक्षण-सामग्री दिखा सकता है। वह बृहत् शिक्षण प्रकरणों को सरलता से कम से कम समय में समझा सकता है और विद्यार्थियों को अधिक स्थायी ज्ञान प्रदान कर सकता है। स्मार्ट कक्षा-कक्ष एक ऐसी कक्षा है, जिसमें एक अनुदेशक विभिन्न प्रकार के तकनीकी यन्त्रों का उपयोग करके शिक्षण करता है, जिसमें कंप्यूटर तथा उससे सम्बन्धित श्रव्य-दृश्य माध्यमों का उपयोग किया जाता है। इसमें विभिन्न तकनीकी यन्त्रों – डी.वी.डी. तथा वी.एच.एस., प्लेबैक, पावरप्वाइंट, डेटा प्रोजेक्टर आदि प्रयुक्त होते हैं।

3.3.06.6. स्मार्ट बोर्ड (Smart Board)

स्मार्ट बोर्ड ने टच स्क्रीन के माध्यम से सीखने और सिखाने की प्रक्रिया को सरल बना दिया है। इससे विद्यार्थी को रुचिकर विषयवस्तु तथा खेलों के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। स्मार्ट बोर्ड एक अन्तःक्रियात्मक व्हाइटबोर्ड है जिसका निर्माण Calgary, Alberta-based Company Smart Technologies ने किया है। इसमें टच तकनीकी से इनपुट दिया जाता है। स्मार्ट बोर्ड पर कक्षा संचालन हेतु एक कंप्यूटर तथा प्रोजेक्टर की अति आवश्यकता होती है। ताकि शिक्षण कक्षा के माध्यम से ऑडियो तथा वीडियो या अन्य शैक्षिक संसाधनों का प्रयोग करके विद्यार्थियों को वास्तविक ज्ञान दे सके। स्मार्ट बोर्ड पर शिक्षक या विद्यार्थी अपने हाथ की अंगुली से भी लिख सकते हैं तथा मिटा सकते हैं। इस बोर्ड पर विद्यार्थियों को विविध प्रकार से शिक्षण किया जा सकता है। इस प्रकार मल्टीमीडिया के माध्यम से हिन्दी भाषा-शिक्षण का सूचना प्रौद्योगिकी के साथ गठबंधन उसे विकास की नई ऊँचाइयों पर ले जायेगा।

3.3.07. हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य माध्यमों का उपयोग

आधुनिक शिक्षण का यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि दृश्य-श्रव्य माध्यमों के द्वारा शिक्षण पाठ को प्रभावपूर्ण और अभिरुचिपरक बनाया जा सकता है। अतः हिन्दी भाषा-शिक्षण में भी इन माध्यमों का प्रयोग व उपयोग किया जाना चाहिए। दृश्य-श्रव्य पद्धति में छात्रों को स्वयं सीखने एवं हल खोजने पर अधिक बल दिया जाता है।

3.3.07.1. हिन्दी शिक्षण में श्रव्य माध्यमों का उपयोग

शिक्षा में तकनीकी का उपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है ताकि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा सके। इसके अतिरिक्त, शिक्षा में विभिन्न विधियों एवं साधनों का विकास हुआ है जिसमें शिक्षण को और अधिक सुग्राह्य बनाया जा सके। शिक्षा में विभिन्न माध्यमों के प्रयोग को श्रव्य-दृश्य सामग्री के नाम से जाना जाता रहा है, परन्तु अब नये सम्प्रत्ययों के साथ नवीन विधा एवं तकनीकों का विकास हुआ है। अब शैक्षिक तकनीकी को शिक्षा में तकनीकी तथा शिक्षा की तकनीकी के रूप में देखा जाता है। श्रव्य माध्यम वे साधन हैं जिनका उपयोग हम कानों से सुनने में करते हैं। जैसे – टेपरिकार्डर, रेडियो, ट्रांजिस्टर, ग्रामोफोन तथा लिंग्वाफोन इत्यादि। इन साधनों में आवाज के द्वारा समस्त सूचनाएँ प्रेषित की जाती हैं, जो सुनने वालों की कल्पना शक्ति को उत्तेजित करती है। विद्यार्थी भाषा-श्रवण व उच्चारण के ज्ञान से परिचित हो पाते हैं।

3.3.07.2. हिन्दी शिक्षण में दृश्य माध्यमों का उपयोग

दृश्य उपकरण माध्यमों से प्रत्यक्ष ज्ञान स्पष्ट होता है। दृश्य माध्यम सामग्री में वे सामग्री आती हैं जिन्हें देखा जा सकता है जैसे – वास्तविक पदार्थ, चित्र, मानचित्र, रेखाचित्र, प्रतिकृति, प्लैनल बोर्ड, बुलेटिन बोर्ड, ग्लोब इत्यादि। कक्षा सम्प्रेषण में ऐसा भी सम्भव है कि जब सम्प्रेषण प्रक्रिया के लिए एकमात्र दृश्य माध्यमों को काम में लाया जाता है। विभिन्न दृश्य माध्यमों से विद्यार्थी सम्प्रेषित सूचनाओं तथा ज्ञान को ग्रहण करते हैं। अतः विभिन्न दृश्य माध्यमों का प्रयोग शिक्षक द्वारा कक्षा शिक्षण में किया जाना चाहिए।

3.3.07.3. हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य माध्यमों का उपयोग

केवल श्रव्य तथा दृश्य माध्यमों के द्वारा भी सम्प्रेषण सम्पन्न हो सकता है। परन्तु सम्प्रेषण की प्रभावशीलता दोनों माध्यमों के उचित समन्वय के द्वारा काफी बढ़ सकता है। श्रव्य-दृश्य माध्यमों का उपयोग अधिगम में बालक का ध्यान केन्द्रित होता है तथा पढ़ने में अधिक तत्पर हो जाता है। विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विशेष सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। अधिगम में बालक को जितनी चेतनायुक्त क्रियाएँ करायी जाती हैं, अधिगम उतना ही सुदृढ़ बन पाता है। विद्यार्थी सचेत तभी रह पायेगा जब पाठ्यवस्तु के साथ सम्बन्धित सहायक सामग्री का उपयोग भी किया जाए। दूरदर्शन, कंप्यूटर, वीडियो, वीडियो डिस्क आदि का उपयोग शिक्षण में किया जाए।

3.3.08. पाठ-सार

आज का युग सूचना सम्प्रेषण प्रविधि का है। इस प्रविधि ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित किया है। शैक्षिक प्रविधि के शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में बढ़ते हुए प्रयोग के फलस्वरूप अब श्रव्य-दृश्य साधनों को उसके सॉफ्टवेयर तथा हार्डवेयर के रूप में विकसित किया जा रहा है। हिन्दी भाषा-शिक्षण में विभिन्न उपकरणों का माध्यम के रूप में उपयोग किया जा रहा है। 'मीडिया' अर्थात् माध्यम के मुख्य उपकरण आकाशवाणी, दूरदर्शन, कंप्यूटर, मोबाइल आदि श्रव्य व दृश्य माध्यम हैं। 'कंप्यूटर' की दिन-प्रतिदिन शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती ज़रूरतों ने इसके महत्त्व को प्रोत्साहन दिया गया। भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन की प्रणाली का उपयोग किया जा रहा है। हिन्दी-भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में कंप्यूटर की मल्टीमीडिया टेक्नॉलॉजी और वेब टेक्नॉलॉजी का भरपूर लाभ उठाया जा रहा है। कंप्यूटर की मल्टीमीडिया सेवाएँ अपने आप में स्वयं ही बहुमूल्य शिक्षण माध्यम हैं। इन मल्टीमीडिया साधनों के द्वारा अध्येता को लिखित सामग्री (Text) के साथ-साथ चित्रात्मक सामग्री (Graphics) तथा अच्छी तरह समझने हेतु ध्वनि प्रसारण भी प्राप्त होता है। अब कंप्यूटर के मल्टीमीडिया कार्यक्रम भाषा-शिक्षण में क्रान्ति ला रहे हैं। इस प्रकार प्रस्तुत पाठ में भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर और मल्टीमीडिया की उपयोगिता, भूमिका और अनुप्रयोग की चर्चा सविस्तार की गई है।

3.3.09. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. कंप्यूटर का जनक किसे कहा जाता है ?
   (क) चार्लेस वाबेज
   (ख) रतन टाटा
   (ग) बिल गेट्स
   (घ) पाणिनी

   सही उत्तर (क) चार्लेस वाबेज

2. श्रव्य तथा दृश्य दोनों ही माध्यम में कौन-सा उपकरण सम्मिलित किया है ?
   (क) रेडियो
   (ख) टेपरिकार्डर
   (ग) कंप्यूटर
   (घ) ग्रामोफोन

   सही उत्तर (ग) कंप्यूटर

3. कंप्यूटर के प्रमुख कितने प्रकार हैं ?
   (क) तीन
   (ख) पाँच
   (ग) सात
   (घ) दस

   सही उत्तर (ग) सात

4. किसी सूचना की प्रस्तुति में एक साथ एक से अधिक माध्यमों का प्रयोग कहलाता है ?
   (क) मल्टीमीडिया
   (ख) आकाशवाणी
   (ग) उपागम
   (घ) ज्ञानदर्शन

   सही उत्तर (क) मल्टीमीडिया

5. 'Virtual Class' शब्द का क्या अर्थ है ?
   (क) आभासीय कक्षा
   (ख) सामान्य कक्षा
   (ग) विशिष्ट कक्षा
   (घ) कुछ नहीं

सही उत्तर (क) आभासीय कक्षा

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. भाषा-शिक्षण का सम्प्रत्यय लिखिए।
2. शिक्षण के स्रोत के रूप में कंप्यूटर का उपयोग लिखिए।
3. हिन्दी भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सहअनुदेशन के पाँच वैशिष्ट्य बताइए।
4. मल्टीमीडिया का सम्प्रत्यय समझाइए।
5. कंप्यूटर के गुणों को लिखिए।
6. 'ई लर्निंग' तथा 'स्मार्ट कक्षा' पर टिप्पणी लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर सह अनुदेशन को विस्तार से समझाइए।
2. शिक्षा में मल्टीमीडिया के उपयोग का वर्णन कीजिए।
3. हिन्दी भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया को विस्तार से लिखिए।
4. भाषा-शिक्षण में दृश्य-श्रव्य माध्यमों को स्पष्ट कीजिए।

3.3.10. व्यवहार

1. कंप्यूटर का अर्थ एवं कार्य प्रणाली को बताइए।
2. मल्टीमीडिया के प्रकार एवं घटकों को लिखिए।
3. हिन्दी भाषा-शिक्षण अनुदेशन में कंप्यूटर के कार्यों को बताइए।
4. मल्टीमीडिया का शिक्षा में उपयोग समझाइए।
5. कंप्यूटर सह अनुदेशन क्या है ?

3.3.11. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. पात्र, डॉ॰ बृन्दाबन (2010), कक्षा सम्प्रेषणम्, तीरतरंग प्रकाशन, भुवनेश्वर ISBN : 978-81-920554-5-9
2. भटनागर, डॉ॰ ए.बी. & भटनागर, डॉ॰ अनुराग (2015), शिक्षा में कंप्यूटर के अनुप्रयोग एवं सम्प्रेषण दक्षत का विकास, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो, ISBN : 978-93-84696-54-2
3. जोशी, डॉ॰ राजकुमार (2014), ई-शिक्षा, जयपुर, राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ, ISBN : 978-81-89662-004
4. पाण्डेय, डॉ॰ रामशकल (2012), हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-47-1

5. अग्रवाल, डॉ॰ लता (2012), भाषा-शिक्षण एवं शिक्षण विधियाँ, एच. पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा, ISBN : 978-81-89442-90-3
6. मंगल, एस. के. तथा, मंगल, उमा (2011), शिक्षा तकनीकी, नई दिल्ली, पी. एच. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, ISBN : 978-81-2003-3724-4
7. राव, डॉ॰ पि. वेंकट (2014), संगणक शिक्षा, नई दिल्ली, न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन, ISBN : 81-8315-144-2
8. त्यागी, डॉ॰ एस. के. (2013), हिन्दी भाषा-शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-38-9
9. शर्मा, डॉ॰ आर. ए. (2014), शैक्षिक प्रविधि, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-80063-77-5
10. दुबे, डॉ॰ सत्यनारायण शरतेन्दु, (2011), सरल हिन्दी भाषा-शिक्षण, इलाहबाद, शारदा पुस्तक भवन.

❖❖❖

खण्ड – 3 : भाषा-शिक्षण : प्रविधि और अधिगम

इकाई – 4 : ऑन-लाइन भाषा-शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

3.4.00. उद्देश्य कथन
3.4.01. प्रस्तावना
3.4.02. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : परिचय
3.4.03. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : पाठ्यक्रम निर्माण तथा अन्य पहलू
3.4.04. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण तथा मुक्त दूरस्थ शिक्षा
3.4.05. परम्परागत कक्षा शिक्षण तथा ऑनलाइन भाषा-शिक्षण
3.4.06. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : सुविधाएँ
3.4.07. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : समस्याएँ
3.4.08. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के प्रशिक्षकों की चुनौतियाँ और समाधान
3.4.09. हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा-शिक्षण के इंटरनेट संसाधन
3.4.10. पाठ-सार
3.4.11. बोध प्रश्न
3.4.12. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

3.4.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. ऑनलाइन शिक्षण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
ii. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के बारे में समझ पाएँगे।
iii. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के विभिन्न आयामों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
iv. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण की सुविधा एवं असुविधाओं को समझपाएँगे।

3.4.01. प्रस्तावना

ऑनलाइन शिक्षण की आवश्यकता क्यों हैं ? ऑनलाइन भाषा-शिक्षण उन कक्षाओं के अध्येताओं की बढ़ती ज़रूरतों को पूरा करती है, जो पारम्परिक कक्षा व्यवस्था में भाग लेने के लिए पर्याप्त समय नहीं दे पाते हैं। जो शिक्षार्थियाँ विभिन्न कारणों से (जैसे दूरस्थ स्थानों में रहना, अधिक कार्य व्यस्तता या केवल काम पर ही अध्ययन कर सकना या उसके बाद तथा वे जो स्वतन्त्र रूप से सीखना पसंद करते हैं) उन पारम्परिक कक्षाओं में भाग लेने में असमर्थ होते हैं उनके लिए ऑनलाइन शिक्षण एक बेहतर विकल्प के रूप में उभरकर आया है। यही बात ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भी लागू होती है। भूमण्डलीकरण के इस युग में जहाँ एक देश दूसरे से

जुड़ने के लिए प्रयासरत है उसमें भाषा-भिन्नता एक मुख्य बिन्दु है जिसे पार करना बेहद आवश्यक है। परन्तु अपने काम के साथ साथ किसी पारम्परिक भाषा-शिक्षण कक्षा में भाग ले पाना बहुत से शिक्षार्थियों के लिए सम्भव नहीं होता जिनके लिए ऑनलाइन भाषा-शिक्षण एक अच्छा माध्यम है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम में भाग लेने के लिए विद्यार्थियों को न्यूनतम एक कंप्यूटर और उसमें इंटरनेट की सुविधा की आवश्यकता होती हैं। ऑनलाइन पाठ्यक्रम समय या स्थान से अनबाउंड कोर्स की एक उत्कृष्ट विधि प्रदान करते हैं। इंटरनेट उपलब्धता के साथ किसी भी कंप्यूटर से पाठ्यक्रम तक पहुँचने की क्षमता, प्रतिदिन 24 घंटे, सप्ताह में सात दिनों की उपलब्धता के लिहाज से भी ऑनलाइन भाषा-शिक्षण आज के कई विद्यार्थियों को अत्यन्त प्रोत्साहित करने वाला संसाधन है।

3.4.02. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : परिचय

भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण की विधा को सबसे नवीनतम संसाधन माना जा सकता है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण वह शिक्षण प्रणाली हैं जिसमें भाषा-शिक्षण एवं अधिगम कार्य इंटसेट के माध्यम से निष्पादित होती हैं। इंटरनेट के माध्यम से किसी भी विषय की शिक्षण की इस प्रणाली को अंग्रेजी में e-learning कहा गया है और हिन्दी में इसके लिए 'ऑनलाइन शिक्षण' या 'ई-पाठशाला' इत्यादि शब्दावली का प्रयोग देखा गया है। वैश्वीकरण के बढ़ती माँग के कारण शिक्षा क्षेत्र में भी सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (Information and Communication Technology) के प्रयोग में भारी वृद्धि हुई है, जिसने भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन, प्रशिक्षण और शिक्षण के तरीकों को बदल दिया है। विभिन्न डिजिटल तकनीकों के व्यापक उपयोग के साथ-साथ शिक्षण के अन्य प्रभावी साधनों, तरीकों में से ऑनलाइन भाषा-शिक्षण विधा ने भी एक इंटरेक्टिव, शिक्षार्थी केन्द्रित, मुक्त और लचीला वातावरण का निर्माण किया है। शिक्षण और शिक्षा के एक प्रभावी विधा के रूप में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण की उपयोगिता ने न केवल भाषा शिक्षकों और चिकित्सकों का ध्यान आकर्षित किया है, बल्कि विद्यार्थी-उन्मुख और स्वतन्त्र रूप से सीखने का वातावरण भी निर्माण किया है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण मूलतः एक प्रकार की दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था है जिसमें शिक्षक एवं विद्यार्थी एक पारम्परिक कक्षा में नहीं होते हैं। पर दूर में ही बैठकर इलेक्ट्रोनिक्स उपकरणों की उपयोग कर इंटरनेट के माध्यम से शिक्षक एवं विद्यार्थी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सम्पर्क में रहकर अध्ययन-अध्यापन की कार्य में सहभागी हो सकते हैं।

शैक्षणिक क्षेत्र में अध्यापन कार्य के लिए शिक्षकों के रुझान बरकरार रखने और समकालीन तथा बदलते विषयों या गतिविधियों के बारे में विद्यार्थियों को अद्यतन करते रहना एक तरह की चुनौती है। भाषा-शिक्षण और अधिगम के क्षेत्र में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण और अधिगम का एक लाभ यह है कि यह शिक्षकों को ऐसी चुनौतियों को सफलतापूर्वक पूरा करने में सहायक सिद्ध होती है तथा उन्हें नई सम्भावनाएँ भी प्रदान करती है। पिछले कुछ सालों में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण और अधिगम से जुड़े शिक्षकों एवं ऑनलाइन आधारित पाठ्यक्रमों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। यद्यपि शैक्षणिक उपयोग के लिए इंटरनेट आधारित संसाधनों की क्षमता पूरी तरह से अभी तक नहीं खोजी गई है और औसत शैक्षिक संस्थान अभी भी कंप्यूटर और इंटरनेट संसाधनों का सीमित उपयोग करते हैं। चूँकि हम सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के युग में प्रवेश कर चुके है

इसलिए प्रोद्यौगिकी के उपयोग से भाषा-शिक्षण से सम्बन्धित नवाचारी योजना प्रस्तुत की जा सकती है। इस सम्बन्ध में ऑनलाइन माध्यम से अंग्रेजी भाषा-शिक्षण एवं अधिगम को ही उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता हैं, जो काफी हद तक मानक स्तर पर विकसित हो चुकी हैं। यह भी देखा जा सकता हैं कि शिक्षकों के परिप्रेक्ष्य में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण और अधिगम एक क्रान्तिकारी संसाधन साबित हो सकती हैं, चूँकि ऑनलाइन माध्यम से प्रस्तावित शिक्षण उपकरण धीरे-धीरे और अधिक विश्वसनीय होती जा रही है। आजकल, अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण बहुत लोकप्रिय होती जा रही हैं और अधिक से अधिक शिक्षक तथा शिक्षार्थी इसमें जुड़ने लगे हैं। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की ऑनलाइन भाषा-शिक्षण एवं अधिगम की विधा भी अब विकसित हो रही है।

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में, भाषा का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना और कौशल विकास का कार्य पूरी तरह से विद्यार्थी की पहल और क्षमता पर छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार सीखने की सफलता विद्यार्थी के प्रेरक स्तर पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में, केवल अत्यधिक प्रेरित शिक्षार्थी ही ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम के माध्यम से प्रभावी रूप से सीख सकते हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण तेज रफ़्तार से बढ़ रही है। इसके पैरामीटर या सफलता के मापदंड अभी तक सम्पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुई है जो शिक्षकों के लिए स्वीकार्य हो।

3.4.03. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : पाठ्यक्रम निर्माण तथा अन्य पहलू

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रणाली को विभिन्न सन्दर्भों और स्तरों में अच्छी तरह से काम में लाने के लिए, ऑनलाइन भाषा-शिक्षण विधि को लागू करने के दौरान निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक हैं –

1. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के दो प्रमुख पहलू हैं – हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर। प्रभावी ऑनलाइन भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम सामग्री तैयार करने के लिए विशेषज्ञों की एक टीम की आवश्यकता होती है जो सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, शिक्षा सम्बन्धी डिज़ाइन इत्यादि के अच्छे ज्ञाता हों। साथ ही विषय शिक्षण के लिए विषय विशेषज्ञों को भी शामिल करने की आवश्यकता है। इन विशेषज्ञों को प्रारम्भ से ही शामिल करना चाहिए ताकि वे अपने बीच तालमेल बिठा सकें और एक एकीकृत समूह के रूप में कार्य कर सकें तथा ऑनलाइन भाषा-शिक्षण कोर्सवेयर की आवश्यकता के अनुसार योगदान करें। कार्यान्वयन तथा वितरण की व्यवस्था भी टीम के सदस्यों को ही करनी होती है। इस प्रणाली की बेहतर उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम डिज़ाइन, विकास, उत्पादन और कार्यान्वयन से सम्बन्धित विभिन्न विभागों में सहयोग रहे।
2. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रम डिज़ाइन में शामिल विशेषज्ञों को शिक्षार्थी की सुविधा को भी ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम निर्माण करना चाहिए सुबोधगम्य और इंटरेक्टिव हो। प्रभावी ऑनलाइन भाषा-शिक्षण कोर्स तैयार करने के दौरान उन्हें धैर्य रखने की आवश्यकता होती है क्योंकि इसके लिए अधिक समय, प्रयास और ऊर्जा की आवश्यकता होती है। उन्हें शिक्षण की प्रक्रिया को रोचक और

प्रभावी बनाने के लिए अधिक उदाहरण, चित्र, केस स्टडीज़, असाइनमेंट आदि भी प्रदान करना चाहिए।

3. ऑनलाइन भाषा शिक्षकों के लिए यह भी आवश्यक है कि वह शैक्षणिक दृष्टि से सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास के बारे में अद्यतन ज्ञान रखे ताकि शिक्षण की अधिक अभिनव रणनीतियों को ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में अपनाया जा सके। यह भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों को अन्तर्दृष्टि प्रदान करने, उन्हें प्रेरित करने के लिए समय-समय पर चर्चा में भाग लें। विद्यार्थियों को अपने अनुभवों और ज़रूरतों के आधार पर ज्ञान के निर्माण में मदद करने के लिए पर्याप्त संसाधन विकसित करने की भी आवश्यकता है। विद्यार्थियों के प्रदर्शन का आकलन तथा प्राप्त परिणामों, उपयोग किये गए कार्यक्रमों और प्रक्रियाओं के मूल्य और प्रभाव पर प्राप्त प्रतिक्रिया के व्यवस्थित अधिग्रहण के लिए आधार बनाता है। इसमें प्रारम्भिक और समकक्ष ये दोनों प्रकार के मूल्यांकन शामिल हैं, जिसके माध्यम से यह देखने की कोशिश की जाती है कि क्या विद्यार्थी की शिक्षण कौशल ऑनलाइन भाषा-शिक्षण विधि को अपनाने के लिए सुगम है तथा विद्यार्थी अपने सीखने में सुधार करने में सक्षम हैं या नहीं। उनके प्रदर्शन के आधार पर विद्यार्थियों को अपने ज्ञान आधार में सुधार करने तथा अपने कौशल विकास हेतु जानकारी प्रदान कर उचित सिस्टम को खोजने में मदद करती है। समस्याओं के माध्यम से यह आकलन करने का प्रयास करना चाहिए कि क्या नवाचार, नवीन प्रक्रियाएँ और उत्पादों को शिक्षण में शामिल किया जा रहा है या नहीं।

4. आकलन एक सतत प्रक्रिया है, जो कार्यान्वयन चरण का भाग है। इस अभ्यास के माध्यम से यह पता लगाने का प्रयास किया जाता है कि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण कैसे शिक्षा और शिक्षार्थियों के कौशल को बढ़ाने में सहायक हो सकता है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी इस अवधारणा को रूपान्तरित करती जा रही है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकीविद्यार्थियों को स्वतन्त्र रूप से सीखने हेतु निर्देशन देते हैं। एक इंटरेक्टिव ऑनलाइन ट्यूटोरियल अपनी गति से सीखने और विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों और सॉफ्टवेयर का उपयोग करके अपने ज्ञान का निर्माण करने में सहायक होता है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सीखने के सिद्धान्तों और सिद्धान्तों के आधार पर सीखने की सामग्री तैयार करने के अवसर प्रदान करते हैं।

3.4.04. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण तथा मुक्त दूरस्थ शिक्षा

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण मोटे तौर पर तकनीक आधारित शिक्षा है, जो वेब-आधारित वितरण विधियों पर केन्द्रित है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रौद्योगिकियों का उपयोग कर शैक्षिक सामग्री शिक्षार्थियों तक पहुँचाती है। मेनफ्रेम कंप्यूटर, फ्लॉपी डिस्केट, मल्टीमीडिया सीडी-रोम, इंटरेक्टिव वीडियो-डिस्क आदि के इस्तेमाल के अलावा, हाल ही में वेब टेक्नोलॉजी के अन्तर्गत इंटरनेट, जो शैक्षिक संस्थानों में लोकप्रिय है, का उपयोग कर ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में वृद्धि हुई है।

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण एवं मुक्त दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के बीच आन्तरिक सम्बन्ध है। मोलिनेक्स के अनुसार ऑनलाइन भाषा-शिक्षण का उपयोग WAN के उपयोग के माध्यम से मुक्त दूर शिक्षा के अनुरूप करने के लिए भी किया जा सकता है और इसे शिक्षण का एक लचीला रूप माना जा सकता है, जहाँ सिर्फ समय-समय की शिक्षा सम्भव है। संस्थान से दूर रहने के बावजूद वह अपने अध्ययन का अद्यतन कर सकता है। कुछ विशेषज्ञ इसलिए ऑनलाइन भाषा-शिक्षण को कंप्यूटर संचार प्रौद्योगिकी द्वारा बढ़ाए गए दूरस्थ शिक्षा के रूप में परिभाषित करते हैं। ओपन एंड डिस्टेंस लर्निंग क्वालिटी काउंसिल, यू.के. ने डिजिटल रूप से वितरित सामग्री के संयोजन के साथ शिक्षण सेवाएँ उपलब्ध करने वाली ऑनलाइन भाषा-शिक्षण को सीखने की प्रभावी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है।

इस परिभाषा में दो महत्त्वपूर्ण शब्दों का उपयोग किया गया है। वे हैं – प्रभावी, अर्थात् शिक्षण कई प्रकार के हैं, लेकिन कुछ प्रभावी नहीं भी हो सकते हैं। दूसरा शब्द है 'संयोजन' मूलतः सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का शिक्षण को सुविधाजनक बनाने के लिए उपयोग में लाने के बारे में निर्देशित कर रहे है। इस भाषा-शिक्षण प्रणाली में ट्यूटर, परामर्शदाता, प्रशिक्षक या पाठ्यक्रम समन्वयकों का सहयोग भी महत्त्वपूर्ण है। यह देखा गया है कि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में सभी संभावित मीडिया और शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं के अनुसार गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के तरीके शामिल हैं। पॉलिसन ने ऑनलाइन भाषा-शिक्षण को इंटरेक्टिव लर्निंग के रूप में परिभाषित किया है जिसमें सीखने की इनपुट / आईस्पेसिल सामग्री ऑनलाइन उपलब्ध है और सीखने की गतिविधियों के लिए स्वतः प्रतिक्रिया प्रदान करती है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण का फोकस आमतौर पर शिक्षार्थियों और शिक्षकों के बीच संचार की तुलना में सामग्री सीखने पर अधिक है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण मूलतः वेब-आधारित शिक्षण, कंप्यूटर आधारित शिक्षा, वर्चुअल क्लासरूम, डिजिटल शिक्षण के विस्तृत प्रक्रिया को शामिल करते हैं। इसमें इंटरनेट, इंट्रानेट (लैन आई डब्ल्यू.ए.एन.), ऑडियो और वीडियो, उपग्रह प्रसारण, इंटरेक्टिव टेलीविज़न, सीडी-रॉम आदि के माध्यम से सामग्री की डिलीवरी की जाती है।

3.4.05. परम्परागत कक्षा शिक्षण तथा ऑनलाइन भाषा-शिक्षण

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में शिक्षण का माहौल परम्परागत कक्षा-आधारित शिक्षण के माहौल से समान या भिन्न हो सकते हैं। कक्षा-आधारित शिक्षण में, शिक्षार्थी शिक्षक द्वारा प्रस्तुत सामग्री पर काम करता है, होमवर्क तैयार करता है, और शिक्षकों और सहपाठियों द्वारा प्रस्तुतियों के माध्यम से विषय सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करता है। पारम्परिक कक्षागत शिक्षण में शिक्षार्थियों को अध्ययन सामग्री, शिक्षक, और अन्य संसाधन आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। शिक्षार्थी के प्रदर्शन को मूल्यांकन की विभिन्न तकनीकों, जैसे परीक्षाएँ, होमवर्क, शिक्षार्थियों की प्रस्तुतियों के माध्यम से मूल्यांकित किया जाताहै। परम्परागत कक्षा शिक्षण में शिक्षार्थी को शिक्षकों और संस्थानों से सूचना, पंजीकरण, पुस्तकालय संसाधन आदि से प्रशासनिक और शैक्षणिक समर्थन प्राप्त होता है। साथ ही शिक्षकों के सम्पर्क में होने के लिए उन्हें पर्याप्त अवसर मिलते हैं। यदि कक्षा-आधारित शिक्षण की इन पहलुओं की बारीकी से जाँच की जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि शिक्षक और सहपाठियों तक पहुँच

और उनके बीच बातचीत, जो सीखने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, परम्परागत शिक्षण की प्रक्रिया में प्रचलित हैं।

कक्षा-शिक्षा के ये पहलू ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रदाताओं के लिए चुनौतियाँ बनी हुई है। हालाँकि, परम्परागत कक्षाएँ कई मायनों में ऐसी अवसर प्रदान नहीं कर सकतीं जिससे वास्तविक दुनिया के अनुभवों को प्राप्त किया जा सके। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण विशेष रूप से शिक्षार्थी केन्द्रित प्रक्रिया है जिसमें शिक्षार्थी शिक्षण-प्रक्रिया को कई हद तक अपने नियन्त्रण में रख सकते हैं। शिक्षण की ज़रूरतों के मुताबिक, ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रौद्योगिकियों में उपलब्ध होती हैं जिसमें चर्चा, सहयोग, बातचीत और मल्टीमीडिया क्षमता के साथ विभिन्न प्रकार के अधिगम के अवसर प्रदान किये जाते हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण-प्रक्रिया में शिक्षार्थी सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार होते हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में सीडी पर शिक्षार्थी उन्मुख स्वयं-शिक्षा सामग्री विकसित किया जाता हैं जिसे वेब के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता हैं। शिक्षण-सामग्री वेब के माध्यम से वितरित की जाती है शिक्षार्थी स्टूडियोब्रिडिंग कौशल को लागू कर सामग्री के माध्यम से ब्राउज़ करता है। शिक्षार्थियों के प्रश्नों को ऑफ-लाइन मोड में शिक्षक द्वारा सम्बोधित किया जाता है।

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में ऑनलाइन अधिगम सत्र (वर्चुअल क्लासरूम) होते है, जिसमें प्रश्नों को ई-मेल के जरिये प्रेषित किया जा सकता है। शिक्षार्थी अपने कार्यस्थल रहते हुए भी प्रेषित किये गए प्रश्नों का उत्तर दे सकता है। इस प्रकार ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में पारम्परिक शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की सभी वांछनीय विशेषताएँ शामिल हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सामग्रियों के डिज़ाइन और विकास में प्रभावी रूप से शिक्षण के सिद्धान्तों का पालन किया जाता है ताकि विद्यार्थी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से प्रस्तुत किये गए अनुभवों के साथ बातचीत करके स्वतन्त्र रूप से सीख सकें। कई विचारकों के अनुसार ऑनलाइन भाषा-शिक्षण शिक्षार्थी के लिए अधिक वास्तविक और प्रासंगिक बन सकता है जब कि शिक्षार्थी उद्देश्य को स्पष्ट कर लेते हैं। अधिकांश मामलों में कक्षा की स्थिति में ऐसे अनुभव प्राप्त करना मुश्किल होता है।

3.4.06. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : सुविधाएँ

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण अपनी सहज पहुँच और गति के साथ शिक्षण के एक कुशल और प्रभावी माध्यम के रूप में उभरकर आया है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सीखने की एक लचीली प्रणाली है जिसमें विद्यार्थी अपनी गति और सुविधा के अनुसार किसी भी समय, किसी भी जगह और किसी भी गति से अध्ययन कर सकता है। टी.सी.टी. के माध्यम से शिक्षार्थियों को अध्ययन सामग्री उपलब्ध करायी जाती है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के महत्त्वपूर्ण लाभों में से एक यह है कि यह प्रणाली कोर्सवेयर सम्बन्धित साइटों और सामग्रियों के हाइपर लिंक्स प्रदान करता है और इस प्रकार विद्यार्थियों के लिए एक विशाल शैक्षिक संसाधन उपलब्ध होता है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण एक आभासी शिक्षण के माहौल भी तैयार करता है, जो पूरे शिक्षण-प्रक्रिया को इंटरेक्टिव और उपयोगकर्त्ता के अनुकूल बनाती है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के समर्थकों ने ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम की क्षमता के बारे में कई महत्त्वपूर्ण दावे किए हैं, इनमें से कुछ निम्नानुसार हैं –

01. ऑनलाइन शिक्षा विभिन्न शैक्षिक अवसर प्रदान करती है।
02. विद्यार्थी-केन्द्रित शिक्षा।
03. ऑनलाइन टूल की विविधता अलग-अलग शैक्षणिक शैलियों पर आधारित है जो विद्यार्थियों को और अधिक बहुमुखी शिक्षा के लिए सहायता प्रदान करते हैं।
04. सहयोगपूर्ण शिक्षण।
05. ऑनलाइन समूह कार्य विद्यार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में और अधिक सक्रिय प्रतिभागी बनने का अवसर प्रदान करता है।
06. विद्यार्थी ऑनलाइन कक्षाओं में आसानी से ऑनलाइन डेटाबेस और विषय विशेषज्ञों का उपयोग कर सकते हैं।
07. नई प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल विद्यार्थियों को संलग्न करने और प्रेरित करने के लिए किया जा सकता है।
08. पारम्परिक कक्षा में भाग न ले पाने वाले विद्यार्थियों तक पहुँच।
09. कार्यक्रमों और पाठ्यक्रमों का ऑनलाइन वितरण भौगोलिक तथा समय की बाधाओं के कारण उच्च शिक्षा तक न पहुँच पानेवाले विद्यार्थियों के भागीदारी को सम्भव बनाता है।
10. ऑनलाइन अध्यापन में शिक्षकों को पारम्परिक कक्षा सेटिंग्स में उपलब्ध होने की आवश्यकता नहीं है
11. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में अधिक लाभवान होने के साथ साथ समय की बचत होती है।
12. यह यात्रा लागत को कम करता है।
13. यह भौगोलिक रूप से दूरगम इलाकों के शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकता है।
14. ऑनलाइन शिक्षण में विद्यार्थियों को कई वास्तविक शैक्षणिक सामग्री मिलती है।
15. कंप्यूटर विभिन्न तरीकों से सामग्री प्रस्तुत करते हैं। स्क्रीन पर इलेक्ट्रॉनिक चीजों को एक तरह से प्रस्तुत किया जाता है कि वे भाषा सीखने के पारम्परिक तरीकों से अधिक आकर्षक और कम अमिट हो।
16. ऑनलाइन सीखने वाले विद्यार्थियों को ऑनलाइन उपकरणों का उपयोग करने की सम्भावना प्रदान करता है ताकि उन्हें व्याकरण-चेक, शब्दकोश और थिसॉरस से परे इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों से परामर्श मिल सके।
17. कंप्यूटर लचीला और स्थिर हैं। कंप्यूटर 'थक नहीं जाते' और शिकायत के बिना बार-बार एक ही बात दोहरा सकते हैं।
18. कंप्यूटर तत्काल प्रतिक्रिया देते हैं यदि वे ऐसा करने के लिए क्रमादेशित होते हैं।
19. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में भाषा अधिगम को व्यक्तिगत किया जा सकता है। विद्यार्थियों का अध्ययन सामग्री उनके व्यक्तिगत लक्ष्यों से सम्बन्धित होती है।
20. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में खुद को व्यक्त करने और सवाल पूछने में संकोची विद्यार्थियों के लिए अवसर प्रदान करता है।

21. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण विद्यार्थियों को असली शैक्षिक कार्यक्रम, खेल, सिमुलेशन, शब्दकोश आदि प्रदान करता है।
22. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में मल्टीमीडिया सामग्री का उपयोग किया जाता है, ई-पुस्तकों को प्रदर्शित किया जाता है और ध्वनि, चित्र और वीडियो का उपयोग किया जाता है। इससे विद्यार्थियों को चीजें अधिक वास्तविक और अधिक आसान लगने लगता है।

फ्लेचर ने अपने अध्ययन में पाया कि प्रौद्योगिकी आधारित प्रशिक्षण में परम्परागत कक्षा की अध्यापन की तुलना में 35-40 प्रतिशत की बचत होती है और बेहतर लाभ प्राप्त होता है। हेमफिल ने पाया कि प्रौद्योगिकी आधारित प्रशिक्षण समय की बचत करता है। एक कुशल ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम शिक्षार्थियों को शिक्षण वातावरण प्रदान करता है जिसमें उच्च स्तर का लचीलापन है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम ऐसे सामग्रियों से लैस है जो सीखने वालों की आवश्यकतानुसार सामग्री चुनने में सहायता करते हैं। इसमें शिक्षार्थी की प्रगति और प्रगति के स्तर को सही ढंग से समझने का प्रयास किया जाता हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण वातावरण में शिक्षण को नियन्त्रित करने के लिए सीखने के इतिहास और सीखने की सामग्री / जानकारी को एकीकृत करता है। सूचना क्रान्ति के युग में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम अधिक प्रभावी प्रतीत होता है यह ज्ञान के शरीर में परिवर्तनों के अनुकूल है। समाज की विकासशील गतिविधि को जल्दी से इस प्रणाली में शामिल किया जा सकता है और शिक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत किया जा सकता है।

3.4.07. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण : समस्याएँ

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के कई फायदे होने के साथ साथ समस्याएँ भी हैं। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण हर जगह सफलतापूर्वक लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि इसमें कई बाधाएँ हैं। जिसके कारण इसे प्रयोग आधारित शैक्षणिक कार्यक्रमों में लागू नहीं किया सकता है। यह पाया जाता है कि कई ऑनलाइन भाषा-शिक्षण कोर्सवेयर डेवलपर्स सामग्री की डिलीवरी पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, न कि सीखने की प्रक्रिया पर। विद्यार्थियों को ऑनलाइन भाषा-शिक्षण सिस्टम में अनुपस्थित सहयोग सेवाओं की आवश्यकता होती है। ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के कुछ आलोचकों का तर्क है कि एक शिक्षक ऑनलाइन भाषा-शिक्षण में आमने-सामने बातचीत के लिए उपलब्ध नहीं होते जिसके कारण कभी-कभी अधिगम बाधित हो सकती है। हालाँकि मध्यस्थतापूर्ण इंटरेक्शन विभिन्न सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से सम्भव हो सकता है और विद्यार्थी तुल्यकालिक संचार के माध्यम से अपने प्रश्नों को हल कर सकता है।

3.4.08. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के प्रशिक्षकों की चुनौतियाँ और समाधान

ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के प्रशिक्षकों के लिए कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे –

1. ऑनलाइन पर्यावरण के साथ परिचित होना
2. माध्यम को अपने लाभ के लिए उपयोग करने की क्षमता

3. विद्यार्थियों के लिए इलेक्ट्रॉनिक रूप से उपलब्ध होने के लिए विद्यार्थियों को त्वरित प्रतिक्रियाएँ प्रदान करना इत्यादि।

ऑनलाइन शिक्षण के समर्थकों का तर्क है कि इन बाधाओं को निम्नलिखित तकनीकों तथा नियोजन से दूर किया जा सकता है –

1. अपने ऑनलाइन पाठ्यक्रम में प्रयुक्त तकनीक से परिचित रहें।
2. कोर्स शुरू होने से पहले, हार्डवेयर और सॉफ़्टवेयर सहित आपके ऑनलाइन पाठ्यक्रम में उपयोग की जाने वाली तकनीक से परिचित होकर अपने विकल्पों को तलाशने में कुछ समय बिताएँ।
3. एक ऑनलाइन पाठ्यक्रम में उच्च स्तर की कंप्यूटिंग शक्ति और विश्वसनीय दूरसंचार बुनियादी ढाँचे की आवश्यकता होती है। सुनिश्चित करें कि आपके पास इन दोनों की उपलब्धता है।
4. अपने लाभ के लिए ऑनलाइन माध्यम का उपयोग करें।
5. विद्यार्थियों के साथ जुड़े रहें।

विद्यार्थियों के सम्पर्क में रहने के लिए ऑनलाइन वातावरण की तकनीक का उपयोग करें। विद्यार्थियों के साथ बार-बार संवाद करें, व्यक्तिगत रूप से या एक समूह में। ऑनलाइन वातावरण भाषा-शिक्षण हेतु कई दिलचस्प शैक्षणिक अवसर प्रदान करता है। इसके सफल उपयोग के लिए कई बैटन पर ध्यान देना आवश्यक है तथा इसमें आने वाली परेशानियों को भी समझने की आवश्यकता है। जैसे –

01. विद्यार्थी और शिक्षक, दोनों को कंप्यूटर साक्षर होना चाहिए क्योंकि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण का उपयोग करने के लिए कंप्यूटर संचालन की अच्छे ज्ञान होने की आवश्यकताहै।
02. कभी-कभी उपलब्ध इंटरनेट संसाधनों का इस्तेमाल करना मुश्किल हो जाता है बावजूद इसके कि उसमें एक अच्छा मैनुअल प्रदान किया गया है। इसके लिए कंप्यूटर और इंटरनेट के प्रयोग करने की जानकारी को अपडेट करते रहने की आवश्यकता है।
03. इंटरनेट संसाधनों की अपनी मेमोरी, गति, इनपुट और आउटपुट के तरीके आदि की सीमाएँ हैं। भाषा अधिग्रहण के लिए इंटरनेट संसाधन अभी भी अपूर्ण हैं। यह अकसर प्रोसेसिंग में भी समय लगाता है।
04. सूचना आमतौर पर टाइप करके इनपुट होती है, इसलिए कंप्यूटर को कुशलतापूर्वक उपयोग करने के लिए टाइपिंग जानना भी आवश्यक है। आजकल आवाज के माध्यम से उपयोग कर सकने वाले कुछ इंटरनेट संसाधन भी उपलब्ध हैं लेकिन वे अच्छी तरह विकसित नहीं होने के कारण बहुत लोकप्रिय नहीं हैं।
05. सामान्य तौर पर सभी इंटरनेट साइट्स वही सुविधा उपलब्ध कराते हैं जो प्रोग्राम उसमें विकसित किये जाते हैं। सभी इंटरनेट संसाधनों की कुछ सीमाएँ हैं। उदाहरण के लिए, कुछ भाषा सीखने वाली संसाधन गलतियों के और स्पष्टीकरण के बिना एक प्रश्नोत्तरी लेने के बाद अन्तिम स्कोर दिखाते हैं।

06. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रयोक्ता के अप्रत्याशित अनुरोधों और आवश्यकताओं को नियन्त्रित नहीं कर सकता क्योंकि कंप्यूटर उन चीज़ों का प्रदर्शन कर सकता है जो वे करने के लिए डिज़ाइन किये जाते हैं।
07. कंप्यूटर के साथ इंटरनेट की उपलब्धता रखना एकमहँगी प्रक्रिया है, इसके अतिरिक्त उपकरणों को क्रय किया जाना बड़ा सौदा है पर जो ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कम आय वाले विद्यार्थी आम तौर पर कंप्यूटर एवं उपकरण नहीं खरीद सकतेहैं।
08. कंप्यूटर पर ठीक से नेटवर्क उपलब्ध न होने पर शिक्षण में बाधा आ सकती हैं, ऐसी समस्याओं को दूर करने के लिए कौशल तकनीशियनों के साथ उपकरणों को संस्थापित कर रखने के लिए एक विशेष कक्षा की भी आवश्यक होती है।
09. कंप्यूटर विकल या टूट जाने पर उनके पास तकनीकीसमस्याएँ खड़ी हो जाती हैं।
10. साधनों को बेहतर तरीके से समझाने और सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के लिए शिक्षकों को तैयार करने के लिए भी प्रशिक्षित करना आवश्यक है।

3.4.09. हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा-शिक्षण के इंटरनेट संसाधन

आज ऑनलाइन संसाधन किसी भी भाषा के शिक्षण और अधिगम के लिए सामग्री का अन्तहीन स्रोत उपलब्ध कराती है। ऑनलाइन पर भाषा-शिक्षण के अनेकों संसाधन आज उपलब्ध है, यह वेब-आधारित उपलब्धता विभिन्न इंटरनेट आधारित संसाधनों के माध्यम से भाषा शिक्षार्थियों को सुगमता से प्राप्त होती हैं। इसमें शिक्षार्थियों के ज्ञान के सभी स्तरों के लिए भाषा सीखने की सामग्री शामिल है। उपलब्ध भाषा-शिक्षण के वेब पटलों में दिए निर्देशानुसार क्लिक करके केवल त्वरित आकलन के साथ ही भाषा के विभिन्न पहलुओं पर अलग-अलग परीक्षा ही नहीं बल्कि टिप्पणी भी प्राप्त कर सकते हैं। इसमें कई उपयोगी इंटरनेट संसाधनों के रूप में ऑनलाइन शब्दकोश, गेम, चैट साइट एवं भाषा के ज्ञान के स्तर को परिभाषित करने के लिए प्रश्नोत्तर भी शामिल हैं। यह पत्र, आवेदन और आत्मवृत्त लेखन के लिए एक मानकीकृत प्रारूप भी प्रदान करती है।

LILA (Learn Indian Languages through Artificial Intelligence) हिन्दी सीखने के लिए C-DAC, Pune के मल्टीमीडिया आधारित बुद्धिमान आत्म-शिक्षण कार्यक्रम है। हिन्दी प्रबोध, प्रवीण और प्रज्ञा पाठ्यक्रम अंग्रेजी, असमिया, बंगाली, बोडो, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, तमिल और तेलगु के माध्यम से हिन्दी सीखने के लिए वर्ल्ड वाइड वेब पर उपयोगकर्त्ता के अनुकूल और प्रभावी उपकरण प्रदान करते हैं। यह वेब पटल www।lilappp।rb-aai।in/#! पर उपलब्ध हैं।

भारतीय भाषा संस्थान के वेब पटल http://www।cii।org/Courses।aspx पर भारतीय भाषाओं की शिक्षण पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं। जो वर्तमान बांग्ला, कन्नड़, तमिल एवं मणिपुरी भाषाओं की शिक्षण एवं अधिगम हेतु उपलब्ध करायी गई हैं।

3.4.10. पाठ-सार

प्रस्तुत पाठ में आज के विकसित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, विशेष रूप से इंटरनेट का उपयोग कर संचालन में आयी ऑनलाइन भाषा-शिक्षण की प्रायोगिक एवं उपादेयताओं के बारे में विचार किया गया है। इस पाठ में ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के समग्र बिन्दुओं पर नजर डालने का प्रयास किया गया है ताकि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के शैक्षणिक माँग का स्पष्ट रूप से मूल्यांकन किया जा सके। शिक्षण के अन्य संसाधनों की तरह केवल शिक्षण के लिए ही ऑनलाइन भाषा-शिक्षण प्रणाली को लागू नहीं किया जाना चाहिए। इसलिए यहाँ इस प्रणाली को शिक्षार्थियों को अपने व्यक्तित्व को इच्छित आधार ज्ञान, कौशल और मूल्य प्रणाली के साथ आकार में लाने में मदद करने के उद्धेश्य से अपनाये जाने के सम्बन्ध में भी विचार किया किया गया है। कहा जा सकता है कि ऑनलाइन भाषा-शिक्षण भाषा-शिक्षण की सभी समस्याओं के समाधान की एकमात्र स्रोत नहीं है, इसे अन्य संचार माध्यमों द्वारा समर्थित होना चाहिए, जिसमें समेकित दिशा-निर्देश शामिल हैं।

3.4.11. बोध प्रश्न / अभ्यास

रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु उचित विकल्प का चुनाव कीजिए–

1. भाषा-शिक्षण सम्बन्धी भौगोलिक बाधाओं को ..... भाषा-शिक्षण द्वारा दूर किया जा सकता है। (ऑनलाइन / पारम्परिक कक्षागत)
2. ..... भाषा-शिक्षण समय सीमाओं से परे है। (ऑनलाइन / पारम्परिक कक्षागत)
3. ..... व्यवस्था में शिक्षार्थियों को संस्थानगत प्रशासनिक सहयोग प्राप्त होता है। (ऑनलाइन / पारम्परिक कक्षागत)
4. ..... भाषा-शिक्षण में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग अवश्यम्भावी है। (ऑनलाइन / पारम्परिक कक्षागत)
5. भारतीय भाषा-शिक्षण संस्थान द्वारा वर्तमान ..... भाषा की ऑनलाइन शिक्षण उपलब्ध करायी गई है। (उड़िया / बंगाली)

सही उत्तर – (1) ऑनलाइन (2) ऑनलाइन (3) पारम्परिक (4) ऑनलाइन (5) बंगाली

कथन के सही / गलत होने की पहचान कीजिए –

1. ऑनलाइन शिक्षण एक दूरस्थ शिक्षण प्रणाली है। (सही / गलत)
2. पारम्परिक कक्षागत शिक्षण और ऑनलाइन शिक्षण में अन्तर है। (सही / गलत)
3. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण हेतु कम्प्यूटर संचालन की अच्छी जानकारी होने की आवश्यक्ता है। (सही / गलत)
4. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण व्यक्तिगत रूप से सीखने का अवसर प्रदान करता है। (सही / गलत)

5. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण समयबद्ध शिक्षण प्रणाली की बाधाओं से परे है। (सही / गलत)

सही उत्तर – (1) गलत (2) सही (3) गलत (4) सही (5) सही

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण क्या है ? संक्षेप में लिखिए।
2. भारतीय भाषाओं के शिक्षण के लिए ऑनलाइन भाषा-शिक्षण के महत्त्व को संक्षेप में बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. ऑनलाइन भाषा-शिक्षण की सुविधाओं और असुविधाओं के बारे में लिखिए।
2. क्या आप ऑनलाइन भाषा-शिक्षण को एक बेहतर शिक्षण प्रणाली मानते हैं ? तर्क और उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

3.4.12. उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. E. Karavas, (1996) "Using attitude scales to investigate teachers' attitudes to the Communicative approach", ELT Journal volı 50, no. 3, pp.187-198
2. S. Lee, J. Kim, J. Lee, and X. Liu,(2005) "The Effectiveness of Online Situated Environments for Language Learning", Proceedings of 21st Annual Conference on Distance Teaching and Learning, pp 1- 4
3. S. S. Jabeen,(2014) "Implementation of communicative approach", English Language Teaching, vol. 7, no.8, pp. 68-74,
4. Student activities in web-based environments by Linda Bradley
5. Mark, Tony "Web based Learning Primer" http://wwwıc2t2ıca/landonline/primerıhtml

❖❖❖

खण्ड – 4 : हिन्दी भाषा-शिक्षण (मातृभाषा और अन्य भाषा के सन्दर्भ में)

इकाई – 1 : वाचन और लेखन

इकाई की रूपरेखा

4.1.00. उद्देश्य कथन
4.1.01. प्रस्तावना
4.1.02. वाचन का सम्प्रत्यय
4.1.03. वाचन के उद्देश्य
4.1.04. वाचन का महत्त्व
4.1.05. वाचन के प्रकार
    4.1.05.1. सस्वर वाचन
        4.1.05.1.1. सस्वर वाचन के उद्देश्य
    4.1.05.2. मौन वाचन
        4.1.05.2.1. मौन वाचन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण तथ्य
4.1.06. वाचन शिक्षण की विधियाँ
4.1.07. वाचन सम्बन्धी त्रुटियाँ
    4.1.07.1. त्रुटियों के कारण
    4.1.07.2. त्रुटि निवारण
4.1.08. वाचन सामग्री
4.1.09. वाचन विकास के स्तर
4.1.10. लेखन का सम्प्रत्यय
4.1.11. लेखन शिक्षण के उद्देश्य
4.1.12. लेखन का महत्त्व
4.1.13. लेखन के प्रकार
4.1.14. लेखन शिक्षण की विधियाँ
4.1.15. लेखन के प्रमुख अंग
4.1.16. लेखन विकास की प्रक्रिया
    4.1.16.1. प्रथम वर्ण-लेखन
        4.1.16.1.1. वर्ण-लेखन-शिक्षण में ध्यातव्य बातें
    4.1.16.2. वर्तनी
    4.1.16.3. रचना
        4.1.16.3.1. रचना-शिक्षण के उद्देश्य
        4.1.16.3.2. रचना-शिक्षण की प्रविधियाँ
        4.1.16.3.3. रचना लेखन-शिक्षण में ध्यातव्य बातें
4.1.17. पाठ-सार
4.1.18. बोध प्रश्न

4.1.19. व्यवहार
4.1.20. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

4.1.00. उद्देश्य कथन

भाषा अभिव्यक्ति का साधन है। अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा कौशल होते हैं। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे –

i. हिन्दी भाषा का मातृभाषा एवं द्वितीय भाषा-शिक्षण में कौशलों का ज्ञान प्राप्त करना।
ii. हिन्दी भाषा-शिक्षण में वाचन तथा लेखन का ज्ञान प्राप्त करना।
iii. हिन्दी वाचन के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करना।
iv. वाचन का अर्थ एवं महत्त्व का ज्ञान प्राप्त करना।
v. वाचन के प्रकारों के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना।
vi. हिन्दी वाचन-शिक्षण विधियों का ज्ञान प्राप्त करना।
vii. लेखन का अर्थ एवं महत्त्व का ज्ञान प्राप्त करना।
viii. हिन्दी लेखन के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करना।
ix. लेखन के प्रकारों के बारे में ज्ञान प्राप्त करना।
x. हिन्दी लेखन-शिक्षण की विधियों का ज्ञान प्राप्त करना।
xi. हिन्दी लेखन-विकास की प्रक्रिया का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना।
xii. हिन्दी वर्ण, वर्तनी तथा रचना के विषय में ज्ञान प्राप्त करना।

4.1.01. प्रस्तावना

शिक्षा का सामान्य अर्थ ज्ञान-प्राप्ति है। इस शिक्षा का एक अंश भाषा-शिक्षण भी है। भाषा-शिक्षण का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों को भाषा व्यवहार कुशल बनाना है। व्यक्ति की सम्प्रेषण क्षमता भाषा कौशलों की दक्षता पर निर्भर होती है। भाषा की प्रभावशीलता का मानदण्ड बोधगम्यता होता है। कैलाशचन्द्र भाटिया ने भाषाई कौशलों को दो भागों में विभाजित किया है – प्रधान कौशल और गौण-कौशल। प्रधान कौशल के अन्तर्गत उच्चरित भाषा से सम्बन्धित कौशल – श्रवण और भाषण एवं गौण कौशल के अन्तर्गत लिखित भाषा से सम्बन्धित कौशल – वाचन और लेखन हैं।

हिन्दी भाषा का शिक्षण सम्पूर्ण देश में दो रूपों में दृष्टिगोचर होता है – मातृभाषा के रूप में हिन्दी और मात्रेतर या अन्य भाषा (द्वितीय भाषा) के रूप में हिन्दी। भाषा-शिक्षण अनादिकाल से शिक्षा व्यवस्था का अनिवार्य अंग रहा है। भाषा-शिक्षण में प्रथम भाषा मातृभाषा को कहते हैं तथा अन्य भाषा (द्वितीय भाषा) बाद में सीखी जाने वाली भाषा को कहा जाता है। हिन्दीभाषी क्षेत्रों में मातृभाषा-शिक्षण का प्रयोजन बालक में चारों कौशलों का विकास करना है जिससे वह अपनी आवश्यकता के रूप में अवसर व सन्दर्भ के अनुकूल बोलकर व

लिखकर अपने भावों एवं विचारों की उपयुक्त अभिव्यक्ति कर सके। अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण का प्रयोजन हिन्दी में उनकी गति प्रायः मातृभाषा जैसी करा देना ताकि वे उसे केवल सुनकर, पढ़कर समझ ही न सकें वरन् एक सीमा तक उसमें अभिव्यक्त कर सकें। प्रस्तुत पाठ के अन्तर्गत हिन्दी भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में वाचन और लेखन इन दोनों कौशलों के विकास की चर्चा करेंगे। ये विषय अपने आप में काफी बृहत् है। फिर भी संक्षेप में विषय को समेटने का प्रयत्न किया है जिससे आपको इस विषय क्षेत्र का सामान्य और समग्र परिचय मिल जाएगा।

4.1.02. वाचन का सम्प्रत्यय

वाचन शब्द 'वाक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है वाणी, शब्द। भाषा को उसके लिखित रूप के आधार पर ग्रहण करना वाचन है। अर्थात् भाषा लिपि को ज्ञात कर उच्चरित व अर्थ ग्रहण करना। वाचन को पठन भी कहते हैं। वाचन में मुख्यतया दो बातें समाहित हैं – (i) वर्णों तथा शब्दों को पहचानते हुए उनका ध्वनियों के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करना, एवं (ii) उपयुक्त गति के साथ वाचन करते समय पठित सामग्री का पूर्वापर सम्बन्धों के साथ अर्थ-ग्रहण करना। वास्तव में वाचन विविध प्रकार की कुशलताओं का एक समन्वित कौशल है। भाषा-शिक्षण की दृष्टि से वाचन का क्षेत्र काफी विस्तृत और व्यापक है। वस्तुतः वाचन कई जटिल क्रियाओं का सम्मिश्रण है, जैसे – दृश्य चिह्न-ध्वनि का सम्बन्ध, शब्दार्थ, वाक्यार्थ, पहचान – पुनःस्मरण – धारण – निर्णय – सामग्री उपयोग, शारीरिक तत्त्व – आँख की माँसपेशियों का नियन्त्रण, वागिन्द्रिय की माँसपेशियों का नियन्त्रण, स्वयं उच्चरित ध्वनि सुन कर शुद्धअशुद्ध की पहचान, शुद्ध करने का निर्णय लेना तथा उच्चारण का सुधार करना। इस प्रकार लिखित वर्णों को पहचानते हुए उन ध्वनियों से सहसम्बन्ध स्थापित करते हुए शब्दों के अर्थों को वाक्य के सन्दर्भ में वाक्यों के अर्थों को अनुच्छेद के सन्दर्भ में और अनुच्छेदों के अर्थों को विषय के सन्दर्भ में पूर्वापर सम्बन्ध स्थापित करते हुए ग्रहण क्षमता का विकास वाचन के द्वारा किया जाता है। डॉ॰ रामशकल पाण्डेय महोदय ने वाचन की परिभाषा देते हुए लिखा है कि – "वाचन वह क्रिया है जिसमें प्रतीक ध्वनि और अर्थ साथ-साथ चलते हैं।" कैथरीन ओकानर ने वचन की परिभाषा इस रूप में दी हैं – "वाचन वह जटिल अधिगम प्रक्रिया है जिसमें दृश्य, श्रव्य एवं गतिवाही सर्किटों का मस्तिष्क के अधिगम केन्द्रों से सम्बन्ध निहित है।"

हिन्दी वाचन प्रक्रिया में दो तत्त्व मुख्यतया समाहित हैं, यथा (i) वर्णों एवं शब्दों को पहचानते हुए उन ध्वनियों के साथ सह सम्बन्ध स्थापित करना है, एवं (ii) लिखित भाषा का अर्थ-ग्रहण करना। अर्थ-ग्रहण से पूर्व लिपि-चिह्नों की पहचान आवश्यक है। लिपि-चिह्नों की पहचान के आधार पर शब्दों की पहचान सम्भव है और वर्णों व शब्दों की परिवेशयुक्त पहचान ही अर्थ-ग्रहण करने का आधार कही जा सकती है। वस्तुत सामान्य शिक्षार्थी लिपिसंकेतों को आँखों से देखकर वाचन करते हैं जबकि दृष्टिहीन दिव्यांग शिक्षार्थी ब्रेल लिपि-संकेतों को स्पर्श करते हुए वाचन करते हैं। वाचन की प्रक्रिया को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है – वाचन मुद्रा और वाचन शैली।

वाचन मुद्रा को सुधारने के लिए किसी विशेष भौतिक सामग्री की आवश्यकता नहीं है, केवल दृष्टि-विराम को बढ़ाने के लिए कुछ अनुच्छेदों का निर्माण अवश्य किया जा सकता है। वाचन शैली में प्रत्येक शब्द का सुर में शुद्ध तथा स्पष्ट उच्चारण, भावानुरूप उचित गति-यति तथा लय एवं आवश्यकतानुसार उचित बल और भावानुरूप अनुतान आवश्यक है।

वाचन भाषा-अध्ययन का वह अंग या कौशल है जिसमें शिक्षार्थी के लिए किसी भाषा विशेष की लिपि, संरचना एवं शब्द-भण्डार की जानकारी आवश्यक होती है। शिक्षार्थी को भाषा की संरचना की जानकारी अधिक मात्रा में होगी तो उसका शब्दावली पर अधिकार होगा, और उतनी ही कठिनतर लिखित सामग्री के वाचन और उसके अर्थ-ग्रहण में सरलता होगी। वाचन के समय लिखित शब्दों के पारस्परिक सम्बन्ध की जानकारी के आधार पर ही अर्थ-ग्रहण सम्भव है तथा वाचन में गति के लिए अध्येय भाषा की लिपि-वर्णों का एकाकी तथा सामूहिक परिवेश में ध्वन्यात्मक मूल्य का पूर्ण ज्ञान आवश्यक है।

हिन्दी वाचन के अन्तर्गत ध्वनियों के प्रतीक वर्णों या शब्दों की कल्पना, शब्दों का स्पष्ट चाक्षुष ग्रहण, लिखित वाक्यों में अन्तर्मुक्त-अनुतान व्यवस्था की कल्पना, शब्दों व वाक्यों की अर्थव्यवस्था का ग्रहण एवं वाक्य-अर्थ की समाहारात्मक विचार-मूल व्यवस्था का उपबोध शामिल है। वाचन के समय प्रमुख रूप से तीन प्रकार के अर्थ समझने होते हैं – कोशीय अर्थ, व्याकरणिक अर्थ और सांस्कृतिक अर्थ।

1. कोशीय अर्थ : इसमें संज्ञा आदि शब्दों के अर्थ, यथा – वृक्ष, लम्बा, उधर, खड़ा होना।
2. व्याकरणिक अर्थ : इसमें लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल, वाच्य, वृत्ति आदि के अर्थ, जैसे – खेत में गायें चर रही हैं, के 'में, -एँ-ई-ऐं के अर्थ।
3. सांस्कृतिक अर्थ : इसमें वक्ता श्रोता के मध्य के सामाजिक सम्बन्ध का अर्थ यथा – 'आप यहाँ बैठिए' 'तुम वहाँ बैठो' में निहित सम्मान का भाव।

वाचक सामान्यतः वाचन के समय अपनी भाषिक संस्कृति के अनुरूप शब्दों या शब्द समुच्चयों का अर्थबोध करता है। लिपि-संकेतों के माध्यम से वह विशिष्ट संस्कृति – साँचों के समुच्चय में अन्तर्निहित विचारों – भावों की शृंखला को ग्रहण करने की कोशिश करता है। मातृभाषा या प्रथम भाषा के शिक्षण समय विद्यार्थियों में वाचन के आधार पर एक अभ्यास का निर्माण हो चुका होता है। जिसके द्वारा वे क्रमबद्ध लिपि-संकेतों पर दृष्टि डालते हुए उन संकेतों से संकेतित स्वन-समूहों, शब्दों, पदबंधों, वाक्यों और उनके व्याकरणिक संकेतों यथा – विभक्ति, प्रत्यय, उपसर्ग, विराम इत्यादि द्वारा उनके पारस्परिक अन्वय एवं अर्थ को समझते जाते हैं। द्वितीय भाषा के वाचन में यद्यपि विद्यार्थियों को इस विकसित आदत का कुछ लाभ अवश्य मिलता है, फिर भी द्वितीय भाषा की कुछ विशेषताएँ होती है जो उसकी मातृभाषा में नहीं होती हैं, वे उसे नये सिरे से सीखनी होती हैं। वाचन का पर्याप्त अभ्यास हो जाने पर वाचन की गति में इतनी तीव्रता आ जाती है कि वाचक की दृष्टि वाक्य के कुछ शब्दों, शब्दों के कुछ वर्णों पर ही पड़ती है और वह उनसे आगे के शब्दों एवं पदबंधों को बिना देखे ही अनुमान से पढ़ लेता है।

4.1.03. वाचन के उद्देश्य

भाषा-अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में वाचन को एक सोद्देश्य प्रक्रिया कहा जाता है। वाचन के उद्देश्यों में परिस्थिति के अनुरूप विभिन्नता हो सकती है। हिन्दी वाचन के सामान्य तथा निम्नलिखित उद्देश्य कहे जा सकते हैं –

1. विद्यार्थियों को स्वर के आरोह-अवरोह का अभ्यास कराना।
2. भावों के अनुकूल स्वर में लोच के साथ पठन क्षमता विकास करना।
3. विद्यार्थियों के अक्षर, शब्दोच्चारण, उचित ध्वनि तथा सुस्वरता का संस्कार करना।
4. वाचन में सुन्दरता के साथ प्रवाह बनाए रखना।
5. सामान्य अथवा सूक्ष्म अर्थ ग्रहण करना।
6. विद्यार्थियों मे पठन सामग्री का विश्लेषण कर उसके मूल्यांकन की रुचि विकसित करना।
7. विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार में वृद्धि करना।
8. विद्यार्थियों को लिपि का स्पष्ट ज्ञान कराना।
9. विद्यार्थियों की साहित्य अध्ययन में अभिरुचि विकसित करना।

4.1.04. वाचन का महत्त्व

हिन्दी भाषा-शिक्षण में वाचन-शिक्षण का विशेष महत्त्व है। प्रथम भाषा एवं द्वितीय भाषा के साहित्य को जानने, उसका रसास्वादन करने तथा ज्ञानार्जन का क्षेत्र-विस्तार करने के लिए वाचन एक बहुत ही उपयोगी माध्यम है। बिना वाचन की क्षमता के व्यक्ति अज्ञानान्धकार में भटकता है। अतः जीवन को ज्ञानमय बनाकर, सुखकर बनाने में वाचन क्रिया का बहुत बड़ा महत्त्व है। बिना पढ़े ज्ञान नहीं होता और बिना ज्ञान के जीवन में सफलता नहीं मिलती। असफल जीवन का कोई महत्त्व नहीं होता। अतः विभिन्न विषयों की पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं के ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी असंख्य विचारों से परिचित होने के लिए वाचन का सहारा लेना अपरिहार्य-सा हो गया है। इसी के द्वारा मानव साहित्य के विशाल साम्राज्य में प्रवेश करता है। शिक्षण में वाचन का महत्त्व इस प्रकार देखा जा सकता है –

1. वाचन से विद्यार्थियों में उच्चारण शुद्ध होता है।
2. स्वाध्याय प्रवृति का विकास विद्यार्थियों में होता है।
3. अर्थ-ग्रहण क्षमता विकसित होती है।
4. अवकाश का सदुपयोग होता है।
5. लिखित भाव ग्रहण सामर्थ्य विकसित होता है।

4.1.05. वाचन के प्रकार

सस्वरता के आधार पर वाचन के दो प्रकार माने जाते हैं – (i) सस्वर वाचन तथा (ii) मौन वाचन।

4.1.05.1. सस्वर वाचन

सस्वर वाचन में दृष्टि, बुद्धि तथा जिह्वा इन तीनों का सहयोग एवं सुयोग रहता है। विद्यार्थी दृष्टि से भाषा की लिपि देखते हैं, बुद्धि द्वारा समझते और अर्थ ग्रहण करते हैं तथा वागेन्द्रियों से बोलते है। इस प्रकार दृष्टि प्रक्रिया बुद्धि प्रक्रिया एवं वाणी प्रक्रिया का सम्मिलित रूप सस्वर वाचन है।

हिन्दी भाषा-शिक्षण के प्रारम्भिक कक्षा स्तरों में सस्वरवाचन का अत्यधिक महत्त्व है। वाचन की प्रारम्भिक अवस्था में लिपि प्रतीकों को देखकर उन्हें ध्वनि में परिवर्तित करना पड़ता है। सस्वर वाचन में लिपि, वाणी और अर्थ ग्रहण का पारस्परिक सम्बन्ध रहता है। अत एव लिपिबद्ध भाषा को मुखरित करना ही सस्वर वाचन है। प्रभावपूर्ण एवं शुद्ध सस्वर वाचन के लिए वाचक में कई योग्यताओं की अपेक्षा की जाती है। इन योग्यताओं के अभाव में शुद्ध सस्वर वाचन की सम्भावना नहीं हो सकती है –

1. ध्वनि ज्ञान : वाचक को हिन्दी भाषा की ध्वनिगत विशेषताओं का ज्ञान होना चाहिए। समान ध्वनियों में उच्चारणगत भिन्नता की सही जानकारी आवश्यक है। जैसे – श, स, ष, का उच्चारण स्थान क्या है ? इन्हें किस रूप में बोला जाना हो, इसका पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
2. उच्चारण शुद्धता : हिन्दी भाषा में ध्वनियों का उनसे बने शब्दों का सही उच्चारण वाचन को प्रभावकारी बनता है। विराम-चिह्नों, उचित आरोह-अवरोह, बलाघात आदि के उचित प्रयोग से उच्चारण कलात्मक बन जाता है और सस्वर वाचन भी प्रभावपूर्ण नजर आता है।
3. भाषा प्रवाह तथा सुस्पष्टता : हिन्दी सस्वर वाचन में भाषा प्रवाह एवं सुस्पष्टता पर विशेषरूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रसंग एवं भाव के अनुरूप वाचन में प्रवाह होना चाहिए। सारे भाषाई नियमों का पालन करते हुए उच्चारण किया जाना चाहिए।
4. अभिरुचि : हिन्दी सस्वर वाचन में वाचक अभिरुचि के साथ वाचन करेगा तभी उसका वाचन प्रभावों एवं रुचिकर होगा। अभिरुचि के अभाव में वाचक का विषय सामग्री के साथ सामंजस्य नहीं होगा और न ही अपेक्षित मुद्राएँ एवं शैलियाँ भी अपना सकेगा। अतः अभिरुचि हमेशा होनी चाहिए।

4.1.05.1.1. सस्वर वाचन के उद्देश्य

हिन्दी शिक्षण में सस्वर वाचन के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं –

1. शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण के साथ पढ़ना।

2. उचित स्वराघात तथा अनुतान।
3. विराम-चिह्नों का ध्यान।
4. निःसंकोच एवं आत्मविश्वास के साथ वाचन।
5. वाणी को आवश्यकतानुसार ऊँचे या मन्द स्वर पर रखना।
6. भावाभिव्यक्ति की स्पष्टता एवं शब्दों पर बल।
7. भाव एवं विचार के अनुरूप वाचन।

शिक्षण के सन्दर्भ आधार पर सस्वर वाचन के मुख्यतया दो भेद हैं – (क) आदर्श वाचन तथा (ख) अनुकरण वाचन।

(क) आदर्श वाचन

भाषा शिक्षक द्वारा आदर्श ढंग से किया जाने वाला वाचन आदर्श वाचन कहलाता है। हिन्दी भाषा-शिक्षण के अन्तर्गत गद्य, पद्य, नाटक, कहानी, उपन्यास आदि में आदर्श वाचन की आवश्यकता पड़ती है। भाषा-शिक्षक द्वारा किये जाने वाले आदर्श वाचन शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं –

1. विद्यार्थियों के सम्मुख वाचन का मानदण्ड प्रस्तुत करना।
2. विद्यार्थियों को पाठ सामग्री की सीमा बताना।
3. अपरिचित सामग्री का विद्यार्थियों को प्रारम्भिक परिचय प्रदान करना।
4. विद्यार्थियों में अभिरुचि उत्पन्न कर वाचन की ओर आकर्षित करना।
5. विद्यार्थियों को उचित लय, गति, प्रवाह तथा स्पष्टता का ज्ञान कराना।

(ख) अनुकरण वाचन

शिक्षक के आदर्श वाचन का अनुकरण करते हुए विद्यार्थियों के द्वारा किये गये वाचन को अनुकरण वाचन कहते हैं। हिन्दी अनुकरण वाचन में शिक्षक विद्यार्थी के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करने के लिए वाक्य के मध्य में न रोक कर वाक्य या छन्द की समाप्ति पर उसका सुधार करना उचित है। शिक्षक श्यामपट्ट पर अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करवाये। इस वाचन के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं –

1. विद्यार्थी के द्वारा आदर्श वाचन का अनुकरण करवाना।
2. विषय के अनुसार वाचन की क्षमता विकसित करना।
3. शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराना।
4. वाचन में गति एवं प्रवाह लाना।
5. विद्यार्थियों में अर्थ ग्रहण की योग्यता विकसित करना।

अनुकरण वाचन के भी दो भेद माने गए हैं – (i) व्यक्तिगत वाचन और (ii) सामूहिक वाचन।

(i) व्यक्तिगत वाचन : हिन्दी भाषा-शिक्षण में माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में व्यक्तिगतवाचन कराया जाता है। इस स्तर पर व्यक्तिगत वाचन के तहत उच्चारण सम्बन्धी दोष निराकरण एवं विद्यार्थियों की उचित स्वराघात, अनुतान, भावाभिव्यक्ति की स्पष्टता, लय, गति आदि सिखाने के लिए यह वाचन आवश्यक है।

(ii) सामूहिक वाचन : प्रारम्भिक स्तर की कक्षाओं में विद्यार्थियों में सामूहिक रूप से हिन्दी वाचन कराया जाता है। इस वाचन के समय हिचक, झिझक या शर्म का अनुभव करने वाले विद्यार्थी भी वाचन की ओर गतिशील हो जाते हैं। अर्थात् विद्यार्थियों का संकोच दूर किया जाता है।

4.1.05.2. मौन वाचन

सामान्यतया मौन वाचन का अर्थ विद्यार्थी बिना बुदबुदाए दत्त-चित्त होकर वाचन सामग्री को समझते हुए पढ़े, मौन वाचन में केवल देखना और अर्थ ग्रहण करना ये दो ही प्रक्रियाएँ हैं। अर्थात् लिपि प्रतीकों को देखना और मन ही मन ग्रहण करना मौन वाचन है। उसमें आँख और मस्तिष्क का सम्यक् सुयोग आवश्यक है। मौन वाचन केवल तीव्र गति की ही दृष्टि से भी अधिक व्यक्तिगत आत्म शिक्षण का रूप ले लेता है, जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी अपनी अभिरुचि एवं योग्यता के अनुसार आगे बढ़ता है। वाचन की प्रकृति के अनुसार मौन वाचन के दो भेद किये जाते हैं – (क) गम्भीर वाचन और (ख) द्रुत वाचन।

(क) गम्भीर वाचन

गम्भीर वाचन का अर्थ है – पाठ्यसामग्री को गहराई के साथ पढ़ना। गम्भीर वाचन को गहन वाचन भी कहते हैं। गम्भीर वाचन की सफलता अर्थ ग्रहण-क्षमता के अधिकाधिक विकास पर निर्भर है। इस वाचन को विचारशील अभ्यासों के माध्यम से भी विकसित किया जाए। माध्यमिक स्तर पर सांस्कृतिक बोध के लिए हिन्दी द्वितीय भाषा में विद्यार्थियों की मातृभाषा से सम्बन्धित जानकारी को ही गहन वाचन के लिए चुना जाए। गम्भीर वाचन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. हिन्दी भाषा पर अधिकार करना।
2. विषयवस्तु पर अधिकार करना।
3. नवीन सूचनाएँ एकत्रित करना।
4. केन्द्रीय भाव की खोज करना।

(ख) द्रुतवाचन

द्रुतवाचन का अर्थ है – अधिक गति के साथ वाचन करते हुए विषयवस्तु को समझना। यहाँ गति का अभिप्राय कम समय में अर्थ ग्रहण करते हुए अधिक सामग्री का वाचन करना। द्रुत वाचन का सम्बन्ध विस्तृत अध्ययन से है। द्रुतवाचन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. द्रुत वाचन क्षमता का विकास करना।
2. स्वाध्याय के प्रति उत्साह उत्पन्न करना।
3. सीखी हुई भाषा का अभ्यास करना।
4. आनन्द के साथ बौद्रिक विकास करना।
5. साहित्यिक विषय की समझ पैदा करना।
6. अवकाश का सदुपयोग करना।

मौन वाचन का आरम्भ प्राथमिक स्तर की अपेक्षा माध्यमिक स्तर पर किया जाए। द्वितीय भाषा के सन्दर्भ में तो यह उच्च स्तर पर आरम्भ किया जाए। प्राथमिक कक्षाओं के क्षेत्रों के वाचन में अनेक त्रुटियाँ रहती हैं। उचित अक्षर ज्ञान, संयुक्ताक्षर, अक्षर-समूहों को तत्काल मिलाकर शब्द रूप में पढ़ना, उनका उच्चारण और शब्द समूहों को वाक्य में पढ़ना और प्रवाह रखना आदि बातों से विद्यार्थी अभ्यस्त नहीं होते हैं। माध्यमिक कक्षा तक आते-आते उपर्युक्त कुशलताओं पर सस्वर वाचन की अपेक्षा अधिक बल देना चाहिए। मौन वाचन के समय कक्षा का वातावरण पूर्णतः शान्त होना चाहिए। मौन वाचन धैर्य, एकाग्रता, बिना ओठ हिलाए, पूर्ण अवधान तथा उचित विराम-चिह्नों, गति एवं प्रवाह के साथ किया जाना चाहिए। मौन वाचन के उद्देश्यों को निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया है –

1. विद्यार्थियों में स्वाध्याय की आदत का विकास करना।
2. द्रुत गति से पढ़कर पाठ्य सामग्री का अर्थ ग्रहण करना।
3. समय का सदुपयोग करना।
4. ध्यान का केन्द्रीकरण करना।
5. चिन्तन व तर्कशक्ति को प्रेरित करना।

4.1.05.2.1. मौन वाचन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण तथ्य

मौन वाचन के समय कई तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए। बालक जब भाषाई कुशलता में प्रौढ़ता प्राप्त कर लेता है तो वह सस्वर वाचन को छोड़ मौन वाचन को अपना लेना है; और मौनवाचन भाषाई प्रौढ़ता एवं दक्षता का द्योतक हो जाता है।

1. मौन वाचन के समय मुख से ध्वनि नहीं निकलनी चाहिए।

2. मौन वाचन के समय हाथ, पैर एवं अंगुलियों को हिलाना-चलाना नहीं चाहिए।
3. मौन वाचन का अभ्यास धीरे-धीरे बिना अधिक झुके करना चाहिए।
4. मौन वाचन के समय शिक्षक विद्यार्थियों का निरीक्षण करें।
5. घर के एकान्त में विद्यार्थियों को मौन वाचन की प्रेरणा देवें।
6. कक्षा के अतिरिक्त पुस्तकालय में मौन वाचन हेतु विद्यार्थी अभिप्रेरित हों।
7. मौन वाचन के समय दृष्टि लिखित अंश पर रहनी चाहिए।
8. मौन वाचन के समय ध्यान पाठ्यांशपर केन्द्रित रहना चाहिए।

4.1.06. वाचन शिक्षण की विधियाँ

हिन्दी वाचन-शिक्षण की निम्नलिखित विधियाँ प्रचलित हैं –

01. अक्षरबोध विधि

यह सबसे प्राचीन विधि है। इस विधि में विद्यार्थी सर्वप्रथम स्वर एवं व्यंजनों को पढ़ने में दत्तचित्त होता है, तथा स्वर शिक्षा से विद्यार्थी के उच्चारण वाले यांत्रिक अंगों में लोच आ जाता है – 'अ' 'आ' इत्यादि सभी की ध्वनि स्वतः आती है। इस स्वर शिक्षा से विद्यार्थी उच्चारण को शुद्ध करता है तत्पश्चात विद्यार्थी स्वर एवं व्यंजन का मिलान सीखना है; जैसे – क+अ = का। इसी प्रकार यही मिलान शब्दों को जोड़ने और वाक्यों को सजाने में काम आता है। इस विधि से विद्यार्थियों का उच्चारण शुद्ध होता है, विवरण दोष नहीं आ पाता; अक्षर शब्द तथा वाक्यों का क्रमबद्ध ज्ञान होता है। अक्षरों तथा व्यंजनों-स्वरों के मिश्रण से नये शब्दों को पढ़ने में सरलता रहती है एवं व्याकरण सम्बन्धी नियम सरल तथा बोधगम्य हो जाते हैं। विद्यार्थी क्रमबद्ध पुस्तकों को पढ़ लेता है।

02. अनुकरण विधि

इस विधि में विद्यार्थी शिक्षक का अनुकरण करता है। विद्यार्थी शुद्ध, स्पष्ट तथा भावपूर्ण पढ़ना सीख जाते हैं। इस विधि का विशेष रूप से प्रयोग ऐसे शब्दों का वाचन सिखाने के लिए किया जाता है जिनके लिखित और उच्चारित रूप में काफी भेद होता है, यथा –ज्ञात-ग्यात, पंछी-पन्छी, कृषक-किशक आदि। अंग्रेजी भाषा का एक अक्षर कभी-कभी हिन्दी भाषा की ध्वनियों के काम आता है; जैसे D का प्रयोग 'द' एवं 'ड' दोनों के लिए किया जाता है। शिक्षक के आदर्श का अनुकरण विद्यार्थी जीवन में करते हैं।

03. देखो और कहो विधि

इस विधि में चित्रों या कभी-कभी बिना चित्रों की मदद से वर्ण या शब्द-बोध कराया जाता है। चित्र देखकर बच्चे को स्वयं ही उस शब्द का ध्यान कराया जाता है। विद्यार्थी पहले देखकर कुछ समझता है फिर बोल

पड़ता है। आवश्यक यह है कि चित्र उसके ज्ञान-क्षेत्र के अन्तर्गत होना चाहिए। शिक्षक चाहे तो श्यामपट्ट पर भी चित्र बना सकता है।

04. साहचर्य विधि

यह विधि आधुनिक शिक्षण प्रणालियों की देन है। इस विधि में एक कार्ड पर चित्रों में शब्द एवं वर्ण भी लिखे होते हैं। विद्यार्थी वर्ण अथवा शब्द का कार्ड चुनकर निकालते हैं और शिक्षक उच्चारण करके विद्यार्थियों को सिखाता है। और चित्र, कार्ड तथा उच्चारण में साहचर्य सम्बन्ध स्थापित होता है। इस विधि से विद्यार्थियों को वर्णों एवं शब्दों का ज्ञान होता जाता है।

05. ध्वनि साम्य विधि

इस विधि में एक या दो स्वरों से युक्त एक या दो समान व्यंजन वाले शब्दों का वाचन करना सिखाया जाता है। समान ध्वनि के कारण वे एक साथ सरलता से सीखे जा सकते हैं, यथा फल, बल, चल, मार, सार, आदि।

06. यंत्र विधि

इस विधि को उपकरण विधि के नाम से भी जाना जाता है। इस विधि में ग्रामोफोन, टेप-रिकार्डर, रेडियो आदि में भरी आवाज को सुनते हुए चित्र विस्तारक के माध्यम से पर्दे पर या पुस्तक में देखते हुए लिखित सामग्री का वाचन किया जाता है। यद्यपि यह विधि मनोनुकूल एवं रोचक है परन्तु आलोचकों ने इसे व्यय-साध्य घोषित किया है।

07. वाक्य विधि

इस विधि में प्रथमतः वाक्य-शिक्षण से ही आरम्भ किया जाता है। फलक पर वाक्य विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत किया जाता है और शिक्षक उन वाक्यों को आवाज के साथ पढ़ता है। विद्यार्थी शिक्षक का अनुकरण करते हुए वाक्यों का उच्चारण करते हैं। बार-बार वाक्यों को पढ़ते हुए विद्यार्थी उसके शब्दों से परिचित हो जाते हैं, फिर वाक्य में प्रयुक्त शब्दों को अलग-अलग क्रम में विद्यार्थियों के सामने रखा जाता है। जैसे – वह कलम मेरी है। कलम यह मेरी है। विद्यार्थी इन शब्दों को पहचानते हुए वाक्यों को पढ़ेंगे और वाचन का अभ्यास करेंगे।

08. कथा विधि

विद्यार्थियों को कथा-कहानी में अधिक अभिरुचि होती है। यह विधि वाक्य विधि का विस्तृत, निखरा और रोचक रूप है। सर्वप्रथम इस विधि में छोटे-छोटे वाक्यों की एक कहानी चार्ट और चित्रों के माध्यम से

विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत की जाती है। शिक्षक चित्रपट या चित्र दिखाते हुए चित्र के नीचे लिखे हुए वाक्यों को पढ़ते हैं और विद्यार्थी उनका अनुकरण कर उन वाक्यों का उच्चारण करते हैं।

09. कविता विधि

बालकों की संगीत स्वाभाविक रुचि को ध्यान में रखते हुए इस विधि का विकास किया गया है। इसकी शिक्षण-प्रक्रिया कहानी विधि जैसी ही है। कहानी के स्थान पर सरल-सरल शब्दों वाली कविता होती है। विद्यार्थियों से कविता का गायन कराया जाता है। इसके माध्यम से धीरे-धीरे विद्यार्थियों को वर्णों और शब्दों की पहचान होने लगती है।

10. संयुक्त विधि

शिक्षण की सभी विधियों को मिश्रित रूप से प्रयोग कर वाचन-शिक्षण को रुचिकर बनाने का प्रयास करना चाहिए। संयुक्तविधि में वाचन शिक्षण का निम्नलिखित क्रम होगा – सबसे पहले मौखिक वार्तालाप द्वारा विद्यार्थियों के मन में वाचन के लिए रुचि और उत्सुकता जाग्रत् करनी चाहिए। मौखिक वार्तालाप के समय आकर्षक चित्र व उसमें लिखे हुए शब्दों की ओर विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षिक करना है उसके बाद फिर वाक्यों का वाचन कराना चाहिए।

11. आंशिक समवाक्य विधि

इस विधि में वाचन-शिक्षण का क्रम वाक्य से शब्द, वर्ण की ओर अपनाया जाता है। शिक्षा-मनोवैज्ञानिकों के अनुसार व्यक्ति आरम्भ से ही अपनी बात वाक्य (पूर्ण या अपूर्ण) के रूप में कहता है न कि केवल ध्वनि या शब्द में। आंशिक समवाक्यों के सहारे विद्यार्थी शब्दों, वर्णों तथा मात्राओं की शनैः शनैः जानकारी प्राप्त करता जाता है, यथा –

फल लाओ	फल रखो	फल खाओ
विद्यार्थी बैठता है	विद्यार्थी लिखता है	विद्यार्थी पढ़ता है

12. समवेत-पाठ विधि

इस विधि में शिक्षक किसी पद्य या गद्य भाग को स्वयं पढ़ता है और विद्यार्थियों से अपना अनुकरण करने का कहता है। सभी विद्यार्थी एक साथ वाचन करते हैं। वाचन शिक्षण की विधियों में यह विधि सबसे प्रभावकारी और रोचक विधि है। समवेत पाठ से विद्यार्थी में शुद्ध वाचन का संस्कार और स्वर भी सधता है।

उपर्युक्त वाचन की विभिन्न विधियों का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाना चाहिए।

4.1.07. वाचन सम्बन्धी त्रुटियाँ

हिन्दी भाषा-शिक्षण में वाचन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वाचन कौशल को विकसित करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती हैं। वाचन की सामान्य त्रुटियाँ निम्नलिखित हैं –

1. अशुद्ध उच्चारण।
2. अनुचित गति।
3. आरोह-अवरोह का न होना।
4. बिना अर्थ समझे पढ़ना।

4.1.07.1. त्रुटियों के कारण

वाचन सम्बन्धी त्रुटियों के निम्नलिखित कारण हैं –

1. दृष्टि दोष
2. वाणी दोष
3. असावधानी
4. मार्गदर्शन अभाव
5. कक्षा का तनावपूर्ण वातावरण
6. शिक्षक का कठोर व्यवहार
7. पाठ्यसामग्री की छपाई में त्रुटियाँ
8. कठिन एवं अरुचिकर पाठ्यसामग्री

4.1.07.2. त्रुटि निवारण

वाचन सम्बन्धी त्रुटियों के निवारणार्थ निम्नलिखित प्रयास किये जा सकते हैं –

1. दृष्टि तथा वाणी सम्बन्धी दोषों को दूर करवाना।
2. ध्वनियों का पूर्ण ज्ञान तथा अभ्यास कराना।
3. बार-बार अभ्यास कराना।
4. वाचन सम्बन्धी उचित मार्गदर्शन किया जाए।
5. शिक्षक का व्यवहार मित्रतापूर्ण होवे।
6. कक्षा का वातावरण आकर्षक बनाया जाए।
7. पाठ्यपुस्तकों की छपाई शुद्ध होनी चाहिए।
8. शिक्षक का आदर्श वाचन शुद्ध व स्पष्ट होना चाहिए।
9. अनुकरण वाचन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

4.1.08. वाचन सामग्री

हिन्दी वाचन शिक्षण की विभिन्न विधियों के लिए उपयोज्य सामग्री को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है –

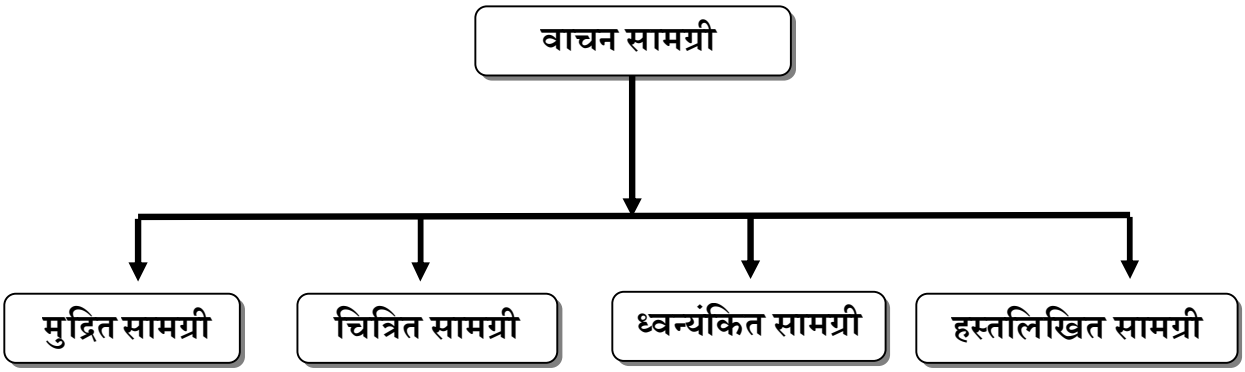

1. मुद्रित सामग्री

मुद्रित सामग्री से तात्पर्य वाचन शिक्षण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं आदि से है। यह सामग्री विद्यार्थियों की वय तथा भाषा स्तर के अनुसार मोटे-पतले वर्ण आकार की हो सकती है। मुद्रित में छपी सामग्री का वाचन करना आता है।

2. चित्रित सामग्री

चित्रित सामग्री में मुद्रित वाचन सामग्री के स्पष्टीकरण के लिए चित्र भी दिये जाते हैं जो सफेद, काले, रंगीन हो सकते हैं। इसमें विद्यार्थी चित्रों के सहारे स्वयं ही बहुत-कुछ अर्थ ग्रहण कर सकते हैं।

3. ध्वन्यंकित सामग्री

ध्वन्यंकित सामग्री मुद्रित और चित्रित वाचन सामग्री को और भी अधिक उपयोगी बनाने वाली सामग्री है जो वास्तविकता में वाचन-सामग्री न होकर श्रवण सामग्री ही है। आदर्श वाचन प्रस्तुत करने के लिए भी ध्वन्यंकित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है।

4. हस्तलिखित सामग्री

हस्तलिखित वाचन-सामग्री में मुख्यतः वर्णों, शब्दों, वाक्यों में फ्लैश कार्डों, सूक्तियों, आदर्श वाक्यों को सम्मिलित किया जाता है। इस सामग्री का लेखन आकर्षक रंगीन वर्णों में होता है।

4.1.09. वाचन विकास के स्तर

हिन्दी वाचन विकास के तीन मुख्य स्तर माने जा सकते हैं –

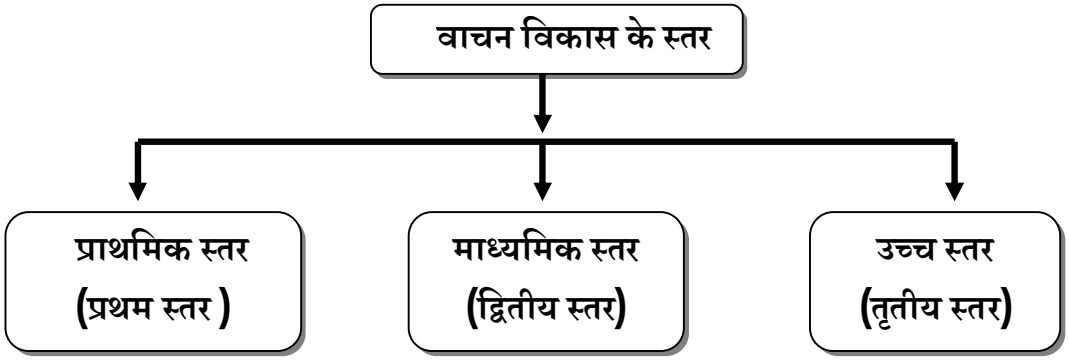

1. प्राथमिक स्तर

प्राथमिक स्तर पर वर्ण-चित्र, शब्द-चित्र तथा वाचन सामग्री विद्यार्थियों की रुचि, आयु, तथा ज्ञान-स्तर के अनुरूप होंगे। सामान्य रूप से इस स्तर पर केवल सामूहिक व वैयक्तिक वाचन का ही शिक्षण दिया जाए।

2. माध्यमिक स्तर

माध्यमिक स्तर पर सस्वर वाचन के साथ-साथ मौन वाचन की ओर भी विद्यार्थियों को उन्मुख किया जाए। अभिरुचि उत्पन्न करने के लिए मनोरंजक कथा, कहानी, गीत, वार्तालाप का सदुपयोग किया जाए।

3. उच्च स्तर

उच्च स्तर पर गम्भीर एवं द्रुत वाचन को प्रोत्साहन दिया जाए। इस स्तर पर गद्य, पद्य, नाटक, निबन्ध, लेख, उपन्यास, वैज्ञानिक आदि विषयों की सामग्री का वाचन किया जाए।

4.1.10. लेखन का सम्प्रत्यय

भाषा के द्वारा भावों-विचारों की अभिव्यक्ति दो प्रकार से होती है – मौखिक एवं लिखित। मौखिक भाषा की ध्वनियों को जिन विशिष्ट चिह्नों द्वारा लिखित रूप में व्यक्त करते हैं, उसे लिपि कहते हैं। लिपि के ज्ञान से ही भाषा के मौखिक रूप को लिखित रूप में बदला जा सकता है। भाषा विशेष में स्वीकृत लिपि प्रतीकों के माध्यम से भावों-विचारों को अंकित करने की कुशल प्रक्रिया को लेखन कहा जाता है।

भाषाई कौशल विकास की दृष्टि से लेखन अन्तिम कौशल भी है। मातृभाषा एवं अन्य भाषा-शिक्षण में श्रवण, भाषण तथा वाचन कौशल के विकास के साथ-साथ लेखन कौशल को विकसित किया जाता है। अन्य कौशलों के माध्यम से अर्जित कुशलताएँ लेखन कौशल के विकास में पर्याप्त सहयोग देती हैं तथा लेखन के विकास में अन्य कौशलों का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से दृढ़ीकरण हो जाता है। लेखन भाषा (मौखिक) को परिसीमित करते हुए काल, स्थान की सीमा से बाहर निकल कर स्थायित्व प्रदान करने का प्रबल साधन भी है।

सभ्यता के विकास के साथ उच्चरित भाषा की अपेक्षा भाषा के लिखित रूप का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। ललित साहित्य की विभिन्न विधाओं, उपयोगी प्रयोजनमूलक साहित्य के विभिन्न विषयों, सर्वकारीय, व्यापारिक तथा घरेलू पत्र-व्यवहार, समाचार पत्र-पत्रिकाएँ, विज्ञापन, परीक्षाएँ, आलेख, न्यायालय, सर्वकारीय-निजी संस्थानों की दैनन्दिन कार्यविधि आदि के क्षेत्रों में लिखित भाषा का ही आश्रय लिया जा रहा है, अतः व्यक्ति तथा समाज की दिनचर्या में लेखन का महत्त्व बहुत अधिक परिव्याप्त है।

ध्वनियों के लिखित प्रतीक वर्ण या अक्षर शब्दवर्ण कहलाते हैं, जैसे आ, क वर्ण (आ, क) ध्वनियों के प्रतीक हैं, आ, क अक्षर क्रमशः (आ, क+अ) अक्षरों के प्रतीक है। चीनी भाषा के अक्षर शब्द-वर्ण के रूप में प्रयुक्त होते हैं। ये लिखित प्रतीक या लिपि-चिह्न भाषा का प्रतिनिधित्व करते हैं। भाषा ज्ञान एवं लिपि ज्ञान के माध्यम से उस भाषा के मौखिक रूप का बहुत अंश समझा जा सकता है फिर भी व्यवहार-परम्परा के आधार पर कोई-न-कोई लिपि एक या अधिक भाषाओं के साथ जुड़ी हुई मान ली जाती है, जिसके बोलने वालों में उसके प्रति कुछ भावात्मक लगाव-सा हो जाता है, जैसे – हिन्दी-देवनागरी, अंग्रेजी-रोमन, संस्कृत-देवनागरी; अरबी-अरबी, पंजाबी-गुरुमुखी आदि। भाषा के साथ लिपि का सहजात सम्बन्ध न होने के कारण किसी भी उपयुक्त लिपि में कोई भी भाषा अंकित की जा सकती है। जैसे –

हिन्दी भाषा	–	हम हिन्दी सीख रहे हैं।
देवनागरी लिपि में	–	हम हिन्दी सीख रहे हैं।
रोमन लिपि में	–	HAM HINDI: SI:KH RAHE HE:

विश्व की प्रत्येक उन्नत तथा विकसित भाषा की लेखन व्यवस्था होती है। लेखन के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले प्रतीकों का ध्वन्यात्मक मूल्य होता है। परम्परागत लिपियों में लिखी चली आ रही भाषाओं की मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति के अन्तर को थोड़ी सी गहराई के साथ सोचकर समझा जा सकता है। डॉ॰ लक्ष्मीनारायण शर्मा के अनुसार अभिव्यक्ति का यह लिखित और मौखिक अन्तर अनेक स्थानों पर देखा जाता है, यथा –

1. अधिकांश भाषाओं में जितने स्वनिम होते हैं उनको व्यक्त करने के लिए उतने ही वर्णिम नहीं होते, जैसे – अंग्रेजी भाषा में स्वनिमों की संख्या 46 (स्वर 13, संयुक्त स्वर 9 व्यंजन 24) हैं, जबकि वर्णिमों या वर्णों की संख्या 26 हैं, उर्दू भाषा में स्वनिमों की संख्या कम है, और उसकी लिपि में कुछ स्वनिमों के लिए प्रयुक्त वर्णिमों की संख्या अधिक है, उदाहरणार्थ – Rose, Son, To में o वर्ण क्रमशः 'ओ, ऑ, अ, उ के लिए प्रयुक्त है; उर्दू में 'स' के लिए तीन वर्णों 'से, स्वाद, सीन' का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार 'त' के लिए दो वर्णों (ते, तोय) का।
2. देवनागरी लिपि में 21वीं में भी 'आ' के लिए तीन वर्णिम-रूपों का प्रयोग किया जाता है।
3. कुछ लिपियों में मौखिक अभिव्यक्ति के स्वन-अनुक्रम और लिखित अभिव्यक्ति के वर्ण-अनुक्रम में अन्तर मिलता है जैसे अंग्रेजी शब्द 'ब्रिज' Bridge में 'd, e' वर्णों का कोई ध्वनि-मूल्य नहीं है।

4. इन्हीं पूर्वोक्त बातों का प्रभाव परम्परागत लिपियों में लिखी जा रही संसार की सभी भाषाओं के उच्चरित एवं लिखित रूप वर्तनी में पर्याप्त अन्तर देखा जा सकता है जैसे – उपन्यास, डाकघर, डॉक्टर (उपन्यास्, डाक्घर, डॉक्टर) हिन्दी; Class, but, put, chalk, Talk (क्लास, बट्, पुट्, चॉक्, टाक्) अंग्रेजी।

5. मौखिक भाषा के ध्वनि-गुणों और वाक्यों की अनुतान-व्यवस्था को लिखित भाषा में व्यक्त करना सामान्यतया बहुत कठिन है, जैसे – राम, हनुमान के 'रा, ह, मा' के साथ उच्चरित अनुनासिकता को; हे माँ ! तू कहाँ है ? के 'माँ' की दीर्घता को, स्टेशन पर चाय बेचने वाले (चाय गरमागरम) के सुर को; तुम जाओगे अभी ? क्या तुम अभी जाओगे ? क्या तुम अभी नहीं जाओगे ? तुम अभी जाओगे। जैसे वाक्यों की अनुतान-व्यवस्था को वक्ता के मस्तिष्क सम्भाव के अनुरूप लिखित रूप में व्यक्त करना पर्याप्त कठिन कार्य है। कभी-कभी दो भाषाओं की लिपि समान होते हुए भी दोनों भाषाओं में कुछ लिपि चिह्नों का ध्वन्यात्मक मूल्य अलग-अलग हो सकता है, यथा – हिन्दी और मराठी के लिए प्रयुक्त समान लिपि देवनागरी के ऋ, ज्ञ, ष वर्णों का ध्वन्यात्मक मूल्य, हिन्दी में क्रमश; (रि, ग्यू/ग्यँ ा, श्) है और मराठी में क्रमश: (रू, दन्य, ष) है। किसी भी लेखन व्यवस्था का व्यवहार करना आदत का प्रश्न है। बार-बार और लम्बे समय तक किसी भी लेखन-व्यवस्था का व्यवहार हमारी आदत का अंग बन जाता है। जिस प्रकार प्रथम भाषा (मातृभाषा) की ध्वनि व्यवस्था से जिन पक्षों या अंशों में भिन्न होती है, उन पक्षों या अंशों में उच्चारण प्रक्रिया को व्याघात डालते हुए प्रभावित करती है, उसी प्रकार प्रथम भाषा (मातृभाषा) के लिए व्यवहृत लेखन-व्यवस्था अन्य भाषा (द्वितीय भाषा) के लिए व्यवहृत लेखन-व्यवस्था को वर्ण-रचना, मात्रा, वर्तनी; विरामादि चिह्न की दृष्टि से थोड़ा-बहुत व्याघात डालते हुए प्रभावित करती है, यथा ओड़िया, मलयालम, जापानी भाषा-भाषी हिन्दी विद्यार्थी मातृभाषा की लिपि लेखन व्यवस्था से प्रभावित होकर देवनागरी के वर्ण हिन्दी-वर्तनी का शुद्ध रूप अंकन करने में परेशानी महसूस करते हैं।

हिन्दी का द्वितीय भाषा के सन्दर्भ में लेखन के विकास के लिए यह आवश्यक है कि हिन्दी भाषा का पर्याप्त मात्रा में श्रवण तथा वाचन किया जाए। जिसे विद्यार्थी मौखिक रूप से अभिव्यक्त करने में दक्ष नहीं होता, उसे लिखित रूप से व्यक्त करने में वह कुशल नहीं हो सकता। लेखन पर अधिकार करने के लिए भाषा के शब्दावली, प्रयोग, वाक्य-साँचों आदि पर अधिकार होना चाहिए। द्वितीय-भाषा के रूप में लेखन शिक्षण का अर्थ है – अध्येता अध्येय भाषा के लिए प्रयुक्त सर्वमान्य प्रचलित लिपि में द्वितीय भाषा को अपेक्षित गति के साथ शुद्ध वर्तनी और शुद्ध संरचना में लिख सकें।

शिक्षा प्रक्रिया में बालक को पहले लेखन सिखाया जाए या वाचन; इस सम्बन्ध में मतमतान्तर हैं। मरिया मोंटेसरी के विचार में वाचन की अपेक्षा लेखन की प्रक्रिया सरल होने के कारण पहले लेखन सिखाना अधिक मनोवैज्ञानिक है। लिखना सिखाना भाषा-शिक्षण का प्रारम्भिक कार्य माना गया है, लिखने के साथ पढ़ना तो हो ही जाता है। अतः विशिष्ट क्रिया केवल लेखन ही है। वाचन तथा लेखन साथ-साथ चलने से देखने, सुनने, बोलने

तथा लिखने की चारों क्रियाएँ सह-सम्बद्ध होकर अध्ययन-अध्यापन को अधिक मनोरंजक एवं ग्राह्य बना देती हैं। लेखन का उच्चस्तरीय विकास तभी हो सकता है जबकि भाषा के श्रवण, भाषण एवं वाचन इन तीनों कौशलों का भी उच्चस्तरीय विकास किया गया हो।

4.1.11. लेखन शिक्षण के उद्देश्य

हिन्दी लेखन शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य कहे जा सकते हैं –

1. हिन्दी भाषा के लिए प्रयुक्त लिपि को सुडौल, स्पष्ट और आकर्षक लिखावट में अंकित करना।
2. हिन्दी भाषा में प्रचलित चलन के अनुरूप शब्दों की वर्तनी जानना व लिखना।
3. लेखन समय यथास्थान विरामादि चिह्नों का प्रयोग करना।
4. भावों-विचारों एवं अनुभवों का प्रभावशाली ढंग में अभिव्ययक्त करने की क्षमता का विकास करना।
5. आत्माभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त शब्दों, वाक्यांशों, वाक्य-साँचों का चयन करना।
6. लेखन को सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित करना।
7. विद्यार्थियों को शीघ्र लिखने का अभ्यास कराना।

4.1.12. लेखन का महत्त्व

भाषा के दो रूप होते हैं – मौखिक और लिखित। लिखित भाषा मानव के विचारों के आदान-प्रदान का मूल साधन है। मेरिया मोंटेसरी का मत है कि लिखना-सिखाना भाषा-शिक्षण का प्रारम्भिक कार्य है। उनका मानना है कि लिखने के साथ पढ़ना भी आ जाता है। लेखन कौशल का महत्त्व निम्नलिखित प्रकार से है –

01. लेखन से लिपि ज्ञान, शुद्ध वर्तनी प्रयोग तथा विचारों को लिखित रूप में अभिव्यक्त करना।
02. भाषा पर पूर्ण रूप से अधिकार प्राप्ति।
03. लेखन से मौखिक भाषा स्थायी हो जाती है।
04. विश्व का ज्ञान लिखित रूप में सुरक्षित रहता है।
05. लेखन बौद्धिक विकास का सर्वोत्तम साधन है।
06. विद्यार्थियों में क्रियाशीलता का विकास होता है।
07. अतीत के ज्ञान व इतिहास को समझने में सहायक है।
08. भाषा में एकरूपता व स्थायित्व आता है।
09. ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाया जा सकता है।
10. लिखित भाषा शिक्षा प्राप्त करने का मुख्य साधन है।
11. व्यावसायिक व औद्योगिक प्रगति का आधार लिखित भाषा है।
12. विश्व के देशों में पारस्परिक सम्बन्ध लिखित भाषा से ही होते हैं।

4.1.13. लेखन के प्रकार

भाषा-शिक्षण में लेखन के निम्नलिखित प्रकार हैं – सुलेख, अनुलेख, प्रतिलेख, श्रुतलेख तथा लिप्यन्तरण लेखन।

1. सुलेख

सुलेख का अर्थ है सुन्दर लेख। अक्षरों को सुन्दर तथा सुडौल बनाने के लिए लेखन अभ्यास करना। इस लेखन में अक्षर सुन्दर, शिरोरेखा एवं शुद्ध वर्तनी प्रयोग के लिए ध्यान दिया जाता है। इसमें विद्यार्थी सुलेख पुस्तिका एवं शिक्षक की सहायता से लेखन का अभ्यास करता है।

2. अनुलेख

अनुलेख का अर्थ है लेखन का अनुकरण करके लिखना। अध्यापक विद्यार्थियों की अभ्यास पुस्तिकाओं में सुन्दर अक्षर लिखता है। विद्यार्थी उनको देखकर पुनः उसी प्रकार लिखता है। अर्थात् जैसा लिखा है वैसा ही लिखना।

3. प्रतिलेख

विद्यार्थी पाठ्यपुस्तक के पठित अंश या पत्र-पत्रिकाओं में से छाँटे गए अंशों को शिक्षक द्वारा श्यामपट्ट पर लिख कर वाचन करने के पश्चात् स्वयं वाचन करते हुए यथावत लिखने का अभ्यास करते हैं। प्रतिलेखन से भाषा की विभिन्न संरचनाओं को याद रखने में सहायता मिलती है। प्रतिलेखन की सामग्री बच्चे के मानसिक स्तर व रुचि के अनुकूल हो।

4. श्रुतलेख

श्रुतलेख को अन्य भाषा-अध्येता की सर्वांगीण भाषा दक्षता का स्वतः परीक्षण माना जाता है। वर्तमान में भाषा के रूपात्मक पक्ष की अपेक्षा प्रकार्यात्मक पक्ष को भाषा के अध्ययन, शिक्षण व परीक्षण का केन्द्र माना जाने लगा है। श्रुतलेखन में विद्यार्थी श्रुत सामग्री की पुर्नरचना करता है। इस लेखन के द्वारा विद्यार्थी उच्चरित एवं लिखित रूप के पारस्परिक साहचर्य को समझता जाता है।

आरम्भ में श्रुतलेख के रूप में वे ही शब्द या वाक्य लिखवाएँ जाएँ जिनका विद्यार्थी प्रत्यंकन, अनुलेखन या प्रतिलेखन कर चुका है। श्रुलेख में श्रवण और लेखन का समावेश होने रहने के कारण शिक्षक को विशेषतः द्वितीय भाषा के शिक्षण के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि भाषा के उच्चरित रूप और उसके लिखित रूप में थोड़ा या अधिक अन्तर होने के कारण वर्तनी भूलों में वृद्धि तो नहीं हो रही है।

श्रुतलेखन से विद्यार्थी में अध्येय भाषा की ध्वनियों पदिमरूपात्मक परिवर्तनों, ध्वनिगुणों के अन्तर को समझने की शक्ति का विकास होता है।

5. लिप्यन्तरण लेखन

लिप्यन्तरण लेखन द्विभाषीयता के सन्दर्भ में ही कराया जाता है। यदि द्वितीय भाषा के अध्येता की मातृभाषा के लिए प्रयुक्त लिपि अध्येय भाषा के लिए प्रयुक्त लिपि से भिन्न है तो 15-16 दिन बाद छोटे-छोटे वाक्यों या शब्दों को उसकी मातृभाषा लिपि में लिखने के बाद अध्येय भाषा-लिपि में अंकित कराया जाता है।

4.1.14. लेखन शिक्षण की विधियाँ

हिन्दी लेखन में अक्षर को अनुरूप बना लेना अनिवार्य है। लेखन में हाथ की अंगुलियों की माँसपेशियों को यथोचित घुमाना भी आना चाहिये। इस प्रक्रिया में पारंगत करने के लिये कई लेखन-शिक्षण विधियाँ प्रचलित हैं। उनमें से प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं –

01. अक्षर ज्ञान और लेखन विधि

परम्परागत आरम्भिक शिक्षण स्वर एवं व्यंजनों को क्रमिक रूप से लिखना सिखाना ही है। बालक को स्लेट या तख्ती पर एक बड़ा-सा 'अ' खड़िया से लिख दिया जाता है और बालक उस अक्षर को लिखता है, और वैसा ही आकार बनाना स्वयं सीख जाता है। दफ्ती पर अक्षरों के साँचे बने होते हैं, उन्हीं को कागज में रखकर बालक पेंसिल से अक्षर बनाते हैं। पटरी पर बीजों या रंगीन वस्तुओं के चिपकाये हुए उभरे अक्षर बना दिये जाते हैं। बालक उन्हें ध्यान से देखते तथा उन पर अपना हाथ फेरते हैं। हाथ के अभ्यास के उपरान्त वे उन्हें लिखना सीख जाते हैं। श्यामपट्ट पर धुँधले-धुँधले अक्षर जान-बूझकर लिख दिये जाते है, उन पर बालक हाथ फेरकर उन्हें साफ-साफ लिख देते हैं। चित्र पुस्तकें जिनमें चित्रों के नीचे नाम आदि लिखे रहते हैं। बालक इन नामों को लिखने का अनुकरण करते हैं। रेत वाले कागज पर अक्षर काट दिये जाते हैं। बालक के नेत्रों पर पट्टी बाँध दी जाती है, केवल हाथ के स्पर्श से वह अक्षर बोध करता है और फिर अनुकरण करके लिखता है। यह विधि ज्ञानेन्द्रियों की सहायता से अक्षर-ज्ञान लेखन विधि है।

02. अनुकरण-विधि

शिक्षक स्लेट / तख्ती / कागज या श्यामपट्ट पर बड़े-बड़े सुडौल और स्पष्ट वर्ण या शब्द अंकित कर देता है, विद्यार्थी अनुकरण करते हुए उन्हें लिखना सीखते हैं। यह विधि अधिक प्रचलित है।

03. रूपरेखा अनुकरण विधि

अक्षरों को उनके रूप के अनुसार शिक्षक बिन्दुओं के माध्य म से बनाता है। बालक पेंसिल या कलम से इन बिन्दुओं को जोड़कर सीखता है।

04. मोंटेसरी विधि

सर्वप्रथम लिखना सिखाने में ज्ञानेन्द्रियों का सहयोग लेने वाली विधि मोंटेसरी विधि है। इसमें रेगमाल पर कटे अक्षर पर बच्चे अंगुली फेरते तथा बाद में लिखते हैं।

05. पेस्टालॉजी विधि

इस विधि में वर्ण-आकृति को विभिन्न संरचक रेखाओं में विभक्त करके पहले सरल वर्णों को उन संरचक रेखाओं के योग से लिखना सिखाया जाता है, तथा बाद में जटिल वर्णों को लिखना सिखाते हैं। इस विधि को पेस्टालॉजी की रचनात्मक विधि के नाम से भी जाना जाता है।

06. जेकॉटॉट विधि

इस विधि में बालक स्वयं अपना सुधार करता है। इसमें बच्चों के समक्ष पूरा वाक्य रखा जाता है। वे मिलाकर उसकी अशुद्धि का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। अनुकरण के बाद उनसे मूल वाक्य लिखवाया जाता है।

07. स्वतन्त्र अनुकरण विधि

शिक्षक श्यामपट्ट या उत्तर पुस्तिका में अक्षरों को लिखता है, और बालक उन अक्षरों को देखकर उनके नीचे उसी प्रकार लिखते हैं।

08. सार्थक शब्द-लेखन विधि

इस विधि को कुछ विद्वान मनोवैज्ञानिक विधि भी कहते है। भाषार्जन प्रक्रिया (शब्द-वाक्य, वाक्य, शब्द, ध्वनि-क्रम) का अनुसरण करते हुए कुछ शिक्षा मनोवैज्ञानिक सार्थक शब्द या वाक्य-लेखन को प्राथमिकता देते है न कि निरर्थक अलग-अलग वर्णों के लेखन को।

09. समन्वयात्मक विधि

इस विधि में शिक्षण के विभिन्न सूत्रों का अनुगमन करते हुए लिपि का विश्लेषण कर कम तथा समान संरचक रेखाओं वाले वर्णों का लिखना सिखाते हुए सार्थक शब्दों, वाक्यों में अभ्यास कराया जाता है जिनका सस्वर वाचन-अनुकरण भी कराया जाता है।

10. रेखांकन विधि

तीन-चार वर्ष के बच्चे आड़ी-तिरछी, सीधी-गोल, टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ खींचने लग जाते हैं, अतः विद्यार्थी के इस पूर्व ज्ञान तथा अभिरुचि का लाभ उठाते हुए लेखन-शिक्षण आरम्भ करने का यह क्रम अपनाया जा सकता है – छोटी, बड़ी, सीधी रेखाएँ, तिरछी रेखाएँ, गोलाकार रेखाएँ, अर्द्धवृत्ताकार रेखाएँ, घुड़ियाँ अंकित करने के बाद वर्ण / अक्षर रचना करायी जाती है।

4.1.15. लेखन के प्रमुख अंग

लेखन कौशल के तीन प्रमुख अंग माने गये हैं, ये तीनों अंग क्रमशः वर्ण, वर्तनी तथा रचना है। ये तीनों परस्पर सम्बद्ध हैं। जो कुछ लिखा जाना है उसके लिए वर्णिम आधार हैं। शब्दों में इनका अस्तित्व महत्वपूर्ण एवं अर्थवान् बनता है। शब्द-रचना वर्तनी-नियन्त्रित होती है। अभिव्यक्ति में शब्द अकेले नहीं रह पाते, वे एक व्यवस्थित क्रम में अपनी सार्थकता तथा महत्ता बना पाते हैं।

1. वर्ण : वर्णमाला के एकाकी वर्णों को ठीक प्रकार से रूप प्रदान करने की योग्यता।
2. वर्तनी : वर्ण संयोजन के प्रयोग का समुचित ज्ञान और रचना।
3. रचना : लिखित शब्द प्रतीकों या रचना द्वारा आत्माभिव्यक्ति की क्षमता।

4.1.16. लेखन विकास की प्रक्रिया

लेखन की विकास-प्रक्रिया के आधार पर इस के तीन सोपान माने जाते हैं – वर्ण-लेखन, वर्तनी-ज्ञान तथा रचना। इनका विवरण इस प्रकार है –

4.1.16.1. प्रथम वर्ण-लेखन

भाषा के लिखित रूप की अभिव्यक्ति निश्चित लिपि प्रतीकों के माध्यम से की जाती है। यह लिपि प्रतीक वर्ण एवं संकेत दोनों रूपों में हो सकते हैं। लेखन शिक्षण के लिए भाषा की आधारभूत लिपि प्रतीकों को सीखना प्रथम आवश्यकता है। अतः वर्ण रचना-शिक्षण में वर्णों की रचना की समानता के आधार पर इनके कुछ समूह बना लेना चाहिए। डॉ॰ लक्ष्मीनारायण शर्मा का इस सन्दर्भ में मत है – "वर्णमाला शिक्षण की मूलभूत मान्यता है – भाषा प्रथम तथा भाषा द्वितीय के विद्यार्थी को पूरी (परम्परागत) वर्णमाला को उसके क्रम में सिखाया जाना। ऐसा करना अध्येता की दृष्टि से न तो सहज, सरल, हितकर है और न शिक्षण की दृष्टि से उपयोगी और व्यवहारिक। भाषा-द्वितीय के अध्येता को उसकी मातृ-भाषा लिपि के सन्दर्भ में ही भाषा द्वितीय की लिपि का शिक्षण उपयोगी, तर्क संगत एवं समय की बचत करने वाला रहता है। वर्ण शिक्षण की प्रक्रिया में वर्ण की संरचना रेखाओं की समानता के आधार पर उनके कुछ वर्ण समूह बना लेना अधिक उपयुक्त रहता है। वर्ण समूह बनाते समय इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है –

1. वर्णों की संरचक रेखाओं की लगभग समानता।
2. वर्ण आकार में व्यतिरेक।
3. भाषा व्यवहार में वर्ण विशेष की प्रयोग बारंबारता।

संरचन रेखाओं का अभ्यास कराने के बाद वर्णों का प्रत्यंकन (Tracing), अनुलेखन (Modelopting), तथा प्रतिलेखन (Copying) अभ्यास कराना चाहिए।

4.1.16.1.1. वर्ण-लेखन-शिक्षण में ध्यातव्य बातें

लेखन-शिक्षण में सुलेखन साधन नहीं वरन् साध्य है। शिक्षक को सुलेखन की ओर विद्यार्थियों को प्रेरित एवं मार्गदर्शन करना चाहिए। वर्ण लेखन-शिक्षण आरम्भ करने से पूर्व शिक्षक को कुछ आवश्यक बातों की जानकारी होना आवश्यक है –

1. विद्यार्थी के बैठने का उचित ढंग : विद्यार्थी के झुक कर बैठने, लेखनी, तथा कागज या तख्ती के बीच एक फुट की दूरी से बहुत अधिक या बहुत कम दूरी होने से विद्यार्थी के शारीरिक विकास, नेत्र ज्योति तथा लेखन की सुडौलता पर कुप्रभाव पड़ता है।
2. लेखनी पकड़ने का उचित ढंग : लेखनी अँगूठे और तर्जनी अंगुली के पोरों से पकड़ते हुए तर्जनी पर आधारित होकर कन्धे से बाहर की ओर झुकी हो तथा कागज आदि पर हथेली के पार्श्व की गद्दी टिकी रहे।
3. लेखन सामग्री : सुलेखन तथा लेखन सुडौलता के लिए यह उचित होगा कि लेखन-शिक्षण के आरम्भ में तख्ती बत्ती का उपयोग किया जाए। धीरे-धीरे लेखनी का उपयोग किया जाए। आज के समय में अभ्यास पुस्तिका, पेंसिल तथा लेखनी का प्रयोग भी अधिकता से होता है।
4. अक्षरों की रचना : आरम्भ में वर्णों या शब्दों का आकार बड़ा रखा जाए, लेखन-शिक्षण के अन्तर की अवधि 30-35 निमेष से अधिक न हो। अक्षरों का लेखन स्पष्ट, सुन्दर एवं शिरोरेखा सहित होवे।
5. शिक्षक का आदर्श : शिक्षक विद्यार्थियों के लिए आदर्श होता है, अतः शिक्षक यथासमय कक्षा में सुन्दर व स्पष्ट पद एवं वाक्य हरितफलक पर लिखकर आदर्श लेखन प्रस्तुत करें, जिससे विद्यार्थी लेखन में रुचि दिखाने लगे।
6. आकर्षक उदाहरण : स्फोरकपत्रों में कलात्मक आदर्शवाक्यों एवं सुभाषितों को लिखिकर भित्तियों पर चस्पा करना चाहिये। जिससे विद्यार्थी सुन्दर लेखन का अभ्यास करें।
7. अभ्यास : लेखन एक कला है, अतः इस लेखन कला का बार-बार अभ्यास करवाना चाहिए।

मातृभाषा या अन्यभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के समय वर्ण-लेखन शिक्षणारम्भ करने वाले शिक्षकों को देवनागरी की वर्णिम-व्यवस्था की जानकारी होनी चाहिए। देवनागरी ध्वनि-लिपि की दृष्टि से अक्षरात्मक एवं

वर्णात्मक रूपों का मिला-जुला रूप है, यथा – अ, आ, ई, ऊ, ओ, क, र, म, न, स (अक्षरात्मक रूप), अ, आ, ई, ऊ, ओ, क, क्, र्, ◌ि, म्, म्न्, न्स्, स् (वर्णात्मक रूप)। देवनागरी का सुधरा हुआ रूप 'परिवर्धित देवनागरी' है जिसे राष्ट्रलिपि भी कहा जा सकता है। इस लिपि में हिन्दी के अतिरिक्त कई भाषाओं को आसानी से लिखा जा सकता है।

वर्ण लेखन-शिक्षण का सम्बन्ध निम्नलिखित सात पक्षों से माना जाता है –

1. वर्ण भेद-ज्ञान।
2. वर्ण संयोग-ज्ञान।
3. वर्णध्वनि सह सम्बन्ध ज्ञान।
4. सुडौल वर्ण रचना-अभ्यास।
5. सुडौल व शुद्ध रूप में वर्ण संयोग-अभ्यास।
6. सामान्य और द्रुत गति से सुवाच्यवर्णों में शुद्ध वर्तनी के साथ अनुलेखन, प्रतिलेखन-अभ्यास।
7. अन्य भाषा के सन्दर्भ में लिप्यन्तरण अभ्यास।

वर्णों की रचना की समानता के आधार पर वर्ण-रचना-शिक्षण के लिए वर्णों के कुछ समूह बना लेना उपयुक्त रहता है। ये वर्ण-समूह वर्णों की संरचक रेखाओं की समानता तथा भाषा में वर्ण-प्रयोग की कमी के आधार पर बनाए जा सकते हैं। अन्य-भाषा-भाषी की परिचित लिपि के सन्दर्भ में वर्ण रचना सादृश्य के आधार पर इस क्रम में परिवर्तन भी कर सकते हैं। यथा –

01. ग म न र स ◌ा
02. व ब क ख च ◌ी
03. ज प फ ए ऐ ◌े ◌ै
04. भ श त ल ◌ु ◌ू (रू, रू)
05. ट ठ ड ड़
06. उ ऊ अ आ ओ औ ◌ो ◌ौ
07. य थ इ ई झ
08. घ ध छ ◌ँ ◌ि
09. ण ष ढ ङ :
10. ज्ञ क्ष ह श्र ऋ ळ
11. क़ ख़ ग़ ज़ फ़ ञ
12. खड़ी पाई हटा कर बनने वाले व्यंजन-गुच्छ
13. क क़ फ फ़ से बनने वाले व्यंजन-गुच्छ
14. हल् से बनने वाले व्यंजन-गुच्छ

15. / ‘ ◌् से बनने वाले व्यंजन-गुच्छ
16. वाचन के लिए प्रचलित इतर वर्णों और संयुक्त व्यंजनों का परिचय

इस उपर्युक्त क्रम में आए वर्णों का लेखन-अभ्यास प्राय: दो प्रकार से कराया जाता है – (i) प्रत्यंकन-अभ्यास और (ii) अनुकरण-अभ्यास या अनुलेखन।

(i) प्रत्यंकन-अभ्यास : प्रत्यंकन अभ्यास में अध्येता के हाथ साधने की दृष्टि से वर्णों को बिन्दुओं पर पेंसिल / कलम फेरते हुए बनाने का अभ्यास किया जाता है। इसमें कलम फेरने की दिशा-शिक्षक बता देता है या वर्ण-लेखन-पुस्तिका में तीरों द्वारा निर्देश दिया जाता है।

(ii) अनुकरण-अभ्यास या अनुलेखन : इसमें वर्ण, शब्द, वाक्य लेखन में गति तथा सुडौलता लाने के उद्देश्य से शिक्षक द्वारा लिखे वर्णों या शब्दों की आदर्श बनावट का विद्यार्थियों द्वारा अनुकरण किया जाता है। अनुलेखन प्रत्यंकन वर्णों का कराया जाता है। अनुलेखन पाँच, तीन, एक पंक्ति की अभ्यास पुस्तिका पर कराया जाए।

संक्षेप में इस प्रकार वर्णों के योग से शब्द, वाक्यों में अभ्यास कराया जाए और वाचन-अनुकरण अभ्यास भी कराया जाए।

4.1.16.2. वर्तनी

शब्दों को लिखने में वर्णों का जो विशेष क्रम है, उसे वर्तनी कहते है। अन्य भाषा सीखते समय विद्यार्थियों में लक्ष्य भाषा की वर्तनीगत अनेक अशुद्धियाँ देखने को मिलती है। जिसके कारणों की पहचान कर भाषा शिक्षक को शुद्ध वर्तनी लेखन शिक्षण का अभ्यास करना चाहिए। शिक्षण क्रम की दृष्टि से वर्तनी की नियमित एवं विधिवत शिक्षा का स्थान प्राथमिक स्तर पर ही होता है। माध्यमिक स्तर पर आते-आते विद्यार्थी हिन्दी ध्वनियों के समस्त लिखित रूपों से भलिभाँति परिचित हो जाता है परन्तु त्रुटियाँ रहती ही हैं।

प्रत्येक भाषा की अपनी वर्तनी-व्यवस्था है। वर्णों के संयोजन-क्रम में अन्तर होने से वर्तनीगत अन्तर होता है, यथा – क म ल ◌ा के विविध संयोगों से ‘कमला, कमाल, कलाम में। वर्तनी के लिखित ‘भाषा’ परम्परा से अधिक नियन्त्रित रहती है। व्यक्ति स्वेच्छा से इसमें परिवर्तन नहीं कर सकता। प्रचलित भाषाओं में दो प्रकार की वर्तनी देखी जा सकती हैं – (i) उच्चारणानुगामी वर्तनी यथा – आइए, भोजन खाइए (आइए, भोजन खाइए) (2) परम्परानुगामी वर्तनी, यथा – हनुमान, डाकघर, रहता, ऋषि (हँनुमाँन्, डाक् घर, रैह्ता, रिशि) (इतर भाषाओं से आगत शब्द) – स्रोत तथा (प्रकृति; प्रत्यय, उपसर्गादि के योग से) निर्मित शब्द या शब्द सिद्धद्धि की दृष्टि से भी वर्तनी के सम्बन्ध में विचार किया जाना आवश्यक है। इतर भाषाओं से आगत कुछ शब्द उच्चारणानुगामी वर्तनी वाले होते हैं और कुछ परम्परानुगामी वर्तनी वाले। इसी प्रकार कुछ निर्मित शब्द उच्चारणानुगामी वर्तनी वाले और कुछ परम्परानुगामी वर्तनी वाले हो सकते हैं। यथा – जनवरी, मार्च, खुदा, कानूनी, दोसा, गए, गई, दुबारा, तेतीस, गये, गयी, दोबारा, दुःख, तेंतीस इत्यादि।

शुद्ध वर्तनी युक्त लिखित भाषा का महत्व है। वर्तनी-शिक्षण का उद्देश्य अध्येता को शुद्ध वर्तनी में शब्द लेखन के प्रति स्वयं संचालित-जैसा बनाना है। अध्येता लिखित अभिव्यक्ति के समय केवल भावों-विचारों के प्रति ही सतर्क एवं स्वतन्त्र रहे। हिन्दी भाषा को देवनागरी में लिखते समय वर्तनी की विभिन्न प्रकार की जो भूलें विभिन्न भाषा-भाषियों (प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा बोलने वालों) द्वारा की जाती हैं उनके अनेक कारण तथा रूप हैं। सामान्यतः भाषा-दोष अर्जित होते हैं, जन्मजात नहीं। कुछ वर्तनी-दोष और उनके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं –

1. अशुद्ध उच्चारण –व्रतान्त (वृतान्ता), बचन (वचन)
2. लिपि का अपूर्ण ज्ञान – ऐक (एक), पुन्य (पुण्य)
3. असावधानी तथा अतिशीघ्रता – अकास्मिक (आकस्मिक)
4. क्षेत्रीय प्रभाव – घमला (गमला)
5. सादृश्यता – सीधा साधा (सीधा सादा)
6. व्याकरण, शब्द-रचना तथा अर्थ-भेद का अपूर्णज्ञान – प्राणीमात्र (प्राणिमात्र)

वर्तनी-दोषों को दूर करने के लिए शिक्षक को विभिन्न प्रकार के उपाय अपनाने चाहिए। उन उपायों में से कुछ प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं –

1. वैयक्तिक अवधान : शिक्षक को कक्षा के विभिन्न विद्यार्थियों की वर्तनी सम्बन्धी दोषों के प्रति व्यक्तिगत अवधान देना चाहिए। विद्यार्थी में शुद्ध वर्तनी में लिखने के प्रति व्यक्तिगत उत्तरदायित्व-बोध उत्पन्न किया जाए। प्रत्येक शब्द सूक्ष्मता के साथ देखने, सुनने तथा लिखने के साथ-साथ अर्थबोध की दृष्टि से मस्तिष्क में बैठना आवश्यक है।
2. शब्द एवं अर्थ सामंजस्य: शब्द के अर्थ एवं शब्द-ज्ञान में आपसी सम्बन्ध होता है। जिन शब्दों का अर्थ स्पष्टतया विद्यार्थियों को ज्ञात होता है उनकी वर्तनी में भूलें भी कम होती है। थोड़े से सुने समान भिन्नार्थी शब्दों यथा – उपेक्षा-अपेक्षा, परिमाण-परिणाम आदि के वर्तनी-शिक्षण के समय ध्वनि, वर्ण एवं अर्थ– इन तीनों को एक साथ लिया जाए।
3. अशुद्धियों का चतुर्विध निराकरण : वर्तनी-अशुद्धियों के निराकरण के लिए आँख, कान, वाणी एवं हाथ इन चारों इन्द्रियों का समन्वयात्मक उपयोग अत्यावश्यक है। शब्दों के शुद्ध वर्तनी दृश्य-श्रव्य-प्रतिबिम्ब निर्मित करते हुए वाचन व लेखन का अभ्यास करना चाहिए।
4. दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग : वर्तनी-शिक्षण के लिए विभिन्न दृश्य-श्रव्य साधनों का उपयोग किया जाए, यथा –

श्यामपट्ट प्रयोग	–	वर्तनी क्रीड़ाओं के लिए
चित्रपट प्रयोग	–	वर्णों के वर्ग एवं उच्चारण के लिए
प्रतिकृति प्रयोग	–	उच्चारण प्रक्रिया समझाने के लिए

फ्लैश-कार्ड प्रयोग	–	शब्द विश्लेषण व शब्द निर्माण के लिए
बहुमाध्यम प्रयोग	–	शुद्ध उच्चारण व अनुकरण के लिए
सूचना पट्ट प्रयोग	–	आवश्यक सूचना प्रदर्शित करने
नीति वचन उपयोग	–	जीवनोपयोग वचन लिखने हेतु

5. अशुद्धि-वर्गों के नियम तथा उदाहरण : वर्तनी अशुद्धियों को मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त कर उनके नियम मय उदाहरणों के समझाएँ जाएँ। ये तीन वर्ग हैं –

(1) वर्ण अशुद्धि – मानकेतर वर्ण, मात्रा चिह्न व संयुक्ताक्षर सम्बन्धी भूल
(2) वर्ण प्रतिस्थान – अनुपयुक्त व अनावश्यक वर्ण सम्बन्धी भूल
(3) व्याकरणिक नियमहीनता – पदबंध, लिंग, वचन, कारक व शब्दनिर्माण भूल

6. व्यावहारिक उपाय : व्यावहारिक उपायों में उच्चारण शुद्धि, लिपिज्ञान, लेखन व वाचन में सावधानी, कोश सदुपयोग एवं लेखन अभ्यास।

4.1.16.3. रचना

रचना-शिक्षण से तात्पर्य है, भावों-विचारों को लिपिबद्ध रूप से अभिव्यक्त करना सिखाना। रचना विचारों की स्पष्ट और क्रमबद्ध अभिव्यक्ति है। सामान्यतः रचना से निबन्ध-रचना, पत्र-रचना, कहानी-रचना का बोध होता है, परन्तु रचना का यह सीमित क्षेत्र है। शिक्षण की दृष्टि से रचना का क्षेत्र वाक्य-रचना, अनुच्छेद रचना से लेकर विचारों की स्वतन्त्र तथा धाराप्रवाह अभिव्यक्ति – सर्जनात्मक लेखों तक विस्तृत व व्यापक है। रचना शब्द के लिए आंग्लभाषा में 'कम्पोजीशन' शब्द प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ एक साथ रखना है। अतः रचना का शाब्दिक अर्थ है – सम्बद्ध भावों-विचारों को क्रमबद्ध ढंग से अभिव्यक्ति करना। एकाकी वाक्यों की रचना करना लेखन की पहली पीढ़ी है। रचना लेखन का प्रारम्भ परिचित शब्दावली और नियन्त्रित वाक्य रचनाओं से किया जाता है, और धीरे-धीरे रचना के उच्च स्तर की ओर बढ़ा जाता है।

4.1.16.3.1. रचना-शिक्षण के उद्देश्य

रचना-शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य स्वीकार किये जाते हैं –

1. अर्जित शब्दावली एवं वाक्य साँचों का उपयुक्त प्रयोग करने में दक्ष होना।
2. विचारशक्ति एवं निरीक्षण शक्ति का समुचित विकास करना।
3. मौखिक रूप से मधुर, स्पष्ट एवं प्रभावपूर्ण शब्दों में आत्म प्रकाशन करना।
4. अपने भावों-विचारों को विभिन्न शैलियों में क्रमबद्ध करना।
5. व्यावहारिक ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर घटनाओं को संक्षेप में तथा छोटी या सूत्रात्मक बात को अपनी कल्पना और चिन्तन के आधार पर विस्तृत रूप दे सकें।

अभिव्यक्ति स्वरूप एवं विषय की दृष्टि से रचना के दो भेद कहे जाते हैं – (क) नियन्त्रित रचना तथा (ख) मुक्त रचना।

(क) नियन्त्रित रचना

नियन्त्रित रचना में शिक्षण बिन्दुओं का निर्धारण शिक्षक द्वारा किया जाता है। लेखक रचना के अनेक नियमों से प्रतिबन्धित होता है। ये नियम दो प्रकार के हैं –

1. भाषा सम्बन्धी (शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, विराम-चिह्नों आदि) नियम
2. विषय सम्बन्धी नियम (जिसमें सुनिश्चित प्रणाली एवं क्रिया विधि का अनुसरण करना होता है) जैसे – व्यावहारिक पत्र (निमन्त्रण, बधाई, हर्षसूचक), अधिकारियों के पास प्रार्थना-पत्र, पत्र-सम्पादक के नाम समाचार भेजना, किसी सभा, समिति, समारोह आदि का प्रतिवेदन, विविध प्रकार के प्रपत्र भरना, मनीआर्डर, तार, सेविंग बैंक, फार्म, प्रवेश पत्र आदि।

रचना सम्बन्धी उपर्युक्त विषयों का शिक्षण माध्यमिक कक्षाओं में आवश्यक है। विद्यार्थियों को इनके लिखने की प्रणाली का परिचय विविध उदाहरणों एवं नमूनों से कराया जाए और फिर उसका प्रचुर अभ्यास कराया जाना चाहिए।

(ख) मुक्त रचना

मुक्त रचना में भाषा सम्बन्धी नियमों का पालन करते हुए भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वेच्छानुसार शब्दों को चुनकर संयोजित करने की स्वतन्त्रता लेखक को प्राप्त होती है। मुक्त रचना के मुख्य उद्देश्य दो हैं –

1. अपने विचारों को अपनी शैली में क्रमबद्ध एवं सुसज्जित करना एवं
2. अपने मौलिक विचारों की अभिव्यक्ति के लिए मनोनुकूल शब्द चयन की योग्यता एवं सामर्थ्य प्रदान करना।

मुक्त रचना के लिए अनेक विषय चुने जा सकते हैं परन्तु प्रारम्भ में विद्यार्थियों से स्वतन्त्र मौलिक रचना की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः उन्हें निम्नलिखित विषयों पर कुछ स्वतन्त्रता के साथ लिखने का निर्देश दिया जाना चाहिए – पठित अंशों के सारांश एवं संक्षिप्तीकरण, पठित महापुरुषों की जीवनी, अनुभव पर आधारित जैसे यात्रा, प्रकृति-वर्णन, दृश्य-वर्णन, घटना-वर्णन इत्यादि, देखे हुए सुने हुए अथवा बातचीत पर आधारित विषयों का संक्षिप्त वर्णन जैसे – गाँव, बाजार, विद्यालय, किसान आदि।

मुक्त रचना लिखित अभिव्यक्ति का चरम सोपान है। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक कक्षाओं में लिखित रचना के विविध रूप निम्नलिखित प्रकार हो सकते हैं – संवाद, जीवनी, आत्मकथा, सार लेखन, विचार विस्तार, सृजनात्मक रचनाएँ (कहानी, एकांकी, कविता आदि)।

4.1.16.3.2. रचना-शिक्षण की प्रविधियाँ

रचना-शिक्षण की अनेक प्रविधियाँ हैं। विद्यार्थियों की रुचि, मानसिक योग्यता, भाषा-शक्ति को देखते हुए विषय या प्रकरण के अनुकूल उचित प्रविधि का अनुसरण अपेक्षित है। रचना-शिक्षण की प्रमुख प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं –

1. चित्र-वर्णन प्रविधि

इस प्रविधि में रचना विषय से सम्बन्धित एक या एकाधिक चित्र विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। शिक्षक ज़रूरी विस्तार करने की दृष्टि से चित्र पर गहराई एवं विस्तार से प्रश्न पूछता है एवं विद्यार्थी उन प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करते हैं। क्रमबद्ध प्रश्नों के तहत विद्यार्थी भी मौखिक रूप से समस्त प्रश्नों की क्रमबद्ध अभिव्यक्ति करते हैं। कालान्तर में वे उसे लिखित रूप प्रदान करते हैं। यह प्रविधि प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा की दृष्टि से छोटी आयु के बच्चों के लिए प्राथमिक स्तर पर पर्याप्त रोचक एवं लाभदायक है।

2. खेल प्रविधि

किन्डर-गार्डन, मोंटेंसरी एवं डाल्टन प्रविधियाँ किसी न किसी रूप में खेल शिक्षण में सदुपयोग करती हैं, क्योंकि खेल मनोवैज्ञानिकों के अनुसार भाषा-अधिगम में अभिरुचि तथा आनन्द उत्पन्न कराने का प्रमुख साधन है। इस प्रविधि में विद्यार्थी जिन खेलों को अपनाते है; उनके विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में अपने-अपने भाव-विचार मौखिक रूप से व्यक्त करते हैं। बाद में आवश्यकतानुसार शिक्षक के निर्देश पर उन्हें लिखित रूप प्रदान करते हैं।

3. प्रश्नोत्तर प्रविधि

यह प्रविधि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों से रचना-लेखन कराने के लिए उपयोग लाई जाती है। शिक्षक विद्यार्थियों से रचना-विषयक शीर्षक से सम्बन्धित क्रमबद्ध प्रश्न करते हुए उनके प्राप्त उत्तरों को श्यामपट्ट पर अंकित करते हुए रचना विकास करता है। तत्पश्चात् उत्तरों को साफ कर विद्यार्थियों से मौखिक रचना करा कर उसे लिखित रूप में प्रस्तुत करने का आदेश किया जाता है।

4. आदर्श अनुकरण प्रविधि

इस प्रविधि में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों से किसी विशिष्ट भाषा-शैली में लिखित रचना को देखकर उसके अनुकरण के आधार पर रचना कार्य करना अनुकरण विधि का प्रयोग करना है। शिक्षक विद्यार्थियों के सम्मुख भाषा-शैली की दृष्टि से अनुकरणीय आदर्श रचना प्रस्तुत करता है। इससे विद्यार्थियों को साहित्यिक शैली के निर्माण में सहायता मिलती है।

5. रूपरेखा प्रविधि

शिक्षक एक सुनिश्चित रूपरेखा अथवा संकेत सूत्र देकर विद्यार्थियों को निबन्ध लिखने के लिए कहता है। जो विषय विद्यार्थियों की ज्ञान-परिधि के बाहर है, उन पर रचना कार्य कराने के लिए यह प्रविधि उपयोगी है क्योंकि रूपरेखा द्वारा वे विषय सामग्री से परिचित हो जाते हैं। यह प्रविधि माध्यमिक तथा उच्च स्तर के विद्यार्थियों के लिए प्रयोग में लाई जाती है।

6. उद्‌बोधन प्रविधि

इस विधि का उपयोग उच्च स्तरीय कक्षाओं के विद्यार्थियों से उनके ज्ञान, अनुभव, चिन्तन, कल्पना, तर्क, मनन आदि शक्तियों का सदुपयोग करने का अवसर प्रदान करने की दृष्टि से किया जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों की मौखिक रचना के समय बीच-बीच में उनकी कल्पना एवं चिन्तन को बढ़ावा देने की दृष्टि से उन्हें उद्‌बोधन देता जाता है।

7. परिचर्चा प्रविधि

विवादस्पद विषयों पर जिनके पक्ष-विपक्ष में तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं, रचना कार्य कराने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है। किसी एक विषय के सम्बन्ध में विद्यार्थियों के बीच में वाद-विवाद अथवा मौखिक विचार विमर्श और तर्क-वितर्क से विषय से सम्बन्धित पर्याप्त सामग्री एकत्र हो जाती है। तत्पश्चात् विद्यार्थी शिक्षक के निर्देशन में उपयुक्त एवं संगतपूर्ण सामग्री के आधार पर निबन्ध लिखते हैं।

8. निर्देशन प्रविधि

इस प्रविधि में रचना की विषय सामग्री पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं से ढूँढने तथा चयन करने के लिए कहा जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों को पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं के नाम बताते हैं। विद्यार्थी विषय सामग्री स्वयं अध्ययन से ढूँढता है और उस आधार पर रचना लिखता है। इससे स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित होती है और स्वावलंबन मौलिक विचार की शक्ति उत्पन्न होती है।

4.1.16.3.3. रचना लेखन-शिक्षण में ध्यातव्य बातें

हिन्दी रचना लेखन-शिक्षण के समय शिक्षक को विशेष सतर्क रहना चाहिए। इस समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए –

1. प्रत्येक विद्यार्थी के लेखन-कार्य को व्यवस्थित एवं नियमित रूप से परखा तथा सुधारा भी जाए।
2. विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, भाषा ज्ञान स्तर, अभिरुचि एवं अनुभव क्षेत्र का ध्यान रखते हुए रचना-अभ्यास के विषयों का चयन किया जाए।

3. रचना की विषयवस्तु विरोधाभास, अस्पष्ट, अश्लील तथा ग्राम्य शब्दावली युक्त न हो।
4. कक्षा स्तर के सामान्य विद्यार्थी की दृष्टि से बहुत छोटी या बड़ी विषयवस्तु न हो।
5. विद्यार्थियों को अपने रचना-अभ्यासों में अशुद्धियों को दूर करने का व्यवस्थित प्रशिक्षण दिया जाए।
6. अस्वीकृत लेखन को पुनः व्यवस्थित तथा परिश्रम के साथ लिखवाएँ।
7. मूल्यांकितरचना में विद्यार्थियों की अशुद्धियों के कारणों व निराकरणोपाय समझाएँ।

4.1.17. पाठ-सार

हिन्दी भाषा-शिक्षण में वाचन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वाचन ज्ञान-प्राप्ति के साथ-साथ आनन्द प्राप्ति का भी साधन है। हिन्दी भाषा का ध्वनि तत्त्व बड़ा ही वैज्ञानिक है। इसमें जो लिखा जाता है, वैसा ही पढ़ा जाता है तथा जो पढ़ा जाता है वैसा ही लिखा जाता है। विद्यार्थियों में वाचन योग्यता विकसित करने हेतु शिक्षक द्वारा सस्वर वाचन करने पर विद्यार्थी स्पष्ट उच्चारण, उचित गति व आरोह-अवरोह के साथ गद्यांश पढ़ना सीखते हैं। अनुकरण के द्वारा उनमें इन योग्यताओं का विकास होता है। मौन वाचन से ध्यानपूर्वक पढ़ने व स्वाध्याय की आदत का विकास होता है। वाचन भाषा का महत्त्वपूर्ण कौशल होने के साथ ही विचारों का एक प्रभावपूर्ण माध्यम भी है। वास्तव में वाचन ज्ञानार्जन की कुंजी है। हिन्दी वाचन में पारंगत करने कई विधियों का शिक्षण में प्रयोग किया जाना चाहिए। वाचन सम्बन्धी त्रुटियों के कई कारण होते है; उन कारणों में दृष्टि दोष, असावधानी तथा कठिन पाठ्यसामग्री आदि प्रमुख हैं। इनको दूर करने के लिए बार-बार अभ्यास व वाचन सम्बन्धी निर्देशन दिया जाना आवश्यक है। हिन्दी वाचन सामग्री चार प्रकार की होती है – मुद्रित, चित्रित, ध्वन्यंकित तथा हस्तलिखित सामग्री। वाचन को प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च स्तर पर विद्यार्थियों में विकसित किया जाना चाहिए।

विद्यार्थियों में हिन्दी लेखन कौशल का विकास प्रश्नोत्तर लिखने, रचना लिखने, सार लिखने, पत्र लेखन आदि के द्वारा कराया जाता है। लेखन कौशल में अपने विचारों को सुरक्षित करके दैनिक जीवन का विवरण रखने, पठित सामग्री को संगृहीत रखने आदि में महत्त्वपूर्ण है। सुलेख, अनुलेख, प्रतिलेख, श्रुतलेख तथा लिप्यन्तरण लेखन ये लेखन के प्रमुख प्रकार हैं। विद्यार्थियों में लेखन विकसित करने विधियों का प्रयोग किया जाता है। लेखन विकास में वर्ण लेखन, वर्तनी तथा रचना का विशेष योगदान है। विद्यार्थियों को वर्ण-वर्तनी शुद्ध व स्पष्ट लेखन का अभ्यास व विशेष ध्यान शिक्षक को देना चाहिए। अतः विद्यार्थियों में लेखन कौशल का विकास करना अति आवश्यक है।

4.1.18. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. भाषाई कौशलों को मुख्यतया कितने भागों में बाँटा है?

(क) दो

(ख) तीन
(ग) पाँच
(घ) चार

सही उत्तर – (घ) चार

2. प्रधान भाषा कौशल हैं –
(क) श्रवण एवं भाषण
(ख) श्रवण तथा वाचन
(ग) लेखन व श्रवण
(घ) कोई नहीं

सही उत्तर – (क) श्रवण एवं भाषण

3. वाचन के सस्वरता के आधार पर कितने भेद हैं ?
(क) दो
(ख) चार
(ग) तीन
(घ) पाँच

सही उत्तर – (क) दो

4. हिन्दी भाषा की लिपि है –
(क) देवनागरी
(ख) रोमन
(ग) अंग्रेजी
(घ) मराठी

सही उत्तर – (क) देवनागरी

5. भाषाई कौशल विकास की दृष्टि से अन्तिम कौशल है –
(क) पठन
(ख) लेखन
(ग) श्रवण
(घ) भाषण

सही उत्तर – (ख) लेखन

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी शिक्षण में वाचन के उद्देश्यों को लिखिए।
2. लेखन कौशल किसे कहते हैं ? स्पष्ट कीजिए।

3. मौन वाचन के समय कौन-कौनसी सावधानियाँ रखनी चाहिए।
4. लिपि-लेखन कौशल के विकास पर प्रकाश डालिए।
5. लेखन के प्रमुख अंग कौन-कौन से हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. वाचन के प्रकारों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. लेखन विकास की प्रक्रिया को विस्तार से लिखिए।

4.1.19. व्यवहार

1. वाचन सामग्री को स्पष्ट कीजिए।
2. लेखन शिक्षण की प्रमुख विधियों को बताइए।
3. वर्ण-लेखन-शिक्षण में ध्यातव्य बातों को लिखिए।
4. रचना-शिक्षण की विधियों को समझाइए।
5. वाचन-विकास के स्तरों पर प्रकाश डालिए।

4.1.20. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. सत्तिगेरी, डॉ॰ के. आय (2013), नूतन हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-80011-53-0
2. शर्मा, डॉ॰ किशोरी लाल (1987), हिन्दी शिक्षण प्रविधि
3. मंगल, डॉ॰ उमा (1996), हिन्दी शिक्षण
4. शर्मा, एस.आर (2008), भाषा-शिक्षण, नई दिल्ली, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस
5. पाण्डेय, डॉ॰ रामशकल (2012), हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-47-1
6. शर्मा, डॉ॰ एन.के (2015), संस्कृत शिक्षण, नई दिल्ली, के. एस. के. प्रकाशन, ISBN : 978-81-89983-09-3
7. सक्सैना, डॉ॰ बीनू (2016), पाठ्यक्रम एवं भाषा, आगरा, राखी प्रकाशन, ISBN : 978-93-85195-59-4
8. शर्मा, डॉ॰ मार्तण्ड (2011), हिन्दी शिक्षण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन
9. प्रसाद, केशव (2011), हिंदी शिक्षण, नई दिल्ली, धनपत राय पब्लिशिंग कंपनी (प्रा.) लिमिटेड, ISBN : 978-93-84559-78-6
10. शर्मा, लक्ष्मीनारायण (1993), भाषा 1, 2 की शिक्षण विधियाँ और पाठ नियोजन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर

खण्ड – 4 : हिन्दी भाषा-शिक्षण (मातृभाषा और अन्य भाषा के सन्दर्भ में)

इकाई – 2 : हिन्दी श्रवण और भाषण-क्षमता का विकास

इकाई की रूपरेखा

4.2.00 उद्देश्य कथन
4.2.01 प्रस्तावना
4.2.02 श्रवण का सम्प्रत्यय एवं अंग
    4.2.02.1 श्रवण के अंग
4.2.03 श्रवण के प्रकार
    4.2.03.1 सामान्य श्रवण
        4.2.03.1.1 सामान्य श्रवण के आधार
    4.2.03.2 चयनात्मक श्रवण
        4.2.03.2.1 चयनात्मक श्रवण के सोपान
4.2.04 श्रवण-कौशल के उद्देश्य
4.2.05 श्रवण-कौशल का महत्त्व
4.2.06 श्रवण-कौशल के साधन
4.2.07 श्रवण-कौशल प्रवीणता
4.2.08 श्रवण-कौशल विकास में ध्यातव्य बातें
4.2.09 श्रवण-कौशल-शिक्षण की विधियाँ
4.2.10 भाषण का सम्प्रत्यय
4.2.11 भाषण कौशल के अंग
    4.2.11.1 उच्चारण
        4.2.11.1.1 उच्चारण-शिक्षण के पक्ष
    4.2.11.2 मौखिक अभिव्यक्ति
4.2.12 भाषण कौशल (मौखिक अभिव्यक्ति) के उद्देश्य
4.2.13 भाषण (मौखिक अभिव्यक्ति) का महत्त्व
4.2.14 भाषण क्षमता प्रवीणता
4.2.15 मौखिक अभिव्यक्ति-शिक्षण की विधियाँ
4.2.16 पाठ-सार
4.2.17 बोध प्रश्न
4.2.18 व्यवहार
4.2.19 सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

4.2.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप निम्नलिखित का ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होंगे –

i. हिन्दी भाषा-शिक्षण में श्रवण एवं भाषण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
ii. हिन्दी श्रवण का अर्थ एवं महत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iii. श्रवण के प्रकारों का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
iv. हिन्दी श्रवण के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
v. हिन्दी श्रवण के साधनों एवं विधियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vi. भाषण का अर्थ एवं अंगों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vii. हिन्दी-उच्चारण-शिक्षण के विविध पक्षों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
viii. भाषण के उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
ix. भाषण के महत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
x. हिन्दी भाषण-दक्षता विकास का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
xi. मौखिक अभिव्यक्ति-शिक्षण की विधियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.2.01. प्रस्तावना

भाषा एक व्यवहार है। भाषा-शिक्षण का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों को भाषा व्यवहार में कुशल बनाना है। भाषा कुशलता के चार भाषाई कौशल हैं। इन कौशलों को प्रमुख रूप से दो भागों में बाँटा गया है – प्रधान कौशल और गौण कौशल। प्रधान कौशल के अन्तर्गत उच्चरित भाषा से सम्बन्धित कौशल श्रवण और भाषण एवं गौण कौशल के अन्तर्गत लिखित भाषा से सम्बन्धित कौशल वाचन और लेखन हैं।

भारत में हिन्दी भाषा का मातृभाषा और अन्य भाषा (द्वितीय भाषा) के रूप में शिक्षण हो रहा है। मातृभाषा सीखने के लिए बालक को सुनने व समझने का अवसर हर समय मिलता है, वह अपने माता-पिता, भाई-बहन, रिश्तेदार तथा समाज के अन्य व्यक्तियों से मातृभाषा सुनता रहता है किन्तु अन्य भाषा सुनने का अवसर बालक को केवल कक्षा में ही मिलता है। जैसे बालक सुनता है उसमें ही भाषण की चेष्टा करता है। अतः भाषा-शिक्षण में श्रवण व भाषण का मुख्य स्थान है। प्रस्तुत पाठ के अन्तर्गत हिन्दी श्रवण एवं भाषण-क्षमता के विकास की चर्चा विस्तार से करेंगे।

4.2.02. श्रवण का सम्प्रत्यय एवं अंग

श्रवण शब्द संस्कृत की 'श्रु' धातु से निर्मित है जिसका सम्बन्ध सुनने की क्रिया, ध्यानपूर्वक सुनना, मौखिक संवाद इत्यादि से है। डॉ॰ किशोरीलाल शर्मा ने श्रवण के संप्रत्यय को स्पष्ट करते हुए कहा है कि – श्रवण में केवल ध्वनि श्रवण का ही समावेश नहीं होता, अपितु जो कुछ हम सुनते हैं, उसे पहचानते हैं, समझते हैं और अर्थ ग्रहण करके उसे स्मरण रखते हैं। किसी भी भाषण को ग्रहण करने की प्रक्रिया सक्रिय एवं सोद्देश्य है। इसमें प्रमुख रूप से तीन प्रकार की शक्तियों का समावेश किया जाता है – (i) अन्तःबोध-शक्ति, (ii) धारण-शक्ति तथा (iii) बोधन-शक्ति।

भाव-ग्रहण का मुख्य आधार होने के कारण श्रवण एक मुख्य कौशल भी है तथा भाषा-शिक्षण में इसका प्रमुख स्थान है। अन्य-भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में श्रवण-कौशल के अन्तर्गत पूर्वोक्त तीन तथ्यों का समावेश होता है।

अन्य भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में श्रवण का तात्पर्य केवल उस भाषा को सुनना नहीं है। लक्ष्य भाषा के उच्चरित रूप को सुनकर ध्वनियों के अन्तर को पहचानना, ध्वनिगत विशेषताओं को समझना तथा उस भाषा में प्रयुक्त अनुतान, बलाघात, विवृति को पहचानते हुए ध्वनि संयोगों से सन्दर्भानुसार वक्ता के भावों-विचारों को ग्रहण करना। अन्य भाषा-शिक्षण में श्रवण-कौशल के विकास की प्रक्रिया तभी पूर्ण मानी जाती है जब अध्येता उस भाषा में कही गई बातों को सुनकर उनका अर्थ समझने लगता है। डॉ॰ उमा मंगल के अनुसार– "वक्ता की ध्वनियों, शब्दों एवं भावों को कानों के माध्यम से ग्रहण कर उसका अर्थग्रहण करने की क्रिया 'श्रवण' कहलाती है। वक्ता जिस उद्देश्य से अपने विचारों की मौखिक अभिव्यक्ति कर रहा है, उस बात को पूर्ण रूप से अवधानपूर्वक सुनकर, उसी अभिप्राय को ग्रहण करने की योग्यता ही श्रवण है।"

4.2.02.1. श्रवण के अंग

श्रवण-कौशल के दो मुख्य अंग माने जाते हैं – ध्वनि-अभिज्ञान और अर्थ-ग्रहण।

(क) ध्वनि-अभिज्ञान : परस्पर मिलती-जुलती दो या अधिक ध्वनियों के अन्तर को पहचानते हुए उस अन्तर को याद रखना ध्वनि-अभिज्ञान है।
(ख) अर्थग्रहण : विभिन्न ध्वनियों एवं उनके संयोगों से बने शब्दोंका प्रसंगानुरूप अर्थ समझना अर्थग्रहण है।

4.2.03. श्रवण के प्रकार

विद्यार्थियों में भाषा की ध्वनि व्यवस्था को भलिभाँति सुन सकने का सामर्थ्य विकसित करने के लिए विशेष प्रयास की आवश्यकता होती है। यह श्रवण दो प्रकार से विभक्त किया जाता है – (i) सामान्य श्रवण और (ii) चयनात्मक श्रवण।

4.2.03.1. सामान्य श्रवण

सामान्य श्रवण का अर्थ है – अध्येय भाषा को सामान्य रूप से सुनना। इस प्रक्रिया में भाषा के किसी बिन्दु विशेष को व्यवस्थित रूप से सुनने का अभ्यास नहीं कराया जाता है। शिक्षक के द्वारा इसमें भाषा की कुछ ध्वनियों, शब्दों या वाक्यों को मुख्य तौर पर चुनकर सुनवाया नहीं जाता है। विद्यार्थियों को अन्य भाषा को विभिन्न सन्दर्भों में सुनवाया जाता है और श्रवण के अन्त में एक-दो प्रश्न पूछ कर यह देखा जाता है कि सन्दर्भ के मुख्य अंशों को विद्यार्थी कितना समझ रहा है ! इस श्रवण के लिए व्यवहृत सामग्री लम्बी और अपेक्षाकृत सरल होती है। विद्यार्थी के दैनिक जीवन, उसकी अभिरुचियों तथा परिचित परिवेश से प्रस्तुत सामग्री का चयन किया

जाता है। तथा साथ ही कक्षा स्तर के अनुरूप आकाशवाणी, कविता, गीतों, नाटकों एवं कहानियों का कार्यक्रम भी इसमें सुनवाए जा सकते हैं। साथ ही विश्वसनीय वार्तालाप, जिसकी पृष्ठभूमि में शोर भी हो रहा हो उसे सुनवाया जाए जिससे विद्यार्थी में वास्तविक जीवन में अन्य भाषा को सुनकर समझने की क्षमता विकसित हो सके। इस प्रकार का श्रवण विद्यार्थियों को भाषा सुनने का पर्याप्त अवसर प्रदान करता है, जिससे विद्यार्थी अन्य भाषा से अधिक परिचित होता है। लम्बे समय तक किसी अन्य भाषा को नियमित रूप से सुनते-सुनते अध्येता उस भाषा की ध्वनियों को आत्मसात् कर लेता है।

4.2.03.1.1. सामान्य श्रवण के आधार

सामान्य श्रवण के प्रमुख रूप से पाँच आधार कहे गये हैं – पर्याप्त श्रवण, शान्त चित्त-श्रवण, एकाग्रचित्त-श्रवण, अनौपचारिक-श्रवण और बाधाहीन-श्रवण।

1. पर्याप्त-श्रवण : पर्याप्त श्रवण का अर्थ है बहुत देर तक, बहुत सी बातों को लगातार सुनना। इस श्रवण से विषयवस्तु तथा श्रवण की अधिक मात्रा से उस भाषा की ध्वनि का प्रभाव श्रोता के मस्तिष्क पर पड़ने से धीरे-धीरे उस भाषा की ध्वनियों को पहचानने की शक्ति स्वतः विकसित हो जाती है तथा अभिज्ञात ध्वनि का वागिन्द्रिय से स्वतः ही उच्चारण करने में समर्थ हो जाता है।
2. शान्त चित्त-श्रवण : श्रोता जो कुछ भी सुने उसे शान्त-चित्त होकर सुनें अर्थात् श्रवण के समय उस व्यक्ति का दिल और दिमाग उद्वेगों यथा – चिन्ता, भय, घृणा, आवेश, पूर्वाग्रह, आवेश इत्यादि से पूर्णतया मुक्त हो। भाषा के श्रवण-अभ्यास के समय विद्यार्थियों को कक्षा में शान्त-चित्त होना चाहिए। इससे सुनी गई बातें मस्तिष्क में स्थिर होती है।
3. एकाग्र-श्रवण : संयम तथा एकाग्रता की स्थिति में श्रवण सम्बन्ध क्रिया स्थिर एवं प्रभावकारी होती है। तथा एकाग्रता की ओर रुचि प्रकट करता है।
4. अनौपचारिक श्रवण : किसी द्वितीय भाषा के लोगों के मध्य रहते हुए बिना किसी औपचारिक श्रवण-अभ्यास के ही अधिकतर लोगों में उस भाषा की श्रवण-दक्षता का विकास हो जाता है। अतः अनौपचारिक श्रवण के पर्याप्त अवसर प्रदान करना श्रवण-पक्ष को पुष्ट करना है।
5. बाधाहीन-श्रवण : सामान्यतः द्वितीय भाषा के श्रवण के समय बाहरी शोरगुल बाधा उत्पन्न करता है, अतः जहाँ तक सम्भव हो उस समय तक बाधाहीन श्रवण के अवसर प्रदान किये जाएँ जब तक विद्यार्थियों को श्रवणेन्द्रिय में बाहरी शोरगुल के प्रति अपेक्षित बधिरता उत्पन्न नहीं होती।

4.2.03.2. चयनात्मक श्रवण

चयनात्मक श्रवण से तात्पर्य है – सीखी जाने वाली भाषा की ध्वनियों के बिन्दुओं को सुनना सिखाना। अन्य भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ हो सकती हैं जो सुनने में समस्याएँ उत्पन्न करती हैं और सरलता से नहीं सीखी जातीं। कुछ ध्वनियाँ ऐसी भी हो सकती हैं जो विद्यार्थी की मातृभाषा में न हों, उनको सही-सही सुनना और

पहचानना कठिन होता है। इन्हें अधिक प्रयासपूर्वक ही सुनना सिखाया जाता है। अतः अन्य भाषा की ध्वनि व्यवस्था में इन शिक्षण बिन्दुओं को चुनकर व्यवस्थित रूप से सुनना सिखाना आवश्यक है। इस प्रकार अन्य भाषा की ध्वनियों, ध्वनियों के वितरण, सन्दर्भ में शब्दों, वाक्यांशों और वाक्यों के साथ-साथ व्याकरणिक विशेषताओं सम्बन्धी बिन्दुओं का चयन किया जाए। उससे सम्बन्धी अभ्यास सामग्री का तैयार करके व्यवस्थित रूप से उसका अभ्यास कराया जाना चाहिए।

4.2.03.2.1. चयनात्मक श्रवण के सोपान

चयनात्मक श्रवण के पाँच सोपान माने जा सकते हैं – समस्यामूलक ध्वनियों का श्रवण, नवीन ध्वनियों का श्रवण, अनुतान साँचों का श्रवण, व्याकरणिक रूपों का श्रवण और सन्दर्भ वाक्यों का श्रवण।

1. समस्यामूलक ध्वनियों का श्रवण

प्रथम भाषा एवं द्वितीय भाषा में कुछ ध्वनियाँ उच्चारण-प्रक्रिया तथा वितरण की दृष्टि से समान होती है। शिक्षक ऐसी समान ध्वनियों का उच्चारण करते हुए विद्यार्थियों को श्रवण करा दे। समस्यामूलक ध्वनियों में दो प्रकार की ध्वनियों का समावेश होता है – (i) उच्चारण-प्रक्रिया में समान वस्तु वितरण में भिन्न, एवं (ii) वितरण में समान परन्तु उच्चाचरण-प्रक्रिया में थोड़ी भिन्नता। यथा – हिन्दी मलयालम एवं हिन्दी अंग्रेजी की ध्वनियाँ क्रमशः उच्चारण से क् च् ट् त् प् समान परन्तु मलयालम में ये ध्वनियाँ दो स्वरों के मध्य व शब्दान्त में प्रयुक्त नहीं होती वरन् इनके स्थान पर क्रमशः ग् ज् ड् द् ब् का वितरण प्राप्त है। यहाँ ध्यान देना चाहिए कि लेखन में क च ट त प वर्ण ही लिखे जाते हैं। तथा हिन्दी अंग्रेजी की क् च् प् ध्वनियाँ वितरण से समान होते हुए भी उच्चारण में कुछ समान व असमान हैं। उच्चारण प्रक्रिया तथा वितरण की दृष्टि से प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा की अर्द्धसम। अर्द्धविषम ध्वनियों का शुद्ध उच्चारण सिखाने के लिए श्रवण अभ्यास करवाना चाहिए। सामान्यतः शब्द युग्मों यथा – काल-खाल, भारत-बारत। नक-नख, आकार-आगार-आकार इत्यादि।

2. नवीन ध्वनियों का श्रवण

मातृभाषा में अनुपलब्ध तथा द्वितीय भाषा में उपलब्ध ध्वनियाँ द्वितीय भाषा के विद्यार्थी के लिए नवीन ध्वनियाँ कही जाती हैं। नवीन ध्वनियों के श्रवण के लिए शिक्षक को उनका उच्चारण-अनुकरण करा के इस तथ्य का पता लगा ले कि विद्यार्थी नवीन ध्वनियों को मातृभाषा की किस ध्वनि में सुन रहा है।

3. अनुतान साँचों का श्रवण

विश्व के शिक्षाशास्त्रियों के विचार में चयनात्मक श्रवण से पूर्व द्वितीय भाषा के अनुतान-साँचों का श्रवण-अभ्यास कराना अधिक उपयोगी रहता है। अतः शिक्षक को दोनों भाषाओं में उपलब्ध उच्चारण-प्रक्रिया एवं वितरण में समान ध्वनियों के माध्यम से ही अनुतान-साँचों के वाक्यों का निर्माण कर ले तो श्रवण-कौशल के

विकास में मदद मिलेगी। इस हेतु छोटे-छोटे वाक्यों का चयन किया जाए, यथा – यह कमल है।, क्या यह कमल है ?, क्या यह भी कमल है ?, क्या यह कमल नहीं है ?, यह कमल क्यों नहीं है ?, अरे हाँ ! यह कमल ही है।, क्या कहा ? कमल।, आहा ! कितना सुन्दर कमल है ! हाय, मेरा कमल !

4. व्याकरणिक रूपों का श्रवण

ज्यादातर भाषाओं के बहुत से शब्द वाक्यों में अपने मूल रूप के परिवर्तन साथ प्रयुक्त होते हैं। इस प्रक्रिया में कुछ नया अंश जुड़ जाता है या कुछ अंश छूट जाता है अथवा ये दोनों ही बातें साथ-साथ होती हैं। शब्द प्रयोग के समय होने वाले इस परिवर्तन को समझने के लिए विद्यार्थियों को विभिन्न व्याकरणिक रूपों यथा – लिंग, वचन, काल, वृत्ति, पुरुष, क्रिया, वाच्य, सर्वनाम, समास, सन्धि, रूपावली आदि के कुछ शब्दों का शब्द-युग्मों, वाक्यों में श्रवण-अभ्यास कराया जाना उपयुक्त है। इससे विद्यार्थियों में ध्वनि-व्यवस्था एवं ध्वनि परिवर्तन से हुए अर्थ-भेद का अंकन होता है।

5. सन्दर्भ वाक्यों का श्रवण

शब्दों, वाक्यांशों, वाक्यों के माध्यम से ध्वनियों, साँचों के अन्तर का श्रवण बोध कराते हुए सन्दर्भ वाक्यों द्वारा अर्थ ग्रहण करना सिखाया जाता है।

4.2.04. श्रवण-कौशल के उद्देश्य

हिन्दी श्रवण-कौशल विकास के कुछ उद्देश्य निम्नलिखित प्रकार से हैं –

1. विद्यार्थियों में श्रवण के प्रति रुचि उत्पन्न करना।
2. विद्यार्थियों में सुनकर अर्थग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना।
3. दूसरों के द्वारा उच्चरित शब्दों को सुनकर शुद्ध उच्चारण के योग्य बनाना।
4. श्रुत सामग्री के महत्त्वपूर्ण अंशों को पहचानने की योग्यता विकसित करना।
5. आकर्षक एवं मर्मस्पर्शी विचारों तथा भावों का चयन करने की योग्यता विकसित करना।
6. वक्ता के मनोभावों को समझना।
7. श्रुत सामग्री का सारांश ग्रहण करने की योग्यता विकसित करना।

4.2.05. श्रवण-कौशल का महत्त्व

श्रवण-कौशल के शिक्षण द्वारा हिन्दी की स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ, ह्रस्व, दीर्घ, अल्पप्राण-महाप्राण, अघोष-सघोष, अनुस्वार, अनुनासिक, संयुक्त व्यंजन तथा विशेष समस्यात्मक ध्वनियों का उचित अभ्यास किया जा सकता है। श्रवण के माध्यम से भाषा के अन्य कौशल प्रभावित होते हैं, अतः भाषा-शिक्षण में श्रवण भी महत्त्वपूर्ण कौशल है। श्रवण-कौशल का महत्त्व भाषा सीखने में अत्यधिक है, यथा –

1. भाषा ज्ञान का आधार बनाने में।
2. अन्य भाषाई कौशलों को विकसित करने में।
3. श्रवण के प्रति जागरूक बनाने में।
4. शब्द-भण्डार में वृद्धि करने।
5. मौखिक अभिव्यक्ति के विकास में।
6. विषयवस्तु को ग्रहण करने में।
7. कविता के रसास्वादन में।
8. कहानी का आनन्द प्राप्त करने में।
9. व्यक्तित्व विकास में।

4.2.06. श्रवण-कौशल के साधन

श्रवण के प्रमुख साधन निम्नलिखित हैं –

1. गुरुमुख
2. परिवार के सदस्य
3. आकाशवाणी
4. दूरवाणी
5. ध्वनि-मुद्रण यन्त्र
6. संगणक यन्त्र
7. ध्वनिविस्तारक यन्त्र
8. सान्द्रध्वनिमुद्रिका यन्त्र

4.2.07. श्रवण-कौशल प्रवीणता

भाषा-शिक्षण की दृष्टि से श्रवण का अर्थ व्यापक है। श्रोता द्वारा वक्ता के कथन को सुनते हुए वक्ता के अभिप्राय को समझना है। श्रवण-कौशल में प्रवीणता प्राप्त करने की दृष्टि से निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए –

1. लक्ष्य भाषा की एकाकी ध्वनियों को स्पष्ट सुन सकना।
2. विभिन्न ध्वनि समुच्चयों तथा ध्वनिक्रमों को स्पष्टतः सुन सकना।
3. परोक्ष वक्ता के भाषण के पदबन्ध समुच्चयों एवं वाक्यों का अर्थ ग्रहण करना।
4. प्रत्यक्ष वक्ता के हाव-भावों को समझते हुए कथन को सुनकर अभीप्सित अर्थ को ग्रहण करते जाना।
5. प्रत्यक्ष या परोक्ष वक्ता के भाषण से अर्थ ग्रहण की क्षमता विकसित होना।
6. प्रत्यक्ष या परोक्ष वक्ता के अपूर्ण कथनों को सुनकर उनका ईप्सित अर्थ ग्रहण करना।

4.2.08. श्रवण-कौशल विकास में ध्यातव्य बातें

श्रवण-कौशल को विकसित करने के लिए निम्नलिखित बातों की ओर अवधान देना चाहिए –

1. विद्यार्थी श्रवण में रुचि रखें।
2. विद्यार्थी में धैर्यपूर्वक सुनने की क्षमता हो ।
3. विद्यार्थी में भावग्रहण करने की क्षमता हो।
4. विद्यार्थी को ध्वनि, उसके प्रकार व वर्गीकरण का पूर्ण ज्ञान होवे।
5. विद्यार्थी की श्रवणेन्द्रियाँ ठीक हों।

विद्यार्थी में सुनने की योग्यताओं के विकास का क्रम-निर्धारण मातृभाषा तथा द्वितीय भाषा के रूप में किया जाता है। राष्ट्रीय शैक्षिक एवं अनुसन्धान परिषद्, नई दिल्ली द्वारा तैयार दसवर्षीय विद्यालयी पाठ्यक्रम तथा ईश्वरभाई पटेल समिति ने हिन्दी-शिक्षण के समय बालकों में निम्नलिखित योग्यताओं के लक्ष्य निश्चित किये हैं –

1. हिन्दी की ध्वनियों को सुनकर मातृभाषा की ध्वनियों एवं हिन्दी ध्वनियों में विभेद कर सकना। जैसे – इ-ई, उ-ऊ, ए-ऐ, ओ-औ तथा अल्पप्राण-महाप्राण, घोष-अघोष, अनुस्वार-अनुनासिक-निरनुनासिक, ष-स, क्ष-स, छ-क्ष, ङ-ड़, ढ़, व-ब, य-ज, स-श।
2. हिन्दी में दिए गए सामान्य-निर्देशों को समझना।
3. आकाशवाणी (रेडियो), चलचित्र (फिल्म), दूरदर्शन (टेलीविजन) पर मनोरंजन और ज्ञान के लिए हिन्दी कार्यक्रम सुनना व देखना।

संक्षेप में श्रवण-कौशल को प्रयत्नपूर्वक विकसित करने की आवश्यकता होती है। तथा विभिन्न विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

4.2.09. श्रवण-कौशल-शिक्षण की विधियाँ

श्रवण-कौशल का साक्षात् सम्बन्ध कान से है। भाषा सीखने और शिक्षण का यह प्रथम व महत्त्वपूर्ण चरण है। विद्यार्थियों में श्रवण-कौशल का शिक्षण करने के लिए निम्नलिखित विधियों, साधनों एवं सामग्री की सहायता लेनी चाहिए – भाषण विधि, वाचन विधि, प्रश्नोत्तर विधि, कथोपकथन विधि, श्रुतलेख विधि, वाद-विवाद विधि, दृश्य-श्रव्य विधि।

1. भाषण विधि

बालक की श्रवणेन्द्रियों के विकास हेतु व्यक्तियों के भाषणों का आयोजन करना चाहिए। भाषण के द्वारा बालक में मौखिक भाषा के साथ श्रवण-कौशल का भी विकास किया जा सकता है। विद्यार्थियों को भाषण ध्यानपूर्वक सुनने के लिए निर्देशन देकर उन्हें सक्रिय रखा जाए।

2. वाचन विधि

शिक्षक वाचन के द्वारा विद्यार्थी शुद्ध उच्चारण, गति, विराम-चिह्नों इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। अतः उनसे अनुकरण वाचन कराया जाए, जिससे यह ज्ञात होगा कि विद्यार्थी ध्यान से विषय को सुन रहे हैं या नहीं। अतः शिक्षक द्वारा कक्षा में सस्वर वाचन करने से विद्यार्थियों में श्रवण-कौशल विकसित होता है।

3. प्रश्नोत्तर विधि

भाषा-शिक्षण में प्रश्नोत्तर प्रणाली सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। कक्षा में विद्यार्थी-शिक्षक के बीच प्रश्नोत्तर विधि के माध्यम से अन्तःक्रिया होती है। कक्षा में प्रश्न पूछने से विद्यार्थी सुनकर विषय को ग्रहण करते हैं एवं उत्तर देते हैं। प्रश्न पूछने से विद्यार्थी सावधान होकर शिक्षक की बात को अवधानपूर्वक सुनते हैं।

4. कथोपकथन विधि

कक्षा में विद्यार्थियों को मनोरंजक कविता, कथा, कहानी आदि सुनानी चाहिए। इनके बाद उन्हें क्रमशः विद्यार्थियों से सुननी चाहिए। इसमें विद्यार्थियों में श्रवण-कौशल विकसित होता है।

5. श्रुतलेख विधि

श्रुतलेख में शिक्षक किसी गद्यांश को बोलता है और विद्यार्थी सुनकर लिखते हैं। अवधानपूर्वक सुनने से विद्यार्थी सम्पूर्ण विषय को शुद्ध लिख सकेगा तथा कोई भी अंश नहीं छूटेगा।

6. वाद-विवाद विधि

श्रवण-कौशल शिक्षण के लिए वाद-विवाद भी एक महत्त्वपूर्ण विधि है। इसमें विद्यार्थी को प्रत्येक बात सावधानीपूर्वक सुननी होती है क्योंकि बिना सुने वे दूसरे पक्ष की बात का उत्तर नहीं दे सकेंगे एवं न ही अपने तर्क प्रस्तुत कर पाएँगे। अतः शिक्षक पक्ष-विपक्ष के रूप में प्रदत्त विषय को उपस्थापित करने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करे तथा विषय की समाप्ति पर सभी विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर यह जाँच करनी चाहिए कि वे वाद-विवाद के तर्कों को ध्यान से सुन रहे थे या नहीं।

7. दृश्य-श्रव्य विधि

श्रवण-कौशल को विकसित करने तथा उच्चारण सम्बन्ध दोषों का निवारण करने के लिए ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर, रेडियो, चलचित्र, दूरदर्शन, कंप्यूटर, तथा वीडियो इत्यादि की सहायता ली जानी चाहिए। इन साधनों की सहायता से व्यक्तियों के भाषण, कविता, वार्तालाप, गीत, डायलॉग, नाटक तथा विभिन्न शैक्षिक एवं मनोरंजक कार्यक्रम सुने जा सकते हैं।

4.2.10. भाषण का सम्प्रत्यय

भाषण का अर्थ है बोलना। इसे मौखिक अभिव्यक्ति भी कहा जाता है। जब व्यक्ति मौखिक रूप से अपनी बात को कहने में समर्थ हो जाता है तो उसे मौखिक अभिव्यक्ति में कुशल माना जाता है। मौखिक अर्थात् मुख से निकला हुआ। 'बोलना' अभिव्यक्ति अर्थात् स्वयं को अभिव्यक्त करना। किसी विषय पर मौखिक रूप से प्रस्तुति को मौखिक अभिव्यक्ति कहा जाता है। भाषण मौखिक अभिव्यक्ति का चरम और परिमार्जित रूप है। शिक्षण की दृष्टि से भाषण-कौशल के दो मुख्य पक्ष हैं –

(क) एकल, संयुक्त ध्वनियों तथा ध्वनि संयोजनों का उच्चारण।
(ख) वाक्यांश, वाक्यों में भावों-विचारों की अभिव्यक्ति।

अतः भाषण-कौशल शिक्षण का अर्थ है अध्येता में इस प्रकार की योग्यता उत्पन्न करना कि वह अपने भावों-विचारों को स्पष्ट रूप से बोल कर व्यक्त कर सके जिन्हें दूसरे लोग सुन कर समझ सके और उनका सही-सही अर्थ ग्रहण कर सकें। डॉ॰ उमा मंगल ने भाषण को स्पष्ट किया है – "जब व्यक्ति ध्वनियों के माध्यम से मुख के अवयवों की सहायता से, उच्चरित भाषा का प्रयोग करते हुए अपने विचारों को प्रकट करता है तब उसे भाषण कहा जाता है। भाषण की प्रक्रिया में मुख्यतः तीन पक्ष सन्निहित रहते हैं –

(i) सन्दर्भानुकूल उपयुक्त शब्दों का चयन
(ii) एक सुनिश्चित एवं सुव्यवस्थित संरचना में उनका विकास
(iii) विन्यासित शब्दों-पदों का उचित गाने के साथ प्रवाहपूर्ण उच्चारण

भाषण-कौशल के शिक्षण समय शिक्षक को उच्चारण तथा अभिव्यक्ति दोनों पक्षों पर अधिकार कराने की आवश्यकता है। किसी भी प्रथमभाषा / द्वितीयभाषा का ग्रहण-पक्ष (श्रवण, वाचन) जितना सरल महसूस होता है, अभिव्यक्ति पक्ष (भाषण, लेखन) उतना ही कठिन महसूस होता है। द्वितीय भाषा में अभिव्यक्ति के विविध पक्ष प्रथमभाषा में अभिव्यक्ति के विविध पक्षों यथा – उच्चारण प्रक्रिया, वाक्य साँचों, शब्द प्रयोग से पर्याप्त मात्रा में प्रभावित होने के कारण विद्यार्थी के लिए कठिन महसूस होते हैं। इस कठिनाई को सरल बनाना ही भाषण कौशल शिक्षण का लक्ष्य है।

द्वितीयभाषा के परिनिष्ठित रूप में प्रवाहपूर्ण शैली में अपने भावों-विचारों को अभिव्यक्त कर सकना द्वितीय भाषा-शिक्षण का मुख्य लक्ष्य होने के कारण भाषण कौशल-शिक्षण का द्वितीयभाषा-शिक्षण में विशेष महत्त्व है। भाषण कौशल पर अच्छा अधिकार करा देने से लेखन कौशल पर अधिकार कराने में पर्याप्त सरलता रहती है। अन्य भाषा-शिक्षण में इस कौशल का महत्त्व अधिक बढ़ जाता है। रॉबर्ट लेडो ने इसीलिए 'लेखन से पूर्व भाषण' का सिद्धान्त स्वीकार किया। भाषा का वास्तविक स्वरूप उसके उच्चरित रूप से ही व्यक्त होता है। भाषा-शिक्षण की आरम्भिक अवस्था से ही विद्यार्थी को सही उच्चारण-व्याकरण-वाक्य-रचना का अच्छा अभ्यास कराया जाए। हिन्दी का व्यवहार क्षेत्र बहुबोली, बहुशैली, बहुभाषा परिवर्तन तक बहुक्षेत्रीय भाषा-प्रकार का सामूहिक एवं समाकलित रूप है। अतः द्वितीय भाषा-शिक्षण की आरम्भिक अवस्था में भाषा-शिक्षण का कार्य पर्याप्त कुशल समर्थ शिक्षकों द्वारा किया जाना विद्यार्थी-हित में है।

4.2.11. भाषण कौशल के अंग

भाषा के चारों कौशलों में भाषण एक जटिल कौशल माना गया है। इसमें एक ओर यह अभिव्यक्त किये जाने वाले भावों से जुड़ा है तो दूसरी और कथ्य की अभिव्यक्ति से जो स्वयं में भाषा की विविध संरचना अवस्थाओं से जुड़ी है। मातृभाषा या द्वितीय भाषा का अध्येता भाषा-अधिगम के समय अपनी स्मृति में शब्दों के अर्थ, वाक्य संरचना तथा प्रयोग का अभ्यास करता है। इस अभ्यास का विकास भाषा के व्यवहार रूप के श्रवण, निरीक्षण एवं प्रयोग से होता है। इस प्रकार भाषण कौशल के दो मुख्य अंग हैं। आरेख के माध्यम से इन्हें निम्नलिखित प्रकार प्रस्तुत किया जा रहा है –

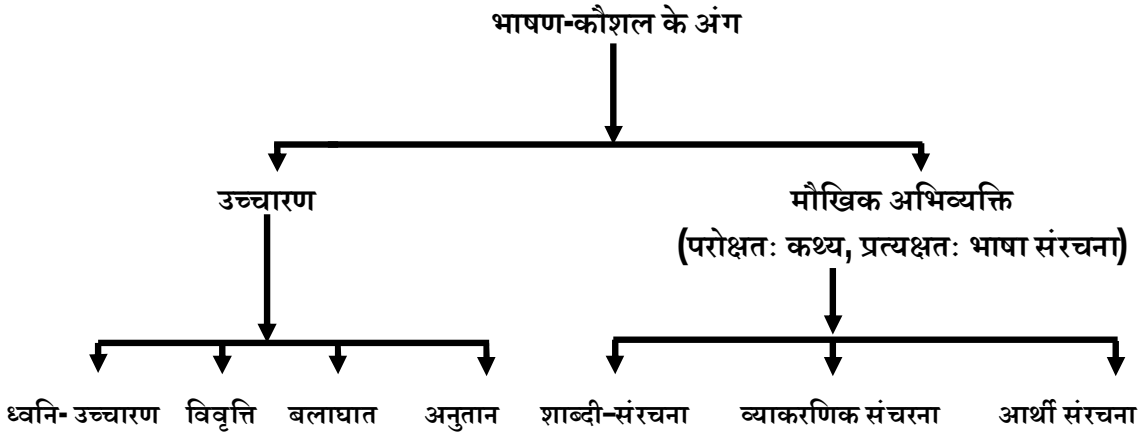

4.2.11.1. उच्चारण

उच्चारण का सम्बन्ध (मानक) ध्वनियों के (शुद्ध) उच्चारण, बलाघात, विवृत्ति और अनुतान से है। मातृभाषा में उच्चारण से सम्बद्ध इन सभी पक्षों का अभ्यास भाषा के सहज प्रयोग तथा अनुकरण से आदत के रूप में विकसित होता है, किन्तु द्वितीय भाषा-शिक्षण में इन पक्षों के विकास के लिए विशेष प्रयत्न की आवश्यकता होती है। उच्चारण की समस्या ध्वनि, शब्द तथा वाक्य तीनों स्तरों पर होती है। ध्वनि स्तर पर उच्चारण स्थान और उच्चारण प्रयत्न के ज्ञान की कमी के कारण शुद्ध ध्वनि उच्चारण में गलतियाँ होती है। शब्द स्तर पर ध्वनि

संयोगों के गलत उच्चारण, ठीक जगह पर बलाघात का प्रयोग न करना आदि के कारण गलतियाँ होती है। वाक्य स्तर पर मुख्य रूप से विराम-चिह्नों का उचित प्रयोग न करना तथा अनुतान का गलत प्रयोग के कारण गलतियाँ पाई जाती हैं।

उच्चारण शिक्षण का सर्वोत्तम स्तर प्राथमिक स्तर है और इसी समय उचित शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में शुद्ध उच्चारण की आदत डालनी चाहिए। किन्तु देखा जाता है कि प्राथमिक स्तर से उत्तीर्ण होकर आने वाले विद्यार्थियों में भी उच्चारण की अशुद्धियाँ पाई जाती हैं। इस स्थिति को देखते हुए माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक कक्षाओं में भी उच्चारण शिक्षण की व्यवस्था आवश्यक है, जिसके दो रूप हो सकते हैं –

(1) पूर्वार्जित अशुद्ध उच्चारण का निराकरण कर शुद्ध उच्चारण की आदत डालना।
(2) नए शब्दों के उच्चारण का ज्ञान और उनके प्रयोग का अभ्यास।

माध्यमिक स्तर पर उच्चारण शिक्षण के लिए पृथक् से समय दे पाना सरल नहीं है। इसलिए भाषा-शिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रासंगिक रूप से उच्चारण शिक्षण के लिए अवसर प्रकल्पित किया जाना चाहिए, यथा –

(i) गद्य-पद्य शिक्षण समय सस्वर वाचन के समय एवं भाषा कार्य के अन्तर्गत मौखिक अभिव्यक्ति शिक्षण के समय।
(ii) अतिरिक्त शिक्षण की व्यवस्था के तहत बोलने का अवसर दिया जाए।
(iii) शैक्षिक सत्रारम्भ में भाषा-शिक्षण का समय एक-दो सप्ताह तक केवल उच्चारण तथा वर्तनी शिक्षण के लिए दिया जाए।

4.2.11.1.1. उच्चारण-शिक्षण के पक्ष

उच्चारण-शिक्षण के मुख्य चार पक्ष माने गए हैं – ध्वनि उच्चारण-शिक्षण, बलाघात उच्चारण-शिक्षण, विवृत्ति उच्चारण-शिक्षण और अनुतान उच्चारण-शिक्षण।

1. ध्वनि उच्चारण शिक्षण

ध्वनि उच्चारण शिक्षण के अन्तर्गत ध्वनियों तथा ध्वनि संयोगों का उच्चारण कराया जाए। द्वितीयभाषा अध्येता के समक्ष सबसे पहले द्वितीय भाषा की ध्वनियों के शुद्ध उच्चारण की समस्या आती है। ध्वनियों के शुद्ध उच्चारण-शिक्षण के लिए शुद्ध श्रवण-अभ्यास आवश्यक है। अतः उच्चारण शिक्षण के लिए अनुकरण अभ्यास, सुनो और कहो अभ्यास, मौखिक पठन, गीत के द्वारा अभ्यास इत्यादि कराए जा सकते हैं। क्योंकि वह अन्य भाषा की ध्वनियों को अपनी मातृभाषा की ध्वनियों के रूप में ही सुनता है तथा तदनुरूप उच्चारण करता है।

2. बलाघात उच्चारण शिक्षण

बलाघात उच्चारण शिक्षण में अन्य भाषा के उन बिन्दुओं को चुना जाए जो विद्यार्थी की मातृभाषा में न हो तथा मातृभाषा के ऐसे बलाघात बिन्दु जो अन्य भाषा सीखने में व्याघात उपस्थित कर रहा हो। इसके लिए उच्चारण अनुकरण-अभ्यास कराया जाना चाहिए।

3. विवृति उच्चारण-शिक्षण

विवृति उच्चारण-शिक्षण में पदबंध स्तर पर व्यंजन तथा स्वर की विवृति और व्यंजन तथा व्यंजन की विवृति सिखायी जाए। पदबंध के अतिरिक्त वाक्य स्तर पर भी विवृति शिक्षण का अभ्यास कराया जाए, जैसे –

रोको मत, जाने दो	–	रोको, मत जाने दो
हराना	–	हरा-आना
चलाना	–	चला-आना

4. अनुतान उच्चारण-शिक्षण

अनुतान उच्चारण-शिक्षण के अन्तर्गत सुर / आवाज का उतार-चढ़ाव सिखाया जाता है। सामान्य कथन को प्रश्नसूचक, स्वीकृति सूचक, आश्चर्यसूचक आदि के रूप में बदल कर कैसे बोला जाता है। इसका अभ्यास कराना आवश्यक है, जैसे –

ऐसा वह कह रहा है।	→	(सामान्य कथन)
ऐसा वह कह रहा है ?	↑	(प्रश्नसूचक)
ऐसा वह कह रहा है !	→	(आश्चर्यसूचक)
ऐसा वह कह रहा है।	↓	(प्रश्न का उत्तर-सूचनात्मक)

4.2.11.2. मौखिक अभिव्यक्ति

मौखिक अभिव्यक्ति-शिक्षण का अर्थ है – विद्यार्थी को लक्ष्यभाषा के माध्यम से अपने भावों-विचारों को सन्दर्भानुसार, धाराप्रवाह एवं प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करना सीखना। सन्दर्भानुसार शब्दों का चयन और उनके प्रयोगों की कुशलता का विकास इस शिक्षण की प्रारम्भिक आवश्यकता है। साथ ही साथ लक्ष्यभाषा की व्याकरणिक संरचना के अनुरूप शब्दों को विशेष क्रम में संयोजित करने की क्षमता को विकसित करना इसका उद्देश्य है। अभिव्यक्ति पक्ष पर अधिकार कराने के लिए विविध प्रकार के वाक्यों-साँचों के अभ्यासों तथा मौखिक वार्तालाप-अभ्यासों का उपयोग किया जाना लाभकारी है।

मौखिक अभिव्यक्ति में उच्चारण, विवृति तथा अनुतान की कुशलता के साथ-साथ वक्ता के मन में उत्पन्न भावों-विचारों की अभिव्यक्ति भी शामिल है। इसके लिए अध्येय भाषा की शाब्दी संरचना, आर्थी संरचना तथा

व्याकरणिक संरचना पर पर्याप्त अधिकार होना आवश्यक है। शिक्षण के सन्दर्भ में इन्हें मौखिक अभिव्यक्ति के तीन घटकों के रूप में विभक्त कर सकते हैं – शाब्दी संरचना-शिक्षण, आर्थी संरचना-शिक्षण, व्याकरणिक संरचना-शिक्षण।

1. शाब्दी संरचना-शिक्षण

शाब्दी संरचना-शिक्षण के अन्तर्गत विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार का विकास किया जाता है। मुख्यतः शब्द दो प्रकार के होते हैं – कोशीय शब्द तथा व्याकरणिक शब्द। कोशीय शब्द का सम्बन्ध बाह्य जगत् तथा मानव-मन के मनोभावों और विचारों से है। अतः भाषा-शिक्षण में इनके विकास का समुचित ध्यान देना आवश्यक है जिससे विद्यार्थी भाषाई संरचना एवं व्यवहार पर पर्याप्त अधिकार पा सकें। व्याकरणिक शब्दों में मुख्य तथा सहायक क्रियाएँ, पूर्व प्रत्यय तथा पर प्रत्यय, संयोजक तथा प्रश्न सूचक शब्द आदि शामिल हैं। इनका अभ्यास आवश्यक है।

2. आर्थी संरचना-शिक्षण

मौखिक अभिव्यक्ति में विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार के विकास के साथ-साथ उन शब्दों के अर्थों से भी परिचित कराना अत्यावश्यक है। मातृभाषा और अन्यभाषा में प्राप्त समान शब्द अर्थ की दृष्टि से कभी-कभी पूर्णतः समान नहीं होते हैं। इन शब्दों की सूची बनाकर उनका अभ्यास कराया जाना चाहिए। साथ ही अन्य भाषा के शब्दों के अर्थ से परिचित कराने के लिए विद्यार्थियों को उस भाषा-भाषी जन समुदाय की संस्कृति से परिचित कराना आवश्यक है।

3. व्याकरणिक संरचना-शिक्षण

मौखिक अभिव्यक्ति शिक्षण का स्वरूप केवल शब्द संरचना और अर्थ संरचना के संयोजन सेनहीं बनता बल्कि व्याकरणिक संरचना के अनुरूप शब्दों को वाक्यों में विशेष क्रम से संयोजित कराते हुए विचारों और भावों की अभिव्यक्ति करना सिखाया जाता है। अन्य भाषा के रूप में हिन्दी की व्याकरणिक संरचना का अभ्यास कराते समय भाषा की व्याकरणिक के अनुरूप कारक, लिंग, वचन, पुरुष, काल, पक्ष तथा वृत्ति, वाच्य एवं अन्विति आदि के प्रयोग का अभ्यास कराना आवश्यक है।

4.2.12. भाषण कौशल (मौखिक अभिव्यक्ति) के उद्देश्य

भाषण में मुख्य उच्चारण है। भाव प्रकटित करने में शुद्ध उच्चारण प्रधान साधन है। निर्दुष्ट उच्चारण एवं स्वच्छ भाषण ये भाषण के मुख्य उद्देश्य हैं। सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. भावों तथा विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने की क्षमता विकसित करना।
2. पूर्ण मनोयोग तथा शुद्ध उच्चारण के साथ बोलने की क्षमता विकसित करना।

3. उचित उतार-चढ़ाव से पूर्ण सम्भाषण करने की कला विकसित करना।
4. मौखिक प्रकाशन के माध्यम से आत्मविश्वास विकसित करना।
5. नवीन शब्दावली से परिचित कराते हुए व्यवहार में लाने की प्रेरणा देना।
6. शब्द-भण्डार की वृद्धि करना।
7. विद्यार्थियों को व्यवहार कुशल एवं समाजकुशल बनाना।

4.2.13. भाषण (मौखिक अभिव्यक्ति) का महत्त्व

मानव की यह प्रवृत्ति है कि वह अपने भावों तथा उद्वेगों को दूसरे व्यक्ति पर प्रकट करना चाहता है, तथा दूसरों की प्रकृति आदतें और विचारों को जानने को इच्छुक रहता है। अतः जीवन में प्रतिपल भाषण की ही शरण लेनी पड़ती है। भाषण के द्वारा ही मानव जीवन के सम्पूर्ण क्रियाकलापों तथा भाषा के अंगों-उपांगों का विवेचन हो जाता है। भाषण कौशल के महत्त्व को निम्नलिखित बातों से जाना जा सकता है –

1. भाषण लिखित भाषा का आधार है।
2. बालक के व्यक्तित्व विकास का प्रारम्भ करने में।
3. भावों को स्वाभाविक रूप से दूसरों के सम्मुख व्यक्त करने में।
4. नवीन तथ्यों एवं बातों की जानकारी प्राप्त करने में।
5. मानवीय जीवन में सामाजिक सम्बन्ध व सामंजस्य बनाने में।
6. अनुकरण की प्रवृत्ति प्रोत्साहित करने में।
7. भाषागत अशुद्धियों को दूर करने में सहायक।

4.2.14. भाषण क्षमता प्रवीणता

हिन्दी भाषा का विद्यार्थी अपने भावों-विचारों को सफलतापूर्वक मौखिक रूप से उसी स्थिति में व्यक्त कर सकता है जब वह अवसर विशेष के लिए प्रसंगानुकूल भावों-विचारों से सम्बद्ध उपयुक्त शब्दावली से परिचित हो, पदों-वाक्यों को शुद्ध संरचना में प्रयोग की योग्यता हो तथा शुद्ध संरचना युक्त वाक्यों की प्रभावकारी शैली में व्यक्त करने की क्षमता रखता हो। डॉ॰ लक्ष्मीनारायण शर्मा ने भाषण-कौशल में प्रवीणता प्राप्त करने की दृष्टि से निम्नलिखित बिन्दु माने हैं, यथा –

1. लक्ष्य भाषा की एकाकी ध्वनियों को शुद्ध उच्चारण कर सकना।
2. दो या अधिक ध्वनि-योग से बने शब्दों / पदों / पदबंधों का शुद्ध उच्चारण कर सकना।
3. प्रसंगोचित भाव-विचारों की अभिव्यक्ति के लिए चुने शब्दों / पदबंधों का शुद्ध वाक्यों में प्रयोग कर सकना।
4. किसी विषय-विशेष से सम्बन्धित भावों-विचारों को अभिव्यक्त कर सकना।

4.2.15. मौखिक अभिव्यक्ति-शिक्षण की विधियाँ

प्राथमिक स्तरीय विद्यार्थियों को पठित विषयों से सम्बन्धित प्रकरणों एवं बातचीत द्वारा मौखिक अभिव्यक्ति को प्रवृत किया जाना चाहिए। वाक्य-गठन, संक्षिप्त वर्णन, सस्वर वाचन, अन्त्याक्षरी, वार्तालाप कहानी-जीवनी, चित्र रचना आदि की सहायता से प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों में मौखिक अभिव्यक्ति की कुशलता विकसित कर सकते हैं।

माध्यमिक स्तर व प्राथमिक पर मौखिक अभिव्यक्ति कुशलता के लिए उपयोग की गई विधियाँ उपयोगी सिद्ध होती हैं। इस स्तर पर उनकी विषय सामग्री भाषा एवं शैली में उत्तरोत्तर परिष्कार एवं गम्भीरता तथा विषय के क्षेत्र में भी विस्तृत व्यापकता लायी जा सकती है। तथा इनके अलावा निम्नलिखित प्रविधियों तथा साधनों का उपयोग मौखिक अभिव्यक्ति शिक्षण में उपयोग किया जा सकता है – वार्तालाप विधि, कहानी विधि, कविता वाचन विधि, अभिनय विधि, प्रतियोगिता विधि तथा परिचर्चा विधि।

1. वार्तालाप विधि

शिक्षक पाठ्यविषय पढ़ाते हुए या अन्य अवसरों पर विद्यार्थियों के साथ वार्तालाप मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करने में सहायक होता है। वार्तालाप में पठित विषयों पर छोटे-छोटे प्रश्नों को पूछते हुए अभ्यास कराया जाता है तथा विद्यार्थियों को भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना होता हैं। शिक्षक के द्वारा विद्यार्थियों के सम्मुख किसी विषय को प्रस्तुत कर बातचीत के लिए उचित क्रिया-विधि सम्बन्धी निर्देश दिया जाए और यह ध्यान रखा जाए कि विद्यार्थी विषय से सम्बन्धित तथा तर्क संगत वार्तालाप कर रहे हैं या नहीं।

2. कहानी विधि

मौखिक अभिव्यक्ति के विकास का प्रमुख साधन है कहानी कहना। इस विधि में विद्यार्थियों को मनोरंजक, शिक्षाप्रद, सरल, संक्षिप्त और ज्ञानवर्धक कहानियाँ सम्मिलित की जाएँ। कहानी को अनेक प्रकार से कहलाया जा सकता है –

(i) कहानी का आरम्भ कर विद्यार्थियों से शेष कहानी कहलाना।
(ii) कहानी का अन्त बताकर उसका पूर्वांश कहलाना।
(iii) रूपरेखा देकर कहानी कहलाना।
(iv) मौखिक कहानी प्रतियोगिता करवाना।

3. कविता वाचन विधि

कविता पाठ मौखिक अभिव्यक्ति का प्रधान अंग है । इस विधि में विभिन्न गीतों, मधुर एवं मनोरंजक कविताओं को सुनते हुए विद्यार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित किया जाता है । विद्यार्थियों की कविता पाठ प्रतियोगिता में रुचि पैदा की जानी चाहिए।

4. अभिनय विधि

अभिनय विधि के अन्तर्गत छोटे-छोटे नाटक, प्रहसन एवं एकांकी का मंचन किया जाता है। पाठ्यपुस्तक में दिए गए नाटकीय पाठों तथा कहानियों पर भी नाटक आयोजित किया जा सकता है। प्रतिभागी विद्यार्थी पात्र के चरित्र के अनुसार उतार-चढ़ाव एवं प्रवाह के साथ संवाद प्रस्तुत करते हैं। इसके द्वारा विद्यार्थियों को आत्मप्रकाशन का अवसर मिलता है एवं चिन्तन, मनन, कल्पना आदि शक्तियों का विकास होता है।

5. प्रतियोगिता विधि

वाद-विवाद, भाषण, अन्त्याक्षरी आदि प्रतियोगिताओं द्वारा मनोरंजन के साथ मौखिक अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान किया जाता है। इसमें विद्यार्थी पूर्व निर्धारित विषयों पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

6. परिचर्चा विधि

यह अभिव्यक्ति की एक सामूहिक विधि है । इसमें किसी एक विषय या प्रश्न पर अनेक विद्यार्थी अपना-अपना मत व्यक्त करते हैं।

4.2.16. पाठ-सार

मानव एक सामाजिक प्राणी है । समाज में भाषा परस्पर भावों-विचारों का साधन है । हिन्दी हमारी राजभाषा और राष्ट्रभाषा भी है। भारत में हिन्दी शिक्षण के दो रूप मिलते हैं – एक तो मातृभाषा-शिक्षण के रूप में तथा दूसरा अन्यभाषा (द्वितीयभाषा) शिक्षण के रूप में । भाषा-शिक्षण में भाषाई कौशल भाषा का व्यावहारिक पक्ष है। उच्चरित भाषा से सम्बन्धित कौशल श्रवण और भाषण हैं । श्रवण-कौशल विकसित करना भाषा-शिक्षण के कौशलात्मक, ज्ञानात्मक, सृजनात्मक, अभिवृत्यात्मक उद्देश्यों की ओर पहला महत्त्वपूर्ण कदम है । जब कोई हमारे सामने अपने भाव-विचार मौखिक भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और हम उसे सुनकर भाव एवं विचार समझते हैं और ग्रहण करते हैं तो हमारी यह क्रिया श्रवण कहलाती है । श्रवण के दो अंग हैं – ध्वनि अभिज्ञान और अर्थ ग्रहण । विद्यार्थियों में श्रवण सामर्थ्य विकसित करने सामान्य श्रवण और रचनात्मक श्रवण के विशेष प्रयास की आवश्यकता होती है । विद्यालय के प्राय: सभी कार्यक्रमों तथा शिक्षण विधियों से इसका परीक्षण रूप से प्रशिक्षण प्राप्त होता रहता है। परन्तु इतना पर्याप्त नहीं है। और भी श्रवण के विकास के लिए सचेत

व प्रत्यक्ष प्रयास करने होंगे। इससे स्वयं विद्यार्थी भी हिन्दी श्रवण के विकास के प्रति सचेत रहेंगे और दत्त चित होकर इसके विकास की ओर अग्रसर हो सकेंगे।

हिन्दी भाषण-शिक्षण में भाषण-शिक्षण का स्थान महत्त्वपूर्ण है। मानव जीवन में प्रतिक्षण भाषण की शरणागत होता है। भाषण के द्वारा ही मानव जीवन के समस्त क्रियाकलापों को सम्पादित करता है। भाषा-शिक्षण में भाषण-कौशल के दो अंग हैं – उच्चारण तथा मौखिक अभिव्यक्ति। उच्चारण का सम्बन्ध शुद्ध उच्चारण, बलाघात, विवृत्ति और अनुतान से है। मौखिक अभिव्यक्ति के तीन घटक हैं – शाब्दी संरचना, आर्थी संरचना और व्याकरणिक संरचना। भाषण में मुख्य उच्चारण है। मौखिक अभिव्यक्ति के कई उद्देश्य निर्धारित हैं। निर्दुष्ट तथा स्वच्छ भाषण मौखिक अभिव्यक्ति के प्रमुख उद्देश्य हैं। मौखिक अभिव्यक्ति का अत्यधिक महत्त्व है। यह भाषण लिखित भाषा का आधार है। विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थियों में मौखिक अभिव्यक्ति के विकास के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। हिन्दी भाषण-क्षमता विकास के विभिन्न उपाय करने चाहिए ताकि हिन्दी भाषा का विद्यार्थी अपने भावों-विचारों को सफलतापूर्वक मौखिक रूप से उसी स्थिति में व्यक्त कर सके।

4.2.17. बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'श्रवण' शब्द किस धातु से बना है ?
   (क) श्रु
   (ख) सृ
   (ग) श्री
   (घ) सीख्

   सही उत्तर (क) श्रु

2. गौण भाषा कौशल हैं –
   (क) वाचन और लेखन
   (ख) लेखन एवं श्रवण
   (ग) केवल पठन
   (घ) कोई नहीं

   सही उत्तर (क) वाचन और लेखन

3. भाषण का सामान्य अर्थ है –
   (क) बोलना
   (ख) देखकर बोलना
   (ग) समझना
   (घ) पढ़ना

सही उत्तर (क) बोलना

4. भाषण कौशल के अंग हैं –
   (क) उच्चारण एवं मौखिक अभिव्यक्ति
   (ख) मौखिक अभिव्यक्ति
   (ग) अर्थ-ग्रहण
   (घ) कोई नहीं

सही उत्तर (क) उच्चारण एवं मौखिक अभिव्यक्ति

5. श्रवण के प्रमुख प्रकार हैं –
   (क) दो
   (ख) चार
   (ग) पाँच
   (घ) सात

सही उत्तर (क) दो

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी श्रवण के साधनों के नाम बताइए।
2. सामान्य श्रवण पर लघु टिप्पणी लिखिए।
3. ध्वनि-उच्चारण शिक्षण को स्पष्ट कीजिए।
4. भाषण-कौशल का महत्त्व समझाइए।
5. हिन्दी भाषण दक्षता विकास पर टिप्पणी लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. श्रवण के प्रकार एवं आधारों का वर्णन कीजिए।
2. भाषण-कौशल के अंगों का वर्णन कीजिए।

4.2.18. व्यवहार

1. हिन्दी श्रवण-कौशल विकास के उद्देश्य क्या हैं ?
2. मौखिक अभिव्यक्ति-शिक्षण की विधियों को लिखिए।
3. भाषण-कौशल के उद्देश्य लिखिए।
4. श्रवण-कौशल प्रवीणता पर टिप्पणी लिखिए।
5. उच्चारण शिक्षण के पक्षों को स्पष्ट कीजिए।

4.2.19. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. मुखर्जी, डॉ॰ श्रीधर नाथ (2013), राष्ट्रभाषा की शिक्षा, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-81124. 30-7
2. अग्रवाल डॉ॰ लता (2009), भाषा-शिक्षण एवं शिक्षण विधियाँ, आगरा, एच.पी. भार्गव बुक हाऊस, ISBN : 978-81-89442-90-3
3. जीत, भाई योगेन्द्र (2013), नूतन हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-93-80510-65-1
4. गुप्त, मनोरम (2005), भाषा-शिक्षण सिद्धान्त और प्रविधि, आगरा, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान
5. प्रसाद, केशव (2011), हिंदी शिक्षण, नई दिल्ली, धनपतराय पब्लिशिंग कंपनी (प्रा.) लिमिटेड, ISBN : 978-93-84559-78-6
6. दुबे, डॉ॰ सत्यनारायण शरतेन्दु (2011), सरल हिन्दी भाषा-शिक्षण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन
7. त्यागी, डॉ॰ एस. के. (2013), हिन्दी भाषा-शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89991-38-9
8. शर्मा, लक्ष्मी नारायण (1993), भाषा 1 एवं 2 की शिक्षण विधियाँ और पाठ नियोजन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर
9. पाण्डेय, डॉ॰ रामशकल (2012), हिन्दी शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-47-1

❖❖❖

खण्ड – 4 : हिन्दी भाषा-शिक्षण (मातृभाषा और अन्य भाषा के सन्दर्भ में)

इकाई – 3 : शब्दावली और व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

4.3.00 उद्देश्य कथन
4.3.01 प्रस्तावना
4.3.02 शब्द की संकल्पना
4.3.03 शब्द तथा प्रकृति
4.3.04 शब्द के भेद
  4.3.04.1 शब्द के व्याकरणिक दृष्टि से भेद
  4.3.04.2 शब्द के विविध दृष्टिकोणों से भेद
4.3.05 शब्दावली का अर्थ एवं प्रकार
4.3.06 शब्दावली-शिक्षण
  4.3.06.1 शब्दावली-शिक्षण की प्रक्रिया
  4.3.06.2 शब्दार्थ-शिक्षण की विधियाँ
4.3.07 हिन्दी शब्दावली तथा शब्द निर्माण
  4.3.07.1 तद्भव शब्द
  4.3.07.2 तत्सम शब्द
  4.3.07.3 देशज शब्द
  4.3.07.4 विदेशी शब्द
4.3.08 हिन्दी शब्दावली तथा व्याकरण
  4.3.08.1 संज्ञा
  4.3.08.2 सर्वनाम
  4.3.08.3 विशेषण
  4.3.08.4 क्रिया
  4.3.08.5 अव्यय
4.3.09 हिन्दी शब्द रचना तथा व्याकरण
  4.3.09.1 उपसर्ग द्वारा शब्द रचना
  4.3.09.2 प्रत्यय द्वारा शब्द रचना
  4.3.09.3 सन्धि द्वारा शब्द रचना
  4.3.09.4 समास द्वारा शब्द रचना
4.3.10 पाठ-सार
4.3.11 बोध प्रश्न
4.3.12 व्यवहार
4.3.13 उपयोगी ग्रन्थ-सूची

4.3.00 उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ में शब्दावली तथा व्याकरण से सम्बन्धित शब्द निर्माण एवं उनके प्रयोग के विभिन्न आयामों की चर्चा की गई है। जैसे – शब्द, शब्द और प्रकृति, उसके भेद, हिन्दी शब्दावली निर्माण में व्याकरण की मूल व्यवस्था तथा शब्दावली-शिक्षण आदि। प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. शब्द की संकल्पना और उसकी प्रकृति को स्पष्ट कर सकेंगे।
ii. शब्द के भेदों को विस्तार से स्पष्ट कर सकेंगे।
iii. शब्दावली का अर्थ एवं प्रकारों को समझ सकेंगे।
iv. शब्दावली-शिक्षण-प्रक्रिया को स्पष्ट कर सकेंगे।
v. शब्दार्थ-शिक्षण की विधियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
vi. हिन्दी शब्दावली तथा शब्द निर्माण प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
vii. हिन्दी शब्द रचना में व्याकरण की व्यवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.3.01 प्रस्तावना

भाषा शिक्षा एवं ज्ञान का प्रमुख आधार है। इसके लिए ही उसकी पूरी व्यवस्थाओं शब्द, वाक्य, व्याकरण आदि का विधान है। जैसे-जैसे व्यक्ति, समाज, ज्ञान-विज्ञान आदि के विषयों का विस्तार होता है, वैसे-वैसे भाषा को अपनी व्यवस्थाओं का विस्तार करना होता है। इसके लिए नए शब्दों का बनना, स्वीकृत होना, आयातित होना, संकरीकरण आदि आवश्यक प्रक्रियाएँ हैं। किसी भाषा की शब्दावली उस भाषा में प्राप्त समस्त शब्दों का योग है। इस योग में उस भाषा की शब्द निर्माण प्रक्रिया भी सम्मिलित रहती है। वर्तमान में हिन्दी भाषा परम्परागत आयामों से आगे बढ़कर नए-नए विषयों और सन्दर्भों में प्रयुक्त हो रही है, तथा बड़ी संख्या में नए और आगत शब्दों की आवश्यकता बढ़ रही है। हिन्दी भाषा का शिक्षण आज भारतवर्ष की सीमाओं को पार करके पूरी दुनिया में प्रचलित है। ऐसे में हिन्दी भाषा को आन्तरिक और बाहरी स्रोतों से नए शब्दों की व्यवस्था करनी है। इसके अन्तर्गत व्याकरण की मूल धातुओं और शब्दों के साथ सन्धि, समास, उपसर्ग एवं प्रत्यय के प्रयोग से नए शब्दों का निर्माण और दूसरे क्षेत्रों से नए शब्दों को ग्रहण करना है। प्रस्तुत पाठ के अन्तर्गत वर्णों एवं शब्दों के संयोग से हिन्दी शब्दावली बनाने व शिक्षण की प्रक्रियाओं का मातृभाषा और अन्य भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में विवरण दिया गया है।

4.3.02 शब्द की संकल्पना

एक अथवा कई अक्षरों से निर्मित सार्थक एवं स्वतन्त्र ध्वनि समूह को शब्द कहते है। शब्द के शाब्दिक या श्रोतव्य रूप को यदि दृष्टि में रखा जाए तो अक्षरों या वर्णों के समुदाय विशेष को शब्द कहा जा सकता है। वाक्य की दृष्टि से जो शब्दों से बनता है, यदि लक्षण किया जाए तो वाक्य के चरमावयवों को शब्द कहते हैं। इसी

प्रकार शब्द और अर्थ के परस्पर सम्बन्ध को दृष्टि में रखकर यदि लक्षण करना चाहें तो कह सकते हैं कि हमारे विचारों के प्रतीक रूप में उच्चरित या लिखित संकेतों को शब्द कहते हैं।

शब्द का शाब्दिक अर्थ ही है – मुख से उच्चरित होने वाली ध्वनि या ध्वनियाँ। लिपि तो इन उच्चरित रूपों का प्रतीक मात्र होती है। शब्द का अर्थ है नाद और नाद का सम्बन्ध ब्रह्म से है; इसलिए भर्तृहरि ने वाक्यपदीय ग्रन्थ में दार्शनिक दृष्टि से शब्द को ब्रह्म कहा है। संक्षेप में मुख से उच्चरित ध्वनि अथवा ध्वनिसमूह शब्द हैं।

शब्द को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है, उनमें से प्रमुख विद्वानों के शब्द के सम्बन्ध में विचार निम्नलिखित हैं –

महाभाष्यकार पतंजलि के अनुसार – "श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धि निग्रहिय प्रयोगेणाभिज्वलतः आकाशदेश: शब्द:।" अर्थात् आकाशव्यापि ध्वनि, श्रवणेन्द्रिय द्वारा श्रुत, बुद्धि द्वारा ग्राह्य एवं प्रयोग द्वारा अभिव्यक्त शब्द है।

बलॉक एन्ड ट्रेगर महोदय ऐसे सार्थक रूपिमों को शब्द कहते हैं जो मूल रूप से प्रयुक्त होते हैं और जिनके सार्थक स्वतन्त्र खण्ड नहीं हो सकते।

अमेरिकन भाषाशास्त्री ब्लूम फील्ड शब्द को न्यूनतम मूल रूप कहते हैं।

इस प्रकार शब्द 'भाषा की लघुतम सार्थक स्वतन्त्र इकाई है जो एक या एकाधिक ध्वनियों से निर्मित होती है। उदाहरणार्थ – र्+आ+म्+अ=राम।

4.3.03 शब्द तथा प्रकृति

पारिभाषिक दृष्टि से वास्तविकता में यदि शब्द का कोई समानार्थी है तो वह है प्रकृति। प्रत्येक शब्द दो भागों में विभक्त होता है –

(i) अर्थतत्त्व – प्रकृति या मूल शब्द
(ii) सम्बन्ध तत्त्व – प्रत्यय एवं उपसर्ग

अर्थतत्त्व जब सम्बन्ध तत्त्व से युक्त होकर आता है तो वह पद कहलाता है। कामता प्रसाद गुरु महोदय का अभिमत है कि "चरम प्रत्यय लगने से पहले शब्द का जो रूप होता है, यथार्थ में वही शब्द है।" यथा – हीनता में 'ता' चरम प्रत्यय है एवं 'हीन' मूल शब्द है। हिन्दी भाषा में कहीं-कहीं प्रकृति और प्रत्यय परस्पर मिले रहते हैं। ऐसे शब्द शून्य प्रत्ययुक्त कहलाते हैं। ये प्रकृति भी और पद भी होते हैं। हिन्दी भाषा की अपनी स्वच्छन्द प्रकृति है।

4.3.04 शब्द के भेद

वर्ण अथवा अक्षरों का ऐसा समूह जिसका कोई अर्थ हो, शब्द कहलाता है। शब्द के दो दृष्टि से भेद किये गए हैं – (i) व्याकरणिक दृष्टि से तथा (ii) विविध दृष्टिकोणों से।

4.3.04.1 शब्द के व्याकरणिक दृष्टि से भेद

प्राचीन तथा नवीन वैयाकरणों ने शब्दों का वर्गीकरण विभिन्न दृष्टिकोण से कई प्रकार से किया है। महर्षि पतंजलि एवं भर्तृहरि ने शब्दों को जाति (गौ आदि) गुण रूप (शुक्ल आदि), क्रिया रूप (चलना आदि), संज्ञा रूप (डित्थ) आदि में विभक्त किया है। शब्दों के सम्बन्ध में विस्तृत विचार निरुक्तकार महर्षि यास्क ने किया। उन्होंने शब्दों के चार भेद किये हैं – (i) नाम (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण) (ii) आख्यात (क्रिया), (iii) उपसर्ग (शब्दों के प्रारम्भ में लगकर उनका अर्थ बदलने वाले शब्दांश) तथा (iv) निपात (अव्यय)।

महर्षि पाणिनि ने सभी शब्दों को रूपावली-प्रक्रिया के आधार पर केवल दो वर्गों – सुप्तिङन्तं पदम् (i) सुबन्तं (नामवाची) अर्थात् संज्ञा सर्वनाम व विशेषण में लगने वाले तथा (ii) तिङन्त प्रत्यय से युक्त शब्द।

पाश्चात्य विद्वान फ्रीज महोदय भी इसी तरह का वर्गीकरण करते हैं। उनके अनुसार शब्द के दो भेद हैं – (i) रूप वर्ग (संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण और अव्यय) तथा (ii) प्रकार्य वर्ग (निर्धारक, विस्तारक, क्रियाविशेषण तथा सहायक क्रिया)

हिन्दी भाषा के कुछ वैयाकरणकारों ने संस्कृत व्याकरण के अनुकरण पर सम्पूर्ण शब्दावली के तीन ही वर्ग किये हैं – (i) संज्ञा, सर्वनाम एवं विशेषण, (ii) क्रिया तथा (iii) अव्यय (इसमें ही प्रत्यय एवं उपसर्गों की गणना की है।)

हिन्दी भाषा के कुछ अन्य व्याकरणकार शब्दों के पाँच भेद करते हैं – (i) संज्ञा, (ii) सर्वनाम, (iii) विशेषण, (iv) क्रिया तथा (v)अव्यय।

4.3.04.2 शब्द के विविध दृष्टिकोणों से भेद

शब्द के विविध दृष्टिकोणों के आधारों पर शब्दों के भेद किये गए हैं – (1) अर्थ के आधार पर, (2) रचना या व्युत्पत्ति की दृष्टि से, (3) उत्पत्ति की दृष्टि से और (4) रूपान्तर की दृष्टि से।

(1) <u>अर्थ के आधार पर</u> : अर्थ के आधार पर शब्द के दो भेद बताये गए हैं –

(क) सार्थक शब्द – राम, देव आदि।
(ख) निरर्थक शब्द – पर, घर, टें आदि।

(2) रचना या व्युत्पत्ति की दृष्टि से : रचना या व्युत्पत्ति की दृष्टि से शब्द के तीन भेद किये गए हैं –

(क) रूढ़ शब्द – ये शब्द अखण्डनीय होते हैं, जैसे – घर , घड़ा आदि।

(ख) यौगिक शब्द – दो शब्दों के योग से बने शब्द, जैसे – विद्यालय, कलाकृति।

(ग) योगरूढ़ शब्द – ऐसे शब्द जो दो शब्दों के योग से बनते है परन्तु दोनों अपना अर्थ त्याग कोई अन्य अर्थ देते हैं, जैसे – गजमुख = गणेश, दिनकर = सूर्य आदि।

(3) उत्पत्ति की दृष्टि से : उत्पत्ति की दृष्टि से शब्द के पाँच भेद माने जाते हैं –

(क) तत्सम शब्द : संस्कृत भाषा से अर्जित शब्द तत्सम शब्द हैं, जैसे – ज्ञान, रात्रि, सम्पत्ति, राजा, भोजन, माता, पिता आदि।

(ख) अर्द्धतत्सम शब्द : उच्चारण में थोड़े परिवर्तन के साथ तत्सम शब्दों के अधिक समीप वाले शब्द अर्द्धतत्सम शब्द हैं, जैसे – चरम (चर्म), धरम (धर्म) करण (कर्ण) परव (पर्व) आदि । अधिकांश भाषाशास्त्री अर्द्धतत्सम शब्द कहना उचित नहीं समझते, उनके अनुसार ये सभी तद्भव शब्द हैं।

(ग) तद्भव शब्द : संस्कृत भाषा के ऐसे शब्द जिनमें उच्चारण की सुविधा को ध्यान में रखते हुए बदलाव आ गया वे शब्द तद्भव शब्द हैं, जैसे – बरस, धीरज, हाथ, दूध, किशन आदि। अंग्रेजी, फ्रेंच, अरबी-फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का तद्भवीकरण हिन्दी भाषा ने कर लिया है, यथा – लालटेन, कचेहरी तथा खेतीबाड़ी आदि।

(घ) देशज शब्द : देशज शब्द ऐसे शब्द हैं जो परम्परा से अपने आप भाषाओं में आते गए हैं तथा इनका साक्षात् सम्बन्ध लोगों से रहा है। इनकी व्युत्पत्ति देना असम्भव होता है, जैसे – तड़फड़ाना, सटिया, खुरपी, कूड़ा-करकट आदि।

(ङ) विदेशी शब्द : भारत में विभिन्न विदेशी लोगों का शासन रहा है। इनके साथ इनकी भाषा के शब्द भी आये। हिन्दी भाषा ने विदेशी लोगों की भाषा के कुछ शब्दों को अपना भी लिया। ये शब्द अब इतना अधिक प्रयोग में आ रहे हैं कि इनका विदेशीपन प्राय: समाप्त हो चुका है, जैसे – स्कूल, सेमीनार, मशीन, बस, स्टेशन, लाईट, पेंट, हॉस्टल, सर आदि। अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द द्रष्टव्य हैं –

फारसी भाषा के शब्द : चश्मा, आराम, नमाज, हज आदि।

अरबी भाषा के शब्द : तोप, अदालत, स्याही, जिन्दगी, सिक्का आदि।

तुर्की भाषा के शब्द : लाश, चमचा, चेचक, कैंची आदि।

पुर्तगाली भाषा के शब्द : चाबी, अचार, कमीज, अल्मारी, तम्बाकू, संतरा, बाल्टी, गोदाम, गमला, काजू

फ्रेंच भाषा के शब्द : कारतूस, कूपन, अंग़रेज आदि।

जापानी भाषा के शब्द : रिक्शा, पालकी, हाइकू आदि।

डच भाषा के शब्द : तुरूप, बम आदि।

चीनी भाषा के शब्द : चाय, लीची।

तिब्बती भाषा के शब्द : डांडी, लामा।

(4) रूपान्तर की दृष्टि से : रूपान्तर की दृष्टि से हिन्दी का शब्द-भण्डार दो भागों में बाँटा गया है –

(क) विकारी शब्द : जिनके रूप लिंग, वचन, कारक, प्रत्यय के अनुसार बदलते रहते हैं । संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया शब्द विकारी कहे जाते हैं, क्योंकि उपर्युक्त आधारों पर इनके रूप बदलते रहते हैं।

(ख) अविकारी शब्द : जिनके शब्दों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता उन्हें अविकारी शब्द कहते हैं। ये शब्द, अव्यय भी कहलाते हैं । क्रियाविशेषण, सम्बन्धसूचक, समुच्चयबोधक तथा विस्मयादिबोधक शब्द इस वर्ग आते हैं।

4.3.05 शब्दावली का अर्थ एवं प्रकार

भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में मौखिक एवं लिखित दोनों भाषा के रूपों का महत्त्व है, क्योंकि विद्यार्थी को शब्द के लिखित स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कराना भी आवश्यक हो जाता है। शब्दावली उस किसी भी भाषा में प्राप्त समस्त शब्दों का योग है, इस योग में उस भाषा की शब्द-निर्माण-प्रक्रिया सम्मिलित रहती है। इस प्रकार शब्दावली उस भाषा के समस्त मुक्त, आबद्ध रूपों, उनके संयोजन से निर्मित शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों, वाक्यांशों आदि सबको अपने में समाहित कर लेती है।

प्रत्येक भाषा में शनैः शनैः नवीन शब्दों के निर्माण तथा अर्जन की प्रक्रिया भी उसके प्रवाह के साथ बदलती रहती है। प्रथम भाषा का विद्यार्थी धीरे-धीरे अपने वातावरण से अनेक शब्दों, मुहावरों आदि का अर्थ एवं प्रयोग सहज ही सीखता रहता है। किन्तु विद्यालय में वह शब्दावली का औपचारिक शिक्षण प्राप्त न करें तो उसका शब्द-भण्डार अति सीमित रह जाए और उसकी अभिव्यक्ति में स्पष्टता, प्रभावपूर्णता नहीं होती है। द्वितीय भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में भी शब्दावली शिक्षण की आवश्यकता सर्वदा होती है।

शब्दावली का वर्गीकरण व्यक्ति, पुस्तक, शब्दकोश तथा भाषा के सन्दर्भ में किया जाता है। शिक्षण की दृष्टि से शब्दावली को विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जाता है जैसे – आधारभूत शब्दावली, उपयोगी / सक्रिय शब्दावली, परिचेय / निष्क्रिय शब्दावली, व्याकरणिक शब्दावली तथा कोशीय शब्दावली।

4.3.06 शब्दावली-शिक्षण

प्रथमभाषा तथा अन्यभाषा (द्वितीयभाषा) के सन्दर्भ में प्रत्येक स्तर पर शब्दावली के मानक उच्चारण, वर्तनी तथा प्रयोग शिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रथम भाषा के और द्वितीय भाषा के सन्दर्भ में अध्येय भाषा की असीमित शब्दावली को सिखाना न तो सम्भव है और न आवश्यक। अतः प्रत्येक स्तर पर शब्दावली का उतना ही और वही अंश सिखाया जाए जिसका जानना विद्यार्थी के लिए आवश्यक हो । शब्दावली-शिक्षण का चरमोद्देश्य शब्दों का सन्दर्भोचित प्रभावशाली प्रयोग करने की क्षमता विकसित करना है।

4.3.06.1 शब्दावली-शिक्षण की प्रक्रिया

प्रथमभाषा या द्वितीयभाषा के सन्दर्भ में हिन्दी शब्दावली-शिक्षण की प्रक्रिया का स्वरूप निम्नलिखित होना चाहिए –

1. जिन शब्दों का प्रयोग भाषा में बार-बार होता है उनके शिक्षण को प्राथमिकता दी जाए।
2. जो शब्द विद्यार्थी के लिए उपयोगी व व्यवहार योग्य हो उनके शिक्षण पर बल दिया जाए।
3. विद्यार्थी के वातावरणीय स्वानुभव तथा परानुभव पर आधारित शब्दों के शिक्षण की सीमा निश्चित की जाए।
4. विद्यार्थी के आस-पास सम्बन्धित पदार्थ के शब्दों के शिक्षण में प्राथमिकता दी जाए।
5. सीखे और सिखाए गए शब्दों का प्रयोग व्यवहार में विभिन्न सन्दर्भों में कराया जाए।

4.3.06.2 शब्दार्थ-शिक्षण की विधियाँ

'शब्द और अर्थ' शब्द का सत्य स्वरूप अर्थ में निहित है। शब्द रटना अल्प फल का द्योतक है, अर्थ से टक्कर लेना महती उपलब्धि है। अर्थ से रस और रस से योग की सम्प्राप्ति होती है। साधारण जन शब्द के चक्रव्यूह में पार्थ-पुत्र की तरह असहाय हो जाते हैं। भाषा में प्रयुक्त शब्द उसका शरीर है जबकि अर्थ उसकी आत्मा है। जिस प्रकार शरीर को देखा जाता है और आत्मा की अनुभूति होती है, उसी प्रकार शब्द को सुना, बोला या देखा जा सकता है, किन्तु उसके अर्थ की अनुभूति नहीं की जा सकती है। किसी भाषा के किसी शब्द का अर्थ उस भाषा के बोलने वाले लोगों द्वारा स्वीकृत मानसिक प्रतिबिम्ब है। एक ही शब्द के विभिन्न प्रसंगों-परिवेशों में प्रतीत होने वाले विभिन्न अर्थ उस के अर्थ छाया भेद होते हैं। एवं इस प्रकार किसी शब्द से प्रकट होने वाले अभिप्रायों की एक सीमा 'अर्थ परिधि' निश्चित की जा सकती है। अर्थ परिधि में एक अर्थ उसके केन्द्र में रहता है जिसे शब्द का मूलार्थ या कोशीय अर्थ कहा जाता है। अर्थग्रहण तथा ज्ञान की प्रक्रिया में कोई विभाजन-सीमा रेखा न हो। अर्थ का साक्षात्कार ही शब्द का सच्चा ज्ञान है। अर्थग्रहण प्रक्रिया के तीन सोपान हैं –

(क) ज्ञातव्य शब्द का किसी माध्यम से प्रत्यक्षीकरण।
(ख) प्रत्यक्षीकरण का समान या विभिन्न सन्दर्भों, प्रसंगों में प्रत्यभिज्ञान।
(ग) प्रत्यक्षीकरण के प्रत्याभिज्ञान का धारण अर्थग्रहण।

भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में शब्दों का ज्ञान प्रदान करना ही पर्याप्त नहीं है, वरन् उनकी अर्थग्रहण क्षमता की वृद्धि करना अत्यावश्यक है। मातृभाषा तथा अन्यभाषा के सन्दर्भ में शब्दार्थ-शिक्षण के लिए कई विधियों का उपयोग किया जाता है, जैसे – पदार्थ-प्रदर्शन विधि, पदार्थ-स्पर्शन विधि, वस्तु-आस्वादन विधि, वस्तु प्रतिरूप-प्रदर्शन विधि, क्रिया-प्रदर्शन विधि, चित्र-प्रदर्शन विधि, वाक्य-प्रयोग विधि, सन्धि-विच्छेद विधि, समास-विग्रह विधि, सन्दर्भ-कथन विधि, रेखाचित्र-अंकन विधि, पर्याय कथन विधि, व्याख्या-कथन विधि, विलोम-कथन विधि, व्युत्पत्ति-कथन विधि, तत्सम-तद्भव कथन विधि और रूपान्तरण कथन विधि।

(1) पदार्थ-प्रदर्शन विधि : इस विधि में प्रत्यक्ष रूप से कलम, पुस्तक, कपड़ा, जूता आदि को दिखाया जाता है।

(2) पदार्थ-स्पर्शन विधि : इस विधि में पदार्थों का स्पर्शन कराते शब्दार्थ-शिक्षण किया जाता है, जैसे – खुरदरी (लकड़ी), पैनी (घुरी), मुलायम (कपड़ा) आदि।

(3) वस्तु-आस्वादन विधि : इस विधि में वस्तु के स्वाद का शब्दार्थ-शिक्षण किया जाता है, जैसे – मीठा (शहद) कसैला (आवला) चरपरी (मिर्च) आदि।

(4) वस्तु प्रतिरूप-प्रदर्शन विधि : इस विधि में वस्तुओं का प्रतिरूप प्रदर्शन करके शब्दार्थ-शिक्षण किया जाता है, जैसे – जहाज, बस, चरखा, वायुयान आदि।

(5) वाक्य प्रयोग विधि : इस विधि में वाक्य प्रयोग करके शब्दार्थ-शिक्षण किया जाता है, जैसे – 'क्रोध' शब्द से वाक्य प्रयोग – "जब बालक ने पुस्तक फाड़ी तो माँ को बहुत 'क्रोध' आया।" इसी प्रकार खाना, शक्ति आदि का प्रयोग।

(6) समास-विग्रह विधि : इस विधि में समासयुक्त शब्द का शिक्षण विग्रह करके शिक्षण किया जाता है, जैसे – प्रतिदिन का विग्रह हर दिन, रेलयात्रा – रेल से यात्रा, राजपुत्र – राजा का पुत्र, राम-लक्ष्मण – राम और लक्ष्मण, पीताम्बर – पीले हैं वस्त्र जिसके आदि।

(7) विलोम कथन-विधि : इस विधि में शब्दों को समझाने उनका विलोम करके शिक्षण करते हैं, यथा – आकाश × पाताल, शुभ × अशुभ, लाभ × हानि, नरक × स्वर्ग, राजा × रंक आदि।

(8) तत्सम-तद्भव विधि : इस विधि में शब्दार्थ शिक्षण निम्नलिखित प्रकार से किया जाता है – कँगला-कँकाल > कगाल > कँगला, राखी-रक्षिका > रक्खिआ > राखी आदि।

(9) रूपान्तरण विधि : इस विधि में शब्दार्थ शिक्षण में मूल शब्द के रूपान्तरण का शिक्षण होता है, जैसे – बच्चा-बचपन, बूढ़ा-बुढ़ापा, बुद्धि-बुद्धिमान आदि।

4.3.07 हिन्दी शब्दावली तथा शब्द निर्माण

भाषा का कार्य ज्ञान, भाव, इच्छा आदि की अभिव्यक्ति है। इसके लिए ही उसकी पूरी व्यवस्थाओं, शब्द, वाक्य, व्याकरण आदि का विधान है। मातृभाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थी प्राथमिक स्तर से ही हिन्दी के प्रचलित रूप के साथ-साथ हिन्दीभाषी क्षेत्र की उपभाषाओं या बोलियों से आगत शब्दों को भी सीखते हैं। अन्यभाषा (द्वितीयभाषा) के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले विद्यार्थी सामान्यतः उच्च स्तर पर ही हिन्दी की उपभाषाओं या बोलियों के शब्दों की परिनिष्ठित हिन्दी की शब्दावली के साथ सीखते हैं। परिनिष्ठित हिन्दी की शब्दावली में तद्भव शब्द , तत्सम शब्द, देशज शब्द तथा विदेशी शब्द पाये जाते हैं। इनका विवरण आगे दिया जा रहा है –

4.3.07.1 तद्भव शब्द

तद्भव का अर्थ है, 'उससे बना हुआ'। 'उससे' अर्थात् 'संस्कृत भाषा के शब्द से'। संस्कृत के जिन शब्दों को थोड़ा-बहुत रूप परिवर्तन के साथ उसी अर्थ में हिन्दी भाषा में स्वीकार कर लिया गया है, जैसे – हस्त से हाथ, दुध से दूध, चक्र से चक्कर, वर्ष से बरस, घृत से घी इत्यादि तद्भव शब्दों के कुछ उदाहरण हैं।

4.3.07.2 तत्सम शब्द

तत्सम का अर्थ है – उसके समान। यहाँ उसके शब्द का संकेत संस्कृत भाषा की ओर है। संस्कृत हिन्दी भाषा की जननी है। संस्कृत से हिन्दी तक यात्रा काफी लम्बी है। संस्कृत के बहुत से शब्दों के रूपों में अनेक प्रकार के बदलाव आए, परन्तु फिर भी अनेक शब्द अपरिवर्तित रह गए। उनके रूपों और अर्थों में कोई बदलाव नहीं हुआ, और हिन्दी भाषा में प्रयोग किये जा रहे हैं, जैसे – सूर्य, माता, पिता, विद्या, सर्प, नारी, राजा आदि तत्सम शब्दों के कुछ उदाहरण हैं।

4.3.07.3 देशज शब्द

हिन्दी भाषा ने अपने प्रयोग क्षेत्र के आस-पास प्रचलित सभी भाषाओं और बोलियों से अपने शब्द निर्माण में योगदान लिया है। हिन्दी भाषा में हिन्दी की बोलियों और प्रान्तीय भाषाओं से शब्द शामिल हैं, इन शब्दों को देशज शब्द कहते हैं। जैसे – नितान्त, चालू, बाजू, इडली, डोसा आदि।

4.3.07.4 विदेशी शब्द

विदेशी भाषाओं से अर्जित या आगत शब्दों का प्रयोग हिन्दी में बड़ी संख्या में होता है। हिन्दी में विदेशी भाषाओं के शब्दों का समायोजन इतनी सहजता से हुआ है कि अनेक शब्दों के विदेशी होने का आभास भी नहीं होता है। जैसे – स्कूल, स्टेशन, नीलाम, किताब, औरत, रिक्शा आदि।

4.3.08 हिन्दी शब्दावली तथा व्याकरण

जिस शास्त्र में भाषा के अंग-प्रत्यंग का विवेचन और विश्लेषण होता है तथा उसके शुद्ध रूप और प्रयोग का निरूपण होता है, उसे व्याकरण कहते हैं। हिन्दी शब्दावली के शब्द व्याकरण कोटियों की दृष्टि से मुख्य पाँच वर्गों में विभक्त किये जाते हैं – संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और अव्यय। प्रथमभाषा तथा द्वितीयभाषा के शिक्षण के समय शब्दावली चयन में यह वर्गीकरण अपना विशेष स्थान रखता है।

4.3.08.1 संज्ञा

किसी व्यक्ति, जाति, पदार्थ, भाव या गुण के नाम को संज्ञा कहते है। संज्ञा पाँच प्रकार की हैं। व्यक्तिवाचक, द्रव्यवाचक, जातिवाचक, समूहवाचक तथा भाववाचक। जैसे – राम, पानी आदि।

4.3.08.2 सर्वनाम

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्दों को सर्वनाम कहते हैं। जैसे – यह, कुछ, कौन, क्या, मैं, जो आदि।

4.3.08.3 विशेषण

संज्ञा शब्द या सर्वनाम शब्द की विशेषता (गुण, दोष, संख्या, परिमाण) बताने वाले शब्द को विशेषण कहते हैं। जैसे – गन्दा जल।

4.3.08.4 क्रिया

जिससे किसी कार्य के होने या करने का बोध हो उसे क्रिया कहते हैं। जैसे – जाना, खाना, पढ़ना आदि।

4.3.08.5 अव्यय

लिंग, वचन अथवा कारक के प्रभाव से जिन शब्दों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता वह अव्यय कहलाता है। अव्यय को आविकारी भी कहते हैं। इसके चार प्रकार हैं – क्रियाविशेषण, सम्बन्धबोधक, समुच्चयबोधक तथा विस्मयादिबोधक।

4.3.09 हिन्दी शब्द रचना तथा व्याकरण

वर्तमान समय में हिन्दी भाषा परम्परागत आयामों से आगे बढ़कर नए-नए विषयों और सन्दर्भों में भी प्रयुक्त हो रही है। इस कारण बड़ी संख्या में नए और आगत शब्दों की आवश्यकता बढ़ रही है। इस ज़रूरत की पूर्ति के लिए हिन्दी को आन्तरिक और बाहरी स्रोत से नए शब्दों की व्यवस्था करनी है। इसका एक माध्यम है व्याकरण में मौजूद व्यवस्थाओं से नए शब्दों का निर्माण और दूसरा है विशेष क्षेत्रों से नए शब्दों का ग्रहण। आज हिन्दी भाषा में अन्य भाषाओं के शब्दों का आगमन तथा नए शब्दों का सृजन तेजी से हो रहा है। व्याकरण से प्रभावित होने के कारण शब्दों के निर्माण की अपनी विशेष व्यवस्था है। इसके अन्तर्गत धातुओं और शब्दों के साथ सन्धि, समास, उपसर्ग एवं प्रत्यय के प्रयोग से नए शब्दों की रचना की जाती है।

4.3.09.1 उपसर्ग द्वारा शब्द रचना

शब्दों के आगे जुड़कर उनके अर्थ में बदलाव लाने वाले शब्दांशों को उपसर्ग कहा जाता है। उपसर्ग के रूप में प्रयोग होने वाले शब्दांश हैं जो सार्थक तो हैं लेकिन वह अर्थ शब्दों के साथ जुड़ने पर ही उजागर होता है। उपसर्ग का प्रयोग बिना शब्दों के साथ जुड़े यानी स्वतन्त्र रूप में नहीं होता। उपसर्ग किसी शब्द के साथ जुड़कर अधोलिखित कार्य करते हैं –

(i) शब्द के अर्थ में नवीन विशेषता देना।
(ii) शब्द के मूल अर्थ को बदल देना।
(iii) शब्द के अर्थ में कोई अन्तर लाना।

हिन्दी में प्रयोग होने वाले उपसर्गों में से ज्यादातर संस्कृत से आए हैं। इसके अलावा संस्कृत के कुछ अव्यय भी हिन्दी में उपसर्गों के तौर पर प्रयोग होते हैं। हिन्दी शब्द-भण्डार में शामिल उर्दू और अरबी-फारसी के शब्दों के साथ इन्हीं भाषाओं के उपसर्गों का प्रयोग होता है। इस प्रकार हिन्दी में संस्कृत, हिन्दी, हिन्दी की अधीनस्थ बोलियों और उर्दू अरबी-फारसी के उपसर्गों का प्रयोग होता है। इन उपसर्गों का प्रयोग करके हिन्दी में बहुत से शब्दों का निर्माण और अर्थ विस्तार हुआ है। संस्कृत में 22, हिन्दी में 12 तथा उर्दू में 19 उपसर्ग माने गये हैं। उर्दू के सारे उपसर्ग अरबी-फारसी से लिये गये हैं।

संस्कृत के उपसर्ग : प्र, परा, अप्, सम्, अनु, अव, निस्, निर, दुस्, दुर्, वि, आ, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप।

हिन्दी के उपसर्ग : अध, उन, दो, तिन, चौ, बिन, अन, औ, दु, नि, कु तथा सु।

उर्दू के उपसर्ग : अल्, ऐन, कम, खुश, गैर, दर, ना, फिल, बद, बुरा, बर, बा, बिल, बिला, बे, ला, सर, हम, हर।

उपसर्गों से शब्द रचना निम्नलिखित प्रकार होती है –

1. संस्कृत उपसर्ग से शब्द रचना प्रयोग

उपसर्ग	अर्थ	प्रयोग
प्र	अधिक, आगे	प्रगति, प्रबल
परा	पीछे, उल्टा	पराभव, पराक्रम
अप्	दूर, अभाव, बुरा	अपहार, अपमान
सम्	पूर्ण, ठीक, संयोग	सम्मान, संगम
अनु	पीछे, साथ	अनुगमन, अनुरूप

अव	हीनता, पतन	अवनत अवगुण
निस्	निषेध, रहित	निर्दोष, निर्गम
निर्	बिना, निषेध	निराधार, निर्जीव
दुस्	बुरा, कठिन	दुष्कर्म, दुर्गम
दु्	बुरा, कठिन	दुर्गुण , दुस्साहस
वि	विना, विशेषता	वियोग, विज्ञान
आ	से, तक	आकण्ठ, आगमन
नि	पूरी तरह नियुक्त	निवास
अधि	श्रेष्ठ, प्रमुख	अधिपति, अध्यक्ष
अपि	फिर भी	अपितु
अति	अधिक, उल्लंघन	अत्यन्त, अतिक्रमण
सु	अच्छा, सुन्दर	सुभाषित, सुमन
उत्	ऊपर, उन्नति	उद्गम, उत्साह
अभि	ओर, सामने	अभिमुख, अभ्यास
प्रति	की ओर, उल्टा	प्रतिदिन, प्रतिकूल
परि	सर्वत्र, पूर्णतः	परिधि, परिपूर्ण
उप	छोटा, समीप	उपाध्यक्ष, उपनिषद्

2. हिन्दी के उपसर्ग से शब्द रचना

उपसर्ग	अर्थ	प्रयोग
अध	आधा, अपूर्ण	अधमरा, अधपका
उन	एक कम	उन्नीस, उनतीस
दो	दो	दोबारा, दोगुना
तिन	तीन	तिबारा, तिराहा
चौ	चार	चौबारा, चौराहा
बिन	अभाव	बिनदेखा, बिनब्याहा
अन	बिना	अनकहा, अनजाना
औ	हीन	औगुन, औसर
दु	बुरा	दुबला , दुराव
नि	अभाव, विशेष	निहत्था, निखट्टू
कु	बुरा, हीन	कुपुत्र, कुकर्म
सु	श्रेष्ठ, साथ	सपूत, सुयोग, सुजान

3. उर्दू के उपसर्ग से शब्द रचना

उपसर्ग	अर्थ	प्रयोग
अल्	निश्चित	अलबत्ता, अलविदा

ऐन	ठीक, पूरा	ऐनवक्त, ऐनजवानी
कम	थोड़ा	कमजोर, कम अक्ल
खुश	अच्छा, शुभ	खुशकिस्मत, खुशखबरी
गैर	भिन्न, निषेध	गैरकानूनी, गैरमुल्क
दर	में, बीच	दरअसल, दरमियान
ना	अभाव, नहीं	नामंजूर, नाराज
फिल्	में, प्रति	फिलहाल, फीसदी
बद	बुरा	बदनाम, बदबू
बुरा	अशुभ	बदजबान, बदहजमी
बर	ऊपर, पर	बराबर, बरदास्त
बा	साथ, अनुसार	बाकायदा, बाइज्जत
बे	बिना	बेकसूर, बेवजह
ला	बिना	लाचार, लापरवाह
सर	प्रमुख	सरताज, सरपंच
हम	समान	हमवतन, हमउम्र
हर	प्रत्येक	हर रोज, हर साल

4.3.09.2 प्रत्यय द्वारा शब्द रचना

शब्दों के बाद जो अक्षर या अक्षर समूह लगकर उन शब्दों का अर्थ परिवर्तित कर देते हैं, वे प्रत्यय कहलाते हैं। शब्दों का अर्थ परिवर्तन का तात्पर्य है – मूल शब्द के अर्थ में विस्तार ला देना। भाषा वैज्ञानिक शब्दावली में प्रत्यय सम्बन्ध तत्त्व है। मूल शब्द को अर्थतत्त्व कहा जाता है। इसी अर्थतत्त्व से बाद में जुड़कर सम्बन्ध तत्त्व (प्रत्यय) शब्द के अर्थ में विस्तार संकोच अथवा वैशिष्ट्य ला देते हैं। प्रत्यय अविकारी शब्दांश हैं। संस्कृत व्याकरण में सुप्, तिङ्, तद्धित, कृत् और स्त्री प्रत्यय होते है। संस्कृत प्रातिपदिकों में लगने वाले प्रत्यय सुप् प्रत्यय कहलाते हैं और इनसे जो शब्द बनता है, उसे रूप कहते है। जो प्रत्यय इन रूपों में लगकर इनमें अर्थ परिवर्तन ला देते हैं वे तद्धित कहलाते हैं, जैसे –

बालकः बालकौ बालकाः	–	(सुप्)	(रूप)
बालकपन, बालपन	–	(तद्धित)	(पन प्रत्यय)

इसी प्रकार किया में (धातु में) लगने वाले प्रत्यय तिङ् कहलाते हैं, जैसे – पठति, पठतः, पठन्ति – धातु रूप हैं (तिङ् प्रत्यय लगा है) पाठ, पाठन, पठन, पाठक – आदि कृत् प्रत्यययुक्त कृदन्त शब्द हैं। ये सभी शब्द संज्ञा बन गये हैं।

यहाँ दो प्रकार के प्रत्ययों – तद्धित तथा कृदन्त प्रत्ययों से हिन्दी में शब्द निर्माण प्रक्रिया पर चर्चा करेंगे।

1. तद्धित प्रत्यय

संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्दों से जुड़कर उनमें अर्थ परिवर्तन करने वाले प्रत्यय तद्धित कहलाते हैं। हिन्दी के तद्धित प्रत्ययों और उनसे बने शब्दों का विवरण नीचे किया जा रहा है। हिन्दी में दो प्रकार के तद्धित हैं – संस्कृत से आगत तद्धित तथा हिन्दी के निजी तद्धित। संस्कृत से आगत तद्धित प्रत्ययों के निम्नलिखित कार्य हैं –

(i) जातिवाचक संज्ञा से भाववाचक संज्ञा बनाना –

जातिवाचक संज्ञा	**तद्धित प्रत्यय**	**भाववाचक संज्ञा**
शिक्षक	त्व्	शिक्षकत्व
शिशु	अ	शैशव
वीर	ता	वीरता
पण्डित	य	पाण्डित्य
भाव	ना	भावना

(ii) व्यक्तिवाचक संज्ञा से अपत्यवाचक संज्ञा बनाना –

व्यक्तिवाचक संज्ञा	**तद्धित प्रत्यय**	**अपत्यवाचक संज्ञा**
दशरथ	इ	दाशरथि
दिति	य	दैत्य

(iii) विशेषण से भाववाचक संज्ञा बनाना –

विशेषण	**तद्धित प्रत्यय**	**भाववाचक संज्ञा**
सुन्दर	य, ता	सौन्दर्य, सुन्दरता
साधु	ता	साधुता

(iv) संज्ञाओं से विशेषण बनाना –

संज्ञा	**तद्धित प्रत्यय**	**विशेषण**
आदि	म	आदिम
विष्णु	अ	वैष्णव

इस प्रकार ऊपर संस्कृत से आगत शब्दों में संयुक्त होने वाले तद्धित प्रत्ययों परप्रकाश डाला गया है। इनके अतिरिक्त हिन्दी के अपने तद्धित प्रत्यय हैं – आ, ई, आई, अऊ, आउत, आका, आयत, आर, आरा, आरी, आल, आलू, आरा, आन, आनी, आस, आसा, आहट, इन, इयत, ईला, उआ, ऊ, एत, एरा, एड़ी, एर, एल, एला, एली, ओट, ओटा, ओला, औटे, औटी, औड़ा, औडी, औता, औती, की, जा, टा, टी, ड, त, ता, ती, ताई, तना,

था, दा, नी, पा, पन, पना, बाज, री, ल, ला, वंत, वा, वाँ, वाल, वाला, स, सा, सों, सरा, हा, हर, हरा, हार, हला, हाल। हिन्दी के तद्धित प्रत्ययों से निम्नलिखित प्रकार शब्द निर्माण होता है –

(i) संज्ञा तथा विशिष्ट भाव से भाववाचक संज्ञा (तद्धिन्त) –

संज्ञा विशेषण	तद्धित प्रत्यय	भाववाचक संज्ञा
चोर (संज्ञा)	ई	चोरी
काला (विशेषण)	पन	कालापन
मीठा (विशेषण)	स	मीठास

(ii) संज्ञा से कर्तृवाचक संज्ञा (तद्धितान्त) –

संज्ञा	तद्धित प्रत्यय	कर्तृवाचक संज्ञा
सोना	आर	सोनार
लकड़ी	हार	लकड़हार
दूध	वाला	दूधवाला
लाठी	ऐत	लठैत

(iii) संज्ञा से ऊनवाचक संज्ञा (तद्धितान्त) –

संज्ञा	तद्धित प्रत्यय	ऊनवाचक संज्ञा
लोटा	इया	लुटिया
टूक	ड़ा	टुकड़ा
बाबू	आ	बबुआ

(iv) संज्ञा से विशेषण (तद्धितान्त) –

संज्ञा	तद्धित प्रत्यय	विशेषण
सरकार	ई	सरकारी
मामा	एरा	ममेरा
पाँच	वाँ	पाँचवाँ
जहर	ईला	जहरीला
सौत	एला	सौतेला

(v) संज्ञा से सम्बन्धवाचक संज्ञा (तद्धितान्त) –

संज्ञा	तद्धित प्रत्यय	सम्बन्धवाचक संज्ञा
नाना	ई	नानी
बाप	औती	बपौती

घर	आना	घराना
नानी	हाल	ननिहाल

हिन्दी शब्द निर्माण प्रक्रिया में उर्दू तद्धित प्रत्ययों का भी योगदान हैं। ये उर्दू तद्धितान्त प्रत्यय संज्ञा से संज्ञा तद्धितान्त तथा संज्ञा से विशेषण तद्धितान्त प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं। उर्दू के तद्धित प्रत्ययों से निम्नलिखित प्रकार शब्द निर्माण होता है –

(i) संज्ञा से संज्ञा (तद्धितान्त) –

संज्ञा	**तद्धितान्त प्रत्यय**	**संज्ञा तद्धितान्त**
दुकान	दार	दुकानदार
गुनाह	गार	गुनहगार
मेज	पोश	मेजपोश
गुल	शन	गुलशन
इकरार	नामा	इकरारनामा

(ii) संज्ञा से विशेषण (तद्धितान्त) –

संज्ञा	**तद्धितान्त प्रत्यय**	**विशेषण**
हमला	वर	हमलावार
शौक	ईन	शौकीन
गम	गीन	गमगीन
रूह	आनी	रूहानी
माह	वार	माहवार
दिल	दार	दिलदार

2. कृदन्त प्रत्यय

क्रियापद में लगकर इसे नया रूप देने वाले सम्बन्धतत्त्व कृत प्रत्यय कहलाते हैं। कृत प्रत्यय से बने हुए शब्द कृदन्त कहे जाते हैं। ये प्रत्यय क्रिया से मिलकर संज्ञा और विशेषण शब्द बनाते हैं। जैसे –

क्रिया	**कृत प्रत्यय**	**कृदन्त शब्द**
होना	हार	होनहार
कृ	अक	कारक

कृदन्त के दो भेद होते हैं – (i) विकारी तथा (ii) अविकारी। विकारी कृदन्त संज्ञा और विशेषण की तरह प्रयुक्त होते हैं। अविकारी कृदन्त क्रियाविशेषण या सम्बन्धसूचक के समान कभी-कभी प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी क्रियापदों में लगने वाले कृत् प्रत्यय, भाववाचक संज्ञा कृदन्त, कर्तृवाचक संज्ञा कृदन्त, करणवाचक संज्ञा कृदन्त

तथा विशेषण कृदन्त बनाते हैं। हिन्दी के प्रमुख कृत् प्रत्यय निम्नलिखित हैं, जैसे – अ, आ, अक, अन्त, अक्कड, आई, आऊ, आक, आका, आन, आडी, आप, आया, आलू, आवट, आव, आवा, आवना, आवनी, आस, आहर, इया, इयल, ई, ऊ, एरा, ऐया, ऐल, ऐव, ओड़, औटी, ओड़ा, औता, औती, औना, औनी, औवल, क, का, की, जी, त, ता, ती, न्तीऐ, न ना, नी, वाँ, वैया, सार, हार, हा।

(i) भाववाचक संज्ञाएँ – भर + आव = भराव, पढ़ + आई = पढ़ाई।
(ii) कर्तृवाचक संज्ञाएँ – रख + वैया = रखवैया, पढ़ + आकू = पढ़ाकू।
(iii) करणवाचक संज्ञाएँ – बेल + ना = बेलना, कस + औटी = कसौटी।
(iv) विशेषण कृदन्त – झगड़ + आलू = झगड़ालू, लूट + एरा = लुटेरा।

हिन्दी में संस्कृत व्याकरण के कृदन्त प्रत्ययों और उनसे बनने वाले शब्द भी हैं। जैसे –

क्रियापद	**कृत प्रत्यय**	**शब्द**
मुच्	क्त	मुक्त
कृ	तव्य	कर्त्तव्य
कृ	अनीय	करणीय
स्मृ	अनीय	स्मरणीय
चल्	अक	चालक
भिक्ष्	उक	भिक्षुक
शास	अक	शासक
भज्	क्तिन्	भक्ति

इस प्रकार कह सकते हैं कि प्रत्यय प्रक्रिया द्वारा शब्द रचना का ज्ञान शब्दावली-शिक्षण की दृष्टि से पर्याप्त उपयोगी है। इस प्रक्रिया से परिचित विद्यार्थी नवीन शब्द निर्माण तथा उनके अर्थबोध में कठिनाई का कम अनुभव करते हैं।

4.3.09.3 सन्धि द्वारा शब्द रचना

सन्धि प्रक्रिया द्वारा रचित शब्द सन्धियुक्त शब्द होते हैं। हिन्दी व्याकरण में दो या अधिक शब्दों के लिए सन्धि का विधान है। इस प्रक्रिया में जोड़े जाने वाले शब्दों में से प्रथम शब्द के अन्तिम वर्ण और द्वितीय शब्द के प्रथम वर्ण के मध्य सन्धि होती है। व्याकरण के अनुसार वर्णों अर्थात् स्वर और व्यंजनों के मेल हो जाने से उनमें जो बदलाव होता है उसे सन्धि कहा जाता है। जैसे –'राम' और 'आलय' इन दो शब्दों की प्रक्रिया इस प्रकार सम्पन्न होगी –

राम+आलय
राम् (अ+आ) लय

राम् (आ) लय
रामालय।

सन्धि द्वारा नए शब्दों का बनना भाषा को गति और विविधता प्रदान करता है। वर्णों का यह मिलन स्वरों और व्यंजनों के मध्य सम्भव है। हिन्दी भाषा में सन्धि के प्रमुख रूप से तीन भेद माने गये हैं – स्वर सन्धि, व्यंजन सन्धि और विसर्ग सन्धि।

1. स्वर सन्धि

दो स्वर वर्णों की सन्धि स्वर सन्धि कहलाती है। हिन्दी भाषा में स्वर सन्धि के पाँच प्रकारों का व्यवहार प्रमुखता से होता है। इनके नाम हैं – दीर्घ सन्धि, गुण सन्धि, यण सन्धि, वृद्धि सन्धि और अयादि सन्धि। इनका विवरण निम्नलिखित प्रकार है –

(i) दीर्घ सन्धि : जब दो सवर्ण चाहे वे दीर्घ हों या ह्रस्व, आमने-सामने आते है तो दोनों मिलकर दीर्घ हो जाते हैं। इसी प्रकार अन्य मूल शब्दों की भी सन्धि होती है। जैसे –

ग्रन्थ	+	आलय	=	ग्रन्थालय	(अ+आ =आ)
विद्या	+	आलय	=	विद्यालय	(आ+आ=आ)
देव	+	असुर	=	देवासुर	(अ+आ =आ)
विद्या	+	अर्थी	=	विद्यार्थी	(आ+अ =आ)
रवि	+	इन्द्र	=	रवीन्द्र	(आ+अ =आ)
हरि	+	ईश	=	हरीश	(इ+ई=ई)
शची	+	इन्द्र	=	शचीन्द्र	(ई+इ=इ)
लक्ष्मी	+	ईश्वर	=	लक्ष्मीश्वर	(ई+ई=ई)
भानु	+	उदय	=	भानूदय	(उ+उ=ऊ)
लघु	+	ऊर्मि	=	लघूर्मि	(उ+ऊ= ऊ)
बधू	+	उपरि	=	बधूपरि	(ऊ+उ= ऊ)
पितृ	+	ऋण	=	पितृण	(ऋ+ऋ=ऋ)

(ii) गुण सन्धि : यदि अ, आ के बाद इ, ई, उ, ऊ या ऋ, लृ आये तो क्रमशः ए, ओ, अर् तथा अल् गुण हो जाता है। अर्थात् अ, आ + इ, ई = ए, अ, आ + उ, ऊ = ओ, अ, आ + ऋ, ऋ = अर् तथा उन, ओ + लृ = अल् होता है।

देव	+	इन्द्र	=	देवेन्द्र	(अ+इ= ए)
देव	+	ईश	=	देवेश	(अ+ई= ए)
महा	+	इन्द्र	=	महेन्द्र	(आ+इ=ए)
महा	+	ईश	=	महेश	(आ+ई=ए)

सूर्य	+	उदय	=	सूर्योदय	(अ+उ= ओ)
जल	+	उर्मि	=	जलोर्मि	(अ+ऊ=ओ)
महा	+	उत्सव	=	महोत्सव	(आ+उ=ओ)
गंगा	+	ऊर्मि	=	गंगोर्मि	(आ+ऊ=ओ)
सप्त	+	ऋषि	=	सप्तर्षि	(अ+ऋ=अर्)
तव	+	लृकार	=	तवल्कार	(अ+लृ=अल्)

(iii) यण सन्धि : इक् (इ, उ, ऋ, लृ) के स्थान पर यण् (य्, व्, र्, ल्) होता है अच् पर में होने पर। जैसे –

यदि	+	अपि	=	यद्यपि	(इ+अ=य)
सु	+	आगत	=	स्वागत	(ड+आ=व)
धातृ	+	अंश	=	धातृंश	(ऋ+अ=र)
लृ	+	आकृति	=	लाकृति	(लृ+आ=ल)

(iv) वृद्धि सन्धि : अ, आ के संयोग में यदि ए, ऐ ओ, औ, आये तो, ऐ, और, औ हो जाता है। जैसे –

मत	+	ऐक्य	=	मतैक्य	(अ+ऐ= ऐ)
महा	+	औदार्य	=	महौदार्य	(आ+औ=औ)
मम	+	एव	=	ममैव	(अ+ए= ऐ)
महा	+	ओषधि	=	महौषधि	(आ+ओ=औ)

(v) अयादि सन्धि : ए, ऐ, ओ, एवं औ के बाद आगे कोई स्वर आये तो क्रमश: ए को अय्, ऐ को आय्, ओ को अव् तथा औ को आव् हो जाता है। जैसे –

ने	+	अयन	=	नयन	(ए+अ=अय)
गै	+	अक	=	गायक	(ऐ+अ=आय)
पो	+	अन	=	पवन	(ओ+अ=अव)
पौ	+	अक	=	पावक	(औ+अ=आव)

2. व्यंजन सन्धि

व्यंजन के साथ किसी स्वर या व्यंजन के मेल से जो विकार आता है उसे व्यंजन सन्धि कहते हैं। इस सन्धि के होने पर एक या दोनों व्यंजनों के स्थान पर किसी अन्य व्यंजन का प्रयोग होता है। जैसे वाक्+ईश (क्+ई = ग्+ई = गी) = वागीश। हिन्दी में व्यंजन सन्धि के अनेक भेदों का प्रचलन है। इनमें से प्रमुख सन्धियों का परिचय एवं उदाहरण इस प्रकार हैं –

(i) श्चुत्व सन्धि : श्चुत्व का अर्थ है; 'श' और चवर्ग हो जाना। अर्थात् 'स' तथा 'तवर्ग' और 'श' एवं 'चवर्ग' के आमने-सामने होने पर 'स' के स्थान पर 'श' और 'तवर्ग' के स्थान पर 'चवर्ग' हो जाता है। जैसे –

दुस्	+	चरित्र	=	दुश्चरित्र	(स्+च्=श्)
रामस्	+	शेते	=	रामश्शेते	(स्+श्=श्)
सत्	+	चित्	=	सच्चित्	(त्+च्=च्)

(ii) ष्टुत्व सन्धि : ष्टुत्व का अर्थ है; 'ष' और टवर्ग हो जाना। अर्थात् 'स एवं 'तवर्ग' तथा 'ष' एवं 'टवर्ग' के क्रमशः आमने-सामने होने पर 'स' के स्थान पर 'ष' और 'तवर्ग' के स्थान पर 'टवर्ग' हो जाता है। जैसे –

षड्	+	नाम	=	षण्णाम	(ड्+न=ण्)

(iii) जशत्व सन्धि : जब किसी शब्द के अन्त में अन्तस्थ (य्, र्, ल्, व्) और अनुनासिक (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) को छोड़कर किसी भी व्यंजन के उपरान्त किसी वर्ग का तृतीय या चतुर्थ वर्ण अथवा कोई स्वर आये तो पूर्ववर्ती व्यंजन अपने वर्ग के तृतीय व्यंजन में बदल जाता है। जैसे –

वाक्	+	ईश	=	वागीश	(क्+ई= ग्)
दिक्	+	गज	=	दिग्गज	(क्+ग= ग्)
षट्	+	दर्शन	=	षड्दर्शन	(ट्+द= ड्)

3. विसर्ग सन्धि

विसर्ग के साथ किसी स्वर अथवा व्यंजन की सन्धि को विसर्ग सन्धि कहते हैं। जैसे –

निः	+	चल	=	निश्चल	(:+च=श्)
ततः	+	ठकार	=	ततष्ठकार	(:+ठ=ष्)
दुः	+	काम	=	दुष्काम	(:+का= ष्)

4.3.09.4 समास द्वारा शब्द रचना

समास का अर्थ है संक्षेपीकरण। इसमें दो या अधिक शब्दों के संयोग से नए शब्द की रचना होती है। समास होने पर शब्दों के बीच प्रयोग होने वाले प्रत्ययों (ने, को, से आदि) एवं संयोजकों (और, एव आदि) का लोप हो जाता है। समास के मुख्यतः चार भेद हैं – अव्ययीभाव समास, तत्पुरुष समास, द्वन्द्व समास और बहुब्रीहि समास। इन चार समासों में तत्पुरुष के छह प्रकार (कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध और अधिकरण तत्पुरुष) और तीन उपभेद (कर्मधारय, द्विगु और नञ् तत्पुरुष) हैं।

1. अव्ययीभाव समास

प्रथम पद प्रधान अव्ययीभाव समास होता है। इस समास में प्राय: दो पद होते हैं, इनमें प्रथम प्राय: अव्यय रहता है और दूसरा संज्ञा। दोनों मिलकर अव्यय हो जाते हैं। प्रथम पद के प्रभाव से समस्त पद के अव्यय हो जाने के कारण ही इस समास को प्रथम पद प्रधान कहा जाता है। उदाहरण –

समस्त पद	विग्रह	समास
आजन्म	जन्म तक	अव्ययीभाव
प्रतिदिन	हर दिन	अव्ययीभाव
निडर	बिना डर के	अव्ययीभाव

2. तत्पुरुष समास

उत्तर पद प्रधान तत्पुरुष समास होता है। इस समास में बाद वाले शब्द (उत्तर पद) के अनुसार प्रथम पद का अर्थ तय होता है। तत्पुरुष शब्द दो पदों तत् और पुरुष से बना है जिनमें प्रथम पद अपूर्ण है, जबकि उत्तर पद उसके अर्थ को पूर्ण करता है। इसीलिए तत्पुरुष को उत्तर पद प्रधान कहा गया है। तत्पुरुष विभक्ति और कारकों पर आधारित समास है, जो समास होने पर लुप्त हो जाते हैं। विभक्ति पर आधारित होने के कारण यह द्वितीया विभक्ति या कर्म कारक से लेकर सप्तमी विभक्ति यानी अधिकरण तक छह प्रकार का होता है। इसके भेदों का परिचय उदाहरण सहित दिया जा रहा है –

समस्त पद	विग्रह	समास
जीवन प्राप्त	जीवन को प्राप्त	कर्म तत्पुरुष
तुलसीकृत	तुलसी द्वारा रचित	करण तत्पुरुष
नाचघर	नाच के लिए घर	सम्प्रदान तत्पुरुष
धनहीन	धन से हीन	अपादान तत्पुरुष
जलघड़ी	जल की घड़ी	सम्बन्ध तत्पुरुष
कविश्रेष्ठ	कवियों में श्रेष्ठ	अधिकरण तत्पुरुष

तत्पुरुष समास के तीन उपभेद माने हैं, जिनमें भी उत्तर पद प्रधान है। तत्पुरुष जैसी विशेषता होने के कारण उन्हें भी तत्पुरुष के अन्तर्गत ही रखा जाता है। जैसे –

समस्त पद	विग्रह	समास
आदर	न आदर	नञ् तत्पुरुष
नवरत्न	नौ रत्नों का समाहार	द्विगु तत्पुरुष
महापुरुष	महान् पुरुष	कर्मधारय तत्पुरुष

3. द्वन्द्व समास

उभय पद प्रधान द्वन्द्व समास होता है। द्वन्द्व का शाब्दिक अर्थ है युग्म या जोड़ा। ऐसा जोड़ा जिसमें दोनों पक्षों का महत्त्व और गुण समान हो। इस समास में पूर्व और उत्तर पद के रूप में जिन पदों को ग्रहण किया जाता है, उनका समान महत्त्व होता है, जैसे –

समस्त पद	विग्रह	समास
गुरु-शिष्य	गुरु और शिष्य	द्वन्द्व समास
गाय-बैल	गाय और बैल	द्वन्द्व समास

4. बहुब्रीहि समास

अन्य पद प्रधान बहुब्रीहि समास होता है। अर्थात् जिस समास में कोई पद प्रधान न हो बल्कि दोनों पद मिलकर किसी संज्ञा के विशेषण हो वहाँ बहुब्रीहि समास होता है, जैसे –

समस्त पद	विग्रह	समास
धनवान्	बहुत धान्य है जिसके पास	बहुब्रीहि
पीताम्बर	पीला वस्त्र है जिसका	बहुब्रीहि

शब्दावली-शिक्षण में समास प्रक्रिया द्वारा शब्द-शिक्षण से काफी लाभ होता है। विद्यार्थी समास-प्रक्रिया से परिचित होने पर नवीन शब्दों के निर्माण, उनके अर्थबोध में स्वयं समर्थ हो जाता है।

4.3.10 पाठ-सार

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए भाषा को साधन के रूप में प्रयोग करता है। भाषा को शब्दों का एक समूह माना है। अर्थात् एक या कई अक्षरों (स्वर व व्यंजन) से निर्मित सार्थक एवं स्वतन्त्र ध्वनि समूह शब्द है। शब्दों की संख्या के लिहाज से हिन्दी भाषा काफी समृद्ध है। भाषा के शब्दों की अपनी प्रकृति होती है। प्रत्येक शब्द दो भागों में विभक्त होता है – अर्थतत्त्व और सम्बन्धतत्व। शब्द के विभिन्न दृष्टिकोणों के तहत भेद किये गये है, उनमें से व्याकरणिक दृष्टि से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय ये पाँच भेद माने हैं। अन्य विविध दृष्टिकोणों से शब्द के अर्थ, रचना, उत्पत्ति तथा रूपान्तर के आधार पर कई भेद किये गये हैं।

भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में मौखिक और लिखित दोनों भाषा के रूपों का महत्त्व है। शब्दावली उस किसी भी भाषा में प्राप्त शब्दों का योग है। इसमें भाषा के समस्त मुक्त, आबद्ध, उनके संयोजन से निर्मित शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, वाक्यांश आदि समाहित रहते हैं। हिन्दी भाषा के मातृभाषा तथा अन्य भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में प्रत्येक स्तर पर शब्दावली के मानक उच्चारण, वर्तनी एवं प्रयोग शिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

शब्द और अर्थ का सत्यस्वरूप अर्थ में निहित है। मातृभाषा और अन्य भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में शब्दार्थ शिक्षण के लिए कई विधियाँ प्रचलित हैं। हिन्दी शब्दावली में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों का विशेष योगदान है। भाषा-शिक्षण के समय शब्दावली चयन में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया तथा अव्यय इनके वर्गीकरण का विशेष स्थान है। शब्दकोश निर्माण के लिए व्याकरण की मूल व्यवस्था के तहत सन्धि, समास, उपसर्ग तथा प्रत्यय के द्वारा शब्दों का निर्माण किया जाता है। इससे बने शब्द आसानी से भाषा का अंग बन जाते हैं और व्याकरण के अनुसार सही भी होते हैं।

4.3.11 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. एक या कई अक्षरों से निर्मित सार्थक एवं स्वतन्त्र ध्वनि को कहते हैं –
   (क) शब्द
   (ख) अक्षर
   (ग) भाषा
   (घ) इनमें से कोई नहीं

   सही उत्तर – (क) शब्द

2. अर्थ के आधार पर शब्द के कितने भेद हैं ?
   (क) दो
   (ख) चार
   (ग) सात
   (घ) तीन

   सही उत्तर – (क) दो

3. निम्नलिखित में से कौनसा शब्द तत्सम है –
   (क) हाथ
   (ख) सूर्य
   (ग) चक्कर
   (घ) दूध

   सही उत्तर – (ख) सूर्य

4. 'प्रति' उपसर्ग से बना शब्द है –
   (क) परिपूर्ण
   (ख) प्रगति
   (ग) प्रतिकूल
   (घ) पराक्रम

सही उत्तर – (ग) प्रतिकूल

5. 'रवीन्द्र' का सन्धि विच्छेद है –
   (क) रवि+इन्द्र
   (ख) रवी+इन्द्र
   (ग) रवि+ईन्द्र
   (घ) रवी+ईन्द्र

सही उत्तर – (क) रवि+इन्द्र

6. 'प्रतिदिन' में कौनसा समास है ?
   (क) तत्पुरुष
   (ख) द्वन्द्व
   (ग) अव्ययीभाव
   (घ) बहुव्रीहि

सही उत्तर – (ग) अव्ययीभाव

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. शब्द की संकल्पना को स्पष्ट कीजिए।
2. शब्दावली-शिक्षण-प्रक्रिया को समझाइए।
3. उपसर्ग से हिन्दी शब्द-भण्डार को होने वाले लाभों को लिखिए।
4. प्रत्यय का अर्थ एवं इसके प्रकारों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. हिन्दी में शब्दों के निर्माण प्रक्रिया में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों के योगदान का विवेचन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. शब्द के विभिन्न दृष्टिकोणों से भेद को स्पष्ट कीजिए।
2. हिन्दी शब्दावली रचना में व्याकरण की व्यवस्थाओं का वर्णन कीजिए।

4.3.12 व्यवहार

1. उत्पत्ति के आधार पर हिन्दी शब्दों के प्रकारों के नाम एवं उदाहरण दीजिए।
2. सन्धि की परिभाषा लिखकर बताइए कि इससे हिन्दी शब्दकोश को क्या लाभ होते हैं ?
3. समास को परिभाषित कर उसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।
4. संज्ञा एवं सर्वनाम को स्पष्ट कीजिए।

4.3.13 उपयोगी ग्रन्थ-सूची

1. शर्मा, डॉ॰ मार्तण्ड (2011), हिन्दी शिक्षण, इलाहबाद, शारदा पुस्तक भवन
2. पाण्डेय, श्रुतिकान्त (2014), हिन्दी भाषा और इसकी शिक्षण विधियाँ, दिल्ली, पी.एच.एल. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, ISBN : 978-81-203-5003-8
3. शर्मा, लक्ष्मीनारायण (1993), भाषा 1 एवं 2 की शिक्षण विधियाँ और पाठ नियोजन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर
4. त्यागी, डॉ॰ एस. के. (2013), हिन्दी भाषा-शिक्षण, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, ISBN : 978-81-89994-38-9
5. दुबे, डॉ॰ सत्यनारायण (2011), सरल हिन्दी भाषा-शिक्षण, इलाहबाद, शारदा पुस्तक भवन
6. गोस्वामी, डॉ॰ कृष्ण कुमार (2007), आधुनिक हिन्दी विविध आयाम, दिल्ली, आलेख प्रकाशन, ISBN : 81-8187-123-5
7. प्रसाद, केशव (2011), हिंदी शिक्षण, नई दिल्ली, धनपत राय पब्लिशिंग कंपनी (प्रा.) लिमिटेड, ISBN : 978-93-845596, पृष्ठ संख्या – 333-343.

❖❖❖

खण्ड – 4 : हिन्दी भाषा-शिक्षण (मातृभाषा और अन्य भाषा के सन्दर्भ में)

इकाई – 4 : साहित्य-शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

4.4.00. उद्देश्य कथन
4.4.01. प्रस्तावना
4.4.02. साहित्य का स्वरूप
4.4.03. साहित्य की विधाएँ
- 4.4.03.01. कविता
- 4.4.03.02. उपन्यास
- 4.4.03.03. कहानी
- 4.4.03.04. नाटक
- 4.4.03.05. एकांकी
- 4.4.03.06. निबन्ध
- 4.4.03.07. जीवनी
- 4.4.03.08. आत्मकथा
- 4.4.03.09. संस्मरण
- 4.4.03.10. रेखाचित्र

4.4.04. हिन्दी भाषा की शैली
- 4.4.04.1. हिन्दुस्तानी शैली
- 4.4.04.2. उच्च हिन्दी शैली
- 4.4.04.3. उच्च उर्दू शैली

4.4.05. हिन्दी साहित्य की शैली
4.4.06. सम्प्रेषणपरक भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की भूमिका
4.4.07. भाषाशिक्षण के लिए साहित्य शिक्षण की प्रयोग विधि
- 4.4.07.1. भाषा-शिक्षण में कथा साहित्य शिक्षण की विधि
- 4.4.07.2. भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में कविता शिक्षण की विधि
  - 4.4.07.2.1. भाषा की स्वतन्त्रता और सहजता
  - 4.4.07.2.2. शब्द चयन
    - 4.4.07.2.2.1. शब्दों का दुहराव
    - 4.4.07.2.2.2. अभिव्यंजना
      - 4.4.07.2.2.2.1. सर्वनाम के स्तर पर
      - 4.4.07.2.2.2.2. नामिकीकरण
      - 4.4.07.2.2.2.3. रूपक
    - 4.4.07.2.2.3. द्वन्द या तनाव
  - 4.4.07.2.3. विशिष्ट अभिव्यंजना

4.4.08. पाठ-सार
4.4.09. बोध प्रश्न
4.4.10. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

4.4.00. उद्देश्य कथन

प्रस्तुत पाठ का अध्ययन करने के उपरान्त आप –

i. साहित्य के स्वरूप को स्पष्ट कर पाएँगे।
ii. साहित्यिक विधाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
iii. भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की भूमिका को स्पष्ट कर पाएँगे।
iv. भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण को प्रयोग में लेने की विधि के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

4.4.01. प्रस्तावना

भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की भूमिका तथा उपयोगिता आज सिद्ध हो चुकी है। भाषा के वैविध्यपूर्ण रूप को साहित्य इतिहास की भाँति सँजोकर रखता है। साहित्य न केवल भाषा के समकालीन प्रचलित रूप के बारे में बताता है बल्कि भाषा की कालक्रमिक रूपों के बारे में भी साहित्य से ही जानकारी प्राप्त होती है। इसलिए भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण उपयोगी होने के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण भी है।

4.4.02. साहित्य का स्वरूप

प्रयोग की दृष्टि से देखी जाए तो 'साहित्य' शब्द लगभग प्रत्येक विधा के लिखित सामग्रियों के साथ जोड़ दिया जाता है, जैसे – विधि साहित्य, राजनैतिक साहित्य, वैज्ञानिक साहित्य, धार्मिक साहित्य, तकनीकी साहित्य इत्यादि। इस प्रकार साहित्य को प्रत्येक विधा की लिखित सामग्री के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। परन्तु जब हम अंग्रेजी साहित्य, हिन्दी साहित्य, असमिया साहित्य, मराठी साहित्य इत्यादि की बात करते हैं तो हमारा ध्यान प्रत्येक विधा के लिखित सामग्रियों के बजाय इन भाषा विशेष में लिखे गए सर्जनात्मक पाठ जैसे – कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक इत्यादि की ओर जाता है। अर्थात् यहाँ हम साहित्य को दो भागों में बाँटकर देख सकते हैं – पहला, प्रत्येक विधा के लिखित सामग्री के रूप में साहित्य तथा दूसरा, किसी भाषा विशेष के सर्जनात्मक लेखन के रूप में साहित्य। प्रस्तुत पाठ में साहित्य से तात्पर्य मूलतः इस दूसरे रूप के साहित्य से है। इस प्रकार के साहित्य की विशेषता यह है कि इसमें शब्द और अर्थ के बीच का सम्बन्ध सर्वथा सीधा और सामान्य नहीं होता। उदाहरण के लिए यहाँ मुहावरों की बात की जा सकती है। मुहावरों के सन्दर्भ में हमें यह देखने को मिलता है कि मुहावरों में किसी बात को कहने के लिए किसी और बात की अवतारणा की जाती है जिसका कोई सीधा अर्थ उस सन्दर्भ विशेष के लिए तो अप्रासंगिक लगता है परन्तु उसके गहन अर्थ में वह उस सन्दर्भ विशेष के लिए प्रासंगिक सिद्ध होता है। जैसे – हिन्दी का मुहावरा "साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे" का अर्थ न तो साँप के मरने से है और

न ही लाठी के टूटने से। इसका अर्थ है किसी समस्या का ऐसा हल जो किसी अन्य समस्या को खड़े किए बिना सुलझ जाए। मुहावरों का प्रयोग सर्जनात्मक साहित्य में धड़ल्ले से होता है।

सर्जनात्मक साहित्य के अन्तर्गत साधारणतः कविता, कहानी, उपन्यास इत्यादि को रखा जाता है। ऐसे साहित्य में आम बोलचाल की भाषा को कलात्मक रूप से पेश किया जाता है या फिर विशेष सौन्दर्यात्मक युक्तियों वाली कलात्मक साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया जाता है जिसका प्रयोग आम बोलचाल में नहीं किया जाता। साहित्य में प्रयुक्त होने वाली सौन्दर्यात्मक युक्तियाँ, जैसे – उपमा, रूपक, अनुरणात्मक शब्द, पर्यायवाची इत्यादि सामान्य बातों को भी अधिक प्रभावी बनाने में तथा पाठक के लिए रुचिकर बनाने में सहायक होते हैं। किसी विशेष गुण के आधार पर जब किसी वस्तु की तुलना किसी अन्य वस्तु से की जाए तो उसे उपमा कहा जाता है। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में उपमा का महत्त्व ध्यातव्य है। क्योंकि उपमा समाज तथा संस्कृति की मान्यता से जुड़ी है। उदाहरण के लिए हम 'उल्लू' की बात कर सकते हैं। हिन्दी भाषा में उल्लू को एक मूर्ख प्राणी माना गया है और इसलिए मूर्ख व्यक्ति के लिए 'उल्लू' शब्द का व्यवहार किया जाता है। वहीं दूसरी ओर अंग्रेजी भाषा में उल्लू को चालाक तथा ज्ञानी माना गया है और अंग्रेजी मुहावरा इत्यादि में उल्लू की तुलना चालाक तथा ज्ञानी लोगों के साथ की जाती है। इसलिए भाषा-शिक्षण के समय तथा भाषा प्रयोग के समय उस भाषा के समाज-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को जानना अत्यन्त आवश्यक है अन्यथा अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना रहती है।

उपमा के मूल चार तत्त्व होते हैं – उपमेय, उपमान, साधारण धर्म और वाचक शब्द। तुलना किये जाने वाली वस्तु को उपमेय कहते हैं। जैसे – "नयन कमल की पंखुरियों के समान सुन्दर हैं।" इस वाक्य में 'नयन' उपमेय है। उपमेय की तुलना जिस वस्तु से की जाती है उसे उपमान कहा जाता है। उपर्युक्त वाक्य में 'कमल की पंखुरियाँ' उपमान है। जिस गुण के आधार पर दो वस्तुओं की तुलना की जाती है उसे साधारण धर्म कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण में 'सुन्दर' साधारण धर्म है। जिस शब्द के द्वारा उपमेय और उपमान की समानता सूचित की जाती है उसे वाचक शब्द कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण में 'समान' वाचक शब्द है। जब कभी उपमेय और उपमान के बीच भेद समाप्त हो जाती है तो उसे रूपक कहते हैं। जैसे – "नयन कमल की पंखुरियाँ हैं।"

अनुरणात्मक शब्दों से तात्पर्य है – ऐसे शब्द जिसमें वर्णों अथवा शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है जिसके ध्वन्यात्मक प्रयोग से ही अर्थ का स्वयं ही पता लग जाता है। उदाहरण के लिए कंगन का खनकना, पायलों की छमछम इत्यादि में 'खनकना', 'छमछम' इत्यादि अनुरणात्मक शब्द है। सर्जनात्मक साहित्य में इन उपकरणों का प्रयोग पाठ को रोचक तथा सौन्दर्यात्मक रूप प्रदान करता है।

4.4.03. साहित्य की विधाएँ

सर्जनात्मक साहित्य की मुख्य विधाएँ जैसे – कविता, कहानी, नाटक, एकांकी, जीवनी, उपन्यास, निबन्ध, संस्मरण, रेखाचित्र, आत्मजीवनी इत्यादि का प्रयोग पाठ्यसामग्री के रूप में विभिन्न कौशलों के विकास के लिए किया जाता है।

4.4.03.01. कविता

कविताएँ लययुक्त एवं अमूर्त होती है जिसमें बिम्ब का प्रयोग उल्लेखनीय है। इसमें कम-से-कम शब्दों में किसी विशेष विचार या भावनाओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। कविताएँ छन्दोबद्ध तथा मुक्तछन्द दोनों शैलियों में लिखी जाती है। प्रायः कविताओं का अनुवाद कठिन होता है। इसलिए भाषा-शिक्षण में अगर कविताओं का प्रयोग किया जाना है तो भाषा शिक्षक को यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि भाषा-शिक्षण के किस स्तर में कविताओं का उपयोग किया जाना है तथा किन कविताओं को चयनित किया जाए।

4.4.03.02. उपन्यास

उपन्यास में जीवन का व्यापक परिदृश्य प्रकट होता है। उपन्यासों में लेखक की घटनाक्रम विश्लेषण की निपुणता तथा विचारों को प्रभावी ढंग से उपन्यास के पात्र द्वारा जीवन्त रूप प्रदान करने की कुशलता उसे पाठकों के मन में गहरे प्रभाव छोड़ने में सक्षम बनाते हैं।

4.4.03.03. कहानी

उपन्यास की तरह कहानी बहुत बड़ी नहीं होती और उसमें जीवन के व्यापक चित्रण प्रस्तुत करने के बजाय जीवन के किसी एक अंग को लिया जाता है। कहानी की दीर्घता सामान्यतः एक ही बैठक में पढ़े जा सकने वाली होती है।

4.4.03.04. नाटक

नाटक एक दृश्य-श्रव्य विधा है। नाटक किसी एक विशेष घटनाक्रम तथा पात्र पर आधारित होती है। नाटक में घटनाओं का अनुकरण कर जो कलाकार उसे दर्शकों के सामने प्रस्तुत करते हैं उन्हें अभिनेता कहा जाता है। नाटक में पात्रों के बीच भाषा के माध्यम से वार्तालाप होता है। इसलिए इससे वास्तविक भाषा प्रयोग तकनीक को समझा जा सकता है तथा भाषा-शिक्षण में नाटक एक सहायक सामग्री हो सकती है।

4.4.03.05. एकांकी

एकांकी सामान्यतः नाटक से छोटा होता है और इसमें एक ही स्थान और समय में सम्पूर्ण कार्य होता है। एकांकी में जीवन के किसी एक समय का चित्रण किया जाता है तथा इसमें संक्षिप्तता की आवश्यकता होती है। एकांकी में कम-से-कम पात्रों को लिया जाता है।

4.4.03.06. निबन्ध

निबन्ध एक गद्य विधा है जिसमें क्रमबद्ध रूप में विचारों को रखा जाता है। निबन्ध लेखन हेतु विषय ज्ञान की आवश्यकता होती है जो गहन अध्ययन द्वारा सम्भव हो पाता है।

4.4.03.07. जीवनी

किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन के बारे में जब लेखक लिखते हैं तब उसे जीवनी कहते हैं। अर्थात् जीवनी का नायक लेखक स्वयं न होकर कोई अन्य व्यक्ति होता है तथा उस व्यक्ति के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को लेखक रोचक ढंग से जीवनी में प्रस्तुत करते हैं।

4.4.03.08. आत्मकथा

आत्मकथा में लेखक स्वयं अपने जीवन के बारे में लिखते हैं। अर्थात् आत्मकथा का नायक स्वयं लेखक होता है। भूतपूर्व राष्ट्रपति ए. पी. जे. अब्दुल कलाम द्वारा लिखित 'विंग्स ऑफ़ फायर' आत्मकथा का एक अच्छा उदाहरण है।

4.4.03.09. संस्मरण

अपने या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन में बीती घटनाओं का स्मरण कर जब उसका वर्णन करते हैं तब उसे संस्मरण कहते हैं। संस्मरण लेखन का आधार स्मृति होती है क्योंकि वह अतीत से ही जुड़ा होता है। संस्मरण में केवल बीती हुई दृश्य या घटना का ही वर्णन होता है तथा लेखक को अपनी कल्पना से कुछ भी जोड़ने की आजादी नहीं रहती।

4.4.03.10. रेखाचित्र

किसी वस्तु, घटना, दृश्य, स्थान अथवा व्यक्ति का ऐसा वर्णन कि उसका हु-ब-हू चित्र पाठक के मन में उभरे उसे रेखाचित्र कहते हैं।

साहित्य की इन विधाओं से यह बात सिद्ध होती है कि साहित्य में भाषा के विविध रूप वर्तमान होते हैं। साहित्य के अध्ययन से भाषा के अप्रतिम सामर्थ्य का ज्ञान होता है और इसलिए भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की आवश्यकता होती है। परन्तु साहित्य का चयन भाषा-शिक्षण के उद्देश्य को ध्यान में रखकर करना भी आवश्यक है। साथ ही शिक्षार्थी के भाषाज्ञान के स्तर को भी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। 'भाषा : अवधारणा और स्वरूप' वाली इकाई में हमने इस बात की चर्चा की थी कि भाषा परिवर्तनशील है। इस परिवर्तनशीलता को साहित्य में सँभाल कर रखा जाता है। इसलिए कालक्रम में भाषा के परिवर्तित रूप के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए साहित्य का ही सहारा लेना पड़ता है। भाषा अपने स्वरूप में विषमरूपी होती है तथा समाज में एक ही

भाषा के स्थान, काल तथा सामाजिक वर्गों के अनुसार अलग-अलग रूप प्रचलित होती है। यहाँ तक कि एक ही परिवार के सदस्यों के बीच भी बातचीत के लिए अलग-अलग शैली का प्रयोग किया जाता है। भाषा की इस विषमरूपता को साहित्य में सँजोकर रखा जाता है। इसलिए भाषा-शिक्षण के लिए साहित्यिक पाठ्यसामग्री भाषा के व्यवहारिक रूप को समझने के लिए सहायक सिद्ध होती है।

इस सन्दर्भ में हिन्दी भाषा की बात की जाए तो यह देखने को मिलता है कि हिन्दी भाषा सामाजिक परिप्रेक्ष्य में एक विषमरूपी भाषा है तथा अपनी प्रकृति में वैविध्यपूर्ण। शैली की दृष्टि से देखा जाए तो हिन्दी भाषा में ऐसी अनेक शैली मिलती हैं जो हिन्दी साहित्य-शिक्षण के लिए सहायक सिद्ध हो सकती है।

4.4.04. हिन्दी भाषा की शैली

भाषा साहित्य सृजन की मूलभूत इकाई है और इसमें भाषा की वैविध्यपूर्ण प्रकृति देखने को मिलती है जिसके कारण भाषा अध्ययन तथा भाषा-शिक्षण हेतु साहित्य विभिन्न आयाम उपलब्ध कराता है। हिन्दी भाषा की शैली के तीन रूप हैं – हिन्दुस्तानी शैली, उच्च हिन्दी शैली तथा उच्च उर्दू शैली।

4.4.04.1. हिन्दुस्तानी शैली

हिन्दुस्तानी शैली के बारे में प्रो॰ दिलीप सिंह ने कहा है कि "अपने व्यावहारिक स्तर पर हिन्दुस्तानी वह भाषा-शैली है, जिसका आधार भाषा का तद्भव शब्द-भण्डार और उसकी अपनी व्याकरणिक संरचना है जिसमें विशेष रूप से 'कोड-मिश्रण की प्रवृत्ति' उल्लेखनीय है। यह शैली सामान्य बोलचाल के भाषा प्रयोग को अपना सन्दर्भ बनाकर चलती है।" इस सन्दर्भ में उन्होंने हिन्दी में प्रेमचंद को हिन्दुस्तानी शैली के प्रतिनिधि लेखक माना है। उनका कहना है कि प्रेमचंद की अधिकांश कहानियाँ इसी भाषाशैली में लिखी गयी है। प्रेमचंद के उपन्यास गोदान, गबन, निर्मला, सेवासदन, कर्मभूमि, रंगभूमि आदि को उन्होंने हिन्दुस्तानी शैली के श्रेष्ठ रचनाएँ माना है। यह बात तो अवश्य है कि प्रेमचंद की रचनाओं में हमें सामान्य बोलचाल की हिन्दुस्तानी भाषा-शैली तथा हिन्दी भाषा संकल्पना को चित्रित करने का भरसक प्रयास दिखता है। यहाँ प्रेमचंद का जिक्र इसलिए भी किया जा रहा है क्योंकि हिन्दी भाषा-शिक्षण पाठ्यक्रमों में प्रेमचंद की रचनाओं को अवश्य ही शामिल किया जाता है। साहित्य लेखन के समय इस शैली के प्रयोग हेतु लेखक सन्दर्भ, विषय, काल, स्थान तथा वक्ता-श्रोता के पारस्परिक सम्बन्धों को ध्यान में रखते हैं। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि काफी समय से मुस्लिम संस्कृति के साथ रहने के कारण हिन्दुस्तानी भाषा-शैली में उर्दू का प्रभाव भी उल्लेखनीय है। यह प्रभाव हिन्दुस्तानी भाषा-शैली को एक अनोखा रूप प्रदान करता है। हिन्दुस्तानी में उर्दू की शब्दावली अपने मूल या तद्भव दोनों रूपों में विद्यमान है।

प्रायः यह देखा जाता है कि हिन्दी-उर्दू के पर्याय शब्दों में लिंग सम्बन्धी भिन्नताएँ रहती है। जैसे – जीवन छोटा है – जिन्दगी छोटी है, कहानी बन गयी – अफसाना बन गया, अग्रिम दिया – पेशगी दी इत्यादि। भाषा-शिक्षण के समय इन बिन्दुओं पर शिक्षार्थी का ध्यान आकर्षित करना चाहिए।

4.4.04.2. उच्च हिन्दी शैली

यह शैली भाषिक संरचनात्मक दृष्टि से संस्कृतनिष्ठ है। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में इस शैली का प्रयोग बहुत ही अच्छे ढंग से किया गया है। इस शैली की विशेषता यह है कि संस्कृत की सन्धियों और समास रचना के नियमों के आधार पर शब्द रचना की बहुलता इसमें दिखाई पड़ता है। इस शैली में औपचारिकता को बहुत महत्त्व दिया जाता है। पौराणिकता, ऐतिहासिकता, मिथक इत्यादि को मुखरित करने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है। इस शैली में लिखी गयी रचनाओं में हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को एक अच्छा उदाहरण माना जा सकता है।

4.4.04.3. उच्च उर्दू शैली

इस शैली में अरबी और फारसी भाषा का मिश्रण देखा जाता है। प्रेमचंद की प्रारम्भिक रचनाएँ उर्दू में ही लिखी गयी थीं।

कथा साहित्य में हिन्दी की इन तीनों शैलियों को एक ही कृति में भी प्रयोग में लाया जाता है। जैसे विवरणात्मक स्थिति में उच्च हिन्दी शैली, संवादों में हिन्दुस्तानी तथा मुसलमान पात्रों या वैसी वातावरण की अनुभूति करने के लिए उच्च उर्दू शैली का प्रयोग किया जाता है । उदाहरण के लिए प्रेमचंद की 'शतरंज के खिलाड़ी' के कुछ हिस्से देखे जा सकते हैं।

विवरण हेतु उच्च हिन्दी शैली का प्रयोग –

लखनऊ विलासिता के रंग में डूबा हुआ था... जीवन के प्रत्येक विभाग में, आमोद-प्रमोद का प्राधान्य था, शासन विभाग में, साहित्यिक क्षेत्र में सामाजिक अवस्था में, कला कौशल में, उद्योग-धंधों में, आहार-व्यवहार में सर्वत्र विलासिता व्याप्त हो रही थी। यह राजनैतिक अधःपतन की चरम सीमा थी।

मुस्लिम पात्रों के संवाद में उच्च उर्दू शैली का प्रयोग–

मिरजा : बड़ी मुसीबत है। कहीं मेरी तलबी न हो।
मीर : कमबख्त कल फिर आने को कह गया है।
मिरजा : बस, यही एक तदबीर है कि घर पर मिलो ही नहीं। कल से गोमती पर कहीं वीराने में नक्सा जमे। वहाँ किसे खबर होगी। हजरत आकर आप लौट जाएँगे।
मीर : वल्लाह आपको ख़ूब सूझी। इसके सिवा और कोई तदबीर ही नहीं है।

परिवेश निर्माण हेतु प्रयुक्त हिन्दुस्तानी शैली–

राज्य में हाहाकार मचा हुआ था। प्रजा दिन-दहाड़े लुटी जाती थी। कोई फ़रियाद सुनने वाला नहीं था। देहात की सारी दौलत लखनऊ में खिंची आती थी और वह वेश्याओं में, भाड़ों में और विलासिता के इन्हीं अंगों

की पूर्ति में उड़ जाती थी। ... रेजिडेंट बार-बार चेतावनी देता था पर यहाँ के लोग विलासिता के नशे में चूर थे। किसी के कानों पर जूँ न रेंगती थी।

4.4.05. हिन्दी साहित्य की शैली

साहित्य में शैली को विशेष महत्त्व दिया गया है। हिन्दी साहित्य की निम्नलिखित शैलियाँ मानी गई हैं –

01. वर्णनात्मक या परिचयात्मक शैली : यह मूलतः किसी विषय, घटना, विचार, पात्र, प्रकृति आदि का विस्तार से वर्णन करने वाली शैली है।
02. विवेचनात्मक शैली : यह विषय के विभिन्न भागों का विवेचन प्रस्तुत करने वाली शैली है।
03. भावात्मक शैली : इस शैली में लेखक भाव विभोरता से गद्य में भी पद्य जैसा प्रवाह लाता है।
04. आलोचनात्मक शैली : इस शैली के द्वारा किसी वस्तु, स्थिति, विषय, घटना, मत आदि के गुण-दोषों के बारे में लिखा जाता है।
05. गवेषणात्मक शैली : गवेषणात्मक शैली किसी विषय पर तर्क देते हुए कोई नयी बात कहने के लिए प्रयोग में लायी जाती है।
06. उद्धरण शैली : इस शैली में लोकगीतों, अन्य लेखकों के वाक्य, किसी कविता की पंक्ति आदि से उदाहरण लिए जाते हैं।
07. उद्‌बोधन शैली : इसमें लेखक स्वयं एक उपदेशक के रूप में उभरकर आते हैं तथा पाठक को प्रेरित करते है।
08. ओजपूर्ण शैली : इसमें शौर्य, वीरता, श्रेष्ठता, शालीनता, बलिदान आदि भावों को प्रेरक रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
09. सूत्र शैली : इसमें किसी विषय विशेष के बारे में संक्षिप्त में कहा जाता है।
10. व्यंग्यात्मक शैली : इस शैली में व्यंग्य की प्रधानता रहती है।
11. हास्य शैली : इस शैली में किसी व्यक्ति, घटना या स्थिति का इस प्रकार वर्णन किया जाता है जिससे हास्य उत्पन्न होता है।
12. मुहावरेदार शैली : इस शैली में मुहावरों, स्थानीय कथनों आदि का प्रयोग होता है।
13. प्रतीकात्मक शैली : इस शैली में उपमान-उपमेय का प्रयोग तथा विशेषण-विशेष्य का प्रयोग मुख्य रूप से होता है।

पाठ के सन्दर्भ में इन शैलीगत भिन्नताओं को भाषा-शिक्षण के समय भाषा शिक्षक को उजागर करना चाहिए। प्रत्येक विधा के पाठ में ये शैलियाँ कहीं न कहीं अवश्य मौजूद रहती है। पाठ विश्लेषण में शैली विश्लेषण को विशेष महत्त्व दिया गया है। पाठ विश्लेषण द्वारा भाषा शिक्षक भी साहित्य शिक्षण के लिए सामग्रियों के वर्गीकरण तथा चयन में लाभ ले सकते हैं।

4.4.06. सम्प्रेषणपरक भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की भूमिका

आधुनिक भाषाविज्ञान की यह मान्यता है कि सामाजिक सन्दर्भ भाषा प्रयोग में नियन्त्रक की भूमिका निभाते हैं। यही कारण है कि प्रयोग स्तर पर भाषा का स्वरूप बदलता रहता है। परन्तु भाषा के इस बदलते स्वरूप में भी सम्प्रेषण का कार्य बाधित नहीं होता और इसी को 'सम्प्रेषण दक्षता' के रूप में उभारने के लिए भाषा-शिक्षण प्रयासरत रहता है। सम्प्रेषणपरक भाषा-शिक्षण में साहित्य शिक्षण की भूमिका अनवद्य है। मौखिक स्तर पर सिखायी जा रही सम्प्रेषणपरक उक्तियों को साहित्य का आधार देकर उसे और अधिक ठोस बनाया जा सकता है और लेखन स्तर पर सामग्रियाँ प्रदान कर सकता है। साहित्य शिक्षण के अन्तर्गत किसी भी कहानी एवं उपन्यास में उपस्थापित पात्रों के कथोपकथनों के माध्यम से वैयक्तिक या सामाजिक जीवन से सम्बन्धित कथनों से भाषा-शिक्षण की उपादान आपूर्ति की जा सकती है।

भाषा दक्षता के लिए सामाजिक सम्प्रेषण में समाज के भिन्न वर्गों, समुदायों, व्यवसाय के लोगों के लिए उपयुक्त सम्बोधन का चयन कर पाना अत्यन्त आवश्यक है। आयु, लिंग, पद, सम्बन्ध इत्यादि का प्रभाव हिन्दी में सम्बोधन शब्दों का निर्धारण के लिए महत्त्वपूर्ण है और स्वयं नाते-रिश्ते की शब्दावलियाँ भी हिन्दी में सम्बोधन के रूप में प्रयोग में लायी जाती हैं। उदाहरण के लिए बहू, बेटी, बेटा, भांजे इत्यादि शब्द यूँ तो नाते-रिश्तों की शब्दावलियाँ है परन्तु इसे सम्बोधन शब्द के रूप में भी प्रयोग में लाया जाता है। हिन्दी भाषा के सामाजिक परिप्रेक्ष्य को उभारने के लिए नाते-रिश्ते की शब्दावलियों का विशेष महत्त्व है। इनको साहित्यिक पाठों में प्रयुक्त विभिन्न सन्दर्भगत पक्षों के साथ रिझाकर दिखाने से शिक्षार्थियों को सहज रूप में बोधगम्य कराया जा सकेगा तथा उन्हें यह रोचक भी लगेगा।

सम्प्रेषणपरक भाषा में प्रोक्ति की भी एक विशेष भूमिका है। प्रोक्ति एक या एकाधिक वाक्यों का ऐसा समूह है जो अर्थ द्योतन की दृष्टि से एक इकाई के रूप में कार्य करता है। प्रोक्ति में सन्दर्भगत पक्ष विशेष महत्त्व रखता है और इसी से अर्थ द्योतन हेतु उपयुक्त आयाम प्राप्त होता है। भाषा-शिक्षण के लिए साहित्य शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए साहित्यिक पाठों से उदाहरण लेते समय शिक्षार्थी को समूचे पाठ की प्रोक्ति से परिचित करना चाहिए तथा पाठ के किसी अंश से लिए गए उदाहरण के सन्दर्भगत पक्षों से भी शिक्षार्थी को रू-ब-रू करना चाहिए जिससे विद्यार्थी भाषा प्रयोग की स्थिति तथा सन्दर्भ को भी समझ सके। साथ ही उसके साथ जुड़ी समाज-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य तथा मान्यताओं से भी शिक्षार्थी की पहचान करायी जानी चाहिए।

4.4.07. भाषाशिक्षण के लिए साहित्य शिक्षण की प्रयोग विधि

ऊपर हमने भाषा-शिक्षण हेतु साहित्य शिक्षण किस प्रकार सहायक सिद्ध होता है, इस पर चर्चा की। यहाँ हम भाषा-शिक्षण हेतु साहित्य शिक्षण को किस प्रकार प्रयोग में लाया जाए इस पर चर्चा करेंगे। इससे यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि भाषा-शिक्षण के समय साहित्यिक पाठों को देखने का आधार क्या होना चाहिए तथा कैसा होनी चाहिए।

4.4.07.1. भाषा-शिक्षण में कथा साहित्य शिक्षण की विधि

हमने पहले ही इस बात की ओर संकेत किया था कि भाषा एक सामाजिक वस्तु है तथा भाषा समाज में ही जीवित रहती है। भाषा के इसी समाज केन्द्रित रूप को साहित्य में सँजोया जाता है। इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है और भाषिक शैलियों के वास्तविक प्रायोगिक स्वरूप को समझने के लिए साहित्य शिक्षण विशेष रूप से कथा साहित्य का शिक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

सबसे पहले तो यह निश्चित करने की आवश्यकता है कि लेखक की भाषा की प्रकृति क्या है। भाषा शिक्षक को यह भी दिखाने की आवश्यकता है कि किस प्रकार लेखक सामान्य भाषा प्रयोग द्वारा ही विशेष भावों को व्यक्त करते हैं। प्रकार्यात्मक भाषा के रूप में साहित्य का विश्लेषण शिक्षार्थी के सामने प्रस्तुत करना चाहिए जिससे वह भाषा के प्रकार्यात्मक रूप को और अधिक बेहतर ढंग से समझ सके। भाषा-शिक्षण के समय कथा साहित्य शिक्षण में लेखक द्वारा व्यवहृत वार्तालाप तथा एकालापों पर विशेष महत्त्व देना चाहिए। साहित्य में लेखक-पाठक की भूमिका बहुत हद तक वास्तविक स्थिति के वक्ता-श्रोता की भूमिका की तरह ही होता है। किसी भी साहित्यिक पाठ की रचना के लिए लेखक भाषा का चयन भाषा के समाज-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर करता है। इसलिए पात्रों की सामाजिक स्थिति, काल, स्थान इत्यादि को आधार मानकर ही लेखक भाषा का चयन करते हैं। इसलिए एक ही पाठ में किस प्रकार उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर भाषा भेद उत्पन्न हुई है इसे शिक्षार्थियों के सामने रखना चाहिए। भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में साहित्य शिक्षण में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण कड़ी है कृति के पात्रों की भाषा। कृति में पात्रों के भाषा-विश्लेषण से पात्रों के सामाजिक स्तर तथा समाज में भाषा प्रयोग की शैली को दिखाया जा सकता है। वर्ग, आयु, शिक्षा इत्यादि के आधार पर भी प्रयोक्ता के भाषा प्रयोग की भिन्नता को भी साहित्यिक कृतियों के उदाहरणों से उभारना चाहिए। इसके साथ ही सांस्कृतिक तत्त्वों, भाषा में निहित आचरणों जैसे – दया, कृपा, विनम्रता इत्यादि को शिक्षार्थी के सामने ध्यानपूर्वक रखने की भी आवश्यक है। इसके साथ ही भाषा प्रयोग के समय विराम-चिह्न की प्रयोग विधि को भी शिक्षार्थियों के सामने रखना आवश्यक है। क्योंकि विराम-चिह्न अर्थ द्योतन का एक महत्त्वपूर्ण साधन है और एक अच्छी कृति में विराम-चिह्नों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। भाषा-शिक्षण के लिए कथा साहित्य के प्रयोग के सन्दर्भ में शिक्षक को ध्यान देना चाहिए ताकि साहित्य शिक्षण को भाषा-शिक्षण के लिए अधिक प्रभावी बनाया जा सके।

4.4.07.2. भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में कविता शिक्षण की विधि

साहित्यिक विधाओं का परिचय देते हुए हमने कविता के बारे में चर्चा की थी। यह तो हमें पता है कि कविता की शैली कथासाहित्य की शैली से भिन्न है तथा कविता की भाषा भी सामान्य भाषा प्रयोग से कुछ भिन्न है। हिन्दी भाषा के शिक्षण हेतु 'निराला' की कविताओं को विशेष महत्त्व दिया गया है। प्रो॰ दिलीप सिंह ने 'निराला' की काव्यभाषा को निम्नलिखित बिन्दुओं में देखा है – भाषा की स्वतन्त्रता और सहजता, शब्द चयन, द्वन्द या तनाव और विशिष्ट अभिव्यंजना।

4.4.07.2.1. भाषा की स्वतन्त्रता और सहजता

सहज भाषिक अभिव्यक्ति निराला की काव्यभाषा की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। उन्होंने काव्यभाषा में अपनी अभिव्यक्ति को सहज बनाने का प्रयास किया है। साथ ही कथा-वस्तु की विविधता भी निराला की कविताओं की विशेषता है। कविता में ही उन्होंने कहा था –

सहज-सहज पग धर जाओ उतर
देखें वे सभी तुम्हें पथ पर
वह जो सर बोझ लिए आ रहा
वह जो बछड़े को नहला रहा
वह जो इस उस बतला रहा
देखूँ, वे तुम्हें देख जाते भी हैं हार?
उनके दिल की धड़कन से मिली
होगी तस्वीर जो कही खिली
देखूँ मैं भी, वह कुछ भी हिली
तुम्हें देखने पर, भीतर भीतर ?

(अनामिका)

4.4.07.2.2. शब्द चयन

निराला के काव्यभाषा की विशेषता यह है कि बोलचाल तथा लोक व्यवहार की भाषा को भी यहाँ महत्त्व दिया गया है। साथ ही मानक भाषा में प्रयुक्त समास पद्धति को भी विशेष ढंग से उभरा गया है तथा दोनों भाषाओं की अर्थात् लोक तथा मानक भाषाओं को मिश्रित भी किया गया है। निराला के सृजन में कुछ शब्दों को प्रायः देखा जाता है जैसे – जीर्ण, हाड़, ज्योति, गर्जन, कलरव, हुंकार इत्यादि। भाषा-शिक्षण के समय कवि द्वारा प्रायः प्रयुक्त इन शब्दों की ओर शिक्षार्थी का ध्यान आकर्षित करना चाहिए। निराला की कुछ पंक्तियों को उदाहरण रूप में देखा जा सकता है –

'चयन' शब्द का प्रयोग –

सुबहोशाम ऐसे कामनाओं का चयन देखें
प्रेम चयन के उठा नयन नव
चारु चयन

'नव' शब्द का प्रयोग –

गरजो विप्लव के नव जलधर
नव गति नव ले ताल छंद नव

4.4.07.2.2.1. शब्दों का दुहराव

शब्दों का दुहराव निराला की काव्य शैली की एक विशिष्टता है। इन प्रयोगों को व्याकरणिक कोटियों (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया विशेषण, क्रिया इत्यादि) के आधार पर दर्शाया जा सकता है। जैसे –

जल हलचल करता नील-नील
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा चुप-चुप-चुप
हँसता है नद कल-कल
झर-झर-झर निर्झर गिरि स्वर में

इस दुहराव से जो अर्थ का घनत्व उत्पन्न होता है उसे भाषा-शिक्षण के समय शिक्षार्थियों के सामने स्पष्ट करना चाहिए।

4.4.07.2.2.2. अभिव्यंजना

शिक्षण की दृष्टि से अभिव्यंजना को निम्नलिखित स्तरों में देखा जा सकता है –

4.4.07.2.2.2.1. सर्वनाम के स्तर पर

निराला की 'बादल राग' से इसका उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है –

या पथिक से लोल लोचन कह रहे
हम तपस्वी हैं सभी दु :ख सह रहे
गिन रहे दिन ग्रीष्म वर्षा शीत के
काल ताल तरंग में हम बह रहे।

इसमें 'हम' सर्वनाम का प्रयोग कवि तक सीमित न होकर सम्पूर्ण मानव समुदाय को दर्शा रहा है।

4.4.07.2.2.2.2. नामिकीकरण

निराला की 'यमुना के प्रति' से इसका उदाहरण लिया जा सकता है –

वह नयनों का स्वप्न मनोहर
हृदय सरोवर का जलजात
एक चन्द्र निस्सीम व्योम का
वह प्राची का विमल प्रभात

इस पंक्ति में क्रिया की अमूर्त्तता के बावजूद किस प्रकार क्रिया अस्तित्व में है इसे शिक्षार्थियों के सामने स्पष्ट करना चाहिए।

4.4.07.2.2.2.3. रूपक

इस सन्दर्भ में प्रसाद की 'कामायनी' से उदाहरण लिए जा सकते हैं –

विश्व कमल की मृदुल मधुकरीरजनी तू किस कोने से।
आती चूम चूम चल देती पड़ी हुई किस टोने से॥

इसके अलावा भी काव्य में उपमा, संयुक्त वाक्य, छन्द-योजना, विचलन इत्यादि को काव्यकृति से उदाहरण देते हुए शिक्षार्थियों के सामने स्पष्ट करना चाहिए ताकि भाषिक व्यापकता को समझा जा सके।

4.4.07.2.2.3. द्वन्द या तनाव

द्वन्द साहित्य में नाटकीयता प्रदान करता है तथा इसके विवेचन से रचना के रूप को जानने तथा बोधन में सुविधा होती है। उदाहरण के लिए –

तू है नकली मैं हूँ मौलिक
मौन मैं रहा यों स्पन्दित वातावरण विषम
ऊपर वह बर्फ गली है, नीचे यह नदी चली है

इस प्रकार के उदाहरणों से द्वन्द या तनाव के बारे में शिक्षार्थी को बताना चाहिए।

4.4.07.2.3. विशिष्ट अभिव्यंजना

इसे तीन स्तरों में बाँटकर देखा गया है। पहले स्तर में उपमान को रखा गया है। जैसे – कैंची जैसी जबान, मोतियों जैसे दाँत, रेशम से बाल इत्यादि। दूसरे स्तर में लोकभाषा को रखा गया है जिसमें लोकशब्द, मुहावरा, उक्तियाँ इत्यादि का विश्लेषण प्रस्तुत करना चाहिए। तीसरे स्तर पर विचलन, कोड मिश्रण, प्रयुक्ति, वाक्य संयोजन इत्यादि को रखा गया है। भाषा शिक्षक को विभिन्न काव्यों के विभिन्न भागों से इसका उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए तथा उनका विश्लेषण भी करना चाहिए ताकि शिक्षार्थी को भाषिक व्यापकता का आभास हो तथा भाषा चयन में दक्षता प्राप्त हो। किस प्रकार सामान्य भाषा को साहित्यिक बनाया जा सकता है तथा उनके प्रतिमान क्या है इसे भी भाषा शिक्षक को अध्येता के सामने स्पष्ट करने की आवश्यकता है। इन विश्लेषणों के लिए यह आवश्यक है कि भाषा शिक्षक को पाठ-विश्लेषण में भी महारत होनी चाहिए।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि कथा साहित्य की शैली तथा काव्य शैली में काफी अन्तर है। भाषा-शिक्षण में इन भिन्नताओं को देखने का प्रयास करना चाहिए जिससे उस भाषा के विभिन्न आयामों तथा पक्षों के बारे में समझा जा सके।

4.4.08. पाठ-सार

साहित्य समाज का दर्पण है तथा साहित्य रचना के लिए भाषा सबसे महत्त्वपूर्ण घटक है। विभिन्न साहित्यिक विधाओं के लेखन में लेखक एक ही भाषा के अलग-अलग रूपों को प्रयोग में लाते हैं। इसलिए भाषा के विभिन्न रूपों को देखने के लिए साहित्य एक बहुत ही प्रभावी माध्यम के रूप में भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में व्यवहृत होती है। यूँ तो साहित्य की व्यापकता को भाषा के सन्दर्भ में बहुत कम शब्दों में आँक पाना कठिन है। परन्तु इस पाठ में जिन बिन्दुओं की ओर इशारा किया गया है वह भाषा शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों के लिए भाषा-शिक्षण के सन्दर्भ में साहित्य शिक्षण को किस प्रकार प्रयोग में लाया जाना चाहिए इस सन्दर्भ में दिशा-निर्देश प्राप्त करने हेतु सहायक सिद्ध होंगे।

4.4.09. बोध प्रश्न / अभ्यास

रिक्त स्थान की पूर्ति हेतु उचित विकल्प का चुनाव कीजिए–

1. जब उपमान तथा उपमेय के बीच भेद समाप्त हो जाए तो उसे ..... कहते हैं। (पर्याय / रूपक)
2. कथा साहित्य तथा काव्य में ..... है। (समानता / भिन्नता)
3. एकांकी नाटक से ..... होता है। (छोटा / बड़ा)
4. ..... में जीवन की व्यापकता का चित्रण होता है। (उपन्यास / कहानी)
5. 'कंगन खनकना' में 'खनकना' एक ..... है। (उपमान / अनुरणात्मक शब्द)

सही उत्तर – (1) रूपक (2) भिन्नता (3) छोटा (4) उपन्यास (5) अनुरणात्मक शब्द

कथन के सही / गलत होने की पहचान कीजिए –

1. कविता की भाषा लययुक्त होती है। (सही / गलत)
2. हिन्दी भाषा-शैली के तीन रूप है। (सही / गलत)
3. प्रेमचंद ने लेखन की शुरुआत उर्दू से की थी। (सही / गलत)
4. प्रेमचंद ने अपने अनेक कृतियों में हिन्दुस्तानी भाषा-शैली को अपनाया। (सही / गलत)
5. भाषिक शैली साहित्यिक शैली से कुछ भिन्न है। (सही / गलत)

सही उत्तर – (1) सही (2) सही (3) सही (4) सही (5) सही

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नाटक तथा एकांकी में क्या अन्तर है ?
2. साहित्य शिक्षण से आप क्या समझते हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सम्प्रेषणपरक भाषा-शिक्षण में साहित्य की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
2. हिन्दी भाषा की भाषिक शैलियों के बारे में उदाहरण सहित समझाइए।

4.4.10. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

1. सिंह, प्रो॰ दिलीप (2007), भाषा, साहित्य और संस्कृति-शिक्षण, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, ISBN : 978-81-8143-619-1, पृ. सं. 101,109, 158
2. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (2004), साहित्य का भाषिक चिन्तन, जगतपुरी, नयी दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, ISBN : 81-7119-887-2, पृ. सं. 43-46
3. अवस्थी, देवीशंकर (1998), साहित्य विधाओं की प्रकृति, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, ISBN : 8171193935, पृ. सं. 17-18
4. पाण्डेय, मेनेजर, साहित्य और इतिहास दृष्टि, वाणी प्रकाशन, online copy available on http://booksIgoogleIcoIin, पृ. सं. 60-63
5. त्रिपाठी, राममूर्ति (2008), काव्य तत्त्व विमर्श, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, ISBN : 978-81-8143-655-9, पृ. सं. 11-14

❖❖❖